औघड़ भगवानराम



यज्ञनारायण चतुर्वेदी



औघड़ भगवान राम



औघड़ भगवान राम

अघोर-मत, अघोर-साधना, अघोर-साधकोंके विवरण सहित
अवधूत भगवान रामजीका जीवन-वृत्त
तथा उनकी बानियोंका संग्रह

यज्ञनारायण चतुर्वेदी एम० कॉम०
प्राध्यापक
हरिश्चन्द्र स्नातकोत्तर महाविद्यालय
वाराणसी

भूमिका-लेखक
डॉ० सत्यव्रत सिंह
भू० पू० उपकुलपति
वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय

प्रकाशक
श्रीसर्वेश्वरी समूह

वाराणसी

प्रकाशक
श्रीसर्वेश्वरी समूह
पड़ाव
वाराणसी

फोन ६२१६४

प्रथम संस्करण ५,०००

माघ कृष्ण चतुर्दशी संवत् २०२९
(२ फरवरी, १९७३ ई०)

मूल्य : १६ रुपये ५० पैसे मात्र

प्रकाशन-व्यय निकालकर इस पुस्तक-विक्रयसे जो आय होगी वह पूर्णतः अवधूत भगवान राम कुष्ठ सेवा आश्रम, पड़ाव, वाराणसीपर व्यय होगी।

पुस्तक-प्राप्ति-स्थान—

१. श्रीसर्वेश्वरी समूह कार्यालय, पड़ाव, वाराणसी।
२. श्रीसर्वेश्वरी समूह कार्यालय, गम्हरिया, पो० जसपुर नगर, जिला रायगढ़।
३. श्रीसर्वेश्वरी समूहके अन्य सभी कार्यालय।
४. श्रीसजनकुमार कानोडिया, १२।१ बालीगञ्ज पार्क रोड कलकत्ता—१९।

मुद्रक
अघोरी प्रेस
पो० कुष्ट सेवा आश्रम
पड़ाव
वाराणसी

विषय सूची

समर्पण

परम आहिताग्नि सोमयाजी वैदिकानुष्ठानप्रवर साक्षात् शिव-गौरी स्वरूप
पितुः श्री पंडित शशिभूषण अग्निहोत्री तथा मातुः श्रीमती रामा-
देवीको यह ग्रन्थ अत्यन्त श्रद्धापूर्वक समर्पित है जिन्होंने
बाल्यकालसे ही मुझे अपनी कोमल कृपामयी
गोदमें लालन-पालन करके अनेक साधुओं-
के संसर्गका उपदेश और अवसर
दिया जिनकी निस्सीम भावमयी
कृपासे ही मैं ग्रन्थ लिखने-
में सफल काम
हो सका



भूमिका

इस पुस्तकका नाम 'औघड़ भगवानराम' है। इसके लेखक हैं पं० यज्ञनारायण चतुर्वेदी। श्रीचतुर्वेदीजीने इस पुस्तकमें जिन औघड़ भगवानरामका जीवन-वृत्त लिखा है वे उत्तर भारतके प्रसिद्ध चमत्कारी औघड़ सन्त किनारामकी शिष्य-परम्पराके एक प्रतिष्ठा-प्राप्त औघड़ महात्मा हैं। एक औघड़ सन्त-महात्माकी जीवन-चर्याका चित्रण ठीक-ठीक वही कर सकता है जो उसके सान्निध्यका सुख पा चुका हो। श्रीचतुर्वेदीजी औघड़ भगवानरामके सान्निध्यका सुख पा चुके हैं। इसीलिये इस पुस्तकमें औघड़ भगवानरामके व्यक्तित्वका जो चित्र अंकित है उसकी सभी रेखायें और उसमें भरे सभी रंग स्पष्ट हैं। 'औघड़' किसे कहते हैं? 'भगवान' क्या हैं? 'राम' का क्या अर्थ है और इन तीनों शब्दोंसे बने नामसे प्रसिद्ध 'औघड़ भगवानराम' की लोक-जीवनकी लीला क्या है जिससे उनके संपर्कमें आनेवाले लोगोंके जीवनमें आशा और आत्म-विश्वासका संचार होता है? इत्यादि बहुतसे संबद्ध विषय हैं जिनपर यह पुस्तक प्रकाश डालती है।

सबसे पहले 'औघड़' किसे कहते हैं? इस विषयकी अवतारणा पुस्तकमें की गयी है। इस प्रसंगमें यह बताया गया है औघड़, अघोर और अवधूत—ये तीनों शब्द एक ही प्रकारके शक्ति-साधकके लिये प्रयुक्त होते हैं। बात भी वस्तुतः यही है। 'औघड़' शब्द, जो आजकल प्रचलित है आजसे हजारों साल पहले, इस देशमें, अपने संस्कृत-रूपमें प्रचलित था। 'औघड़' शब्दका जो संस्कृत-रूप है वह 'अघोर' है। यजुर्वेदका एक अध्याय है जिसे 'रुद्राध्याय' कहा जाता है। इस रुद्राध्यायमें ही सबसे पहले रुद्रकी मङ्गलकारी मूर्तिको 'शिवा' कहा गया है और साथ-ही-साथ रुद्रकी इस शिवामूर्तिको 'अघोरा' विशेषणसे विभूषित किया गया है। इस उल्लेखसे यह स्पष्ट है कि रुद्र ही शिव हैं और शिव ही अघोर हैं। आजकलका 'औघड़' शब्द भी शिवका ही अर्थ रखता है। इसलिये यह सिद्ध है कि शिव ही 'अघोर' है जिसे आजकल 'औघड़' कहते हैं। अब यह प्रश्न अवश्य उठता है कि रुद्र के शिव और शिवके अघोर अथवा औघड़ रूपमें चिन्तनके पीछे क्या रहस्य है? शिव और शक्तिसे संबद्ध आगम और तन्त्रके शास्त्रोंकी यह साधारण मान्यता है कि तत्त्वतः शिव और शक्ति एक

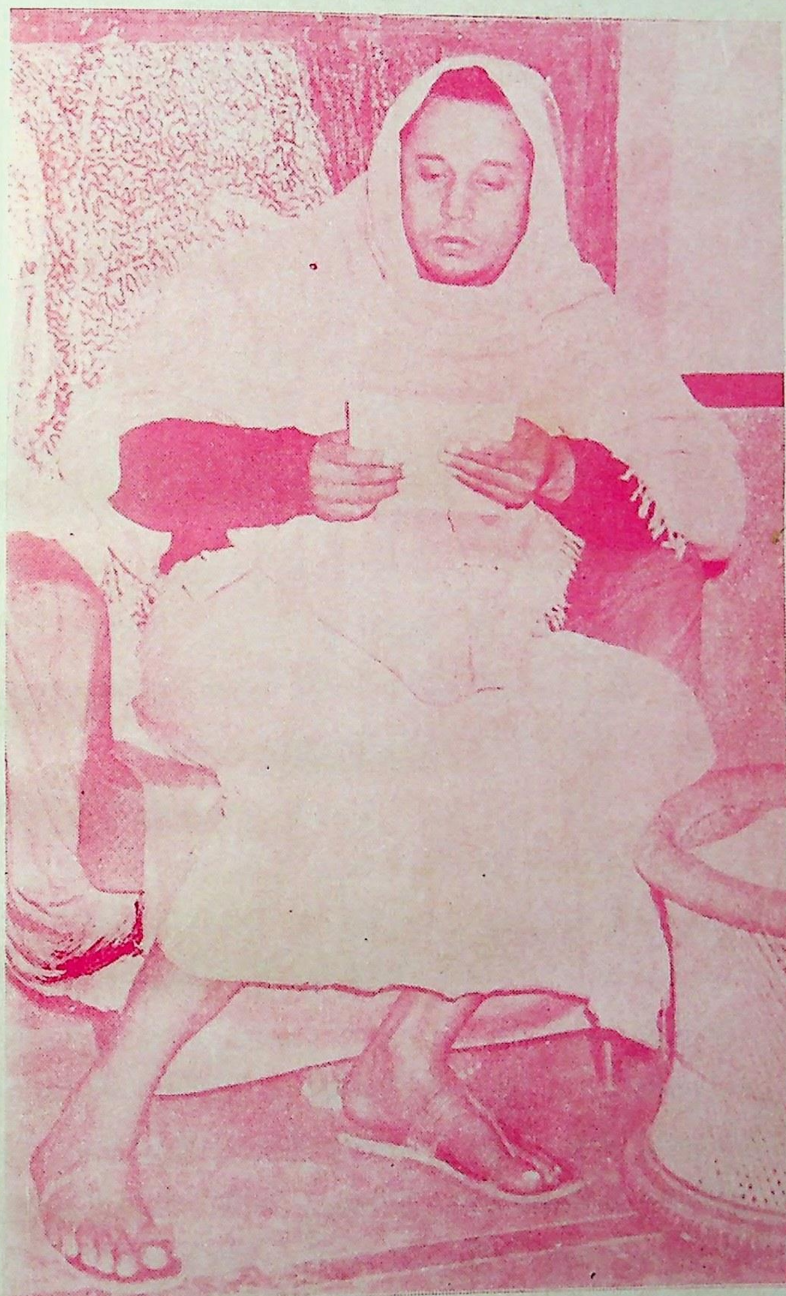
अभिन्न तत्त्व हैं। इस मान्यताके साथ यदि हम यजुर्वेदके रुद्राध्यायमें प्रकाशित रुद्रकी 'अघोरा' और 'घोरा' मूर्तिकी मान्यताका समन्वय कर दें तो शिवके अघोर अथवा औघड़ रूपके चिन्तनका रहस्य स्पष्ट हो जाता है। अन्ततः यह तथ्य सामने आ जाता है कि रुद्र इसलिये शिव है क्योंकि वह शिवा अथवा अघोरा शक्तिसे नित्य संयुक्त है। यहाँ यह बात उल्लेखनीय है कि रुद्रकी इस शिवा अथवा अघोरा मूर्ति अथवा शक्तिके रहस्य-चिन्तनके रूपमें एक बहुत बड़ा तन्त्र-साहित्य रचा गया है। जिसमें दृष्टि-भेदसे इस शक्तिको त्रिपुरा, त्रिपुरसुन्दरी, कामेश्वरी, मालिनी, मातृका, सर्वेश्वरी, खेचरी आदि-आदि रूपोंमें देखा गया है। इससे यह निष्कर्ष सहज ही निकल जाता है कि रुद्रकी अघोरा मूर्ति अथवा अघोरा शक्तिके उपासक अथवा साधक शक्ति-साधक होते हैं और जिसे आजकल 'औघड़' कहा जाता है वह अघोर-शिवरूप व्यक्तित्वका होता है। उसे अघोर शिव कहिये अथवा जीवन्मुक्त कहिये, एक ही बात है। काश्मीरके एक प्राचीन अघोर अथवा 'औघड़' दार्शनिक साधकका 'अघोर शिवाचार्य' नाम भी इसी बातको प्रमाणित करता है कि जो 'अघोर' अथवा 'औघड़' पदसे विभूषित होता है वह ऐसा साधक होता है जो शक्ति-सिद्ध होता है और शिव और शक्तिके सामरस्यका अथवा प्रकाश और विमर्शकी एकरूपताका अनुभवी होता है। बिना शक्तिके रुद्र अथवा अघोर-शिव भी तो शव ही रह जाता है। शक्ति जिसे महाशक्ति कहिये, अथवा सर्वेश्वरी कहिये, एक है। दार्शनिक दृष्टिमें इस एकरूपा शक्तिकी ही अनन्त रश्मियाँ दिखाई देती हैं जिनमें एकका नाम इच्छाशक्ति है तो दूसरीका नाम ज्ञानशक्ति है और तीसरीका नाम क्रियाशक्ति है। इसी प्रकार तिरोधान-शक्ति और अनुग्रह-शक्ति आदि-आदि नामोंसे इसी एक शक्तिकी अनन्त रश्मियोंका नामानुकीर्तन और गुणानुकीर्तन किया गया है। साधना-दृष्टिसे देखनेपर यही एक शक्ति खेचरी, व्योमचरी, दिक्चरी और भूचरी आदि रूपोंमें दिखायी देती है। शक्तिके इन विविध रूपों और नामोंमें, एकरूपा शक्तिके निर्देश करनेवाले दो नाम महत्त्वपूर्ण हैं जिनमें पहला नाम 'खेचरी' है और दूसरा नाम, जिसके उपासक इस पुस्तकके चरितनायक औघड़ भगवानराम हैं, सर्वेश्वरी हैं। 'खेचरी' शक्ति वह शक्ति है जो 'ख' अथवा ब्रह्मकी शक्ति है। बिना अपनी 'खेचरी' शक्तिके ब्रह्मका अस्तित्व प्रकाश-स्वरूप ही रह जाता है। निष्क्रिय, निष्पन्द 'संवित' अथवा ज्ञानकी कल्पना कीजिये। इस कल्पनामें 'ब्रह्म' का वह रूप

दिखायी देगा तो जगत्की सृष्टि, स्थिति और लयकी क्रिया-प्रक्रियासे सर्वथा तटस्थ रूप होगा। यह तो उसकी 'खेचरी' शक्तिकी महिमा है जो अपने संपर्कसे 'ब्रह्म' को जगत्की सृष्टि, स्थिति और लयकी लीलामें नित्य निरत रूपमें प्रदर्शित किया करती है। ब्रह्मकी इस 'खेचरी' शक्तिको ही 'दुर्गासप्तशती' में 'सर्वेश्वरी' रूपसे स्मरण किया गया है। वस्तुतः 'खेचरी' शक्ति ही 'सर्वेश्वरी' है क्योंकि वह विश्व प्रपंचकी ही ईश्वरी नहीं अपितु उस ब्रह्मकी भी ईश्वरी है जो विश्व-प्रपंचकी रचना और उसके नियंत्रणका परम कारण है। इस प्रसंगमें काश्मीरके एक महा-माहेश्वर शक्ति-साधककी नीचे लिखी सूक्ति ध्यानमें रखने योग्य है जिसमें शक्तिरहित ब्रह्मको नपुंसक कहा गया है—

'नपुंसकमिदं नाथ परब्रह्म फलेत् कियत्।
तत्पौरुषनियोक्तृ चेन्न स्यात् त्वच्छक्तिसुन्दरी ॥'

अर्थात् जबतक शक्तिसुन्दरी परब्रह्मका आलिङ्गन नहीं करती तबतक वह नपुंसक रहा करता है। यह तो शक्तिसुन्दरीके सम्पर्ककी महिमा है जिससे पर-ब्रह्मका छिपा पौरुष बाहर प्रकट होता है और ब्रह्माण्डका रूप निखर उठता है और यह भूमण्डल जिसमें प्राणिलोकका निवास है, यह जलमण्डल जो प्राणिलोकका जीवन है और यह नभोमण्डल जो सबको अपनी गोदमें धारण किये हुए है अपने-अपने प्रत्यक्ष दृष्टिगत रूप और वैभवमें प्रकाशित हो उठते हैं। ऊपर शास्त्र-चिन्ताकी ये बातें इसलिये बतायी गयी हैं कि भगवानरामकी जो शक्ति-सिद्धि अथवा सर्वेश्वरी-सिद्धि है उसका तात्पर्य उपर्युक्त आध्यात्म-रहस्यका साक्षात्कार है। यह आध्यात्म-रहस्य अथवा यह देवीदर्शन करनेवाला सन्त-महात्मा ही 'अघोर' अथवा 'औघड़' पदवीको अलंकृत करनेमें समर्थ माना जाता है। वस्तुतः ऐसे ही हैं इस पुस्तकके चरित-नायक जिनके नामके पहले 'औघड़' पदका प्रयोग किया जाता है। 'औघड़' भगवानरामकी जीवन-लीलाके वर्णनके पहले, इस पुस्तकमें, एशिया और भारत और विश्वके कतिपय और देशोंके शक्ति-साधकों और उनकी शक्ति-साधनाओंके जो उल्लेख हैं उनके द्वारा ग्रन्थकारने यह सूचित किया है कि जब कि समस्त लोक और परलोक और लोक तथा परलोकके जीवनका सूत्र-शक्तिसे ही संचालित होता है और अन्तमें शक्तिमें ही सिमटकर शक्तिरूप हो जाता है तो इस व्यापक विश्वमें जो भी अर्चा-पूजा और साधना-उपासना सर्वत्र प्रचलित है

वह वस्तुतः अन्ततः शक्तिकी ही पूजा और शक्तिकी ही साधना है। इस पुस्तककी विचार-धाराको ध्यानपूर्वक देखनेसे जो बात स्पष्ट दिखायी देती है वह यह है कि शक्ति-साधना एक ऐसा स्रोत है जिसके उद्गम-स्थानका पता नहीं चलता और न यह पता चलता है कि यह स्रोत किस समयसे अविरत प्रवाहके रूपमें चल रहा है किन्तु यह अवश्य पता चलता है कि स्थान-स्थानपर और समय-समयपर यह प्रवाह, गङ्गाकी धाराकी भाँति, प्रबल वेगसे बह रहा है। बहुत पहले, सम्भवतः आजसे दो-ढाई हजार साल पहले, भगवद्गीताके रचयिता महर्षि व्यास एक ऐसे 'महावीर' अथवा महान् शक्ति-साधक हो चुके हैं जिन्हें हम शक्ति-साधनाकी गङ्गाके प्रवाहमें वेग और विस्तार लानेके कारण 'भगीरथ' मान सकते हैं। इनके बाद शक्तिसिद्ध महावीरों अथवा अघोर-साधकों अथवा ठेठ हिन्दीके 'औघड़' शब्दसे सूचित सन्तों की, स्थान-स्थानपर और समय-समयपर, गुरु-शिष्य-परम्परामें प्रतिष्ठित हो जाती हैं। एक 'औघड़' सन्त-परम्परा, जिसका उद्गम-स्थल यह काशी है, किनारामी औघड़ परम्पराके नामसे, पिछली तीन शताब्दिओंके बीच, उत्तर भारतमें पूर्ण-रूपसे प्रतिष्ठित दिखाई देती है। इस पुस्तकके चरित-नायक, जैसा कि इसके लेखक श्रीचतुर्वेदीजीने दिखाया है, किनारामी 'औघड़' परम्पराके एक 'औघड़' महात्मा हैं जिनकी श्रीसर्वेश्वरी सिद्धिकी प्रसिद्धि जैसी काशीमें है वैसी ही काशीके बाहर भी है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि जो 'औघड़' सर्वेश्वरी-सिद्ध है उसका लोक-जीवन अपने लिये नहीं अपितु लोक-मंगल और लोक-कल्याणके लिये होता है। जो औघड़ सन्त होता है वह अपने व्यक्तिगत लोक-जीवनमें जैसा कि भगवानरामके लोक-जीवनके देखनेसे पता चलता है, एक 'अवधूत' के रूप और 'अवधूत' की ही वेश-भूषा और चाल-ढालमें मस्त दिखायी देता है। बिना 'औघड़' हुये, 'अवधूत' होना असम्भव है। 'औघड़' शक्ति-सिद्ध होता है इसलिये जैसे जगज्जननी महाशक्ति भारतके विविध शक्ति-पीठोंमें अवधूत-रूपधारिणी दिखायी देती हैं वैसे ही उसका साधक भी अवधूत-रूपधारी होकर विचरता दिखायी देता है। साधारण जन-समाजके लिये 'श्मशान' एक भीषण, भयंकर स्थान होता है किन्तु 'अवधूत'के लिये वह एक सौम्य, सुन्दर स्थल है जहाँ वह मातृशक्तिके सान्निध्यमें सुख और शान्तिका अनुभव करता है। 'औघड़' को इसीलिये 'अवधूत' कहते हैं क्योंकि वह साधारण जन-समाजकी सभी कार्य-प्रणालियों और सभी मान्यताओं-का 'अवधूनन' अथवा अवहेलना या उपेक्षा कर चुका होता है। उसको आदर्श-



पुस्तक का अवलोकन

पर मातेश्वरी अथवा सर्वेश्वरीका ही सौन्दर्य छाया रहता है जिससे उसे जो कुछ भी बाहर दिखायी देता है वह सर्वेश्वरीका ही दिव्य रूप होता है। इस पुस्तकके चरित-नायक 'औघड़ भगवानराम' एक पहुँचे हुये 'अवधूत' हैं। उनके 'अवधूत' होनेका सबसे बड़ा प्रमाण उनकी कुष्ठ-सेवा है। जिसे 'कुष्ठ' कहते हैं वह मनुष्य शरीरकी एक बड़ी कारुणिक विकृति है, जिससे मुक्त रहना, पाशुपात सूत्रोंके व्याख्याता कौण्डिन्यके अनुसार, शिव-पशुपतिके साधकोंका आवश्यक धर्म है। किन्तु 'अवधूत' भगवानरामके लिये मनुष्य-शरीरकी यह करुणाजनक दशा घृणाका पात्र नहीं अपितु प्रेम और सेवाका पात्र है। औघड़ भगवानरामका यह विश्वास है कि यदि भौतिक अथवा आत्मिक जीवनके कुष्ठ-सरीखे विकारोंके प्रति निर्विकार रहते, प्रेम और सद्भावनाके साथ, इन विकारोंसे ग्रस्त प्राणियोंकी सेवा की जाय तो वह सेवा श्रीसर्वेश्वरीकी ही सेवा होगी जिससे कुष्ठीका कुष्ठ तो भगवत् कृपासे दूर होगा ही किन्तु सेवा करनेवालेके मनका भी कुष्ठ, जिसे एक दृष्टिसे 'घृणा' और दूसरी दृष्टिसे 'अहंकार' का भाव कह सकते हैं, सर्वेश्वरीकी कृपासे दूर हो जायेगा। इस पुस्तकके लेखकने उपर्युक्त भावोंका यथा-स्थान जो निर्देश किया है उससे औघड़ भगवानरामकी अवधूत-चर्या और उसके द्वारा उनकी लोक-सेवा प्रकाशमें आ जाती है।

इस पुस्तकके लेखकने, जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, 'औघड़ भगवान-राम' को बहुत नजदीकसे देखा है और बहुत नजदीकसे देखनेके कारण, जो कुछ वर्णन-विवरण किया-दिया है उसके प्रति उसकी आस्थाका अनुमान पाठकोंको स्वभावतः हो जाता है। 'औघड़ भगवानराम' इस नामके दूसरे पद अर्थात् 'भगवान्' पदकी भी जहाँ-तहाँ इस पुस्तकमें चर्चा हुई है। 'भगवान्' एक ऐसा पद है जो कि कभी 'विशेष्य' रूपसे सार्थक होता है और कभी 'विशेषण' रूपसे। जब वह अपने 'विशेष्य' रूपमें रहता है तब परब्रह्म-परशिव-परविष्णु आदि शब्दोंसे संकेतित 'एकं सत्' का अभिप्राय रखता है। किन्तु जब यह 'विशेषण'-के रूपमें व्यवहारमें आता है तब सम्पूर्ण ऐश्वर्य, सम्पूर्ण धर्म, सम्पूर्ण यश, सम्पूर्ण श्री, सम्पूर्ण ज्ञान और सम्पूर्ण वैराग्यके अर्थ-षट्कका वाचक हो जाता है। जैसे बौद्ध-साहित्यमें वीर्य आदि पारमिताओंमें पूर्णतया पारंगत होनेके नाते 'बुद्ध' को भगवान् बुद्धके रूपमें माना गया है वैसे ही वैष्णव साहित्यमें सम्पूर्ण ऐश्वर्य आदि गुणोंके सम्पूर्णतया संयोगके कारण विष्णु अथवा राम अथवा कृष्णके लिये

भी 'भगवान्' पदका विशेषण प्रयुक्त किया गया है। यही बात शैव-साहित्यमें भगवान् शङ्करके सम्बन्धमें लागू होती है और जैन-साहित्यमें भगवान् महावीर-के लिये। 'औघड़ भगवानराम' इस शब्दमें जो 'भगवान' शब्द है उसका भी कुछ ऐसा ही अभिप्राय इस पुस्तकके लेखकने लिया है। भगवान ही तो आत्मा है और आत्मा ही भगवान् है। इस पुस्तकके चरित-नायक औघड़ भगवान रामके लिये श्रीसर्वेश्वरी और आत्माराम दोनोंका एक अभिन्न अस्तित्व है। श्री सर्वेश्वरी भगवती हैं और आत्माराम भगवान हैं। भगवती और भगवान्में भेद कहाँ? जैसे चन्द्र और चन्द्रिकामें भेद नहीं वैसे ही भगवान और भगवतीमें भेद नहीं।

'औघड़ भगवान राम' इस नाम शब्दके अन्तिम 'राम' पदमें तो सभी ऐश्वर्य महिमा और सभी पारमिताका अर्थ समन्वित हो जाता है जैसा कि नीचे लिखी 'राम' शब्दकी निरुक्तिमें स्पष्ट है—

'चिद्वाचको रकारः स्यात् सद्वाच्योऽकार उच्यते।
मकारानन्दवाची स्यात् सच्चिदानन्दमव्ययम्॥'

अर्थात् जो 'सच्चिदानन्द' रूपसे ध्येय है वही 'राम' है। 'राम' शब्दमें रकार, अकार और मकार ये तीन वर्ण हैं जिनमें रकारका अर्थ 'चित्' है, अकार का अर्थ 'सत्' है और मकारका अर्थ 'आनन्द' है। इसलिये 'राम' कहिये या 'सच्चिदानन्द' कहिये, बात एक ही होगी। जिस औघड़ सन्तकी जीवन-चर्याका इस पुस्तकमें वर्णन है उसका 'औघड़ भगवानराम' यह नाम सर्वात्मना सार्थक है—यह धारणा इस पुस्तकके पाठकोंकी बन जायेगी—इस विश्वासके साथ श्रीचतुर्वेदीजीने अपनी लेखनी उठाई है। औघड़ भगवानरामके सम्पर्कमें आनेवाले अथवा सम्पर्कमें न आनेवाले दोनों प्रकारके लोगोंके लिये श्रीचतुर्वेदीजीकी यह सन्त-चर्या वस्तुतः सराहनीय है। सन्त-चर्याकी परम्परा बड़ी पुरानी है। इस परम्पराके पीछे भारतीय संस्कृतिके आधारभूत सिद्धान्तोंकी चर्चामें भी परम्परा चलती आयी है। शताब्दियोंसे भारतकी संस्कृतिपर, राजनीतिक आक्रमणोंके साथ-साथ सांस्कृतिक आक्रमण होते आ रहे हैं। राजनीतिक आक्रमणोंमें भारत पराजित हुआ है किन्तु सांस्कृतिक आक्रमणोंमें अबतक वह अजेय बना हुआ है। भारतकी संस्कृतिकी रक्षा करनेवाले, ऐसा लगता है कि, सन्त-महात्मा लोग हैं जो आजतक

भारतीय संस्कृतिके लिये कवचका काम करते आये हैं। औघड़ भगवानरामपर इस पुस्तककी रचनाके पीछे ग्रन्थकारका यह भाव भी झलक जाता है कि औघड़ भगवानराम जैसे सन्त पूजनीय हैं क्योंकि वे भारतकी संस्कृतिके संरक्षक हैं। आजकलकी परिस्थितिमें जब चारों ओरसे भारतीय संस्कृतिपर आघात हो रहे हैं, औघड़ भगवानराम और उन जैसे सन्तोंकी चर्चा-वार्ताका महत्त्व बढ़ जाता है क्योंकि उनकी जीवन-चर्याके वर्णनमें भारतीय संस्कृतिके मौलिक तत्त्वोंकी भी चिन्ता अनिवार्य रूपसे हो जाती है।

श्रीचतुर्वेदीजीने औघड़ भगवानरामका जो जीवन-वृत्त इस पुस्तकमें प्रकाशित किया है उसे पढ़नेपर एक और बात प्रकाशमें आ जाती है और वह बात गुरु-नाम-कीर्तन और गुरु-गुण-वर्णनकी बात है। गुरुके नामके कीर्तन और गुणके वर्णनमें, जैसा कि प्राचीन शास्त्रीय मर्यादा है, देवताके नामका कीर्तन और गुणका वर्णन भी सम्पन्न हो जाता है और देवताके नामके कीर्तन और गुणके वर्णनमें 'मन्त्र' का ध्यान-चिन्तन समन्वित हो जाता है। हम पाठकोंसे आशा रखते हैं कि जब वे 'औघड़ भगवानराम' की इस जीवनीको पढ़ें तो उपर्युक्त सभी भावनाओं और धारणाओंपर भी ध्यान रक्खें क्योंकि सन्त-महात्माकी चर्चा अन्ततोगत्वा धर्म और ब्रह्मकी ही चर्चा है जो धर्म है वह भारतीय संस्कृतिका प्राण है और जो ब्रह्म है वह भारतीय संस्कृतिकी आत्मा है। शमिति।

डॉ० सत्यव्रत सिंह
प्राध्यापक तथा अध्यक्ष
संस्कृत तथा प्राकृत भाषा-विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय

शिव-संकल्प

औघड़ भगवानरामजीकी चर्चा अपने भ्रातृज चि० हरनारायण चतुर्वेदीसे सुनता रहा और बहुत दिनोंतक उत्सुकतापूर्वक उनके दर्शनकी प्रतीक्षा करता रहा। आजसे लगभग तेरह वर्ष पूर्व एक दिन बाबाकी कृपासे ही उनका दर्शन-लाभ वाराणसीमें ही प्राप्त हो गया। तदनन्तर किनाराम स्थल, मडुवाडीह बाग और पड़ाव-स्थित आश्रममें बराबर दर्शन और सत्संग-लाभ प्राप्त करता रहा हूँ।

सन् १९६१ की विजयादशमीको विन्ध्यक्षेत्रमें मैंने बाबाका एक संक्षिप्त जीवन-चरित 'ब्रह्मनिष्ठ विवरण' उन्हें समर्पित किया था। वह पुस्तक अब अप्राप्य हो गयी है और विगत तीन वर्षोंसे बाबाके शिष्य, भक्त और प्रशंसकोंने बराबर यह अनुरोध किया कि बाबाकी जीवनीको पुनः छपाकर सर्व-सुलभ बनाया जाय। इस बीच बाबाके आदेशानुसार मैं अघोर-साहित्य और साधना-पद्धतिकी जानकारी एकत्र करनेमें लगा रहा। भारतके विभिन्न प्रान्तोंमें स्थित औघड़ आश्रम, तीर्थों और पुस्तकालयोंमें बाबाके साथ यात्रामें जाकर मैं जानकारी प्राप्त करता रहा।

गत वर्षके अन्तिम चरणमें श्रीसर्वेश्वरी समूहकी कार्यकारिणीकी बैठकमें 'ब्रह्मनिष्ठ विवरण' का नया संस्करण छपानेका प्रस्ताव हुआ और बाबाके आदेशानुसार दीपावली सं० २०२९ विक्रमीयके उपरान्त मैं इस लेखन-कार्यमें जुट गया। बीचमें बाबा मध्यप्रदेश स्थित आश्रमोंमें एक मासके लिए चले गये, अतः लेखन-कार्य वांछित गतिसे न बढ़ सका। मध्यप्रदेशसे लौटकर आजतक बाबाने अपने सान्निध्यसे इस पुस्तकके प्रकाशनमें सभी सम्भव योग प्रदान किये हैं। घंटों बैठकर पाण्डुलिपि सुनना, अपने सुझाव देना, अपनी बानीके संग्रहकी अनुमति प्रदान करना आदि कुछ प्रकट सहयोग स्थूल दृष्टिगोचर हैं, किन्तु आत्मिक दृष्टिसे यह सम्पूर्ण प्रयास उनकी कृपादृष्टिका फल है।

पुस्तक-लेखन-कार्य प्रारम्भ करते ही सर्वप्रथम यह समस्या उठी कि इस ग्रन्थका नाम क्या रक्खा जाय? इससे पूर्व सन् १९६१ में 'ब्रह्मनिष्ठ-विवरण' शीर्षकसे बाबाका संक्षिप्त जीवन-चरित प्रकाशित किया गया था। संयोगवश इस ग्रन्थके लेखनके समय यह विचार किया गया कि 'ब्रह्मनिष्ठ-विवरण' नाम स्पष्ट

नहीं है इसलिये ग्रन्थका नाम ऐसा देना चाहिये जिससे विषय स्पष्ट हो जाय। अतः व्यापक विचार-विमर्शके पश्चात् यह निर्णय हुआ कि ग्रन्थका नाम 'औघड़ भगवानराम' ही रक्खा जाय जिससे ग्रन्थके प्रतिपाद्य विषयका सद्यः ज्ञान हो जाय।

यद्यपि इस ग्रन्थकी मूल सामग्री ब्रह्मनिष्ठ-विवरणमें प्राप्त थी तथापि इस पुस्तकके प्रकाशनके पश्चात् बाबाजीका कार्यक्षेत्र और उनकी लोकमंगल-प्रवृत्तियोंमें पर्याप्त संवर्धन हुआ जिनका समावेश करना इस ग्रन्थमें आवश्यक ही नहीं अनिवार्य हो गया। उस पुस्तकके प्रकाशनके अनन्तर लोगोंमें विशेषतः बाबाके भक्तोंमें यह जिज्ञासा अधिक जागरूक रूपसे सम्भूत हुई कि अघोर-सम्प्रदाय क्या है? इसका दार्शनिक आधार क्या है? इसकी व्यवहार-पद्धति और आचार-पद्धति क्या है? इसकी साधनाका स्वरूप और इसकी रीतियाँ क्या हैं? ये सब ऐसे ज्वलन्त प्रश्न थे जिनका समाधान करना नितान्त वांछनीय समझा गया क्योंकि जिस महा-पुरुषके सम्बन्धमें इतना बड़ा ग्रन्थ लिखा जा रहा हो उसमें उसके जीवन-चरितके साथ उसकी आध्यात्मिक-साधना और उसके जीवन-दर्शनका भी परिचय दे देना आवश्यक है। इसी विचारसे प्रेरित होकर यह निर्णय किया गया कि अघोर-दर्शनके वैदिक और पौराणिक स्वरूपकी व्याख्या करके उसका मनोवैज्ञानिक और वैज्ञानिक विवेचन कर देना और उसकी दार्शनिक परम्पराका परिचय दे देना नितान्त समीचीन होगा। इसी वृत्तिसे प्रेरित होकर इस ग्रन्थमें अघोर-मत, अघोर-सम्प्रदाय, अघोर-साधना और अघोर-साधकोंके प्रतिहार्यका विवेचन करके बाबाकी गुरु-परम्परा, उनके सिद्धपीठ और उनकी शिष्य-परम्पराका भी सामान्य परिचय दे दिया गया है जिससे उस सम्प्रदाय-परम्परामें दीक्षित सभी महात्माओं और साधकोंका परिचय प्राप्त होनेके साथ-साथ उस परम्परामें बाबाका महत्त्व भी सिद्ध हो जाय। इसीलिए जहाँ एक ओर एशियाके सन्त और भारतीय सन्त-परम्पराकी दीर्घकालीन परम्पराका परिचय दिया गया है वहीं बाबा किनारामकी महत्ता, उनके अलौकिक चमत्कार, उनके प्रभाव और उनकी शिष्य-परम्पराका परिचय देते हुए उसमें बाबाका स्थान भी निर्धारित कर दिया गया।

बाबाके इस जीवन-वृत्तमें जहाँ उनकी अघोर-साधना, दीक्षा और सिद्धिकी चर्चा की गई है और उनकी लोक-संग्रह और लोकमंगल-भावना, उनके लोकमंगल-कारी कार्यका विवरण दिया गया है वहाँ उनके धरणी-भ्रमण, आश्रम-योजना और

उनकी वाणियोंका भी विवरण दे दिया गया है जिससे उनकी नैसर्गिक भावनाओं, व्यापक प्रवृत्तियों और योजनाओंका पूरा परिचय प्राप्त हो जाय और उनका वास्तविक जीवन-दर्शन समझनेमें सुविधा हो।

यह ग्रन्थ-लेखन-कार्य इतना विस्तृत, व्यापक और कठिन था कि इसके लिये जितना अध्ययन और ग्रन्थानुशीलन आवश्यक था उतना ज्ञान संग्रह करना और फिर उसे लेखबद्ध करके ग्रन्थ-रूपमें प्रस्तुत करना सामान्य कार्य नहीं था किन्तु भगवानकी कृपा और बाबाके आशीर्वादसे तथा उनके अनेक शिष्यों और भक्तोंके सहयोगसे यह दुरूह कार्य भी सुविधापूर्वक सम्पन्न हो गया।

इस ग्रन्थके ऐतिहासिक और दार्शनिक पक्षके अतिरिक्त इसका अधिक महत्त्वपूर्ण अंश है अवधूतबानी, प्रवचन और प्रश्नोत्तरी जिसमें समय-समयपर बाबा द्वारा दिये हुये उपदेशों, प्रवचनों और उत्तरोंका समावेश कर लिया गया है। इन प्रवचनोंसे बाबाका सिद्धान्त, उनकी विचार-सरणि उनकी आजकी भावना, आकांक्षा, प्रवृत्ति और साधना सबका स्वरूप स्पष्टतः प्रकट हो जाता है। यही वह महत्त्वपूर्ण अंश है जिसे प्राप्त करनेके लिये और जिसका परिचय पानेके लिये उनके भक्त निरन्तर लालायित रहते थे। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि यह सम्पूर्ण कार्य तबतक पूर्ण न हो पाता जबतक स्वयं बाबा ही सक्रिय रूपसे सन्नद्ध होकर इस दुरूह कार्यकी सम्पूर्णतामें अपना सात्त्विक सहयोग न देते। अघोर-पंथकी साधना, उसके विविध क्रिया-कलाप और उसके दार्शनिक आधारके सम्बन्धमें बाबाने ही समय-समयपर तात्त्विक विवेचनके साथ विस्तारसे उनका परिचय दिया है। यदि उनका सहयोग न प्राप्त होता तो न इस ग्रन्थकी योजना बन पाती, न इसमें समाविष्ट विषयोंकी तालिका बन पाती और न इतने स्पष्ट रूपसे सम्बद्ध विषयोंका विवेचन ही किया जा पाता। अतः इस ग्रन्थके निर्माणका सम्पूर्ण श्रेय बाबाके तत्पर सहयोगको ही है।

लखनऊ विश्वविद्यालयके संस्कृत विभागके अध्यक्ष एवं वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालयके भू० पू० उपकुलपति डॉ० सत्यव्रत सिंह भी बाबाके अनन्य प्रेमियोंमें हैं। जब उन्हें इस ग्रन्थके लेखनका समाचार मिला तो वे तत्काल काशी चले आये और यहाँ पन्द्रह दिन रहकर उन्होंने नितान्त मनोयोगसे इस ग्रन्थकी भूमिका लिखी जिसमें उन्होंने अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण ढंगसे अघोर-पंथके दार्शनिक पक्षका

अत्यन्त विशदताके साथ रहस्योद्घाटन और प्रतिपादन किया। डॉ० सत्यव्रत सिंहजी-ने जिस निष्ठा, अध्यवसाय, श्रम और मनोयोगके साथ इस ग्रन्थका कलेवर आदिसे अन्ततक देखा है और इसके विभिन्न विषयोंके प्रतिपादनका परिशीलन किया है और बीच-बीचमें समुचित परामर्श देकर इसके परिष्कारमें जो सहयोग दिया है उसके प्रति शाब्दिक धन्यवाद देना उसका महत्त्व कम करना होगा। अपने प्रौढ़-पाण्डित्य और विद्वत्तासे पूर्ण अपनी भूमिकामें उन्होंने अघोर-पंथकी सम्पूर्ण दार्शनिक पृष्ठभूमि व्यक्त करके उसके वास्तविक स्वरूपको स्पष्ट करनेका अत्यन्त साधु प्रयत्न किया है, इसलिये उसे कृतज्ञतापूर्वक स्मरण कर लेना सात्त्विक शिष्टाचार है।

पिछले अनेक वर्षोंमें अगणित और असंख्य शिष्य बाबाके निकट सम्पर्कमें आकर उनके आचार-विचार और व्यवहारसे बहुत प्रभावित हुए हैं। इतना ही नहीं, कुछ शिष्योंने उनके सम्पर्कसे उनकी चामत्कारिक विभूतियोंका भी दर्शन किया है। उन सबकी यह बलवती इच्छा रही कि बाबाके सम्बन्धमें जो उनकी व्यक्तिगत अनुभूतियाँ हैं उन्हें भी लिपि-बद्ध करके सुरक्षित कर लिया जाय। इसीलिये इस ग्रन्थमें एक विशेष अध्याय जोड़ दिया गया है जिसका शीर्षक है "अपने शिष्योंकी दृष्टिमें।" इस अध्यायमें बाबाके अनेक शिष्यों और भक्तोंने अपने-अपने विशेष अनुभवोंके संकेत किये हैं और बाबाके सम्पर्कसे उन्हें जो भौतिक और अलौकिक लाभ पहुँचे हैं उनका भी उल्लेख किया है। किसी भी महापुरुषको भली प्रकार पहिचाननेके लिये उन अनेक दृष्टियोंका अनुभव आवश्यक होता है जिन्होंने विभिन्न समयोंमें विभिन्न अवसरोंपर, विभिन्न रूपसे, विभिन्न प्रकारके असाधारण अनुभव किये हों। इसी दृष्टिसे यह महत्त्वपूर्ण अध्याय सम्पादित करके अन्तमें जोड़ दिया गया है। उसमें यह ध्यान अवश्य रक्खा गया है कि किसी अंशकी आवृत्ति न हो, कोई अंश अनावश्यक रूपसे न जोड़ दिया गया हो और कहीं अतिशयोक्ति न प्रतीत हो। फिर भी प्रत्येक महात्माके साथ कुछ ऐसे चमत्कार-पूर्ण प्रसंग आ ही जाते हैं जिनकी कोई बौद्धिक या वैज्ञानिक मीमांसा नहीं की जा सकती किन्तु जो नितान्त सत्य और प्रत्यक्ष होते हैं।

आजकल ज्ञान-विज्ञानके अनेक क्षेत्रोंमें अनेक प्रकारके शोध किये जा रहे हैं। बहुतसे विद्वानोंने इसपर ग्रन्थ लिखे भी हैं जिनमें श्रीरामदास गौड़, डॉ० धर्मेन्द्र

ब्रह्मचारी, पं० गोपीनाथ कविराज आदि प्रमुख हैं। शोध-कार्य करनेवालोंके लिये अन्तमें उन सब ग्रन्थोंकी सूची दे दी गयी है जिनसे इस ग्रन्थके लेखनमें सहायता ली गयी है या जिनसे अघोर-पंथका पूर्ण परिचय पानेमें पर्याप्त सहायता प्राप्त हो सके। इस ग्रन्थके मुद्रणमें श्रीशशिकुमार गुप्तने जो आर्थिक सहायता प्रदान की है उसके लिये श्रीसर्वेश्वरी समूहकी ओरसे वे धन्यवाद और आशीर्वादके पात्र हैं। श्रीसज्जनकुमार कानोडिया, १२।१ बालीगंज पार्क रोड, कलकत्ता, पश्चिम बंगालने इस ग्रन्थके प्रकाशनमें जो आर्थिक सहयोग प्रदान किया है उसके लिये हम उनके कृतज्ञ हैं और आभार-प्रदर्शनके साथ ही उनकी मंगल-कामना भी करते हैं।

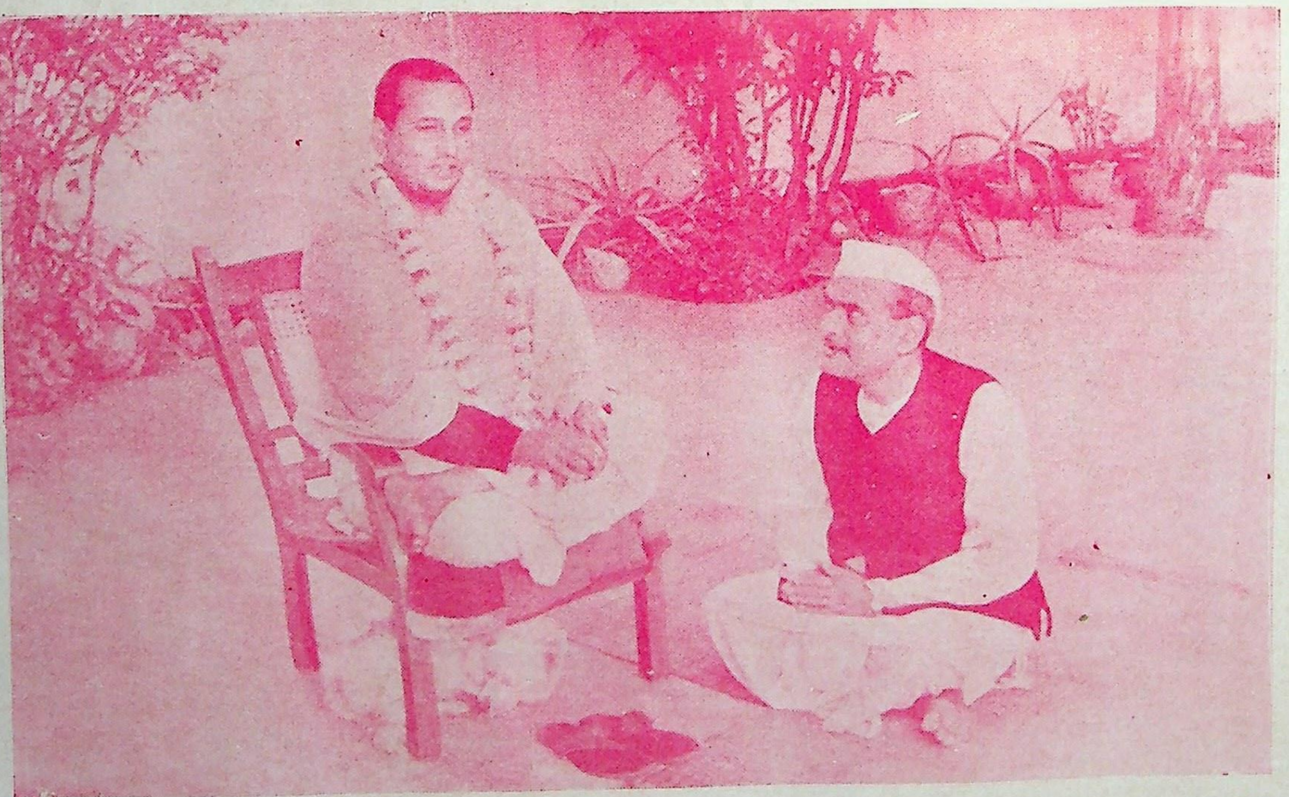
जिन अनेक विद्वानों, मित्रों, सहयोगियों और शिष्योंने तथा अनेक ग्रन्थोंके लेखकोंने सहयोग दिया है उन सबको मैं हृदयसे धन्यवाद और साधुवाद देता हूँ और मुझे विश्वास है कि उनका सहयोग इसी प्रकार उदारतापूर्वक प्राप्त होता रहेगा।

पितृकल्प अग्रज श्रीसीताराम चतुर्वेदीजीके अत्यन्त स्नेहपूर्ण पथ-प्रदर्शन और सक्रिय-सहयोगके प्रति मैं भक्तिपूर्वक नमित हूँ। श्रीईश्वरचन्द्र सिनहा, श्रीरामशंकर पाण्डेय, श्रीराजेश्वरप्रसाद त्रिपाठी, प्रो० कृष्णदेवनारायणराय, प्रो० हरनारायण चतुर्वेदी और प्रो० गिरीन्द्रनाथ शर्माने जिस मनोयोगपूर्वक इस ग्रन्थके मुद्रणमें योगदान किया है उसके प्रति मैं चिरकृतज्ञ हूँ।



यज्ञनारायण चतुर्वेदी
प्रवक्ता
स्नातकोत्तर वाणिज्य विभाग
हरिश्चन्द्र महाविद्यालय
वाराणसी

गणेश चतुर्थी, संवत् २०२९
वाराणसी



लेखक को प्रेरणा

औघड़ भगवान राम

रुद्राक्ष १

एशिया के संत और भारतीय संत-परम्परा

सबसे बड़े हैं संत, दूसरा नाम है।
तिसरे दस अवतार, तिन्हें परनाम है ॥ पल्टू ॥

वास्तवमें संतसे बड़ा कोई अन्य नहीं है। यह जानकर उनमें निश्छल प्रीति करना ही जीवनकी सफलता है। संत सभी देश और कालमें अवतरित होकर मानवका पथ-प्रदर्शन करते हुये उसका कल्याण-साधन करते हैं। वे रहते तो हैं साधारण मनुष्यों के बीच ही, परन्तु उनका निवास बड़ी ऊँची दशामें होता है। भक्त चरन दासने कहा है :—

पृथ्वी पर देही रहे, परमें सुरमें प्रान।

जगतका व्यवहार संत भी लोक-संग्रहकी दृष्टिसे करता है। संतका यह स्वरूप केशोदासके इस सवैयेमें भलीभाँति स्पष्ट है :—

निसि-बासरू बस्तु बिचार सदा, मुख साँच हिये करुना धन है।
अघ निग्रह, संग्रह, धर्म-कथा, निपरिग्रह साधनको गुन है ॥
कह कैसो भीतर जोग जगैर, इत बाहर भोगमई तन है।
मनहाथ भये जिनके तिनके बन ही घर है घर ही बन है ॥

संतका परिचय गोस्वामी तुलसी दासने 'संत सरल चित जगत हित' में दिया है। जो 'निज प्रभुमय' जगतको देखता है, वह किसीसे विरोध क्यों करेगा ? इसी लोक सेवाकी मंगल भावनासे उसमें जो सामर्थ्य है उसे पल्टूजीने इस प्रकार कहा है :—

पल्टू घरमें रामके और न करता कोय।
राम समीपी संत है वे जो करें सो होय ॥

ईश्वरकी चर्चामें उसके, कर्त्तु-अकर्त्तु अन्यथा कर्त्तु समर्थ 'जो चाहे करे, जो चाहे न करे।' जो होनेवाला हो उसे बदल देनेके सामर्थ्यकी चर्चा है। यही सामर्थ्य संतकी भी होती है। ऐसे ही सर्वसमर्थ संतोंका एशिया भू-भागसे कुछ उदाहरण प्रस्तुत करना इस अध्यायका प्रयोजन है। एशियाके अन्य देशोंके संतोंके वर्णनके साथ ही भारतकी संत-परम्परा भी दी गई है। वास्तवमें संतोंके बीच बड़ा-छोटा देखना या उनमेंसे एकको चुनकर दूसरोंको छोड़ देना एक महान भूल है, परन्तु सभी भाषा और साहित्यमें संतोंके विषयमें इतना साहित्य है कि इस छोटे

अध्यायमें उन सबका समावेश नहीं किया जा सकता। अतः पाठकोंसे अनुरोध है कि वे अपनी जिज्ञासाकी पूर्तिके लिये अन्य सम्मानित ग्रन्थों, पत्र-पत्रिकाओं तथा लेखोंसे अपनी तुष्टि करें।

इन चरित्रोंको जब आप अपनी सुदृष्टि देंगे तभी पा सकेंगे। लोग कहते हैं कि संतोंकी उल्टी चाल है। इसका अर्थ यह नहीं कि वे मनमाना आचरण या बुरा कर्म करते भी नहीं डरते। वे विषयी लोगोंके मार्गसे उल्टे मार्गपर चलते हैं। विषयी पुरुष मान, धन, सांसारिक उन्नतिको महत्त्व देते हैं, किन्तु संत सांसारिक उन्नतिको तुच्छ समझते हैं। यह बात साधक-संतोंकी है। सिद्ध संत सर्वथा उलटे हुये हैं। लोक-संग्रही संत तो यह उल्टापन बाहर प्रायः आने ही नहीं देता। हाँ, बाह्याचारकी परवाह न करनेवाले अवधूतोंकी बात निराली है।

श्रीमद्‌भागवत में भगवान ने संतोंका गुणगान इस प्रकार किया है :—

निरपेक्षं मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शनम्।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यङ्घ्रिरेणुभिः॥

श्रीमद्‌भागवत ११।१४।१६।

निरपेक्ष, शान्त, निर्वैर और समदर्शी संत चरण-रजसे अपनेको पवित्र करनेके लिए सदा ही भगवान उनके पीछे-पीछे फिरा करता है। अस्तु ऐसे तरन-तारन महानुभावोंका विवरण संक्षेपमें दिया जा रहा है।

महात्मा कन-फू-ची

महात्मा कन-फू-ची चीनके एक महान संत हो गये हैं। आपका आविर्भाव ईसासे पूर्व छठीं शताब्दीमें हुआ था। उस समय चीनकी स्थिति बड़ी दारुण थी। सर्वत्र विप्लवके दृश्य दिखाई पड़ते थे। सम्राट निकम्मे तथा भोग-विलासमें लिप्त और दुराचारी हो गये थे। देशके प्राणको अपनी साधना और तपसे अनुप्राणितकर उन्नतिके मार्गपर ले जानेके लिए ही इस महात्माका जन्म हुआ था।

उनके जीवनमें मोड़ लानेवाली घटना उनके माताके देहान्तकी थी। तीन वर्ष तक शोकमें आपको एकान्तवास करना पड़ा। इस एकान्तवासमें आत्म-चिन्तनकी सहज सुविधा मिलनेसे आपको अध्यात्मका रस मिला। धर्मशास्त्र, दर्शन, न्यायशास्त्र तथा इतिहासका आपने अनुशीलन किया। आपकी योग्यतासे प्रसन्न हो राजाने आपको न्यायाधीश बनाया, परन्तु राजाकी विलास-लिप्सासे खिन्न होकर आप राज्यकी सेवासे अलग हो गये।

राज्यकी नौकरी छोड़कर आप चौदह वर्षों तक सम्पूर्ण चीनमें घूम-घूमकर लोगोंको उपदेश करते रहे। हजारों शिष्य आपके हुये। ७१ वर्षकी अवस्थामें आप परमधाम सिधारे। आत्मानुशासन आपके उपदेशका सार-तत्त्व है। आपके कुछ उपदेश वाक्य यहाँ उद्‌धृत किये जाते हैं :—

'सुनिश्चित ध्येयको लेकर चलनेवाला कभी पथ-भ्रष्ट नहीं होता। सज्जन वही है जो बोलनेमें धीमा, मीठा और काम करनेमें तेज तथा सतर्क हो। सज्जन सत्यको

और दुर्जन धनको सर्वोत्तम वस्तु समझता है। संसारके सारे ज्ञानका मूलमंत्र है। 'कभी बुरी बात न सोचो।' साधु वही है जो भोजनके लिए व्याकुल नहीं होता। जो चिन्ताओंसे मुक्त है और जो अपना अन्त आता देखकर डरता नहीं। धन पाकर गर्व करना आसान है पर निर्धन होकर निश्चिन्त होना कठिन है।'

सूफी संत हाफ़िज

जन्म काल अज्ञात—मृत्यु सन् १३९० ई०

उक्तियाँ

१—चाहे कितना पवित्र मनुष्य क्यों न हो लेकिन तब तक वह स्वर्गमें नहीं जा सकता, जबतक कि मेरे समान वह अपने वस्त्रोंको शराब खानेमें शराबके लिए रेहन नहीं कर देता।

२—जो लोग रूखे स्वभावके हैं, जिन्हें दूसरोंसे स्नेह नहीं है, उनके पास मत जाओ। तुम्हारे निजी घरमें ही विश्राम करनेके लिये कोना मौजूद है।

३—मैंने उसी एकको पानेकी आशामें दोनों जहानोंको मिटा डाला। इसके लिये मुझे दोष मत दो। दोनों जहानोंका अन्त एक यही है।

प्रेम-मार्गी-सूफी संतोंमें हाफिजका नाम बहुत सम्मानके साथ लिया जाता है। इनके उपदेशोंका जनता पर बड़ा प्रभाव पड़ा। ये हृदय प्रधान संत थे और इसी कारण इनके हृदयसे निकले हुए उद्गारोंने सभीके हृदयोंको स्पर्श किया। हाफिजने इसी बात-पर जोर दिया कि विधि-विधानके सारे जालको छिन्न-भिन्न कर मन, बुद्धि, चित्त और प्राणको प्रभुमें एकनिष्ठ होकर अर्पित करें। सर्वार्पणकी प्रक्रियामें अपने आध्यात्मिक गुरुसे मार्ग पूछें और उसीका अनुकरण करें। हाफिजके आदेशोंका सारांश यही है कि संसारके समस्त राग-द्वेषको मिटाकर मनुष्य प्रभु प्रेम और हृदयकी सच्ची प्रार्थनाकी साधना करे। फारसके घर-घरमें हाफिजके उपदेशोंका बहुत अधिक आदर हुआ।

सूफी संत रबिया

बसराके एक बड़े ही गरीब परिवारमें रबियाका जन्म हुआ। उससे बड़ी तीन बहिनें थी। अकालमें माता-पिताकी मृत्यु हो गई। किसीने रबियाको एक सम्पन्न व्यक्तिके हाथ बेच दिया। वह धनी व्यक्ति इतना क्रूर और नृशंस था कि कुमारी रबियासे बुरी तरह काम लेता और उसे मारता-पीटता भी। एक अँधेरी रातको रबिया वहाँसे भाग निकली। रात अँधेरी और रास्ता बीहड़। ठोकर खाकर वह गिर पड़ी और उसका दाहिना हाथ टूट गया। उस दारुण दशामें रबियाने धरती पर मस्तक टेककर प्रार्थना की–'हे प्रभु ! मुझे अपनी दुर्दशापर शोक नहीं है। मैं तुझे भूलूँ नहीं और—तू मुझपर प्रसन्न रहे, बस यही एक प्रार्थना है।'

कुरान पढ़ने और एकान्तमें प्रार्थना करनेका रबियाको व्यसन सा था। आधी रातको जब सभी सो जाते, रबिया प्रभुकी प्रार्थना करती। एक रात वह ऐसी ही प्रार्थना कर रही थी–'हे प्रभु ! तेरी ही सेवामें मेरा रात-दिन बीते, ऐसी मेरी इच्छा

है। पर मैं क्या करूँ ? तूने मुझे पराधीन दासी बनाया है; इसीलिये मैं सारा समय तेरी उपासनामें नहीं दे सकती। हे प्रभु ! इसके लिये मुझे क्षमाकर।'

जिस सेठके यहाँ वह थी वह बाहरसे रबियाकी प्रार्थना सुन रहा था। अपनी कठोरता पर उसे बड़ी ग्लानि हुई। रबियाके चरणोंमें गिरकर उसने क्षमा माँगी और श्रद्धा-भक्तिपूर्वक कहा—'आप मेरे घर रहेंगी तो मैं आपकी सेवा करूँगा। आप अन्यत्र जाना चाहें तो आपकी इच्छा। मालिकके मनमें प्रभुकी प्रेरणा समझकर रबिया उसे नमस्कार कर विदा हो गयी। वहाँसे आकर उसने कठोर तपश्चर्यामें जीवन बिताया।

महात्मा हुसेन उन दिनों बसरामें ही थे। रबिया उनके सत्संगमें जाया करती और धर्म-चर्चामें भाग लेती। एक बार निर्जन बनमें जाकर रबियाने योगाभ्यास किया और आयुका शेष भाग मक्कामें ही बिताया। इब्राहीम आदमसे मक्कामें ही उसका सत्संग हुआ था। जीवन-पर्यन्त कौमार्यव्रतका पालन कर भजनमें जीवन बिताने वाली रबिया जैसी देवियाँ इस जगतमें गिनती की ही हुई हैं।

एकदिन हुसेनने रबियासे पूछा तुम्हारा मन विवाह करनेका हे। रबियाने उत्तर दिया विवाह तो होता है शरीरका मेरे पास शरीर ही कहाँ है ? यह शरीर तो मैं ईश्वरको अर्पित कर चुकी हूँ। कहो अब मैं कौनसे शरीरका विवाह करूँ ?

एक बार एक धनिकने रबियाको फटे-पुराने कपड़े पहने देखकर कहा, देवि ! यदि आप संकेत मात्र कर दें तो आपकी दरिद्रता दूर हो जाय। रबियाने उत्तर दिया, तुम भूल करते हो। सांसारिक दरिद्रता दूर करनेके लिये किसीसे भीख क्यों मागूँ ? इस संसारमें उस परमात्माका राज्य फैला हुआ है। उसे छोड़कर दूसरेसे क्यों मागूँ ? जो कुछ लेना होगा उसीके हाथसे लूँगी।

एक बार रबिया बीमार हो गयी। हाल पूछनेके लिये अब्दुल उमर और सुफियान आये और रबियासे कहा कि स्वास्थ्यके लिये तुम प्रभुसे प्रार्थना करो। रबिया बोली यह क्या कह रहे हो ? मेरे इस रोगमें क्या उस प्रभुका हाथ नहीं है ? मैं तो उसकी दासी हूँ। दासीकी अपनी इच्छा कैसी। मेरी जो इच्छा मेरे प्रभुकी इच्छासे विरुद्ध हो, वह सर्वथा त्याज्य है।

रबिआकी प्रार्थना थी—हे प्रभु ! यदि मैं नरकके डरसे ही तेरी पूजा करती होऊँ तो मुझे उस नरककी आगमें जला डालना और यदि स्वर्गके लोभसे मैं तेरी सेवा करती हूँ तो वह स्वर्ग मेरे लिये हराम हो। किन्तु यदि मैं तेरी ही प्राप्तिके लिये तेरा पूजन करती होऊँ, तो आप अपने अपार सुन्दर स्वरूपसे मुझे वंचित न रखना।

यहूदी संत एलिजा

यहूदियोंकी प्राचीन संस्कृतिमें यज्ञका स्थान अत्यन्त ऊँचा था। इनके यज्ञमें पशु-बलि परमावश्यक थी। मूसाके बाद एलिजा एक सुप्रसिद्ध महात्मा हो गये हैं, जिनके विषयमें लिखा है कि वे सशरीर स्वर्गको गये। इस स्वर्ग गमनका वृतान्त बड़ा ही भाव पूर्ण है और बाइबिलमें अवलोकनीय है। (देखिये-ओल्डटेस्टामेन्टका बारहवाँ पर्व दूसरा अध्याय)। ईसाके जन्मके बादसे दूसरी संस्कृतिका प्रादुर्भाव होता है।

यहूदियोंमें अब भी महात्मा मूसाके प्रति अपार श्रद्धा पायी जाती है। मूसा द्वारा निर्दिष्ट धर्मशास्त्र विषयक आदेशोंका अब भी बड़ा मान है। कुछ विद्वानोंका मत है कि इन आदेशोंमें तो केवल यहूदी धर्मकी बाह्य बातें ही दी गयी हैं। इन लोगोंमें एक गुप्त तथा प्राचीन मौखिक रहस्यवादका प्रचार गुरु-शिष्य परम्पराके अनुसार बतलाया जाता है। इस रहस्यवादका नाम 'कबाला' है और इसका सम्बन्ध रहस्यवादी प्राचीन यहूदी महात्मा साइमन ब्रेन जोकार्डका उल्लेख मिलता है। कहा जाता है कि इन्होंने अनेक वर्ष पर्यन्त एक गिरि-गुहामें निवास करके इस महाविद्याको प्राप्त किया था।

कबीर

एक प्राचीन अनूदित ग्रन्थमें लिखा है कि किसी महान योगीके औरस और प्रतीचि नामक देवांगनाके गर्भसे भक्तराज प्रह्लाद ही कबीरके रूपमें संवत् १४५५ ज्येष्ठ शुक्ल १५ को प्रकट हुए थे। उन्हें नीरू-नीमा नामके जुलाहा दम्पतिने पाला था। कुछ लोग उन्हें जन्मसे मुसलमान बताते हैं। ऐसा प्रसिद्ध है कि एक दिन एक पहर रात रहते हो कबीर पंचगंगाघाटकी सीढ़ियोंपर जा पड़े। वहींसे रामानन्द जी स्नान करनेके लिये नीचे उतरा करते थे। रामानन्दजीका पैर कबीरपर पड़ गया। रामानन्द जी चट राम-राम बोल उठे। कबीरने इसे ही श्री गुरुमुखसे प्राप्त दीक्षा-मन्त्र मान लिया और स्वामीरामानन्दको अपना गुरु कहने लगे। स्वयं कबीरके शब्द हैं—

हम काशी में प्रगट भये हैं रामानंद चेताये।
काशी का मैं ब्राह्मण, नाम मेरा परबीना।
एकबार हरिनाम से चूक भया, पकड़ जुलाहा घर कीना॥

मुसलमान कबीर पन्थियोंकी मान्यता यह है कि कबीरने प्रसिद्ध सूफी मुसलमान फकीर शेख तकीसे दीक्षा ली थी। परन्तु कबीरने शेख तकोका नाम उतने आदरसे नहीं लिया है, जितना स्वामी रामानन्दका। इसके सिवा कबीरने पीर-पीताम्बरका नाम भी विशेष आदरसे लिया है। इन बातोंसे यही सिद्ध होता है कि कबीरने हिन्दू-मुसलमानका भेदभाव मिटाकर हिन्दू सन्तों तथा मुसलमान फकीरोंका सत्संग किया और उनसे जो कुछ तत्त्व प्राप्त हुआ उसे हृदयंगम किया। इनके परिवारके बारेमें जनश्रुतिके अनुसार एक पुत्री और एक पुत्र थे जिनका नाम कमाली तथा कमाल था। कबीर पढ़े-लिखे नहीं थे। स्वयं उन्हींके शब्दोंमें—

मसि कागद छूवो नहीं, कलम गहो ना हाथ।

कबीरकी वाणीका संग्रह 'बीजक' के नामसे प्रसिद्ध है। इसके तीन भाग हैं—रमैनी, सबद और साखी। इसमें वेदान्त तत्त्व, हिन्दू-मुसलमानोंको उनके पाखण्ड, अन्धविश्वास तथा मिथ्याचारके लिये फटकार, संसारकी क्षणभंगुरता, हृदयकी शुद्धि, माया, छुआछूत आदि अनेक फुटकर प्रसंग हैं। भाषा खिचड़ी है। पंजाबी, राजस्थानी, खड़ी बोली, अवधी, पूरबी, ब्रज भाषा आदि कई बोलियों का पंचमेल है। भाषा साहित्यिक न होनेपर भी बहुत ही जोरदार तथा पुरअसर है।

कबीरको शान्तिमय जीवन बहुत प्रिय था। वे अहिंसा, सत्य, सदाचार आदि सद्गुणोंके उपासक थे। कबीरने परमात्माको मित्र, माता, पिता, पति आदि रूपोंमें देखा है। कभी वे कहते हैं—'हरि मोर पिउ मैं रामकी बहुरिया' और कभी कहते हैं—'हरि जननी मैं बालक तोरा।' बुढ़ापेमें कबीरके लिये काशीमें रहना लोगोंने दूभर कर दिया। यश और कीर्तिकी उनपर वृष्टि सी होने लगी। कबीर इससे तंग आकर मगहर चले गये। ११९ वर्षकी अवस्थामें मगहरमें ही उन्होंने शरीर छोड़ा। संत कबीरका नाम उनकी सरलता और साधुताके लिये संसारमें सदा अमर रहेगा। उनकी कुछ साखियाँ इसकी साक्ष्य है :—

तनथिर मनथिर सुरतनिरतथिर होय।
कह कबीर इस पलक को, कलप न पावै कोय॥
सुख के माथे सिल परो, जो नाम हृदय से जाय।
बलिहारी वा दुःख की, पल-पल नाम रटाय॥
कबिरा प्याला प्रेम का, अंतर लिया लगाय।
रोम-रोम में रमि रहा, और अमल क्या खाय॥

साधो सहज समाधि भली।
गुरु प्रताप जा दिन ते जागी, दिन-दिन अधिक चली॥ १॥
जहँ-जहँ डोलों सो परिकरमा, जो कुछ करौं सो सेवा।
जब सोवौं तब करौं दंडवत, पूजौं और न देवा॥ २॥
कहौं सो नाम सुनौं सो सुमिरन, खाँव पियौं सो पूजा।
गिरह उजाड़ एक सम लेखौं, भाव मिटावौं दूजा॥ ३॥
आँखन मूँदौं कानन रूँधौं, तनिक कष्ट नहिं धारौं।
खुले नैन पहिचानौं हँसि-हँसि सुन्दर रूप निहारौं॥ ४॥
शब्द निरन्तर से मन लागा, मलिन बासना त्यागी।
उठत-बैठत कबहुँ न छूटै, ऐसी तारी लागी॥ ५॥
कहैं कबीर यह उन मुनि रहना, सो परगट करी गाई।
दुःख सुखसे कोई परे परम पद, तेहि पद रहा समाई॥ ६॥

वास्तवमें यह दशा संतोंके रहनीकी पराकाष्ठा है।

महात्मा तैलंग स्वामी

प्रायः पचासी वर्ष पूर्व काशीमें तैलंग स्वामी नामक एक बहुत प्रसिद्ध महात्मा हो गये हैं। आप परम सिद्ध योगी थे तथा सदा दिगम्बर वेशमें रहा करते थे। जल-थल, मान-अपमान, शीत-उष्ण सब आपके लिए समान था। ये सदा पर-दुःख कातर रहा करते थे। मान, प्रसिद्धि और ख्यातिसे बहुत दूर भागते थे। जलपर पद्मासन लगाना, गंगाजीमें तीन-तीन दिन तक लगातार डूबे रहना, समाधि लगाकर दूरका समाचार जान लेना, आकाशमें निराधार स्थित रहना इत्यादि बातें उनके लिये बहुत साधारण थीं। २८० वर्षकी अवस्थामें आपने महासमाधि ली।

आपका जन्म संवत् १६६४ के पौष मासमें दक्षिण भारतके विजियाना ग्राममें सुसम्पन्न ब्राह्मण परिवारमें हुआ था। आपके माता-पिता बड़े शिव-भक्त थे। उन्हींके अनुग्रहसे पुत्रवान् होनेके कारण बालकका नाम 'शिवराम' रखा गया था। आप बचपनसे कुशाग्र बुद्धि तथा आध्यात्म-रुचि वाले थे। आपने विवाह नहीं किया। पहले पिताकी मृत्यु हुई, बादमें माताकी। इस समय आपकी उम्र ४८ वर्षकी थी। माताकी अन्त्येष्टि-क्रिया करके वे घर न लौटे। जिस स्थानपर माताका अग्नि-संस्कार हुआ था, उसी स्थानपर ये बैठ गये और पीछे वहीं इनके लिये कुटी भी बन गई।

उस स्थानपर बीस वर्ष आपने कठोर साधनाकी। महापुरुषोंकी खोजमें अब आप वहांसे निकले। भाग्यवश भगीरथ स्वामीके दर्शन हुये। पुष्कर क्षेत्रमें गुरुसे दीक्षा ली। दो वर्ष बाद गुरु भी इस लोकसे चल बसे। तैलंग स्वामी कई स्थानोंमें घूम फिर कर अन्तमें रामेश्वरम् पहुँचे। इसके अनन्तर नेपाल, मान सरोवर, नर्मदातीर, प्रयाग आदि स्थानोंमें बहुत दिनों तक साधनाकी। ख्याति होते ही एक स्थानसे दूसरे स्थानको चले जाते। अन्तमें आप काशी धाममें पधारे।

महात्मा तैलंग स्वामीके सम्बन्धमें चमत्कारकी अनेक बातें प्रचलित हैं। प्रयागमें आपने आदमियोंसे भरी नावको आँधी-पानीके कारण डूब जानेपर पुनः बाहर निकाल लिया। काशीमें एक अँग्रेज अफसरने नंगा रहनेके कारण आपको हवालातमें बन्द करा दिया। सबेरे देखा गया तो हवालातका ताला बंद है और स्वामीजी हँसते हुये बाहर टहल रहे हैं। पूछनेपर आपने बताया कि ताला-ताली बंदकर देनेसे ही किसीका जीवन बाँधा नहीं जा सकता। यदि ऐसा होनेको होता तो मृत्युकालमें हवालातमें बंदकर देनेसे मनुष्य मौतके मुखसे ही बच जाता।

आपका दृढ़ विश्वास था कि भगवान यह मनुष्य शरीर बनाकर स्वयं इसमें विराजते हैं। प्रत्येक मनुष्यके अन्दर ईश्वरीय शक्ति ओत-प्रोत हो रही है। मनुष्य जितना संसारके लिये परिश्रम करता है, उसका शतांश भी यदि भगवानके लिये प्रयत्न करे तो वह उसे प्राप्तकर लेगा और उसे संसारमें कुछ भी असंभव न रहेगा।

उन्हें प्राप्त करनेके लिये साधना करनी चाहिये। उनकी भक्ति करनी चाहिये। गुरुपदिष्ट मार्गका अनुसरण करना चाहिये। संसारमें भक्ति ही सर्वश्रेष्ठ वस्तु है और भगवानको प्राप्त करनेका यही मार्ग है।

वि० संवत् १६४४ की पौष शुक्ला ११ को आप ब्रह्मलीन हो गये।

संत तुलसीदास जी की वाम-साधना और राम भक्ति-प्राप्ति

लोकचर्चा है कि तुलसीदास जी शुरूके जीवनमें जब शौचसे क्रिया-कर्म करके लौटते थे, तब जड़में पानी छोड़ते थे। औघड़ लोगोंको विश्वास है कि जड़का मतलब निजसे ही है, जिससे भूतात्माका साक्षात्कार हुआ। जिसकी प्रेरणासे हनुमानका साक्षात्कार हुआ और हनुमानजीकी प्रेरणासे राम-दर्शन मिला। यह कथा आज भी उत्तर भारतके जन जीवनमें प्रचलित है। इस भूतात्माकी प्रेरणासे उनके जीवन की हर साधना सुलभ हुई।

उनके सम्बन्धमें यह भी प्रचलित है कि उन्होंने शवपर यमुना पार किया। शवपर साधक बिना शक्तिके साधना नहीं कर सकता, इसलिये दिखाया गया है कि सर्पके सहारेसे वह अपनी ससुरालमें शक्तिके पास पहुँचते हैं। उनकी ससुरालका भवन सामान्य ही रहा होगा, अर्थात् महल या अटारी नहीं क्योंकि वे गरीब बालक थे। योगमें कुंडलिनीको सर्पके रूपमें देखा गया है। विद्वानोंको इस ओर ध्यान देना और शोध करना चाहिये। किन्तु इस प्रचलित लोक-कथासे इतना स्पष्ट है कि सन्त तुलसीदास वाम-साधक थे और शव-साधना तथा प्रेत-साधनाकी प्रेरणासे ही राम भक्ति पा सके। यमुना का आध्यात्मिक स्वरूप गोस्वामीके शब्दोंमें है।

'विधि निषेधमय कलिमल हरनी' अर्थात् शव-साधनासे वे विधि-निषेधसे भी परे हो गये थे।

बावरी साहिबा

एक प्रेम दीवाने ईसाई संतने ठीक ही कहा है, कि 'प्रेमका जीवन जीओ, प्रेमका केन्द्र बन जाओ, प्रेमका आगार बन जाओ।'

संत-साधनामें बावरी साहिबाका नाम उनके अजस्र प्रेम, दिव्य एवं अलौकिक प्रेमके लिये अमर है। आप देहलीके एक सम्भ्रान्त कुलकी महिला थीं। प्रभुके प्रेममें पागल होकर वे घरसे निकल पड़ीं। स्वजनों द्वारा बहुत प्रताड़ित होनेपर भी आप अपनी टेकपर अडिग रहीं।

मैं बंदी हौं परम तत्त्व की, जग जानत की भोरी।

इनका एक प्रसिद्ध सवैया निम्नलिखित है :—

बावरी रावरी का कहिये, मन ह्वै के पतंग भरैनित भाँवरी।
भाँवरी जानहिं संत सुजान जिन्हें हरि रूप हिये पर साँवरी॥
साँवरी सूरत मोहनीमूरत देकर ज्ञान अनन्त लखावरी।
खावरी सौंह तिहारी प्रभू, गति रावरी देख भई मति बावरी॥

सुना जाता है कि आप अकबरके बहुत पहले हुई थी और श्री मायानन्दको गुरु रूपसे वरण किया था। आपकी परम्परामें बहुत बड़े-बड़े सिद्ध, संत और महात्मा, जो आत्मदर्शी और परम अनुभवी थे, हुए हैं। इनकी वंशावली इस प्रकार है :—

बावरी साहिबा–दिल्ली
|
बीरू साहब
|
यारी साहब
|
बुल्ला साहब (भुड़कुड़ा : गाजीपुर)

जगजीवन साहब
|
दूलन दास जी

गुलाल साहब
|
भीखा साहब
|
पल्टू (अयोध्या)

प्रेमी संत सरमद

संत सरमद भी एक मस्ताने प्रेमी थे। आपका बयान आपकी जबानी सुनने लायक है। आप फरमा रहे हैं कि :—

सरमद कूचये-इश्कमें पड़कर बदनाम हो गया। यहूदी-दीन छोड़कर वह इस्लामकी शरणमें आया और फिर इस्लामके खुदा या रसूलसे मुँह मोड़कर राम-लक्ष्मणके भक्तोंमें जा मिला। सरमदने इतना छोड़कर अधिक नहीं कहा है और उस परिचय का विशेष प्रयोजन भी क्या है? भारतमें वह व्यापार करने आया था, पर उसपर प्रेमकी बिजली गिरी और वही हाल हुआ कि :—

सौदे के लिये बटसरे बाजार हुये हम।
हाथ उसके बिके जिसके खरीदार हुये हम॥

कैसा अच्छा सौदा रहा। बेचारा सरमद अपना सब कुछ लुटाकर दिगम्बर अवधूत बन बैठा। शाहजहाँका पुत्र दारा सूफी संतोंका बड़ा भक्त था। वह दिल्ली पहुँचने पर उनकी सेवामें लगा रहा। धीरे-धीरे दिल्ली नगरके सारे लोग सरमदके भक्त बन गये। काल-चक्रके अनुसार शाहजहाँ कैद हुआ। राजकुमार द्वारा कत्ल किया गया। उसके बाद औरंगजेब तथा उसके अनुयायी सरमदको शीघ्र समाप्त करना चाहा।

एक दिन सरमद दिगम्बर अवस्थामें बाजारमें घूम रहा था। इसी अपराधपर कैदकर उसे बादशाहके सामने पेश किया गया। बादशाहने पूछा, सरमद, तू नंगा क्यों रहता है? कपड़े क्यों नहीं पहिनता? सरमद साहबने कहा —

सभी संसारका स्वामी दोषी लोगोंको अच्छे लिवास पहिनाकर उनके दोषोंको ढँके रहता है, किन्तु निर्दोषोंको दिगम्बर घूमने देता है। उत्तरसे बादशाह तिलमिला उठा, किन्तु एक लोकप्रिय सन्तको इस छोटेसे अपराधपर प्राण-दंड न दे सका। सरमदने कहा है, 'मेरे सैकड़ों दोस्त थे जो दुश्मन हो गये पर उस एक प्रभुकी दोस्तीके भरोसे मैं सन्तुष्ट और सुखी हूँ। षड्यंत्र रचकर परम प्रेमके दीवानेको मुल्लाओंने उसे बादशाहसे प्राण-दंडकी सजा सुनवाई। सरमदने कहा कि बहुत दिन हो जानेसे मंसूरका किस्सा पुराना पड़ गया है। मैं सूलीपर चढ़कर उसे फिर ताजाकर रहा हूँ। सर कटनेके हुक्मको प्रेमीने सरदर्दकी दवा बताया। सारी दिल्ली उनके दर्शनार्थ उमड़ पड़ी थी। जब वे वध-भूमिकी ओर जा रहे थे प्रभुसे कहा, कि 'मैं तेरे इश्कके जुर्ममें मारा जा रहा हूँ, जरा तू अटारीपर चढ़कर देख कितना मजेदार तमाशा है।' अपने वधिकसे नजर मिलाकर मुस्कराकर कहा 'आ आ मेरे प्यारे मैं कुरबान जाऊँ तुझपर। तू चाहे जिस सूरतमें आये मैं तुझे खूब अच्छी तरह पहिचानता हूँ।'

सरमदने सारे जीवनमें 'लाइल्लाह' से अधिक कलमा न पढ़ा पर उसके कटे सिरसे 'लाइल्लाह-इल-इल्लाह' का घोष तीनबार सुनाई पड़ा। इससे प्रकट होता है कि उसे प्रभुकी सत्ताका साक्षात्कार उसी समय हुआ, जब उसकी सत्ताके अस्तित्वका लोप हो गया।

दिल्लीमें जामा मसजिदके पूर्वकी ओर बनी हुई सरमदकी समाधि अभी तक है। जामा मसजिदके यात्री उसपर भी श्रद्धाके सुमन चढ़ाया करते हैं।

श्रीकच्चा बाबा

आपका जन्म गोरखपुर जिलेके दीपगढ़ गाँवमें एक उच्च ब्राह्मण कुलमें हुआ था। आपके पिता श्री विश्राम पण्डित विद्वान थे। बाल्यकालमें आपका नाम शिवरत्न पंडित था। लगभग पन्द्रह वर्षकी अवस्थामें आपने गृह त्याग किया और घूमते हुये काशी आकर वरुणाके किनारे एक गुफामें रहने लगे। साधनावस्थामें कच्चा ही आटा खाकर रहनेसे आपको लोग कच्चा बाबाके नामसे पुकारने लगे।

बाबा बड़े निस्पृह थे। उन्होंने अपने लिये कभी आश्रम नहीं बनाया। आपकी सिद्धि ऐसी थी कि रत्न जटित सिंहासनमें बैठ आप आकाश-मार्गसे विचरण करते थे, जिसे उनके भक्तोंने स्वयं देखा था। आपका प्रकृति पर ऐसा अपूर्व अधिकार था कि जब भी आप कह देते तत्काल वर्षा हो जाती थी। रामनाम तथा रामलीलामें आपका विशेष अनुराग था। आपके दर्शनार्थ भारतके दूर-दूर प्रान्तोंसे लोग आया करते थे। इंगलैंडके स्वर्गीय सम्राट जार्ज पंचम जब राजकुमार रूपमें भारत आये, आपके दर्शनार्थ गये थे। आपने बहुत आग्रह किया पर बाबाने कुछ न लिया और उनको आशीर्वाद देकर विदा किया। आपके शिष्य श्रीलखनजी परमहंसने आपके सत्संगसे जिन व्याख्याओंको सुना था, वह बादमें उनके भक्तोंने छपवाया था। एक गड़ेरिन कन्या गंगाजली आपकी भैरवी थी। बाबाने ही उसे जीवन तथा स्वास्थ्य दान दिया था, अतः उसके माता-पिता उसको बाबाकी सेवामें अर्पित कर गये। जब बाबाकी समाधिके समय उसने भेंट दिया तो बाबाके शवका हाथ खुला और उसकी भेंटको स्वीकार किया। लेखकने भी उक्त भैरवीका दर्शन किया था।

वाराणसीके जाल्हूपुर ग्राममें बाबाकी समाधि है, जिसके बगलमें ही कच्चा-बाबा इन्टर कालेज चलता है, जिससे बाबाकी कृपासे क्षेत्रीय असंख्य बच्चोंका भविष्य बन रहा है।

श्रीसाईंनाथजी महाराज

महाराष्ट्र राज्यके पूना नगरसे लगभग पचास-साठ मीलकी दूरी पर शिरडी नामक एक छोटासा गाँव है। वहीं एक मसजिदमें श्रीसाईंनाथ महाराज निवास करते थे। उनकी जाति, जन्म-स्थान आदिका कोई विवरण नहीं मिलता। परन्तु यह बात प्रसिद्ध है कि वे विशुद्धाचरण वाले मस्त महात्मा थे। कभी उनके मुँहसे अल्ला-मालिककी ध्वनि सुनाई पड़ती थी, तो कभी वे वेदान्तकी गूढ़ चर्चाएँ किया करते थे कि जिन्हें सुनकर बड़े-से-बड़े शास्त्रज्ञ विद्वान भी स्तब्ध रह जाया करते थे। लगभग ५० वर्षों तक श्रीसाईंनाथ शिरडीमें रहे। उनके दर्शन तथा स्मरणसे भी असंख्य लोगोंको स्वास्थ्य तथा सुखकी प्राप्ति हुई है।

लेखकके एक सम्मानित मित्र साईंबाबाके परम भक्त हैं। उन्होंने बतलाया है कि साईंबाबाका नाम तथा स्मरण वह प्रकाश-स्तम्भ है, जो भक्तोंका मार्ग-दर्शन करता है। आज भी उनकी समाधिपर वार्षिक मेला लगता है। वर्ष भर श्रद्धालु जन वहाँ जाकर बाबासे जो भी मिन्नत करते हैं, उनकी अभिलाषा-पूर्ति होती है। गुरुपूर्णिमा, रामनवमी तथा श्रीकृष्ण जन्माष्टमीको वहाँ बड़ा उत्सव मनाया जाता है, जिसमें सहस्रों नर-नारी उपस्थित होते हैं। अपने भक्तोंकी दृष्टिमें बाबा शिवकल्प हैं।

उनके असंख्य चमत्कारोंकी चर्चाकर पाना असंभव है, किन्तु यहाँ एक छोटीसी घटना प्रस्तुतकी जा रही है। शिरडीमें मसजिदके सामने एक वैश्यकी दुकान थी। बाबा नित्य उससे तेल माँगकर मसजिदमें दीपावली सजाते थे। एक दिन मलिन भाव आ जानेसे उसने बाबाको माँगनेपर तेल नहीं दिया। परन्तु रात्रिमें दियोंका उजाला देखकर वह दौड़ा बाबाके चरणोंमें गया। देखता क्या है कि तेलके बदले बाबाने निजजलसे दीपोंको जला रक्खा है। वह बहुत लज्जित हुआ और बाबासे क्षमा-याचना की।

बाबा साईंनाथके चित्र बड़ी संख्यामें सभी नगरोंमें प्राप्य हैं। भक्तोंकी यह आस्था है कि जिन घरोंमें बाबा साईंनाथका चित्र रहता है, वहाँ वे स्वयं ही उपस्थित रहते हैं और वे अपने भक्तोंका योग क्षेम वहन करते हैं। भक्तोंको समय-समय पर आदेशके अतिरिक्त विभूतियाँ तथा अन्य प्रसाद भी उन चित्रोंसे प्राप्त हुये हैं। सन्त जो अनन्त ही हैं, उनके लिये कुछ भी असम्भव नहीं है।

काशीके मोकलपुर या टूँडीके बाबा

गंगाके तटपर विचरण करनेवाले परम सिद्ध महात्मा कभी जाल्हूपुरमें कच्चा-बाबाकी समाधिके पास अपनी मड़ैयामें, कभी गंगा तटपर मोकलपुरमें रहा करते थे। भक्तोंको 'आत्मचरितं न प्रकाशयेत्' कहकर अपनी पूर्वावस्थाका कोई परिचय नहीं देते थे। एक समय विशेष अनुरोधपर बाबाने जो परिचय दिया था, वह संक्षेपमें इस प्रकार है। विंध्याचल और प्रयागके बीच किसी गाँवमें मेरे माँ-बापकी जन्मभूमि थी। उन्हें पागल कहकर घरसे निकाल दिया गया था। वे विंध्याचलमें भिक्षासे जीविका चलाते और धर्मशालामें रहते थे। वहीं मेरा जन्म हुआ था। मैं भिक्षाको निन्द्य समझता था। अतः माँ-बापके स्वर्गवासी होनेपर मैं यात्रियोंका बोझा ढोकर जीविकोपार्जन करता रहा। साधु मंडलीके साथ एकबार रामेश्वरम् काँवरमें गंगाजल लेकर चला गया। उन दिनों रेल न थी। वहाँसे लौटकर नर्मदातटपर एक वृद्ध ब्रह्मचारीसे भेंट हुई। मेरी शिक्षा-दीक्षा उन्होंने कराई। सोलह वर्ष अभ्यास कराकर, जब उन्होंने आज्ञा दी मैं भारत-भ्रमण करता हुआ काशी आ गया। यह मोकलपुर चारों ओर गंगासे घिरा होनेके कारण माँ गंगाकी गोद है। इसीमें सुख पूर्वक रहता हूँ।

बाबाके उपदेश बड़े ही ऊँचे होते थे। महामना मालवीय जी आपके अनन्य भक्त थे। बाबाके कुछ पवित्र अवशेष उनके पास रहे। काशीके प्रसिद्ध संतने एक बार कहा था कि मोकलपुरके बाबा अधिकारिक पुरुष हैं। उनके कारण संसारमें बड़ी शान्ति और सुखका विस्तार हो रहा है। काशीके ईशानकोणपर रहकर वे काशी की रक्षा करते हैं। काशीके संतोंमें उनका स्थान बहुत ऊँचा है।

कहा जाता है कि सन् १९१६ की भीषण बाढ़की पूर्व सूचना देकर गंगा जीने उनको सुरक्षित स्थानपर हट जानेको कहा था। बाबा गंगाजीको ही महा भगवती मानते थे। उनके अनेक चमत्कार लेखकको स्वयं मालूम हैं, परन्तु स्थानाभावसे उनकी चर्चा नहीं की जा रही है। अखंड कीर्तन तथा विशाल प्रसाद वितरणकी योजना बनाकर कार्य-क्रम प्रारंभ होनेपर अपनी मड़ैयामें जाकर बाबाने समाधि ले ली थी। श्री कच्चाबाबाकी समाधिके बगलमें ही उनकी भी समाधि है।

श्री लखन जी परमहंस

आपका जन्म आरा जिलाके चिल्लहरी गाँवमें एक धनी क्षत्रिय परिवार में हुआ था। ये कच्चा बाबाके शिष्य थे। कहते हैं कि इनके गाँवपर ही कन्धेपर हाथ रखकर आँखसे आँख मिलाकर श्री कच्चाबाबाने ऐसा शक्तिपात किया कि उसी क्षण इन्हें संसारसे पूर्ण वैराग्य एवं तत्त्वबोध हो गया। उनकी आज्ञासे दीक्षाके उपरान्त पाँच वर्ष तक वे घरपर ही रहे। बाइस वर्षकी अवस्थामें अपने गुरुकी आज्ञासे तीर्थयात्रा करने निकल पड़े। वृन्दावनमें जप करते हुए इन्हें लगा कि गुरु मुझे बुला रहे हैं। बात सच निकली। ये गुरु चरणमें आ गये। वे निरन्तर नाम भजनमें लीन रहे। इनके अनेक चमत्कार प्रसिद्ध हैं। ये रामनामका ही उपदेश करते थे। इनकी लिखी कई पुस्तकें प्रकाशित हुई थीं, जो आज अप्राप्य है। संवत् १९७७ की धनतेरसको ७० वर्षकी आयुमें इनकी इहलोक लीला समाप्त हुई।

श्री रामकुमार जी

स्वामी लखन जी परमहंसके शिष्य श्री रामकुमार जीका जन्म आरा (बिहार) के छः मील उत्तर फरना गाँवमें हुआ था। ये भी अपने गुरुदेवके साथ श्री कच्चाबाबाके दर्शनोंके लिये जाया करते थे। स्वामी लखन जी परमहंसने इनको सिखलाया था कि जब श्रीकच्चाबाबाके पास जाना तो उनकी दृष्टिकी ओर सदा ध्यान रखना।

एक बार कच्चाबाबाके पास आपने दीक्षाकी इच्छा व्यक्त की। इनके आतुर विनयसे कच्चाबाबाको इनके हृदयका पता लग गया और इन्हें भी उन्होंने अपनी दिव्य-दृष्टिसे देखकर कृतकृत्य कर दिया। ये अपने दादा गुरुकी आज्ञा और इच्छासे आजीवन गृहस्थ ही रहे। आप सच्चे साधु थे।

रुद्राक्ष २

अघोर-साधनाके सन्तोंकी परम्परा

अघोर-साधक आदिकाल (१०वीं सदीतक)

जैसा कि आप आगे देखेंगे कि अघोर-साधना सृष्टिके आदिकालसे चली आ रही है। वैदिक स्मृति तथा पौराणिक कालके अनेक ऋषियोंने भी इस साधनाको अपनाकर सिद्धि प्राप्त की थी। ऐसे सभी साधकोंका विवरण एकत्र कर सकना और इस ग्रंथके सीमित पृष्ठोंमें उन्हें प्रस्तुत कर सकना तो संभव नहीं है, फिर भी कुछ महान साधकोंके सम्बन्धमें यहाँ चर्चा की जा रही है।

विश्वामित्र

सर्वप्रथम हम देखें विश्वामित्रको। अथर्ववेदके कौशिक सूत्रके मंत्रद्रष्टा स्वयं विश्वामित्र थे और उनके ही कौशिक नामसे प्रचलित इस सूत्रमें अनेक संकेत ऐसे मिलते हैं, जो इसके प्रमाण हैं कि मुनि कौशिक अघोर-उपासना करते थे। राजा हरिश्चन्द्रके पिता त्रिशंकुको बनवासके समय रहस्यपूर्ण खाद्योंसे ही कौशिक पत्नीकी सेवा करते हुये देवी भागवतमें दिखलाया गया है। कौशिक मुनिने विलक्षण साधनाओंके ही बलपर गुरुके रुष्ट होनेपर भी त्रिशंकुको ढाढ़स बँधाया तथा साहस बढ़ाकर उसे राज्य प्राप्त कराया। राजा हरिश्चन्द्रके विपत्ति-कालमें स्वयं मुनिके विषयमें श्मशानके साधकरूपका वर्णन मिलता है, यह निर्विवाद है कि ये शक्ति के परम उपासक थे। जहाँ इन्हें अघोर गायत्रीकी पूर्ण सिद्धि प्राप्त थी वहीं ब्रह्मगायत्रीका प्रवाह भी उन्हें अभीष्ट था। पुराणोंमें तो मुनिकी विचित्र कथायें दी गई हैं। पुराणोंकी इन विचित्र कथाओंके आधार पर विश्वामित्रको हम अघोर-साधक कहनेमें जरा भी संकोच नहीं करेंगे, क्योंकि कुछ ऐसे सूत्र अथर्ववेदमें पर्याप्त मात्रामें हैं तथा ऐसी कथायें देवीभागवतमें रोचक रूपमें आई हैं जिनसे विश्वामित्रका अघोर-साधक रूप सिद्ध है। कौशिक सूत्रमें औषधि और क्रियायें भी पर्याप्त रूपमें मिलती हैं।

वामदेव

आप देखें हमारे वामदेवजीको ही जिन्होंने दशरथके समयमें अयोध्याकी तत्कालीन सामाजिक व्यवस्थाओंके विरोधमें, ब्राह्मणोंकी स्वीकृति होनेपर भी रामके बनवासके समय अपनी अघोर-साधनाके पराविभूतिके बलपर रामके वनगमनका विरोध किया। वामदेवने अपने विचार तो अवश्य प्रकट किये परन्तु राजा, गुरु और मंत्री तीनोंका मत बनवासके प्रश्नपर एक होनेके कारण उस पर जोर नहीं दिया। आप जानते हैं, कि वामदेवने वामांगनाओंकी साधना कर राज-

दरबारों, विद्वानोंके बीच तथा जनसमूहमें प्रवेश पाया था। आपको यह भी बतलाना परमावश्यक है कि वामदेवका पूर्व नाम कुछ और ही था। अपनी विलक्षण साधना, बुद्धि और प्रतिभाके कारण ही ये वामदेव नामके अधिकारी माने गये। अघोरको ही वाम भी कहते हैं। आज भी तन्त्र-मन्त्रोंमें आप देखेंगे कि वाम शब्द कहनेसे ही बहुत सी गन्दी आत्माएँ भाग जाती हैं। आज भी बहुतसे मंत्र-तंत्र वामदेवके नामसे प्रचलित हैं।

वशिष्ठ

अब आप देखें वशिष्ठकी अघोर-साधनाको। बंगालके वीरभूमि जिलेमें जो तारापीठ है, वहाँपर कई एक शिलालेख हैं, जिसमें इसका उल्लेख है कि वशिष्ठने यहाँ ताराकी दीर्घकाल तक उपासना और साधना की। ये साधना रहस्यमय थी, जिसे अघोरी लोग पंच मकार कहते हैं। बौद्ध गाथाओंमें वशिष्ठको चीन देशमें अघोर-साधनाकी बहुत कुछ पराविभूतियाँ पाते दिखाया गया है। हम प्रायः कई एक वैदिक मंत्र-तंत्रोंमें और तांत्रिक मंत्र-तंत्रोंमें वशिष्ठकी ताराका समावेश देखते हैं। हम देखते हैं—कि वशिष्ठकी गुह्य-साधनाका उल्लेख भारत तथा एशियाके पूर्वी देशोंमें और चीन तक हर भाषाके साहित्यमें पर्याप्त मात्रामें मिलता है। हमने तो तेलुगू तथा उड़ियाकी लिपियोंमें भी इनके गोप्य-साधनाओंका प्रचुर मात्रामें विवरण देखा-सुना है। श्रीकृष्णको भैरवी चक्रपर अवस्थित कुलद्रव साधनाके लिये अपनी बहिन सुभद्राके साथ जगन्नाथपुरीके मंदिरमें जो हम देखते हैं, वही तो अघोर-साधना है। वहींपर विमलादेवी मन्दिर और जगन्नाथ मंदिरके मध्यमें जो चक्र-साधना वेदी है वह वशिष्ठ वेदीके नामसे प्रसिद्ध है। पुरीके स्वर्ग द्वार श्मशानके पास तारा मंदिरके खंडहरमें वशिष्ठके साथ कई एक ऋषियोंको औषधियुक्त पान-पात्र सहित चक्रार्चन करते हुये दिखाया गया है। इस प्रसंगमें रुद्रयामल तंत्रमें आये कथानकको भी देखना चाहिये, जिसका तात्पर्य ऊपर दिया गया है।

प्राचीनकालकी अघोर भैरवियाँ

आप योगवाशिष्ठके चुड़ालाको जो राजा शिखिध्वजकी पत्नी थीं अघोर-साधनामें ओत-प्रोत पाएँगे। चुड़ाला बड़ी बुद्धिमती थीं और पतिको वैराग्य तथा ज्ञानकी उपलब्धि करानेमें अघोर-साधनाकी ही प्रक्रियाओंसे समर्थ हुई थीं। यह बड़ा मार्मिक तथा सराहनीय प्रसंग है।

सम्राट् विक्रमादित्य

विक्रमी संवत्के संस्थापक सम्राट विक्रमादित्यकी अघोर-साधना सर्वविदित है। इनकी साधना (गुह्य-साधना एवं चमत्कारोंकी कहानियाँ) बेताल पंचविंशति जैसी कथाओंमें अभीतक प्रचलित हैं। यक्ष एवं देवी-देवताओंको प्रभावित रखने वाली अघोर-क्रिया एवं साधनाकी पराकाष्ठामें पहुँचे हुए विक्रमादित्यको कौन भारतीय नागरिक नहीं जानता है?

अघोराचार्य

ये आजसे तेरह सौ वर्ष पहले हुये थे। वे बड़े विलक्षण मूर्ति थे और उत्तर भारतके केदार खंड स्थित काली मठ एवं नेपाल तथा तिब्बत तक विचरते रहते थे। वे हाथमें गदहाके पाँवकी हड्डी लिये रहते थे। वे बड़े ही विचित्र और विकट वेश-भूषा वाले औघड़ थे। गौरांग, लम्बा कद, अजानबाहु, मुंडित सिर तथा मूँछ-दाढ़ी बढ़ाये रखते थे। जान पड़ता है कि वर्तमान पूर्वी उत्तरप्रदेश अथवा पश्चिमी बिहारके निवासी रहे होंगे। इनके बारेमें बहुत सी कथायें प्रचलित हैं। वे एक बार उत्तराखंडके एक देव मंदिरमें गये। वह विष्णुका मंदिर था। वहाँके पुजारीने इन्हें बहुत फटकारा कि काठकी तरह खड़े हो, भगवान्को दण्ड प्रणाम नहीं करते ? उन्होंने कहा, कि यदि हम तुम्हारे देवताको प्रणाम करें तो वह खंड-खंड हो जायगा। पुजारीने क्रोधमें अपनी गुरु-परम्पराकी पादुका रख दिया और ललकारा कि यदि सिद्ध हो तो इसीके प्रति अपनी सामर्थ्य दिखाओ। अघोर सिद्ध थे ही जैसे ही माथा नवाया वह खड़ाऊँ खण्ड-खण्ड हो गयी। आज भी चर्चा है कि वे हरिद्वार, चण्डी पहाड़ तथा गिरनारकी पहाड़ियोंमें रहते हैं। उनके बारेमें एक समयमें तिब्बतके लामाओंके बीच होनेकी भी चर्चा है, क्योंकि तिब्बतमें लामा लोगोंके साथ इनकी साधना और चमत्कारोंकी बहुत कुछ कथाएँ मिलती हैं। आज भी लामा लोग उन्हें अपनी बौद्ध परम्पराका ही साधक बताते हैं। आप उस गदहेकी हड्डीके माध्यमसे, जिसे हाथमें रखते थे, आकाश मार्ग द्वारा गमनागमन करते थे। उनके विषयमें कालू रामजीके साहित्यमें भी थोड़ी झलक मिलती है।

भैरवाचार्य

बाणभट्टके हर्ष चरितमें इनका विशद वर्णन है। पुष्पभूति ही हर्षके बर्धन वंशके आदि संस्थापक थे। वे शिवके अनन्य उपासक थे। उनके प्रभावसे घर-घरमें शिवकी पूजा होती थी। राजा पुष्पभूति अघोर-साधना भी करते थे। इस कार्यमें उनके सहायक दक्षिणात्य महाशैव भैरवाचार्य थे। भैरवाचार्यसे राजाके मिलनका वृत्तान्त इस प्रकार है। एक दिन उस राजासे एक परिब्राट मिलने आया। वह भैरवाचार्यका प्रमुख शिष्य था। राजाके पूछनेपर कि भैरवाचार्य कहाँ हैं ? उस शिष्यने यह कहकर कि सरस्वतीके शून्यायतनमें ठहरे हैं, चाँदीके पाँच कमल भैरवाचार्यकी ओरसे अर्पित किया। दूसरे दिन पुष्पभूतिने पुराने देवीके मंदिरके उत्तर बिल्व-वाटिकामें आसन लगाये भैरवाचार्यको साक्षात् शिवकी तरह देखा। भैरवाचार्यसे राजाकी मित्रता हो गई। भैरवाचार्यके शिष्यने ब्रह्मराक्षसके हाथसे छीन कर लाई हुई अट्टहास नामक तलवार राजाको अर्पित की। इन युगल साधकोंको महान राजवंश तथा विद्याधरपदकी प्राप्ति हुई है।

बाणभट्टकी आत्मकथामें जिन अघोर भैरवाचार्यका उल्लेख डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदीने किया है, समकालीन होनेसे मेरे मतमें वे यही भैरवाचार्य थे, जिनका विवरण ऊपर दिया गया है।

अभिनव गुप्त

ईसाकी दसवीं सदीमें काश्मीरके जिन महान साधक अभिनव गुप्तकी चर्चा तन्त्र ग्रन्थोंमें विशद रूपमें आई है, वे भी एक महान अघोर-साधक थे। उनकी गुरु-परम्परामें जालन्धरके शम्भुनाथजी तथा तत्कालीन और बादके अनेक साधक भी इस मतको सम्पूर्ण पश्चिमोत्तर भारतमें प्रचारित किये हुये थे। जैसा कि आगेके अघोरमत अध्याय ३ से स्पष्ट होगा कि शैवों तथा शाक्तोंके विभिन्न सम्प्रदाय इसी अघोर-सम्प्रदायके विशाल वृक्षवाली वाटिकाके सुवासित, पुष्पित और पल्लवित वृक्ष थे और इन सबोंमें एक आन्तरिक सामञ्जस्य पाया जाता है।

शंकर दिग्विजयमें भी महान कापालिक साधकका वर्णन आया है। अन्य संस्कृत-साहित्य ग्रन्थोंमें भी जिन कापालिकोंका विवरण है, उन्हें आप यथास्थान इस पुस्तकमें पाएँगे।

उक्त संदर्भमें यह बात ध्यान देने योग्य है कि जिन अघोराचार्य अथवा कापालिक सन्तकी मृत्युका कारण शंकराचार्यके अनुयायियोंको बताया गया है, उसके महान दुष्परिणामकी ओर अधिकांश लोग ध्यान नहीं दे पाये हैं। यह सर्व-विदित है कि उक्त घटनाके बादसे ही शंकराचार्यका स्वास्थ्य गिरने लगा और एक भयंकर रोग (भगन्दर) के कारण उनकी अल्पायुमें ही मृत्यु हुई। इससे स्पष्ट है कि अघोरी जो शिवकल्प है और विश्वात्मा है, उसका द्रोह स्वयं द्रोहीके लिये प्राणघातक होता है।

मध्यकाल (११वीं सदीसे १६वीं सदीतक)

सिद्धि विद्या सर्वानन्द ठाकुर

आजसे लगभग ६०० वर्ष पूर्व त्रिपुराके अन्तर्गत मेहार नामक गांवमें सर्वानन्दका जन्म हुआ था। उनकी वंश-सूची तथा सर जॉन उडरफ द्वारा की गई काल गणनाके अनुसार अबसे ५७६ वर्ष पूर्व इन महात्माका आविर्भाव हुआ था। ये सिद्धोंकी परम्परामें उत्पन्न शम्भुनाथके पुत्र थे। आपने शव-साधना करके माँको प्रसन्न किया और भगवती आद्याकी कृपासे कृतकार्य हुये थे। परिवारको छोड़कर आप काशी चलने लगे तो पुत्र शिवनाथके कानमें सिद्धि-मन्त्र दिया था।

सर्वानन्द देव काशीके गणेश मुहल्लेके शाखा—शारदा मठमें रहते थे। वहाँ वे अवधूतके नामसे परिचित थे। वे काशीमें तांत्रिक-पद्धतिसे पञ्चतत्त्वोंकी साधना करते थे। काशीके दण्डी संन्यासियोंने उनका तंत्राचार देखकर उन्हें काशीसे निकालनेकी चेष्टा की, परन्तु श्रीसर्वानन्दके योगेश्वर्यके सामने उनको झुकना पड़ा।

सर्वानन्द देव काशीसे बदरिकाश्रम गये थे, ऐसा कहा जाता है। आज भी अनेक साधकों तथा श्रद्धालुजनोंको उनका दर्शन मिलता रहता है। सच है जो लोग सर्वतोभावेन ईश्वरकी शरण लेते हैं, उन्हें सब कुछ सुलभ हो जाता है।

अघोरी किलाके औघड़ बाबा

विन्ध्याचलके दक्षिणी भू-भागमें सोनभद्रके दक्षिणी तटपर एक किला है जो अघोरी किला नामसे प्रसिद्ध है। आजसे करीब ५०० वर्ष पूर्व इस किलाके अवशेषमें अघोरियोंका स्थान रहा है। गजेटियरमें अघोरीकी जगह अखोरी नाम दर्ज है। यह किला चोपनसे लगभग ५ किलोमीटर दूरीपर स्थित है। इसमें एक बहुत सौम्य एवं सुशील औघड़ रहा करते थे।

एक दिन वह औघड़ नदीके किनारे बैठे थे। वेगसे बहती हुई नदीकी धारामें एक कन्या बह रही थी जिसे औघड़ बाबाने निकाला और उसका पालन-पोषण करने लगे। जब कन्या बारह वर्षकी हो गई तो वाराणसीके किसी संभ्रान्त परिवार का व्यक्ति शिकारके बहाने उस जंगलमें जा निकला और औघड़ बाबाके आश्रम पर जा पहुँचा। बाबाने बड़े प्यारसे आसन दिया तथा रात्रिमें उसके निवासकी व्यवस्था की। युवक उस लड़कीको फुसलाकर चाँदनी रातमें लेकर भागा। औघड़ बाबा अपनी इष्टदेवीकी वेदीके ऊपर, जो मिट्टीकी बनी हुई थी बैठकर पूजा कर रहे थे। एकाएक उन्हें संकेत मिला कि युवक कन्याको लेकर भागा जा रहा है, उन्होंने तत्क्षण निवास-स्थानमें आकर देखा तो दोनों गायब थे। उन्होंने हाथमें जल लेकर मंत्रसे अभिमंत्रित कर उसे देवीके विग्रहके सामने छिड़का। आधा घण्टा भी नहीं बीता होगा कि दोनों दिशा-भ्रमित होकर बाबाके सामने आ पहुँचे, जहाँ वे देवीके सामने खड़े थे। बाबाने बड़ी उदारताके साथ उस लड़कीसे पूछा कि तुम्हारी क्या इच्छा है? इतना सुनते ही लड़की बाबाके चरणोंपर गिर पड़ी और गिड़गिड़ाकर अपनी तथा उस लड़केके सौभाग्यकी कामना की। उदार औघड़ बाबाने उस कन्याको उस युवकके साथ विवाहकी आज्ञा दी और बोले, कि अपने जीवनमें इस प्रकारका छल-कपट नहीं रखना। इसीका दुष्परिणाम है कि तुम लोग दिशा-भ्रमित होकर मेरे सामने आ गए। जाओ क्षमा करते हैं। काशीमें विचरो और काशी-विश्वनाथकी सेवा करो। औघड़ बाबाकी विशाल हृदयता और उदारताका यह एक अच्छा उदाहरण है। वहाँ एक शिव मन्दिर है जिसमें आज भी दो-तीन औघड़ साधक आते-जाते रहते हैं। एक साधक यहाँ स्थायी रूपसे रहते हैं।

१६वीं सदीसे आजतकके अघोर-साधक

इस विवरणमें बाबा किनारामकी परम्पराका उल्लेख नहीं है क्योंकि अगले अध्यायोंमें उसका विस्तृत विवरण स्वतंत्र रूपसे दिया गया है।

अवधूत श्रीनागलिंगप्पा

हुबली (केरल) के सिद्धारूढ़ स्वामी जीवन्मुक्ति और विदेहमुक्तिका निरूपण करते हुए जिन दो महात्माओंकी बातें कहा करते थे वे हैं नागलिंगप्पा और दूसरे मडिवालप्पा। नागलिंगप्पाका जन्म [illegible] राज्यमें जाव लगेरी गाँवमें संवत

१८६० में हुआ था। इनके पिताका नाम मानाप्पा और माताका नाम नागम्मा था। बाल अवस्थामें ही आपको वैराग्य हुआ। आप तीर्थयात्रा करते हुए हिमालय पहुँचे। वहाँपर इन्हें एक योगी मिले जिन्होंने इन्हें लम्बिका योग सिखलाया। इसके द्वारा सिद्धियाँ इनके पीछे पड़ीं। नागलिंगप्पा योगियोंकी तीन अवस्थाओंमें पिशाच-अवस्था या अघोर-अवस्थामें रहते थे। आपको अनेक विलक्षण सिद्धियाँ प्राप्त थीं। संवत् १९४० में आप समाधिस्थ हुये।

ब्रह्मनिष्ठ श्रीमोहन स्वामी महाराज

कोम्मकोणम्में एक जगह ये दिगम्बर महात्मा अजगर वृत्तिसे पड़े थे। गौर वर्ण था, युवा अवस्था थी। एक दिन एक वेश्याने इन्हें देखा। वह इन्हें अपने घर ले गई। इन्हें नहलाना, कपड़े पहनाना, खिलाना इत्यादि प्रकारसे सेवा करने लगी। पर इन्हें कभी अपनी देहका भान नहीं हुआ। उसी अजगर वृत्तिसे ही पड़े रहते थे। झुण्डके झुण्ड लोग इनके दर्शनोंके लिये उस वेश्याके घर पहुँचने लगे। एक बार इन्होंने एक व्यक्तिकी ओर एकाग्र दृष्टिसे देखा और उसने भी इनकी ओर एकाग्र दृष्टिसे देखा। बस उसी क्षण उस आदमीकी वृत्ति पलट गई और वह दिगम्बर बन गया। मोहन स्वामी इस लोकमें नहीं रहे किन्तु उनकी दृष्टि-दीक्षा प्राप्त शिष्य परम्परा है। कोम्मकोणम्में इनकी बड़ी प्रसिद्धि है।

अघोरी गजानन औलिया

दिनांक २३ फरवरी, १८७६ ई० को बरारके शेगाँव (शिवगाँव) में सुविख्यात साधु श्रीनाना साहबके मठके बाहर एक तेजपुञ्ज शरीरधारी पुरुष जूठे पत्तलोंमेंसे चावल बीनकर खाते हुए दीख पड़े। इसके बाद गाय-बैलोंके पीनेके लिये रक्खे हुये पानीके हौदेमें उन्होंने पानी पीया और चल दिये। एक बार एक बिगड़ैल घोड़ेके चारों पाँवके बीचमें आप मस्त पड़े थे। घोड़ा उद्दण्डता भूलकर चुपचाप खड़ा था। उनके वर्ण, कुल आदिका कोई पता नहीं चला है। वे विधि-निषेधातीत सिद्धावस्थामें ही सदा रहते थे। चाहे जो खा पी लेते थे। वे प्रायः किसीसे स्पष्ट नहीं बोलते थे, परन्तु उनके सामीप्यमात्रसे लोगोंकी मनोकामना पूरी हो जाती थी। दिनांक ८-९-१९१० ई० को वे परमधाम चले गये। उनकी स्मृतिमें शेगाँवमें एक स्मारक मन्दिर बना है, जिसकी व्यवस्था स्थानीय एक कमेटी द्वारा होती है।

तारापीठके अघोराचार्य बामाक्षेपा

उन्नीसवीं शताब्दीके बंगालमें शक्ति-साधनाकी एक अग्नि शिखाके रूपमें क्षेपाका महाजीवन प्रज्वलित हुआ था और उसके दिव्य आलोकसे भाग्यवान साधकोंके जीवन उद्भासित हो उठे। तारा मंदिरकी एक ओर विस्तीर्ण बालुका तटपर तारापीठका श्मशान था। प्रवाहमयी द्वारिका नदी चन्द्राकार उस श्मशानको घेरकर बह रही है। यह श्मशान ही अघोराचार्य बामाक्षेपाकी साधना-भूमि है। श्मशानमें अद्धदग्ध शवोंके लिये सियारों तथा कुत्तोंमें द्वन्द्व

चलता रहता और इन्हींके बीच सेमल वृक्षके नीचे वशिष्ठ देवके पञ्च मुण्डी आसनसे सटकर बामाक्षेपा सोये रहते थे, इस शक्ति पीठके जाग्रत भैरवके रूपमें।

क्षेपा दिगम्बर रहते थे। लंबे, कृष्णवर्ण शरीरमें भीम-भैरव कांति फूट रही थी। मदिरा और गाँजा सेवनसे दोनों बड़ी-बड़ी आँखें जवा पुष्पकी तरह लाल रहती थीं। किन्तु इसी बाहरी कठोरताके आवरणमें आत्म भोला शिशु झाँकता रहता था। आपके शरीरसे सटकर खेलते रहते थे उनके प्रिय सहचर श्वान दल जिनके नाम थे—केलो, भूलो, लाली और श्वेतफूली। कभी तो भक्त दर्शनार्थीको देखकर कहते, रे साला! कुछ माल-ताल लाया है तो बाहर निकाल। मदिरा या गांजा कुछ मिल जानेपर उन्हें बेहद खुशी होती थी। किन्तु मनमौजी बाबाको अमलका लोभ न था। क्योंकि अन्य व्यक्ति मद्य या गाँजा भेंट करना चाहता तो वह उसे अकारण गालियाँ देकर भगा देते।

तारा मन्दिरका पुजारी क्षेपा बाबाके लिये श्मशानकी बालूपर पत्तेमें भोग-प्रसाद रख जाता। बाबाके भोजनके संगी थे उनके प्रिय सहचर श्वान दल। शव, शिव और श्वानसे घिरे हुये श्मशानचारी क्षेपा बाबाके महाजीवनमें अनेक विपरीत भावोंका समावेश देखा जाता था।

कवि जयदेव और चंडीदास जिस वीर भूमिकी संतान थे, यहीं चौका गाँवमें अवधूत श्रीनित्यानन्दने जन्म ग्रहण किया था। पुराणोंके इक्यावन शक्ति पीठोंमें पाँच इस वीरभूमिमें हैं। वशिष्ठ देवसे आरम्भ होकर बामाक्षेपा तक अघोराचार्योंकी एक अविच्छिन्न धारा यहाँ तारापीठमें प्रवाहमान रही है। पुराणोंके अनुसार वशिष्ठ, भृगु, दत्तात्रेय, दुर्वासा ये सभी तारा सिद्ध थे। तारापीठके निकट अलटा ग्राममें बामाक्षेपाका जन्म हुआ था। क्षेपाके पिता सर्वानन्द चट्टोपाध्याय एक साधारण गृहस्थ ब्राह्मण थे। धर्म प्राणा राजकुमारी क्षेपाकी माता थीं। सीधा होनेसे बचपनसे ही पड़ोसके लोग उन्हें (हाउड़े) कहकर पुकारते थे, जिसका अर्थ होता है निर्बुद्धि। बचपनसे ही बामाचरण स्वभावसे भक्त थे। विद्यालयमें पढ़नेका सुयोग इन्हें नहीं मिला। जब वे १० वर्षके थे तो इनके पिताका स्वर्गवास हो गया तथा जीवन-यापन और दूभर हो गया। इसी समय तारापीठके प्रधान मोक्षदानन्द तथा सिद्ध महापुरुष कैलाशपति बाबाके सम्पर्कमें क्षेपा बाबा आये। फल यह हुआ कि बामाचरण अपनी तारामाईके लिये पागल हो उठे। लोग अब (हाउड़े) बामाको (क्षेपा) या पागल कहकर पुकारने लगे।

तारापीठमें साधनरत रहते हुये अपनी माताका अग्निसंस्कार उसी श्मशानमें लाकर किए। बढ़ी हुई नदीको पारकर, माँका शव लाना तथा उसका काम-क्रिया सम्पन्न करना साधककी मातृ निष्ठाका द्योतक है। ये चिरकुमार ब्रह्मचारी थे। एक बार मन्दिरका पूजाभार मिलनेपर वे बाह्याचरणके प्रति उदासीन होनेके कारण उस पदको न सँभाल सके। भोजनके बाद आचमन करनेकी आवश्यकता नहीं, स्नान-शुद्धि भी उनके लिये निरर्थक थी।

उनके चमत्कारोंकी असंख्य गाथाएँ सुननेको मिली हैं। उन सबका वर्णन करना संभव नहीं। स्वामी निगमानन्द आपके शिष्य हुये थे और अनेक साधकोंको इनके निर्देशनमें महासिद्धि प्राप्त हुई थी। जुलाई, १९११ ई०में आपने इहलीलाका संवरण किया था।

परमार्थीजी औघड़

आपसे पूज्य बाबा बचपनमें मिले थे। आप भोजपुर जिलेके सदर सब डिवीजनके नेकनाम टोलासे नीलकंठ टोलातक गंगा एवं सोनके किनारे विचरते थे। आपका जन्म ब्राह्मण कुलमें हुआ था। आप गौरांग, एवं भव्य मूर्ति थे। उस क्षेत्रके लोग आपको ईश्वर तुल्य मानते थे। कोई उनकी कुटीपर नहीं जाता था। आपकी कुटीका भी विचित्र हाल था। नदी तटपर सभी हड्डियोंको एकत्र कर कुटी बनाते थे जो प्रति वर्ष बाढ़से बह जाती थी। उनके साथ दो कुत्ते रहते थे। वे कुत्तोंसे बहुत काम लिया करते थे। छपराके उनके भक्तोंने देखा है कि एक चौकोर विमानमें बहुत-सी स्त्रियाँ रात्रिमें उनको उड़ाकर लाती हैं। यही दृश्य अनेक बार उत्तरी बिहारके लोगोंने भी देखा है। इसी प्रकार वे आकाश-मार्गसे ही अपने भक्तोंके घरमें उतरते थे। बाबाके भक्तोंके आते ही विमान तथा स्त्रियाँ गायब हो जाती थीं। पुनः रातमें ही उसपर बैठकर वे लौट जाते थे और प्रातः अपनी कुटीपर दिखलाई पड़ते थे। अब आपकी समाधि हो चुकी है।

श्रीकेशवानन्दजी उर्फ धूनीवाले दादाजी

ये जातिके ब्रह्मण थे और हमेशा दिगम्बर रहा करते थे। व्यवहार इनका पागलों-सा होता था। कभी किसीको मार बैठते तो कभी किसीको माँकी भाँति प्यार करते थे। जिसे कभी मार पड़ जाय तो उसके रोग-शोक सदाके लिये छूट जाते थे।

साईं खेड़ाकी एक बाईका लड़का एक रात मर गया। दूसरे दिन सबेरे नित्यकी भाँति बाबा भिक्षा लेने उसके घर गये। वह जोर-जोरसे चिल्लाकर मृत पुत्रको दिखलाने लगी। दादाजीने कहा—अरी पगली! रोती क्यों है? तेरा लड़का मरा थोड़े ही है। यह कहकर दादाजीने उस लड़केको एक लात मार दी। वह दो-तीन फिट उछलकर रोने लगा। इसपर माता दादाजीके चरणोंमें लिपट गई और सभी उपस्थित लोग आश्चर्यचकित हो देखने लगे। स्थानाभावसे दादाजीके अन्य अनेक चमत्कारोंकी चर्चा नहीं दी जा रही है।

सन् १९३२ ई०में दादाजीने साईं खेड़े (मध्यप्रदेश) में समाधि ली थी। वहाँ एक स्मारक बना हुआ है, जिसकी बड़ी धूम-धामसे पूजा होती है।

अवधूत श्रीबाबा जॉन

पूनामें बाबा जॉन एक सुप्रसिद्ध स्त्री-संत हो गई हैं। सन् १९३१ ई० की २७ सितम्बरको लगभग ११० वर्षकी अवस्थामें इन्होंने समाधि ली थी। वे कभी भी स्नान नहीं करती थीं परन्तु उनके शरीरसे फूलकी-सी सुगन्ध निकलती थी।

लोग कहते हैं कि उनका जन्म पेशावरके किसी सम्पन्न परिवारमें हुआ था। परन्तु इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता।

उनके एक भक्तने उनका माहात्म्य इस प्रकार बताया है—एक बार बाबा जॉन मेरे घर नित्यकी भाँति आई तो इन्होंने मेरी माँको बहुत पीटा तथा नाखूनसे उनकी बाँहमें एक अर्धचन्द्राकार घाव बना दिया। लोग आश्चर्य चकित थे किन्तु कोई कुछ कह नहीं सका।

दूसरे ही दिन दालानमें झाड़ू लगाते समय मेरी माताको एक विषधर सर्पने काट लिया। थोड़ी ही देरमें विष फैलनेसे उनका शरीर काला पड़ गया। तत्काल बाबा साईं नाथके चित्रके सामने ले जाकर उन्हें धूनीकी विभूति खिलाई गई। तत्काल उनके शरीरमें व्याप्त सारा विष उनकी बाँहके उसी घावसे निकल गया जिसे एक दिन पूर्व बाबा जॉन बना गई थीं। सभीकी आँखोंमें कृतज्ञताके आँसू थे। सच है संतोंके कार्योंको तत्काल न समझनेपर भी हितप्रद मानना ही उचित है।

औघड़ गणेश नारायणजी

आपका जन्म उच्च ब्राह्मण कुलमें जयपुर राज्यके बुगाला ग्राममें हुआ था। आप बड़े मेधावी तथा उच्चकोटिके विद्वान् थे। अध्ययन-कालमें ही आपका विवाह हो गया था। परन्तु ये सदा अवधूत अवस्थामें ही रहे। बादमें घर छोड़कर आप चिड़ावा रहने लगे। आप बराबर नीला वस्त्र धारण करते और एक लाठी तथा हाँड़ी सदा साथ रखते। (डं) मन्त्र जो शिवजीका बीज मन्त्र है, आप सदा जपते थे। प्रसिद्ध बिड़ला बन्धुओंमें श्रीजुगुल किशोर बिड़ला आपके अनन्य भक्त एवं कृपापात्र थे। आप सभी खाद्य वस्तुएँ गुह्य-स्थानसे स्पर्श कराके खाते थे। आप परम सिद्ध थे। आजसे ६० वर्ष पूर्व आपने तन त्याग किया था। आपकी समाधिपर आपकी निर्वाण तिथिपर भारी मेला लगता है।

अघोरी गुफाबाबा

आप गङ्गा तटपर बड़हरा थानामें एकवना घाटसे सिनहा घाट तक विचरते रहते थे। वे गङ्गा तटपर गुफामें निवास करते थे। ये अयाचित भिक्षासे ही निर्वाह करते थे। भिक्षा न मिलनेपर आप गङ्गाकी मिट्टी सान कर गोल आकार-की बाटी (रोटी) बना लेते थे और सूर्यको दिखा देने हीसे उनके तपबलसे वह पक्की रोटी बन जाती थी। महातमा उसे खाकर सन्तुष्ट हो जाते थे। गाँवोंमें महामारी आदिका प्रकोप होनेपर आपको सादर भोजन करा देने मात्रसे शान्ति हो जाती थी। वे सर्वदा भोले-भाले चरवाहोंकी रूखी रोटियाँ स्वीकार करते थे। ये जन-सम्पर्कसे सदा दूर रहे। इनके जीवनकी अनेक चमत्कारपूर्ण घटनाएं सुननेको मिली हैं। अब आपकी समाधि हो चुकी है।

औघड़ बाबा श्रीशङ्कर स्वामी

काशीमें दशाश्वमेध घाट जानेके रास्तेपर दुकानकी पटरीपर परमतेजस्वी एक औघड़ रहा करते थे। जनसाधारणमें इनकी ख्याति खिचड़ी बाबाके रूपमें

थी क्योंकि ये अंगीठीपर एक पात्रमें खिचड़ी पकाते रहते थे और श्रद्धालुओं द्वारा जो कुछ भी लाकर दिया जाता सब उसीमें डाल देते थे। स्पष्ट है योगी स्वादके लिये नहीं प्राण धारण मात्रके लिये भोजन करता है तथा अभेदवादी किन्हीं वस्तुओंमें भेद-भाव नहीं करता। इनके जन्म, कुल, जाति, स्थान आदिका पता नहीं मिलता। ठीक ही है इन विवरणोंकी आवश्यकता सच्चे सन्तोंके लिये नहीं जो देश कालातीत होते हैं। जिस मकानकी पटरीपर आप रहते थे वह जब गिरा तो तीन ओर गिरकर उनपर एक कङ्कड़ भी नहीं पड़ा। आप मौनाचरणमें ही विश्वास करते थे, किन्तु आपके दर्शनमात्रसे ही भक्तोंकी कामना पूर्ण हो जाती थी। देखनेमें लगता था कि आप बङ्गाल देशके निवासी थे।

औघड़ खराबदास

आजसे ५०-६० वर्ष पूर्व काशीमें किनारामी औघड़ खराब रामजी हुए हैं। ये बड़े ही मस्त मौला फकीर थे। ये मणिकर्णिकापर मचान गाड़कर रहते थे। उनको सङ्गीतका बड़ा शौक था। काशीकी वेश्याओंके यहाँ ये सङ्गीत सुनने जाया करते थे। काफी मस्तीमें हो जानेपर उनका तबला और हारमोनियम तोड़ देते थे। इसी प्रकारके हड़कम्पके भयसे एक ना-समझ वेश्याने इन्हें पुलिससे पकड़वाकर जेल भेजवा दिया। जब जेलर इन्हें बन्द कर बाहर आये, ये पुनः बाहर टहलते मिले। दो-तीन बार ऐसा होनेपर जेलरने ऊबकर बाबाको छोड़ दिया। इनकी सिद्धियों और चमत्कारोंके बारेमें बनारसके पुराने लोगोंके बीच आज भी कथा और कहानी-के रूपमें प्रचलित है। ये सिरपर चकरी लेकर घूमा करते थे। एक समय कर्णघंटा तालाबमें जल न था। वहाँ रामलीला हो रही थी; राम, लक्ष्मण और सीताको घरनैलपर उतरना था। भक्त जन आपको जब वहाँ लिवा ले गये तो आपने तालाबमें अपनी चकरी जो पत्थरकी थी फेंक दिया। उसके बादसे तालाबमें सदा जल भरा रहता है। इनका मंच जब मणिकर्णिकासे बाढ़की धारमें बह चलता था तो ये 'गङ्गिया-गङ्गिया' पुकारते थे और मञ्च पुनः अपने पूर्व स्थानपर स्थित हो जाता था। ये मञ्चपर हँड़िया, पुरवा आदि टाँगे रहते थे। कलकत्ताके एक भक्तने अपनी बनारस गद्दीसे दो रुपए प्रतिदिन आपको लेनेका अनुरोध किया। बाबाने उसे अपनी सामर्थ्य दिखानेके लिये एक दिन बनारस तथा कलकत्ता गद्दीसे एक समयमें ही उक्त दो रुपये लिए। वह जब इस बातको जान पाया बाबाके शरणमें उपस्थित होकर यही प्रार्थना की कि आप सदैव ऐसे ही कृपा बनाए रखियेगा। इनकी समाधि वाराणसी रामनगर मार्गपर है जो स्वच्छ है और वहाँ पुजारी भी रहते हैं।

अघोरी रमैया बाबा

आजसे साठ साल पूर्व एक प्रसिद्ध औघड़ साधक हो गये हैं, जिनका नाम पश्चिमी बिहार तथा पूरबी उत्तरप्रदेशकी ग्रामीण जनताकी जबानपर सदा रहता है। ये ही रमैया बाबा थे, जिनका जन्म वाराणसीके चन्दौली तहसीलके किसी ग्राममें ब्राह्मण कुलमें हुआ था। आप ग्राम जसुरी, चन्दौली तहसीलके पास रहते

थे। आपकी सवारी गदही थी जिसका नाम भगमानी था। आप परम सिद्ध संत थे तथा आपकी सिद्धियोंकी धाक बहुत दूर-दूरतक फैली हुई थी। उस समयके काशी नरेश श्रीप्रभुनारायण सिंह आपके विशेष भक्तोंमेंसे थे तथा रामनगरके प्रसिद्ध मुख्तार साहबपर बाबाजीकी विशेष कृपा रहती थी। अपने जीवनके उत्तरार्धमें आपने अपनी भैरवीके रूपमें एक वेश्या, जो काशी नरेशकी पहले रञ्जन करती थी, कुष्ट हो जानेके कारण हीन अवस्थाको प्राप्त हो गई थी, उसको अपने तप बलसे पुनः स्वस्थ करके, अधिक कान्तिमय एवं रूपवती करके, ग्रहण कर लिया था। आपने बहुतसे पद बनाये और स्वयं पद बना-बनाकर गाते रहते थे। जो आज भी लोक मानसमें वर्तमान हैं तथा लोग गाते रहते हैं। आपका बनाया हुआ प्रचुर साहित्य आज भी सुलभ है। उनके कुछ स्फुट पद नीचे दिये जा रहे हैं—

दिहली टिकुलिया जगमग टरईया को।
देखन वाले हजारों।

बाबा अपनी मौजमें कहा करते थे—

अब तक रहलू तूँ रण्डी पतुरिया, अब तू भैलू रमैया के रानी॥
अब ना नाच हे भगवानी।
"मुख्तखा के लागल फाँसी।" मोरि लागल सनेहिया कासी से।

आदि प्रमुख पद आज भी प्रचलित हैं। यदि बाबाके साहित्यका संकलन हो तो एक बड़ा ग्रन्थ तैयार हो जायगा। आपने वर्तमान जिला रोहितासके भभुआ सब डिवीजन दूडी भगवानपुरमें परदा किया था।

बाबा भरतराम

आप जातिके ब्राह्मण थे। एक समय एक मित्रके सहयोगके लिये आप एक बारातमें गये। वहाँ अत्यधिक एक तत्त्वका सेवनकर आपने उल्टी कर दी। उपस्थित जनसमुदाय नाक-भौं सिकोड़ने लगा तो एक व्यक्तिने बाबाकी उल्टीपर अपनी चादर डाल दी। ज्यों-ही चादर उठाया गया उसके नीचेसे सुवासित जूहीके फूल निकले और सभी लोग आश्चर्य चकित हो गये। इनका दर्शन पानेवाले भक्त आज भी हैं। इनकी समाधि वाराणसी किनाराम स्थलमें है।

अघोरी लक्ष्मण बाबा

वाराणसी जनपदमें रामनगरकी रामलीला भारत-विख्यात है। यहीं रामलीलाके एक पात्र लक्ष्मणजी यहाँसे वैराग्य भावका उदय होनेपर चित्रकूट चले गये। वहाँ वे स्फटिक शिला श्मशानमें साधना करते थे। आपके बारेमें प्रसिद्ध है कि आप एक लोहेकी जंजीर लिये रहते थे। एक बार मौजमें आकर आपने एक कुत्तेको मार डाला। जब पण्डोंने आपको सताया तो आप वहाँसे भ्रमण करने चले गये। लौटकर मौजमें आनेपर पुनः उसी लोहेकी जंजीरसे मारा और कुत्ता जीवित होकर भाग गया। बाँदा जिलामें आज भी आपका नाम बड़े आदरसे लिया जाता है। आपने समाधि ले ली है।

श्रीहरीराम उर्फ बिलइया औघड़

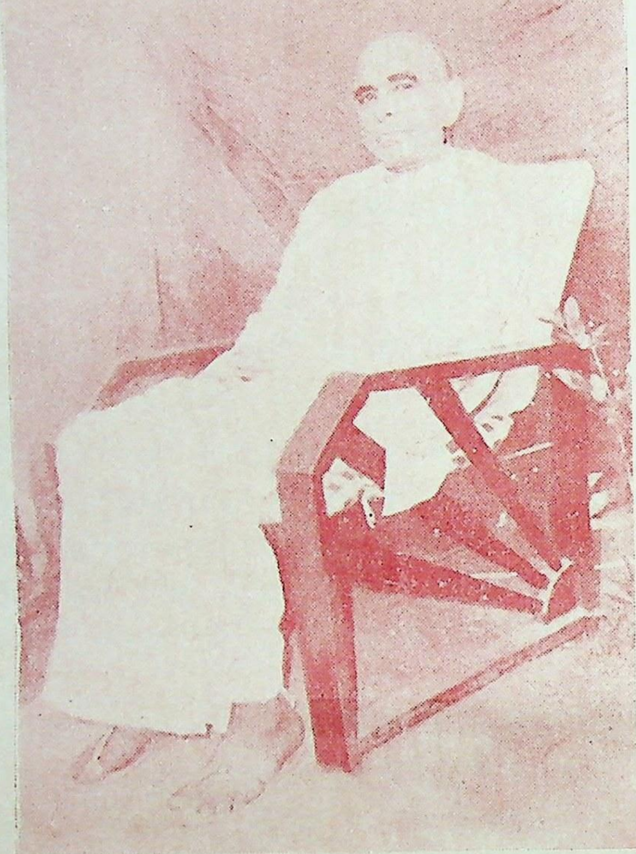
आपका जन्म उत्तर प्रदेशके बस्ती जिलामें सहजनवा स्टेशनके समीप एक ग्राममें कुलीन ब्राह्मण परिवारमें हुआ था। जब आपकी आयु ५ वर्षकी हुई तो आपके पिताजीका स्वर्गवास हो गया। महात्माजी अपने पिताके साथ रात्रिमें सोये हुये थे। प्रातःकाल उठनेपर आपने पिताजीका सारा शरीर ठंढा पाया, तब पुकारा लेकिन वे नहीं बोले। इसपर आप उनके शरीरसे चिपककर लेट गये।

तत्पश्चात् आपका विवाह लगभग १२ वर्षकी अवस्थामें हुआ। प्रथम रात्रिमें ही जब आपका मिलन अपनी पत्नीसे हुआ तब आपने उसको अपनी इच्छानुसार दूसरा विवाह करनेकी आज्ञा देकर घरसे निकल पड़े। आप काशी आये और श्रीकच्चा बाबासे हठयोगकी क्रिया सीखा, लेकिन शान्ति न मिली। तब आपने तारा पीठ (पश्चिमी बंगाल) में जाकर साधना किया और वहींपर उनको सिद्धि प्राप्त हुई।

साधनाके क्रममें आप भोजपुर जिलामें बड़हरा थानाके अन्तर्गत चातर ग्राममें पहुँचे। आपने निकटवर्ती ग्रामीण जनताके सहयोगसे वहाँ एक कुटियाकी स्थापना की जो आज भी विद्यमान है। उस कुटियापर अब आपके शिष्य रहा करते हैं। वहाँकी जनता उनका बहुत ही आदर करती थी। उनके प्रति आज भी श्रद्धा एवं भक्ति वहाँके लोगोंके हृदयमें बनी है। आप जबतक जीवित थे चातरकी कुटियापर वाराणसीसे आकर लोग अकसर रहा करते थे।

तत्पश्चात् वाराणसीके अन्तर्गत कमौलीमें नील गोदाम कोठीको आपने अपना क्रीड़ा-स्थल बनाया। बादमें वाराणसीके राजापुर मुहल्लामें बाग, कुटिया तथा कुआँका निर्माण आपके द्वारा किया गया। बरियासनपुर (वाराणसी) में आपने एक मिडिल स्कूल स्थापित किया जो आज भी विद्यमान है एवं दिन-प्रतिदिन उन्नति कर रहा है।

महात्माजी बहुत ही सरल स्वभावके थे और सादगी पसन्द करते थे। अपने शिष्यों एवं अन्य व्यक्तियोंपर आप रञ्ज तथा क्रोधित होकर बिगड़ जाया करते थे लेकिन फिर बादमें बड़ा ही लाड़-प्यार करने लगते थे। आपका हृदय बहुत ही मृदुल था। आपने खेचरी मुद्रा 'योग-क्रिया' को सिद्ध किया था। आपके साथ एक अवधूतिन रहती थी। आप एक उच्चकोटिके औघड़ थे। प्रवचनके सिलसिलेमें आप किनाराम बाबाके पद्य एवं विचारधाराको कहा करते थे। आप कभी बेलपत्रका शर्बत लगातार छः माहतक पीकर रहा करते थे और कभी मिरचाईका शर्बत पीकर कई महीनोंतक रहते थे। कभी-कभी इसी भाँति दूबका शर्बत पिया करते थे। आपके आश्रममें सूअर, मुर्गा, मुर्गी तथा एक गदही जिसे आप शांतिदेवी कहते थे, पाल रखा था। इसीलिये आपको लोग गदहिया बाबा भी कहते थे। आप उसी गदहीपर बैठकर घूमा करते थे। आपकी समाधि राजापुर नामक स्थानपर वाराणसीमें है।



औघड़ रामनरेश जी



औघड़ बाबा भगवान राम जी के साथ औघड़ रामनरेश जी

बाबा धनीराम खण्डवा (मध्यप्रदेश)

ये पूर्वावस्थामें सरकारी कर्मचारी थे। इनकी सच्चाई और साधकोंके सम्पर्कसे ही इन्हें वैराग्य हुआ था। वर्तमान शताब्दीमें मध्यप्रदेशके महान विभूति थे। इन्होंने २० वर्षोंतक हाथमें एक हँसिया बाँध रखा था। मल-मूत्र त्याग करनेके उपरान्त पता नहीं ये हाथ-पाँव धोते भी थे या नहीं। ये स्नान कभी नहीं करते थे। ये बड़े विलक्षण अघोरी थे, इनके भक्तोंकी संख्या बहुत बड़ी है।

अघोरी रामनरेशजी

बिहार प्रान्तमें आरा जिलाके अन्तर्गत बाबाके ग्राम गुन्डीसे तीन मील उत्तर बड़हरा थानेमें स्थित बखुरापुर ग्राममें आजसे करीब ४७ वर्ष पूर्व श्रद्धेय परमहंस रामनरेशजीका जन्म एक सम्भ्रान्त राजपूत परिवारमें हुआ था। बाल्यकालमें आप कुछ दिनतक अपने आदरणीय चाचाजीके साथ कलकत्तामें रहते थे। यहीं आपके चाचाजीका कुछ कारोबार हुआ करता था। जब आपकी आयु करीब १०-१२ वर्षकी थी तो आप कलकत्तासे अपने ग्राम बखुरापुर वापस लौट आये। ग्राम लौट आनेपर आपके वैष्णवमतकी दीक्षा ली तथा उसी आचार-विचारसे रहने लगे। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा साधारण ही थी। आपके ग्रामके निकट शिवपुर जङ्गलमें बाबा कृपालदासजीके शिष्य रहते थे। आपका सत्सङ्ग बाबा कृपालदासजीसे होता था तथा यौगिक क्रियाओंकी भी चर्चा होती थी। आप एवं बाबा कृपालदासजी दोनों समवयस्क हैं। बाबा ब्राह्मण कुलके हैं और आज दिन भी वहीं रहते हैं। इसके चार-पाँच वर्ष बाद परमहंसजीने गल्लेका कुछ व्यापार प्रारम्भ किया। अधिकतर आप आरा तथा छपरामें गल्लेकी खरीद-बिक्री किया करते थे। पर ईश्वरकी तो कुछ और ही मन्जूर था। सांसारिक बन्धन तोड़नेके हेतु ईश्वरने आपके इस मार्गमें विघ्न उपस्थित कर दिया। व्यापारमें घाटा लगा और आपका चित्त इधरसे पूर्णरूपेण उचट गया। आप आराकी ओर चल पड़े। मन सांसारिक बन्धनोंसे ऊब गया था। जीवनमें पूर्ण निराशा छा गई थी, लेकिन इस घने अन्धकारमें भी एक प्रकाश पुञ्ज दीख पड़ा। आरामें आपकी मुलाकात बसगितसे हुई जिसकी लकड़ीकी दुकान गांगी श्मशानपर है। बसगितने आपको गांगी श्मशानपर चलकर परम सिद्ध श्रद्धेय आत्मारामजीका दर्शन करनेको कहा। फिर क्या था? डूबतेको तिनकेका सहारा काफी होता है। वहाँ पहुँचनेपर आपने देखा कि परमहंस आत्मारामजी प्रातःकाल एक कब्रपर बैठे नीबू खा रहे थे। रातमें माँके साथ साधन इत्यादि हुआ था। परमहंस आत्मारामजीने आपको नीबूका एक टुकड़ा खानेको दिया। उस प्रसादके खाते ही आपकी कुण्डलिनी जागृत हो गई और दिव्यत्वकी प्राप्ति हुई। यहाँपर परमहंस आत्मारामजीके बारेमें कुछ वर्णन करना अप्रासंगिक न होगा। आप दरभंगाके एक ब्राह्मण कुलके थे। मुझे श्रद्धेय बाबा भगवान रामजीने बतलाया कि उनकी वेश-भूषा अजीब रहती थी। वेशसे इन्हें कोई पहिचान न सकता था कि आप इतने उच्चकोटिके परमहंस हैं। शरीरपर कीमती रेशमी वस्त्र,

हाथमें कीमती छड़ी, आँखोंपर सोनेकी डाड़ीका चश्मा देखकर भला आपको कौन जान सकता था ? महाराज दरभंगा आपको बड़ी श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे। आप एक बार घूमते-फिरते आरामें गांगी श्मशानपर पहुँचे। वहाँ एक बंगालिन अवधूतिन जिन्हें हम ऊपर माँके नामसे सम्बोधित किए हैं रहती थीं। आप एक सिद्ध अवधूतिन थीं। जब परमहंस आत्मारामजी वहाँ पहुँचे तो आप बड़ी जोरसे बिगड़ उठीं और तत्काल भाग जानेका आदेश दिया पर आत्मारामजीने कहा सिंहनीका बच्चा उससे नहीं डरता। इसपर माँ द्रवित हो गईं और आपको पास बुलाया। बहुत दिनोंतक आप दोनों यहीं रहकर साधन करते थे। आत्मारामजीकी समाधि दरभंगामें हुई और ४-५ वर्षसे माँ भी श्मशान छोड़कर किसी अज्ञात स्थानको चली गईं। मैं जब गांगी श्मशानपर गया था तो मुझे श्मशानके रखवाले भगेलूने आपके बारेमें विस्तृत रूपसे बतलाया और कहा कि ऐसी शक्ति आजतक देखनेको न मिली। ऐसे महापुरुषके शिष्य हैं परमहंस रामनरेशजी। अपने जीवनकालमें ही परमहंस आत्मारामजीने आपको समस्त साधन कराये। अधिकांश आपका निवास गयामें होता है। इस बार जब आप श्रद्धेय गुरुदेव बाबा भगवानरामके साथ काशी आये थे तो मुझे आपके दर्शनका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। आप एक अत्यन्त उच्चकोटिके महात्मा हैं। श्रद्धेय बाबा भगवानरामजीका और आपका साधन एक बार गया श्मशानमें हुआ था। मुझे बाबाने कुछ ऐसी साधनाएँ बतलाई जिसमें शवकी कोई आवश्यकता नहीं ? जीवित व्यक्ति ही साधनकालमें शववत् हो जाता है। ऐसी अनेक साधनाओंमें हैं। इस गया श्मशानकी साधना करके जब श्रद्धेय बाबा भगवान रामजी एवं परमहंस रामनरेशजी आ रहे थे तो रास्तेमें आपको माँ ताराका दर्शन हुआ। आप लोग प्रेतशिलासे साधन कर लौट रहे थे। अगहनका महीना था। यहाँसे ४-६ फर्लांग दूर आनेपर आपने माँ ताराका दर्शन किया। सरकारने यह घटना बतलाते हुए मुझसे कहा कि माँ ताराके साथ करीब ४-५ वर्षका एक शिशु था। देखनेमें युवती-सी लगती थीं। आपके चारों ओर चँदवा टँगा था और साथमें १०-१२ देवियाँ गाती चल रही थीं। इसके दो-एक रोजके बाद महात्माजी काशी लौट आये।

अघोरी मुनिनाथ इलाहाबाद

ये बलिया जनपदके उच्च ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुए थे। ये श्रीरामनरेशजीके शिष्य थे। बंगाल तथा राजस्थानमें आपने व्यापक भ्रमण किया था। इलाहाबादके उच्च कुलीन लोग आपके अनुयायी थे तथा सदा इनकी सेवामें तत्पर रहते थे।

अघोरी हँड़िया बाबा

इनकी समाधि इलाहाबादके बाँधपर है। इन्हें स्वर्गवासके समय सन् १९५४ ई० में कुम्भके अवसरपर अवधूत भगवान रामजीका दर्शन मिला था, जिन्होंने इनके मुखमें गंगा जल दिया था। इनकी प्रसिद्धि अष्टांग योगीके रूपमें थी और इनका योगपर पूर्ण अधिकार था। आज भी इनकी समाधिपर बड़ा मेला लगता है और लोग श्रद्धापूर्वक इनकी समाधिकी पूजा करते हैं।

औघड़ टेढ़ू बाबा

सकलडीहा (चन्दौली) के तालाबपर आपकी समाधि है। ये बड़े उदारचरित अघोरी थे इनको लोग टेढ़ू बाबा या परसिधि बाबा कहते थे। ये निकटके ही नवदह ग्रामके रहनेवाले थे। इनके शिष्य बुलार मिस्त्री हैं जिनका पालन-पोषण बाबाने ही किया था। आज भी ये मिस्त्री औघड़ोंकी सेवामें जसपुर, बनारस आदिमें भवन निर्माणमें २० वर्षसे संलग्न हैं। आपने अनेकों तालाब और कुएँ लोकोपकारार्थ बनवाये हैं। आपने अब परदा कर लिया है।

झकड़ बाबा

आजसे ३० वर्ष पूर्व आप सरगूजामें रहते थे। यदा-कदा आप जसपुर जाया करते थे। वर्तमान जसपुर महाराजाकी राजमाता इन्हें बहुत मानती थीं। इनके आशीर्वादसे ही महाराजाका जन्म है। सरगूजाके महाराज आपके भक्त थे। जब वे इङ्गलैंड जा रहे थे आपके आज्ञासे ही सपत्नी गये। महाराजाकी अनुपस्थितिमें आप महलकी देख-रेख कर रहे थे। महाराजाके पिता भी आपके बड़े भक्त थे। ये बड़े ही सिद्ध औघड़ थे। ये भूतलीन हो चुके हैं।

मस्तराम बाबा

आप एक सिद्ध औघड़ थे। भोजपुर जिलाके अन्तर्गत बड़हरा थानामें नूरपुर ग्राममें रहते थे। आपकी समाधि गंगा तटपर स्थित नूरपुर ग्राममें है।

सौखी बाबा

आप भोजपुर जिलाके आरा शहरके समीप ग्राम अनाइठमें रहकर साधना किया करते थे। उनका जन्म स्थान अनाइठ था, उनकी समाधि अनाइठमें ही आरा रेलवे स्टेशनके समीप है।

अघोरी भूतनाथ (मजनूटीला) दिल्ली

इनका जन्म स्थान वर्तमान गुजरात राज्यके जूनागढ़में है। बिहार प्रान्तके छपराके सन्त सूर्यप्रकाशानन्दके शिष्य हैं। अवधूत भगवानरामजीके सम्पर्कमें गत १०-१२ सालसे हैं। मध्यप्रदेश, वाराणसी और अब दिल्लीके महाराजके आश्रमोंकी देख-रेख करते हैं। ये एक विलक्षण औघड़ हैं। इनके साथ कई कुत्ते रहते हैं। लेखकने स्वयं इनका दर्शन किया है।

अघोरी गयाप्रसादजी

आप चतरा जिला हजारीबाग (बिहार) में रहते हैं। आप बिहार सरकारसे अवकाश प्राप्त सिविल सर्जन हैं। आप श्रीरामनरेशजीके शिष्य हैं, आपने सिद्ध बाबा आत्मारामजीका भी दर्शन और सान्निध्य पाया है। ये सूड़ी जातिके हैं। इस समय इनकी अवस्था ७० सालकी है। ये अघोर-साधनाके परिपक्व साधक हैं।

अघोरी फक्कड़ बाबा

वाराणसी जनपदके वरुणा तटके कोनिया ग्रामके निवासी हैं। आज १० वर्षसे अवधूत भगवान रामजीके सम्पर्कसे अघोर-साधनाके साथ ही आप सोगड़ा आश्रम मध्यप्रदेशकी देख-रेख करते हैं। आपकी उम्र ६० सालकी है। आप भजनमें बड़ी ही रुचि रखते हैं।

प्रीतमराम अघोरी

ये जगन्नाथपुरी स्वर्गद्वार श्मशानमें रहते हैं। जब अवधूत भगवान रामजी स्वर्गद्वार श्मशानके तारा मन्दिरमें जाते और ठहरते हैं तो ये बराबर बाबाके सम्पर्कमें आते हैं। ये सर्वेश्वरी समूहकी स्थापना कालके प्रथम सदस्य हैं। उसी श्मशानमें एक मौनी बाबा अघोरी हैं जो बड़े ही विलक्षण हैं और अपने सान्निध्यमें दो-चार अघोरियोंको रखकर उनका सहयोग करते रहते हैं। होरी कृष्ण बाबा अघोरी भी पुरीमें विचरते हैं और ये बड़े ही सम्मानित और आदरणीय व्यक्तिके रूपमें वहाँके जन-समाजमें प्रख्यात हैं।

गङ्गासागरके अघोरी बाबा

गंगासागर तालाबके उत्तरी छोरमें अघोरियोंका एक आश्रम है, जहाँ ५०-६० वर्षोंकी अवस्थाके एक अघोरी साधक हैं जिनकी भैरवी भी ३०-३५ वर्षकी है। वहाँ अवधूत भगवान रामजी भी ठहर चुके हैं। उनका स्थान कपिलदेवजीके मन्दिरसे २-३ फर्लांगपर है। इस स्थानमें २-३ कच्चे कमरे, अमरूद, नारियलके वृक्ष तथा कुछ धानकी क्यारियाँ हैं। कपिलदेव मन्दिरके पासके तालाबके ही उत्तरी भागमें यह आश्रम है। वैसे जल आपूर्तिकी दृष्टिसे इस क्षेत्रमें दो-तीन तालाब हैं।

बाकेश्वरके अघोरी बाबा

वीरभूमि जिलेमें बाकेश्वर नामक स्थानपर गर्मजल-कुण्ड है, जहाँपर औघड़का एक बड़ा स्थान है। आजकल ५०-६० वर्ष उम्रके एक औघड़ बाबा वहाँ रहते हैं। पास ही उनके गुरुकी समाधि है। स्थानमें २-३ कमरे हैं। पीपलके वृक्षके नीचे एक चबूतरेपर हजारोंकी संख्यामें नर मुण्ड रखे हैं। वहाँके लोग यह बताते हैं कि अंग्रेजों तथा मुसलमानोंके युद्ध कालमें हत व्यक्तियोंके ये नर कपाल हैं। यह स्थान एक बड़े मठका अवशेष है और यहाँ सैकड़ोंकी संख्यामें समाधियाँ हैं जिनकी व्यवस्था बिरला बन्धुओंने कराई है। यह स्थान तारापीठसे ४० मीलकी दूरीपर है।

गौहाटीका श्मशान

गौहाटीके श्मशानमें २-३ अघोरियोंकी समाधियाँ हैं, जो ब्रह्मपुत्रके किनारे ही पर हैं। यहाँ एक प्रसिद्ध शिव-मन्दिर है। यहाँ ५-६ अघोरी सदैव रहते हैं। गौहाटी श्मशान एक स्वच्छ साधना-भूमि है और यहाँसे विचित्र साधक लोगोंने साधना करके आपकी भारतीय जनताको कुछ देनेमें उत्साह भी दिखाया है।

कृष्णाराम अघोरी

ये तिलंग देशके रहनेवाले थे। इनका मकान भैसारा नदीके तटपर जो गुडपुड ताल्लुकमें है स्थित था। ये सन् १९५७-५८ ई० में प्रयाग श्मशानमें एक भैरवी सहित बाबा भगवान रामजीसे मिले। उस दिन भैरवीपर ये रुष्ट थे। वहींसे अवधूत भगवान रामजीके संग बनारस आ गये। ये बाबाके साथ बनारसके हरिहरपुर आश्रम, सोनपुरा राजाकी कोठी और जसपुर आश्रम तथा जसपुर पैलेसमें रहे। ये विलक्षण मूर्ति थे। ये कभी नहीं नहाते थे। इनकी जटा कभी नहीं खुली। उसमें मोर, चिल्ह, गिद्ध आदिके पंखे खोसे रहते थे। बराबर इनकी झोलीमें सूखी मछली, सड़ा माँस पड़ा रहता था। यदि काशी विश्वनाथ मन्दिरके फाटकपर पहुँच जाते तो आतंक मचा देते थे। हाथमें दण्ड लिये लड़कोंको खदेड़ते थे। रस्सी-सिकड़ी बाँधे रहते थे। हाथमें पंखा रहता था। कभी-कभी हाथमें झंडा बनाकर माला लेकर घूमते थे। कभी-कभी जूतोंकी माला पहने रहते थे। पुरी श्मशानका कुलऊ मुनी डोम, जो औघड़ोंका बड़ा सेवक है इनको बहुत मानता था। अवधूतजीके साथ १०-१२ वर्ष तक ये रहे। अभी-अभी दो वर्ष पूर्व पड़ाव (वाराणसी) पर ही आपकी समाधि हुई। ये बड़े मनस्वी और सिद्धप्रद व्यक्ति थे। अघोर-साधनाके ये मूर्तिरूप थे।

तपसी बाबा

ये चित्रकूटके वैरागी साधु हैं जिन्हें लोग तपसी बाबा कहते थे। कान्तानाथजीकी १२ वर्ष परिक्रमा की। परिक्रमामें ३ दिन बाकी रह गये थे तो अवधूत भगवान रामजीका दर्शन हुआ। कठोर तपश्चर्या छोड़कर अघोरी हो गये। सुगम साधनासे अपने जीवनमें इन्हें बहुत कुछ प्राप्त हुआ। रायगढ़की क्षेत्रीय जनता आपको बड़े आदरकी दृष्टिसे देखती है। सोगड़ा आश्रमकी व्यवस्था करानेमें इनका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। ये बारह वर्षतक सोगड़ा आश्रममें ही रहे। देशके विभिन्न भागोंमें ये साधना कर चुके हैं। आजकल पुनः भ्रमणशील हैं। यदा-कदा मध्यप्रदेश और वाराणसीके सर्वेश्वरी आश्रममें आ जाते हैं। इनकी अवस्था लगभग ५० वर्षकी है।

श्याम बाबा

इनका जन्म रामगढ़ जिलामें धर्मजयगढ़ स्टेटके उच्च कायस्थ परिवारमें हुआ है। आप उक्त स्टेटमें थानेदार थे। राज्यके विलयके बाद आप मलेरिया इन्सपेक्टर रहे। वहीं एक बार जंगलमें बाबाका दर्शन पाकर आपमें भाव-परिवर्तन हुआ। नौकरी छोड़कर आप औघड़ हो गये। इनका पूर्वनाम श्रीवीरेन्द्र था। अब आपका नाम है श्याम बाबा अघोरी। भारतके विभिन्न राज्योंमें आप बहुत घूमे हैं। ये बड़े विचित्र अघोरी हैं। इनको भूतपूर्व राज परिवारोंसे भी सहयोग प्राप्त रहता है और आप साधनामें काफी प्रवीण हैं और उच्चकोटिके विद्वान हैं। ये निष्ठावान गुरुभक्त हैं। आजकल जसपुरके सन्निकट गम्हरिया आश्रममें आप अधिकतर रहते हैं।

बाबा वामनराम

मिरजापुर रीवा रोडपर तिनतखवा पुलके पास एक किनारामी कुटी है जिसमें ७–८ समाधियाँ है। हवन-पूजा स्थलपर बाबा किनारामका भव्य चित्र लगा है। प्रधान समाधियोंमें एक मँगरूराम बाबाकी समाधि है। यहींपर आजकल वामनराम अघोरी रहते हैं। ये कसेरा कुलमें उत्पन्न हुए हैं। ये भव्य और विलक्षण मूर्ति हैं। दो-चार साधु, अभ्यागतका सेवा-सत्कार करते रहते हैं। उक्त स्थानकी देखभाल और आरती-पूजा भी ये ही करते हैं। स्थानमें दो-तीन दुकाने हैं तथा नदीके किनारे २–३ कमरे हैं जिनमें अघोरी लोग आकर ठहरते हैं। यह स्थान सड़कके किनारे ही है। आजकल यदा-कदा रीवा जानेवाली रोडपर रीवाके निकट पहाड़की घाटीमें बने आश्रममें रहते हैं। इन्हें अवधूत भगवान रामजीका सान्निध्य प्राप्त है।

अघोरी सरयूराम

आप सतना जिला मध्यप्रदेशके निवासी हैं। पूर्वावस्थामें आप पुलिस अधिकारी थे। आपकी उम्र ५० वर्ष है। आप भजनमें निष्ठाके साथ सोगड़ा स्थित ब्रह्मनिष्ठ आश्रमकी व्यवस्था बड़ी तत्परतासे करते हैं। गुरु-सेवामें इनकी विशेष प्रीति है।

रामनारायनराम अघोरी

आपका जन्म भोजपुर जिलाके अन्तर्गत कसाप ग्राममें एक क्षत्रीय-परिवारमें हुआ है, आप एक नवयुवक औघड़ हैं। घर छोड़कर आप आरा श्मशानमें रहकर साधना करते हैं।

राधारमन अवधूत

ये निष्ठावान अघोरी साधक हैं। आजकल ये वाराणसी जिलेके मिरजामुराद अघोर कुटीपर निवास करते हैं। आप अवधूत भगवान रामजीके सच्चे भक्त हैं और अपनी कुटीपर एक औषधालयका निर्माण करा रहे हैं। आप सर्वेश्वरीसमूहके सक्रिय और उत्साही कार्यकर्ता हैं।

अक्षोभ भैरव

ये मेरठ जिलान्तर्गत ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुये हैं। इनको घरपर बाल्यावस्थामें लोग महेन्द्रमिश्र नामसे पुकारते रहे हैं। आपकी उम्र अभी केवल १४-१५ सालकी है आप बहुत बड़े अघोरी साधक हैं और बंगालके तारापीठ तथा हिमालयके कालीमठमें साधना कर चुके हैं। आप गोआमें भी रह चुके हैं। आजकल आप अवधूत भगवान रामजीका शिष्यत्व ग्रहणकर वाराणसी और जसपुर रमते हैं। आप गौरांग एवं भव्य स्वरूप हैं। आपके साथ एक हाँड़ी रहती है। जिसका उपयोग आप खान-पान, शौचादिक सभी कार्योंमें करते हैं।

पलटूराम अघोरी

आप बाकराबाद वाराणसीके रहने वाले हैं। आपकी वर्तमान उम्र ५० वर्ष की है। आप [illegible] ग्राम वाराणसीमें कुटी बनाकर वहाँ साधना करते हैं। आप

सर्वेश्वरी समूहके बड़े उत्साही कार्यकर्ता हैं तथा बराबर कुष्ट सेवा आश्रममें कुष्टी बन्धुओंके सहयोगके लिये खाद्य पदार्थ भिक्षाटनसे जुटाकर देते रहते हैं। आपके पद सर्वेश्वरी टाइम्समें प्रकाशित होते रहते हैं। आपकी गुरुभक्ति और आपकी लगन सराहनीय है।

अघोरी परमात्मा बाबा

आप छपराके रिबिलगञ्ज सेमरिया घाटमें रहते हैं। आप भव्यकाय, गौरांग तथा जटा-जूट रखे और अल्फी पहने रहते हैं। आप बड़े विचित्र साधक हैं। औघड़ समाजमें इनका बड़ा आदर और प्रतिष्ठा है। किनाराम स्थलके दलसिंगारराम बाबाके ये शिष्य हैं। इनकी उम्र ५५ वर्षके लगभग है। उक्त स्थानपर एक बड़ा भव्य आश्रम है, जहाँ साधू-फकीरोंकी सेवा बराबर होती रहती है। आश्रममें गौयें हैं तथा मुर्गा-मुर्गी भी पाले गये हैं। इस आश्रममें दो-तीन समाधियाँ भी हैं।

अघोरी बालाराम

वाराणसी जिलेके कैथी टाड़ाकी किनारामी कुटीमें आप रहते हैं। यह कुटी गंगाके तटपर ही स्थित है। इस स्थानपर स्थलके भूतपूर्व महन्थ बाबा दलसिंगारराम तपस्या कर चुके हैं तथा वर्तमान महन्थ बाबा राजेश्वरराम भी वहाँ तपस्या कर चुके हैं। वहाँ तीन-चार समाधियाँ हैं। कुटीका खर्च आकाशवृत्तिसे चलता है और साधकों तथा फकीरोंकी समुचित सेवा होती है।

अघोरी कमली बाबा

वाराणसीके चौकाघाट नामक स्थानपर एक कुटी सड़कके किनारे बनाकर आप रहा करते थे। उसी स्थानमें आपने एक कुआँ बनवाया था। आप भव्यमूर्ति साधक थे। दीन-दुःखियोंकी सेवाके लिये आप निःशुल्क औषधि भी बाँटते थे। उसी स्थानपर आपकी समाधि है जहाँ आजकल इन्हींके गुरुभाई एक औघड़ विराजते हैं जो साधु-सेवामें सदा निरत हैं। यहाँ सालमें एक बार भण्डारा भी दिया जाता है।

अघोरी बाबा देवकीराम

आपकी समाधि बनगाँव जिला आजमगढ़में है। आपकी कुटी बड़ी स्वच्छ रहती है। वहाँ दो-तीन औघड़ विराजते हैं। वहाँ साधु-अभ्यागतोंकी सेवा होती है।

नवापुरा तथा अलईपुरके औघड़ोंकी समाधि

उक्त दोनों स्थान बहुत स्वच्छ रखे जाते हैं। वहाँ सदा दो-तीन औघड़ विराजते हैं। उक्त समाधियोंपर आनेवालोंकी सेवाकी जाती है।

श्रीदेवसियाके औघड़ बाबा

आप प्रसिद्ध देवरहवा बाबाके समकालीन तथा केवल पाँच वर्ष उम्रमें छोटे हैं। आपका गुरु घराना बखरी, आनन्द बाग, जिला छपरा है। आपके गुरुजीका

नाम श्री १०८ जगन्नाथदासजी था। आपकी लीलाभूमि बहुत दिनोंसे देवसिया ग्राम पोस्ट भागलपुर, जिला देवरिया है। जहाँ आपकी सुन्दर कुटिया है।

आप कुलीन ब्राह्मण परिवारमें जिला छपरामें जन्म लिए। कक्षा दस तक अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू एवं संस्कृतकी शिक्षा प्राप्त किये। तत्पश्चात् रेलवेमें सरकारी नौकरी प्राप्त किये। गार्डके पदपर काम करते रहे और अध्यात्म प्राप्तिकी ओर बढ़ने हेतु साधु संगको माध्यम बनाया। अकस्मात् भगवानपुर स्टेशनके पास आपको उपरोक्त गुरुजीसे सम्पर्क हो गया और उन्हींसे दीक्षित होकर काशीमें आकर साधन-सम्पन्न हुये। अपने साधना-कालमें आजीविका हेतु कपड़ा बुननेका तथा अन्य कई प्रकारकी मजदूरी करते रहे एवं गुप्त रूपसे साधन-सम्पन्न भी होते रहे।

औघड़ सूरजराम

जिला मिर्जापुरके अदलहाट बाजारसे निकट ही कौड़िया पहाड़ी है। वहाँ बाबा भक्कड़रामकी कुटी है। वहीं औघड़ सूरजराम जो कि बाबा भगवान रामजीके दीक्षित शिष्योंमें हैं, विराजते हैं। आपकी अवस्था लगभग ४० वर्ष होगी। आप क्षत्रिय कुमार हैं। आप काशीके रामनगर क्षेत्रके दरियापुर ग्रामके निवासी हैं। आप काशी हिन्दू विश्वविद्यालयसे आयुर्वेदाचार्य सन् १९५२ में कर चुके हैं। वैराग्य उत्पन्न होनेपर गृह-त्याग करके वर्षों बाबा भगवान रामके मध्यप्रदेश स्थित आश्रमोंमें निवास कर क्षेत्रीय जनताकी चिकित्सा करते थे। आप क्रियावान औघड़ हैं और आपकी गुरु-निष्ठा प्रशंसनीय है।



रुद्राक्ष ३

अघोर-मत और अघोर-मार्ग

अघोर-मत एक धार्मिक सम्प्रदायके रूपमें प्रस्तुत अध्यायमें दिया जायगा। अतः यह आवश्यक है कि इसके तीनों पक्ष—सिद्धान्त-पक्ष, साधना-पक्ष और व्यवहार-पक्षका विवेचन किया जाय[1]।

श्रीशंकर भगवान और उनके अनेक रूप इतिहासके बहुत पूर्वसे ही एशिया महाद्वीपके पश्चिमी भूखंडसे लेकर पूर्वी द्वीपसमूहतक वन्दनीय और पूज्य रहे। भरतने शिव शब्दकी व्युत्पत्ति करते हुए कहा है, "शिवं कल्याणं विद्यते अस्य शिवः। श्यति अशुभं इतिवा, शेरतेऽवतिष्ठन्ते अणिमादयो अष्टौ गुणा अस्मिन् इति वा शिवः।"

जिनमें समस्त मंगल विद्यमान हैं अथवा जो अशुभका खंडन करते हैं अथवा जिनमें अणिमादि अष्ट ऐश्वर्य्य (अणिमा, महिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व, कामावसायिता) अवस्थित हैं, वे ही शिव हैं।

शिवके जितने नाम हैं उन सबमें शूली, पशुपति, कपर्दी, वामदेव, विरूपाक्ष, रुद्र, दिगम्बर, महाकाल, भैरव, भूतनाथ आदि ऐसे भी नाम हैं जिनमें शिवत्वके साथ-साथ उनके भयंकर रूपका भी आभास प्राप्त होता है। वैदिक साहित्यमें जिन्हें रुद्रके नामसे अभिहित किया गया है अर्थात् ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, ब्राह्मणग्रन्थ और उपनिषदोंमें जिन्हें रुद्रदेव कहा गया है वही रुद्र पुराणों और रामा-यण-महाभारत आदि इतिहास ग्रन्थोंमें शिव और महादेवके नामसे सर्ववन्दित होते चले आ रहे हैं। ऋग्वेदमें इन्हें मरुद्गणका पिता बतलाया गया है और कहीं-कहीं अग्नि और इन्द्रके लिए भी रुद्र शब्दका प्रयोग किया गया है। ऋग्वेदसे यह ज्ञात होता है कि रुद्र देवता अत्यन्त भीषण, क्रोधी और संहारक हैं किन्तु इतना होने पर भी वे ज्ञानी, दानी, भूमिको उर्वरता प्रदान करनेवाले, सुखदाता, औषधोंके प्रयोग करनेवाले और रोग दूर करनेवाले भी माने गये हैं। ऋग्वेदकी २।३३।४ ऋचामें लिखा है :—

---

१. शब्दकल्पद्रुम भाग १—राजाराधाकान्तदेव विरचितः शकाब्दः १८०८ अघोरः, पुं, (न घोरः सौम्यरूपः "या ते रुद्र! शिवा तनुरघोरा पापकाशिनी" इति वेदः।) महादेवः। इति शिवचतुर्दशी व्रतपूजायां॥ अतिभयानके अभयानके च त्रि अघोरा, स्त्री, (नास्तिघोरा भयानका मूर्तिर्यस्याः। अतिभयानका इति व्युत्पत्त्यर्थः) भाद्रकृष्ण चतुर्दशी। यथा—

"भाद्रे मास्यसिते पक्षे अघोराख्या चतुर्दशी।
तस्यामाराधितः स्थाणुर्नयेच्छिवपुरं ध्रुवं॥" इति स्मृतिः।

हे रुद्र ! हम लोग कोई ऐसा काम न करें कि आपकी अनुचित और अनुचित रूपसे प्रशंसा करके आपके क्रोधका कारण बन जायँ। आप औषधोंके द्वारा हमारे वीरोंको प्राण दान करो। हे रुद्र! हमने सुना है कि आप चिकित्सकोंमें प्रधान चिकित्सक हैं।

इन रुद्रको ऋग्वेद २।३३।८ में श्वेत वर्णका बताया गया है और परवर्ती पौराणिक कालमें भी उनका वर्णन करते हुए कहा गया है—

कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारं।
सदावसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानीसहितं नमामि ॥

ऋग्वेदमें भी रुद्रको शिव कहा गया है। अतः शिव निश्चित रूपसे वैदिक देवता हैं और ऐसे प्रतापी देवता अस्त्र-शस्त्र त्रिशूलधारी प्रतापी देवता हैं कि उनके प्रतापसे पृथ्वी और पर्वत सब काँप उठते हैं।

वाजसनेय संहिता, अथर्ववेद और ब्राह्मण-ग्रन्थोंमें रुद्रका पशुपति नाम भी प्राप्त होता है। इसीके साथ ऋग्वेदमें ही ईशान नाम भी प्राप्त होता है।

पौराणिक साहित्यमें अत्यन्त विस्तारके साथ रुद्रके द्वारा मदनके भस्मकी कथा प्राप्त होती है और उनका वैदिक आग्नेय स्वरूप भी स्पष्ट हो जाता है। सामवेदकी १।१५ संख्यक ऋचामें रुद्रके अग्नि-स्वरूपका जो वर्णन किया गया है उसकी व्याख्यामें :—

"अग्निरपि रुद्र उच्यते तस्येवं भवति।" अर्थात् अग्नि भी रुद्र ही कहलाती है उसकी व्याख्यामें सायणने लिखा है:—

"वेद कहते हैं कि यह अग्नि ही रुद्र है। यद्यपि त्रिपुरका दहन रुद्रने ही किया है किन्तु वह कार्य किया गया है अग्निके द्वारा।" उनके इस आग्नेय स्वरूपका वर्णन करते हुए शिवपुराण २४।२६ में कहा गया है—

"दग्धुं समर्थो मनसा क्षणेन सचराचरम्" (रुद्र तो किसी भी क्षण इच्छा मात्रसे इस समस्त चराचरको जलाकर भस्म कर सकते हैं)। इसीलिए वैदिक संहिताओंमें शिवका रुद्र रूप ही प्रधान रूपमें आया है।

ऋग्वेदमें शिवका दूसरा नाम पशुपति आया है यद्यपि पाशुपतदर्शनमें जीवात्माको पशु और शिवको समस्त बद्ध जीवोंका पति बताया गया है फिर भी ऋग्वेदमें पशुपति शब्दकी व्याख्या इस प्रकार की गई है—'रुद्र देव! हम लोगोंकी सम्पत्ति संवर्धित करते हैं और हमारे घोड़े, मेढ़े, गौ आदि पशुओंका कल्याण करते हैं।" १।४३।६। इसके अतिरिक्त अन्य भी कई स्थानों पर शिवको पशुओंकी रक्षा करनेवाला बतलाया गया है।

गुणावतारोंमें शिवको सृष्टि संहारक बताया गया है। ऋग्वेदमें कई स्थानों पर रुद्रमें इस गुणका आरोप किया गया है। पुराणमें हम लोग शिवका जो संहारक रूप देखते हैं वह उनका रूप वैदिक साहित्यमें भी ज्योंका त्यों विद्यमान है।

अथर्ववेदमें अनेक स्थानोंपर पशुपतिके साथ-साथ महादेव नाम भी आया है। इस प्रकार समस्त वैदिक साहित्यमें जिन अनेक रूपोंमें रुद्रका स्मरण किया गया है उनमें उनके घोर, भयंकर और संहारक रूपके अतिरिक्त आशुतोष शिव शंकर और अघोर रूपका भी वर्णन प्राप्त होता है। महाभारतके अनुशासनपर्वमें महेश्वरका वर्णन करते हुए लिखा है:—"हृदिस्थ: सर्वभूतानाम् विश्वरूपो महेश्वर:। भक्तानामनुकम्पार्थं दर्शनं च यथाश्रुतम् ॥" १४।१३७। "वह विश्वरूपी महेश्वर सब प्राणियोंके हृदयमें विद्यमान है अपने भक्तोंपर दया करके वे भिन्न रूपोंमें उन्हें दर्शन देते रहते हैं। शारदातिलक तन्त्र (१९ वाँ और २० वाँ पटल) में उनकी निम्नांकित प्रधान मूर्तियोंका ध्यान प्रस्तुत किया गया है—

सदाशिव, ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव, सद्योजात, हरपार्वतीरूप, मृत्युञ्जय, महेश, दक्षिणामूर्ति, नीलकंठ, अर्धनारीश्वर, पंचानन, पशुपति, नीलग्रीव और चण्डेश्वर। इस विवरणके अतिरिक्त रुद्रके पाँच मुख माने गए हैं, ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव और सद्योजात। शारदातिलक तन्त्रमें अघोरके दो रूपोंका वर्णन है और यह स्वयं अपनेमें विलक्षण घटना है। एक अघोरके ध्यानका वर्णन करते हुए कहा गया है:—

"अक्षस्रजं वेदपाणौ सृणि डमरुकं ततः खट्वागं निशितं शूलं कपालं विभ्रतं करैः। अञ्जनाभं चतुर्वक्त्रं भीमदंष्ट्रं भयावहं अघोरं तीक्ष्णं याम्ये पूजयेन्मन्त्र वित्तमः॥" दूसरे अघोर रूपका ध्यान इस प्रकार बताया गया है:—

"सजलघन समाभं भीम दंष्ट्रं त्रिनेत्रं भुजगधरनघोरं रक्तवस्त्रांग रागं।
परशु डमरू खडगान् खेटकं वाण चापौ त्रिशिखनरकपाले विभ्रतं भावयामि॥"

इस प्रकार शिव या रुद्रके जिन अनेक रूपोंके वैदिकसाहित्य, तन्त्र साहित्य और पौराणिक साहित्यमें विवरण प्राप्त होता है उससे यह अत्यन्त स्पष्ट है कि समस्त पश्चिमसे पूर्वतक विस्तृत एशियाका दक्षिण भाग शिव या रुद्रके अनेक रूपोंका ध्यान और पूजन करता था और उन रूपोंके अनुसार ही अनेक दार्शनिक सम्प्रदायों और पन्थोंका आविर्भाव हो चला। इन्हींमें एक अघोर पंथ भी था।

सिद्धान्त

वैदिक साहित्यसे लेकर पौराणिक साहित्यतक शिव और रुद्रको व्यापक मान्यता दी गयी है और इन्हें इस सम्पूर्ण विस्तृत साहित्यमें कल्याणकारी और अनेक भयंकर रूपोंमें स्मरण किया गया है जिनमेंसे एक अघोर भी है। वेदमें जहाँ अघोरकी चर्चा की गयी है वहाँ घोर और घोरतरका भी स्मरण किया गया है:—

"अघोरेभ्योथघोरेभ्यो घोरघोर तरेभ्य:" किन्तु यह अघोर रूप पूर्ण रूपसे अद्वैत-वाचक है और यह निर्गुण ब्रह्मका बोधक है जिसे प्रसिद्ध अघोर सम्प्रदायके सन्त किनारामने निरालम्ब बताते हुए कहा है कि सद्गुरुकी कृपासे जीवात्मा और परमात्मा दोनों द्वन्द्वरहित होकर अभिन्न हो जाते हैं। उपनिषदोंमें भी अद्वैत

ब्रह्मकी व्याख्या इसी प्रकारकी गयी है और बताया गया है कि आत्मा और परमात्मा तो तत्वतः एक हैं ही किन्तु उनके साथ-साथ यह त्रिगुणात्मिका प्रकृति अर्थात् समस्त जड़-चेतनमय जगत् भी ब्रह्म ही है—"श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रन्थकोटिभिः। ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः॥" किनारामजीने अपने विवेकसारमें अत्यन्त विस्तारके साथ जीवात्मा, परमात्मा और जगत इन तीनोंके अभेदकी व्याख्या की है।

अन्य निर्गुणवादी सन्तोंने भी अपनी-अपनी शैलीमें इसी अद्वैत या अभेदका निरूपण किया है। श्रीयोगेश्वराचार्य स्वरूप प्रकाशने, एक अन्य सन्तने अपने भ्रम-नाशक प्रश्नोत्तरीमें, गुलाबचन्दने अपने आनन्दमें और पल्टूदास, सन्त कर्त्ताराम और धवलरामने भी इसी प्रकार अद्वैत ब्रह्मकी विस्तृत व्याख्या की है।

प्रायः यह जिज्ञासा अद्वैतवादियोंसे की जाती है कि जब केवल एक ब्रह्मकी ही सत्ता है तब हमें द्वैत या अनेकत्वका भान क्यों होता है? इसका उत्तर प्रायः सभी सन्तोंने यही कहकर दिया है कि माया या उपाधिके कारण ही यह अनेकताकी भावना होती है, जैसे—एक स्वर्णके ही अनेक आभूषण बन जानेपर उन्हें कुण्डल, हार, कंकण आदि कहने लगते हैं। इसी प्रकार आत्मा भी माया और उपाधिके फेरमें पड़कर अपनेको अपनेसे भिन्न और बहुरूप देखने लगता है।

कबीरसे किनारामतक सबने सिद्धान्ततः निर्गुण ब्रह्मकी ही सत्ता स्वीकार की है। उन्होंने अपनी रचनाओंमें जहाँ रामकी भक्ति करने और रामनाम जपनेका उपदेश किया है वह राम दशरथका पुत्र सगुण राम न होकर निर्गुण राम है और ब्रह्मके ही पर्याय हैं। गोस्वामी तुलसीदासके समान परमराम भक्तने भी "अगुनहिं सगुनहिं नहिं कुछ भेदा" कहकर सगुण और निर्गुणको तत्वतः एक ही माना है। कबीरने यद्यपि अपने कुछपदोंमें प्रह्लाद और द्रौपदीके उद्धार करनेवालेके रूपमें रामका स्मरण किया है तथापि उनका राम तुलसीके रामसे पूर्णतः भिन्न है। किनाराम, भिनकराम, भीखनराम आदि औघड़ और सरभंग सन्तोंने कबीरके ही समान रामको निर्गुण ब्रह्मके रूपमें ही स्वीकार किया है अर्थात् वह ब्रह्म सत्व, रजस, तमस तीनों गुणोंसे रहित हो।

किनारामने निरंजन शब्दका भी प्रयोग किया है जो निर्गुण ब्रह्मका विशेषण मात्र है किन्तु अन्य कबीर आदि सन्तोंने निरंजनको एक प्रकारका वैसा ही अवर ब्रह्म माना है जैसा शांकर वेदान्तमें परमार्थ दर्शनवाला ब्रह्म है, जो व्यवहार दर्शनमें पहुँचकर ईश्वर बन जाता है। किनारामजीने लिखा है कि निरंजनका निवास निराकारमें ही है किन्तु चम्पारनकी परम्पराके सन्तोंमें निरंजनको त्रिगुणात्मक जगत् और मायाका स्वामी मानकर काल निरंजन कहा है जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश, राजा और रंक सबको अपने जालमें बाँधे रहता है। सन्त नारायनदासने अपने पदोंमें इस काल निरंजनका अत्यन्त विस्तृत वर्णन किया है। उनका कथन है कि तीनों लोक, सातों द्वीप, नवो खण्ड, स्वर्ग और पाताल सर्वत्र काल निरंजनकी दुहाई फिरी हुई है। ब्रह्मा, विष्णु और शिव सब उनकी सेवा करते हैं। पशु पक्षी, जल, थल, वन,

पर्वत सभी उसके प्रपंच हैं। मर्त्य लोकके सब जीव चौरासी लाख योनियोंमें भटकते फिरते हैं और चित्रगुप्त उनका लेखा करते हैं। तैत्तिरीय उपनिषद्में निर्गुण ब्रह्मको अनिर्वचनीय माना गया है और "नेति-नेति" कहकर इस अनिर्वचनीयताका निरूपण किया गया है। इसी प्रकार कठोपनिषद्ने भी ब्रह्मका ऐसा ही निरूपण किया है। आनन्द, किनाराम आदि सभी महात्माओंने निर्गुण ब्रह्मके इसी निर्विशेष और अलक्ष भावको व्यक्त करते हुए कहा है—

"सन्ताँ सन्ताँ लक्खियाँ, लक्खनवाला लक्ख।
रामकिना कैसे लखै, जाको नाम अलक्ख॥"

यही निर्गुण ब्रह्म भक्तिके क्षेत्रमें उतरकर भक्त, भगवान या उपासक, उपास्यके सम्बन्धमें आबद्ध हो जाता है।

यद्यपि अद्वैतवाद और एकेश्वरवाद पूर्णतः भिन्न हैं तथापि "एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति" से यह सिद्ध हो जाता है कि उपनिषदोंने भी एकदेववाद या एकेश्वरवादका प्रतिपादन किया है। प्रकृति और जीवसे भिन्न एक ईश्वरकी सत्ता स्वीकार करनेका अर्थ यह है कि हम तत्त्वतः स्वीकार करते हैं कि ईश्वर एक है जीव अनेक हैं। किनारामजीने लिखा है कि प्रभु तो जड़ और चेतन सबमें आकाशके समान रम रहा है। पल्टूदास और आनन्दने भी ईश्वरके इसी विश्व-व्यापक रूपका चित्रण किया है और कहा है कि राममें जगत् और जगत्में राम हैं और इसी आधारपर इन सन्तोंने ईश्वरकी समदर्शिताका समर्थन किया है।

सन्तोंने निर्गुण ईश्वरके सगुण रूप धारण करनेके कारणों और प्रयोजनोंका जो चित्रण किया है वह यद्यपि अवतारवादका स्पष्टतः समर्थन नहीं है तथापि कबीर एवं किनाराम आदिके पदोंमें अवतार भावनाकी पुष्टि अवश्य मिलती है। इस प्रसंगमें दो बातें स्पष्टतः समझ रखनी चाहिए। ब्रह्मने अपनी इच्छासे त्रिगुणात्मक रूप धारण किया यह एक अलग पक्ष है और इसे सन्तोंका पक्ष समझना चाहिए दूसरी ओर भक्तोंके दुःख दूर करनेके लिए, अधर्मका नाश करनेके लिए सगुण अवतार धारण करना भक्ति-सिद्धान्तका पक्ष है। यद्यपि निर्गुणवादी सन्तोंने अद्वैत-वाद और एकेश्वरवादके अपने सिद्धान्तके कारण अवतारवादका खण्डन किया है तथापि भक्तोंके कल्याण और उद्धारके सम्बन्धमें रामावतार तथा कृष्णावतारके जितने रामायण, महाभारत सम्मत कथानक प्रसिद्ध हैं उनमें उनकी आस्था दिखाई पड़ती है। किनारामजीने कहा है कि अज, निर्मल, नित्य, मन बुद्धि गिरा गोतीत अशंश्रित ब्रह्मने अपनी इच्छासे त्रिगुणात्मक रूप ग्रहण किया और एक होते हुए भी अनेक हो गया। यह अवतारवादका नहीं अद्वैतवादका ही समर्थन है किन्तु उनके शिष्य आनन्दके अनुयायी भगवतीप्रसादने लिखा है कि भगवानकी यह सहज रीति है कि वे संकट पड़नेपर भक्तोंका उद्धार करते हैं, जैसे—गज, प्रह्लाद, द्रौपदीका किया। यह शुद्ध रूपसे पौराणिक अवतारवादका स्वीकरण है। आनन्दके भी अनेक पदोंमें इसी प्रकार अवतारवादका स्वीकरण किया गया है यहाँतक कि स्वयं किनारामके

रामरसालमें भी रामचरितकी घटनाओंका इस प्रकार वर्णन किया गया है कि रामावतारमें उनकी आस्था व्यक्त होती है। हाँ यह अवश्य है कि वे बीच-बीचमें "राम ब्रह्म रूप भूप और निर्गुणादि सगुणं" कह-कहकर रामके निर्गुणत्वका स्मरण दिलाते चलते हैं। इस प्रकार सन्तोंके अनेक पदोंमें निर्गुण और सगुण निराकार और साकारके बीच समन्वय और सामञ्जस्यकी भावनाका पोषण किया गया। योगेश्वराचार्यजीने कहा कि निर्गुणवादी सन्तोंकी निर्गुण और सगुण दोनोंमें आस्था होते हुए उनकी भावनाकी चरमपरिणति निर्गुणमें ही है।

सरभंग या अघोरमतके सन्तोंकी ईश्वर सम्बन्धी बानियोंसे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि विभिन्न मतों और सम्प्रदायोंके प्रति वे बहुत उदार हैं तथा सम्प्रदायवाद, जातिवाद अथवा वर्गवादके प्रतिकूल हैं इसीलिए कबीर आदि सन्तोंने बार-बार राम-रहीम और कृष्ण-करीमकी एकतापर बल दिया है और हिन्दू और मुसलमान दोनोंको भाई-भाई जैसा व्यवहार करनेका आदेश दिया है। मानवता और भारतीय संस्कृतिकी रक्षाकी दृष्टिसे तुलसी और सूरका जो लक्ष्य था वही लक्ष्य कबीर, रैदास, दादू आदि निर्गुणवादी सन्तोंका था। ये दोनों धाराएँ मानव-मानवमें प्रेमभावके समर्थक और धर्म या मतके नामपर द्वेषके विरोधी थे। समष्टि रूपसे सूर, तुलसी, रामानुज, मध्व निम्बार्क, चैतन्य, कबीर, दादू, रैदास आदि सब अपने-अपने ढंगसे भारतीय संस्कृतिकी रक्षाके लिए और पारस्परिक विद्वेष दूर करनेके लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे। किनारामकी शिष्य परम्परामें बहुतसे सन्तोंने मत और सम्प्रदायके नामपर बढ़ते हुए विरोधकी निन्दा की और पारस्परिक प्रेमभावका उपदेश किया। हनीफने तो राम-कृष्ण खुदा अहद-अहमद मुस्तफा आदि संज्ञाओंको पर्यायवाची बताया है और कहा है कि मन्दिर, मसजिद और गिरिजामें एक ही भगवान्‌की चर्चा है। इस प्रकार निर्गुण ब्रह्मके समर्थक होते हुए भी अघोरपंथी और निर्गुणवादी सन्तोंने ब्रह्म एक ईश्वर और ईश्वरके अनेक रूप सबके समन्वयकी उदारभावनाका पोषण किया।

माया (अविद्या)

भारतीय दार्शनिक संसारमें ब्रह्मसूत्र, उपनिषद् और श्रीमद्भगवद्गीताको प्रस्थानत्रयी बताया गया है। इस प्रस्थानत्रयीने 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' की ही अनेक प्रकारसे मीमांसा और प्रतिष्ठा की है। 'तत्त्वमसि' 'अहं ब्रह्मास्मि' 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' आदि सिद्धान्त सूत्रोंके आधारपर एक निर्गुण निरञ्जन ब्रह्म तत्त्वका निरूपण किया गया है। इसीको कबीर आदि अनेक सन्तोंने रामपुरुष और सत्पुरुषके रूपमें स्मरण किया है। ये सभी शब्द उपनिषदोंमें भी 'वेदाहमेतं पुरुषं महान्तं' तथा "असंगोह्यदं पुरुषः" और "महान प्रभुर्वै पुरुषः" के रूपोंमें अभिव्यक्त किए गए हैं। इस पुरुषसे भिन्न जीवात्माको हंस और परमात्माको परमहंस कहा गया है। जब कोई पुरुष पूर्णतः जीवन्मुक्तकी दशा प्राप्त कर लेता है तब वह भी परमात्म-स्वरूप होनेके कारण परमहंस या तुरीया कहलाता है।

सन्तोंने अपने अनेक पदोंमें माया, अविद्या और उपाधि शब्दोंका प्रयोग किया है। आद्य शंकराचार्यने उपनिषदोंसे इन शब्दोंको ग्रहण करके उनकी व्यापक और विशद परिभाषा की है। इसीलिए वेदान्त सूत्रोंका भाष्य करते हुए शंकराचार्यजीने उपनिषद्‌के वाक्योंका उद्धरण दे देकर इति श्रुतिः कहकर उनकी प्रामाणिकता सिद्ध की है। प्रायः सभी उपनिषदोंमें विद्या और अविद्याका पुष्कल प्रयोग किया है—

"अन्धंतमः प्रविशन्ति येऽविद्यां उपासते।
ततो भूयइव ते तमो य उ विद्यायां रताः॥"

किन्तु विद्या और अविद्याका विचार करनेसे पूर्व अध्यासकी व्याख्या कर लेना भी आवश्यक है। शंकराचार्यजीने ब्रह्मसूत्रके भाष्यमें अध्यासका विवेचन करते हुए कहा है—

"स्मृतिरूपः परत्र पूर्वदृष्टावभासः अन्यत्र अन्य धर्माध्यासः। विवेकाग्रः निबन्धनो भ्रमः विपरीत धर्मत्व कल्पना तथा अन्यस्य अन्य धर्मावभासतः॥"

तात्पर्य यह है कि जिसका जो तात्त्विक धर्म है उसका उसमें आरोप न करके किसी अन्यके धर्मका उसमें आरोप कर देना या भ्रम होना ही अध्यास है। जैसे रस्सीका जो तात्त्विक गुण या धर्म है वह सर्पके तात्त्विक गुण या धर्मसे भिन्न है इसलिए यदि झुटपुटेके समय मार्गमें पड़ी हुई रस्सीको देखकर सर्पका भ्रम हो जाता है तो यही अध्यास है। इसी अध्यासको अविद्या कहते हैं। इसीका दूसरा नाम माया है। विचित्र बात यह है कि मायापति परमात्माने स्वयं इस मायाका प्रसार किया है किन्तु वह इससे अछूता रहता है। इस दृष्टिसे विचार किया जाय तो ईश्वर, जीव और जगत् ये तीनों उसी प्रकार अध्यास हैं, जैसे—रस्सीमें सर्पका भ्रम। किनारामने इसी शांकर मायावादका समर्थन करते हुए कहा है कि पाँच प्राण और पचीसों प्रकृतियाँ जीव तथा जगदीश ये सब मायाके संसर्गसे ही प्रतीत होते हैं।

उन्होंने उपाधि शब्दोंका भी प्रयोग करते हुए बताया है कि शरीर उसका सौन्दर्य्य और उसकी जवानी ये सभी उपाधिसे उत्पन्न होती हैं। इनसे मुक्ति मिलने हीको समाधि कहते हैं। उन्होंने माया और अविद्याको पर्यायवाची माना है। जीव और ब्रह्मके भेदका कारण भी उन्होंने उपाधि या मायाको माना है। उसे इस प्रकार समझा जा सकता है कि मनुष्य स्वयं अपने कुटुम्बकी सृष्टि करके जो उसमें बँध जाता है और रमकर अपनेको भूल जाता है वह भी उपाधि ही है। इसीलिए मनको मायाके सम्पर्क और संसर्गसे प्रभावित होने की बात सन्त रामटहलराम, टेकमनराम आदि महात्माओंने अनेक पदोंमें वर्णन किया है। उन्होंने मायाको या मन या माया दोनोंको इस सम्पूर्ण जगतकी सृष्टि और विस्तारका उत्तरदायी माना है और कहा है कि संसारमें जितने भी भ्रम हैं, जितने भी अनर्थ होते हैं वे सब माया या अविद्याके कारण ही होते हैं।

आनन्दने अपनेको परमात्माकी प्रियतमा मानकर मायाको अपनी सौतिन कहकर जो भरके कोसा है और कहा है कि जबसे मायाने उनके प्रियतमको अपने

मोहपाशमें बाँधा तभीसे वह ऐसी अभिमानिनी हो गयी कि उसने ब्रह्मा, विष्णु, शिव और ऋषि मुनियोंको भी नागिन बनकर डस लिया। वे कहते हैं कि मैं भक्तिन हूँ और मेरा पिया भक्तवत्सल है पर मायाके व्यवधानके कारण मैं अपने पियासे मिल नहीं पाती। इस प्रकार सभी भक्त और सन्त इसी आत्म-परितापमें कहा करते हैं कि मैंने माया मोहमें फँसकर न तो भगवानका भजन किया न दान-पुण्य किया और न दुर्जनोंका सङ्ग छोड़कर सन्तोंकी सङ्गति की। अब अवस्था ढलनेपर सिर धुनकर पछता रहा हूँ। किनारामकी निम्नाङ्कित पंक्तियाँ और आनन्दके दो शेर इस भावके स्पष्टीकरण के लिए पर्याप्त है :—

धन धाम सगाई लागि गँवाई जन्म बिताई नर धंधे।
ममिता रङ्ग राते मद के माते कौन दाँव तेरा बंधे॥
यह विधि दिन खोया बहु विधि गोया आप विगोया तू अंधे।
किनाराम सम्हारै समय बिचारै सतगुरु लायो मन रंधे॥

आनन्दकी दो गजलें :—

दुनियामें लेके आये थे हम लेके क्या चले।
मुट्ठीमें बाँध लाये थे जो कुछ गवाँ चले॥ १॥
महलो मकाँ बनाया, यहाँ नामके लिए।
घर आकबतकी खाकमें, लेकिन मिला चले॥ २॥

देह, मन और इन्द्रियाँ

इस मायासे रचे हुए संसारकी असारताका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि यहाँ प्रत्येक वस्तु, प्रत्येक जीव-जन्तु, अस्थिर, नश्वर और क्षण-भङ्गुर है। मनुष्यकी देहकी भी यही दशा है। इस शरीरमें पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ (आँख, कान, रसना, त्वचा और नासिका) पाँच कर्मेन्द्रियाँ (हाथ, पाँव, गुदा, उपस्थ, मुख) और एक अन्तःकरण है। इस अन्तःकरणके भी चार पक्ष हैं, मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार। मनमें ही हृदयका वास है जो सब इन्द्रियोंको प्रेरित और प्रकाशित करता है। किनारामने विषयका विश्लेषण करते हुए कहा है कि मनका आधार प्राण है, प्राणका आधार श्वांस है, श्वाँसका आधार शब्द ब्रह्म और ब्रह्मका आधार सहज स्वरूप है। ब्रह्म तो नित्य और अनश्वर है किन्तु शरीर अनित्य और नश्वर है। शरीरकी स्थिरता उतनी ही क्षणिक है जितनी ओसकी बूँद। जबतक शरीर है तबतक सब सम्बन्धी प्रेम प्रदर्शित करते हैं किन्तु शरीर समाप्त होनेपर कोई किसीका नहीं रह जाता। इसलिए संसारकी असारता और शरीरकी क्षणभङ्गुरताका ध्यान करके न तो हमें तन-यौवन और सौन्दर्यका अभिमान करना चाहिए न तो मेरे-तेरेके बखेड़ेमें पड़ना चाहिए। सदा यह स्मरण रखना चाहिए कि जीवन क्षण-क्षणपर घटता चला जा रहा है सुधि आते ही चेत करके सत्सङ्ग और भगवद्भजनमें लग जाना चाहिए।

सभी सन्तोंने अनेक रूपोंमें अनेक उदाहरण और रुपक देकर शरीरकी अस्थिरताके चित्र प्रस्तुत किए हैं। आनन्दने एक शेरमें लिखा है :—

दुनियाको एक सराय समझते रहे सदा,
एक रात रहकर सुबहको बिस्तर उठा चले।

एक दूसरे शैरमें आनन्दने समझाया है कि हमारे शरीरमें निरन्तर तृष्णाकी जो आग धधक रही है उसे बुझा रखनेका और उससे बचनेका एकमात्र उपाय यह है कि डटकर भगवानकी भक्ति की जाय और इस नश्वर शरीरके प्रति पूर्ण अनास्था बना रखी जाय। सन्त केशोदास और आनन्दने अनेक उपमाओं और दृष्टान्तोंसे शरीरकी नश्वरता और संसारकी असारताका विशद निरूपण किया है।

रामस्वरूपदासने इस सारी सृष्टिको ही मन और मायाका प्रपञ्च माना है और कहा है—कठिन सोधन मनकी भाई। मनकी गति कहा नहिं जाई॥

श्रीमद्भगवद्गीतामें मनके सम्बन्धमें अर्जुनने कहा है :—

"तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिवसुदुष्करं।"

और श्रीकृष्णने उसका समर्थन करते हुए कहा है कि निश्चित रूपसे यह मन बड़ी कठिनाईसे बसमें आनेवाला है और बहुत चञ्चल है किन्तु अभ्यास और वैराग्यसे उसे वशमें किया जा सकता है। किनारामजीने भी कहा है कि मेरे गुरुने बताया है कि चञ्चल मनका प्रभुत्व सब लोगोंपर छाया हुआ है। सारा संसार मनके हाथकी कठपुतली बना हुआ है, मनुष्यके बन्धन और मोक्षका कारण भी मन ही है :—

"मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः।"

कर्त्तारामने कहा है कि जो व्यक्ति मन और इन्द्रियोंके विषयोंमें लिप्त हैं वही बन्धनमें पड़ा हुआ है और जो इनसे दूर है वही बन्धन-मुक्त है। इसी प्रसङ्गमें उन्होंने कहा कि सारी बुराइयोंका घर यह मन ही है। कामरूपी कसाई, क्रोधरूपी चाण्डाल, मोहरूपी चमार, तृष्णारूपी तेली, कुमतिरूपी कलवार और दुविधारूपी धोबी ये सब मनके साथी हैं। यहाँतक कि चाह (तृष्णा) रूपी चूहड़ी (भंगिन) भी वह इसीके साथ चलती है और जीवका ब्रह्मसे द्वैतभाव उत्पन्न करके उसे सांसारिक विषयोंमें लिप्त कर देती है। आशा, चिन्ता एवं शङ्का ये सब मनसे उत्पन्न होनेवाली डाईने हैं, जो मनुष्यका विनाश कर डालती हैं इसलिए जबतक मनुष्य इनपर और विषय वासनाओंपर विजय नहीं प्राप्त कर लेता अर्थात् जबतक मनुष्य अपने मनको वशमें नहीं कर लेता तबतक उसका उद्धार सम्भव नहीं।

ऐसी विषम परिस्थितिमें हमारा कर्त्तव्य है कि हम शील, सन्तोष, दया, क्षमा और विवेकी सेना लेकर मनकी सेनाके काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर आदि दुष्ट शत्रुओंपर आक्रमण कर उन्हें जीत लें। आनन्दने कुछ प्रश्न करके और उनका उत्तर देकर इस विषयको अधिक स्पष्ट किया है। दरिद्र कौन है? जिसमें तृष्णा भरी हुई है। धनी कौन है? जो सन्तुष्ट है। अन्धा कौन है? जो कामातुर है। मल किसे कहते हैं? अपराध और बदनामीको। शत्रु कौन है? अपनी इन्द्रियाँ। इसलिए इन्द्रियों और इन्द्रियोंके राजा मनको जैसे भी हो वशमें रखना चाहिए। इसीसे अमरत्वकी प्राप्ति सम्भव है। इसीसे मनुष्य अजर भी हो जाता है। इसी सम्बन्धमें किनारामने कहा है—'मन मारै तनवस करै।'

सृष्टि, पुनर्जन्म, स्वर्ग-नरक

वेदमें बताया गया है—

'हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्यजातः पतिरेक आसीत् ।'

प्रारम्भमें एक विराट हिरण्यगर्भ था या ज्वलन्त अग्नि-पिण्ड था, जिससे यह सारी सृष्टि उत्पन्न हुई। पुरुष सूक्तमें भी सृष्टि की उत्पत्तिका ऐसा ही क्रम दिया हुआ है—'पुरुष एवेदं यद्र भूतं यच्च भाव्यम् उतामृत त्वस्मेशानो यदन्नेनाति रोहति।' इससे आगे चलकर कहा गया है, 'ततो विराट जायत विराजो अधिपुरुषः।' इस प्रकार सर्वरूप (सहस्र शीर्ष) पुरुषसे विराट रूपका उदय हुआ और फिर उसके पश्चात् क्रमशः सृष्टिका क्रम चला। ब्रह्मसूत्रमें केवल एक ब्रह्मकी सत्ता ही स्वीकार की गई है और इस सम्पूर्ण नाम रूपात्मक सृष्टिको अविद्याकी सृष्टि बताया गया है। योरोपीय वैज्ञानिक भी यह मानते हैं कि पहले एक विराट ज्योतिष-पिण्ड था जो शून्यमें निरन्तर वेगसे चक्कर काट रहा था। उसीमें से अगणित सूर्य रूपी तारे उन सूर्योंके चारों तरफ चक्कर काटने वाले ग्रह उन ग्रहोंके चारों तरफ चक्कर काटनेवाले चन्द्र-जैसे उपग्रह और असंख्य धूमकेतु अपनी-अपनी गतिसे भ्रमण कर रहे हैं, नष्ट हो रहे हैं और नये ज्योतिष-पिण्डोंको जन्म दे रहे हैं, किन्तु किसी भी एक तत्त्व से वह चाहे आदि ज्योतिष-पिण्ड ही क्यों न हो, उनसे अनेक ज्योतिष-पिण्डोंका और उन ज्योतिष-पिण्डोंमें अनेक प्रकारके जड़-पदार्थों और चेतन जीवों का किस प्रकार जन्म और विकास हुआ, यह प्रश्न दार्शनिकों और वैज्ञानिकोंको समान रूपसे व्याकुल किये रहा है। हमारे यहाँ कठोपनिषद् में बताया गया है कि इन्द्रियोंसे परे अर्थ, अर्थोंसे परे मन, मनसे परे बुद्धि और बुद्धिसे परे आत्मा अथवा महान्, महान्से परे अव्यक्त, अव्यक्तसे परे पुरुष किन्तु पुरुषसे परे कुछ भी नहीं है। हमारे दर्शनोंमें केवल सांख्य-शास्त्र ही ऐसा है जिसने सर्वप्रथम सम्पूर्ण सृष्टिके २५ तत्त्व गिनाये हैं। पुरुष-प्रकृति-महत् तत्त्व (बुद्धितत्त्व) अहंकार तत्त्व-मन-पंचज्ञानेन्द्रिय-पंचकर्मेन्द्रिय-पंच तन्मात्र; (शब्द, स्पर्श, रूप रस, गन्ध) और पंच महा भूत (पृथ्वी, जल, पवन, अग्नि और आकाश)।

पौराणिक साहित्यमें पहुँचकर सृष्टिकी उत्पत्तिका यह क्रम पूर्णतः बदल गया और प्रत्येक देवताकी उपासना, प्रार्थना और ध्यानमें उन्हें सृष्टि-स्थिति, प्रलयकारी, सर्वशक्तिमान मान लिया गया, चाहे वह देवता हो या देवी। सामान्यतः पुराणोंने यह निरूपण किया है कि ब्रह्माने सृष्टिका निर्माण किया, विष्णु उसकी रक्षा करते हैं और शिव अपने रुद्र रूपसे उसका संहार करते हैं। श्रीमद्भवद्गीताके १४ वें अध्यायमें पुरुष और प्रकृतिके संयोगसे सब भूतों (प्राणियों) की उत्पत्तिका निर्देश करते हुए विस्तारसे बताया गया है कि प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुणों (सत्त्व, रजस, तमस) का जीवातमापर क्या प्रभाव है ? इस प्रसंगमें बताया गया है कि सत्त्व गुणके प्रभावसे अन्तःकरण और इन्द्रियोंमें चेतनता और ज्ञान शक्ति उत्पन्न होती है। रजोगुण के प्रभावसे लोभ, सांसारिकता, कर्मारम्भ, अशान्ति

और लालसा उत्पन्न होती है। तमोगुणके प्रभावसे अन्तःकरण और इन्द्रियोंमें अज्ञान, अन्धकार, आलस, व्यर्थ-कार्य, क्रोध और मोहकी उत्पत्ति होती है। निर्गुणवादी सन्तोंने भी पंच तत्त्वको सृष्टिका आधार मानकर उपर्युक्त सिद्धान्तों और मतोंका अनुगमन करते हुए सृष्टिके विकासकी कुछ ऐसी व्याख्या की है जिसमें उनकी मौलिकता भी बनी रही और साथ-साथ निर्गुणवादको भी बल मिला। किनारामने विवेक सारमें पाँच तत्त्वों और तीन गुणोंका भेद बताते हुए श्रुति, पुराण एवं सब शास्त्रों का समान सार निचोड़ते हुए सृष्टिके विकास का विवरण दिया है। इस प्रसंग में उन्होंने कहा है कि प्रारम्भमें जो सत्पुरुष था उसका न कोई रूप था, न रेखा थी और न नाम था। वह अलेख्य अवस्थामें विद्यमान था। फिर अपनी ही इच्छासे उस सत्पुरुषके एक शब्दका विस्फोट हुआ (नाद ब्रह्म या प्रणव) जिससे ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीन पुरुष और एक नारीको उत्पत्ति हुई। साथ ही नभ, क्षिति, पावक, पवन और जलकी रचनाके साथ जगतका विस्तार आरम्भ हुआ। नारी रूपी आदि शक्तिने इच्छानुसार इच्छा, क्रिया और शक्तिका रूप धारण करके पाँच तत्त्वों और तीन गुणोंके सहारे ब्रह्मा, विष्णु और महेशकी संगति से सृष्टिके निर्माण, पालन और संहारकी व्यवस्था की।

इस प्रसंगमें सन्तोंकी पारिभाषिक-शब्दावली के काया परिचय का विवरण देना भी आवश्यक होगा। जिसका सारांश 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माडे' जो कुछ अपने शरीरमें है उसीका प्रति रूप ब्रह्माण्ड में भी है। सन्तों के स्वरोदय-ग्रन्थों में इस विषय का विस्तार से वर्णन मिलता है। मूल सिद्धान्त यह है कि जब योगीकी वृत्ति अन्तर्मुखी हो जाती है तब उसका सम्बन्ध इस विराट विश्व और उसके सौन्दर्य से विच्छिन्न हो जाता है जिसके कारण वह अपनी ही कायामें दिव्य-दृष्टिसे अनेक प्रकारके मनोरम दृश्य देखता है। नवीन दिव्य सौन्दर्यका संसार खड़ा कर लेता है और साधनासे उसकी चेष्टा सुलभ भी हो जाती है। आत्मा तभी तक पराधीन है जब तक वह बहिर्मुखी इन्द्रियों और उसके उपभोगोंका दास बना रहता है। जब वह इन्द्रियोंकी बहिर्मुखी वृत्तियोंको उलटकर अन्तर्मुखी कर लेता है तब उसका सम्बन्ध अपने 'ताप आत्मा' से जुड़ जाता है और जो परतंत्र था वह स्वतंत्र हो जाता है। पिण्ड या अपनी ही कायामें ब्रह्माण्डकी झाँकी इसी स्वतंत्रताके कारण मिलती है। इसी शक्तिके कारण मनुष्य त्रिकालज्ञ और त्रिकालदर्शी हो जाता है। वर्तमान के साथ-साथ भूत और भविष्य भी उसकी मुट्ठीमें आ जाते हैं। इसीलिए चाहे कोई ध्यान योगी हो या कर्म योगी, किन्तु जब तक वह वाह्य-जगतसे हटकर अपने भीतर यदि अपने आराध्य देव में विश्वरूप का दर्शन नहीं करता तब तक मोह से उसकी निवृत्ति नहीं होती। अर्जुन का मोह भी तब तक बना रहा जब तक भगवान कृष्ण ने अपने विश्वरूपके दर्शनसे उसका मोह मिटा नहीं डाला। इस दर्शनके लिये भगवान कृष्ण ने उन्हें दिव्य-चक्षु भी प्रदान किया था। इसी प्रकार साधक-योगी भी अपनी साधनासे ऐसी दिव्य-दृष्टि प्राप्तकर लेते हैं कि अपने पिण्ड (शरीर) में ब्रह्माण्ड का दर्शन करके सर्वतंत्र स्वतंत्र या मुक्त हो जाते हैं।

किनारामने पिंड और ब्रह्माण्डकी एकताका निम्नांकित रूपमें प्रतिपादन किया है :—

वे कहते हैं गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सुमेरू गिरि—सप्तऋषि सूर्य-चन्द्र—सभी लोक स्वर्ग-नरक, अपवर्ग गंगा, अड़सठ तीर्थ—दश दृकपाल कार्यकाल-समुद्र-चारवेद, पर्वत-उनचास कोटि जग-त्रिवेणी-कैलाश-सुर-मुनि-नभ-नक्षत्र-सप्तपाताल-शेष नाथ-वरुण-कुबेर-इन्द्र-अष्टसिद्धि-नवनिधि-देश-देशान्तर-मंत्र-यन्त्र अनन्त देव, विद्या, अविद्या, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार ज्ञानेन्द्रियाँ, कर्मेन्द्रियाँ, पाँच प्राण और पच्चीस प्रकृतियाँ, माया-सहित जीव और जगदीश अवतार समग्र ब्रह्माण्ड जो पाँच तत्वों और तीन गुणोंसे बना है, सब कुछ आप पिण्डमें देख सकते हैं। इस पिण्ड अथवा शरीरमें दस द्वार है। यह मनके अधिकारमें है। जिसे ज्ञान, विराग और विवेक है वह मनकी प्रबलता को जीत कर अपने आपमें अनाहत नाद अथवा शब्द ब्रह्मकी मधुर ध्वनिको पा सकता है।

एक दूसरे प्रसंगमें किनारामने ही बताया है कि किस प्रकार निरंजनसे ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देवताओंका उद्भव हुआ। इस क्रममें निरंजनसे शिव, शिवसे काल, कालसे शून्यकी दिव्य-ज्याति और इस दिव्य-ज्योतिकी प्राप्तिसे वे अविनाशी शिव प्रकट होते हैं। जो निरंजनसे उत्पन्न शिव जीवको अपने आपमें विलीन कर अभिन्न बना लेते हैं। यद्यपि विभिन्न सन्तोंने अपने-अपने ढंगसे जड़ और चेतन सृष्टिके विकासके चित्र प्रस्तुत किये हैं, किन्तु एक बात सभी ने व्यापक रूपसे कही है कि सृष्टिकी अव्यक्त अवस्थामें केवल एक मात्र सत्पुरुष थे। उनकी इच्छा हुई कि एकसे बहुत हो जायँ। 'एकोऽहं वहु स्यांम प्रजायेय इतिः।' इसी इच्छाके फल स्वरूप ब्रह्मा, विष्णु, महेश और आद्या शक्तिकी सृष्टि हुई। इन्हीं से यह विराट संसार विकसित हुआ। सन्तोंने सृष्टिके मूल तत्वों पृथ्वी-जल-वायु-अग्नि-आकाशके आधार पर प्रत्येक तत्त्वसे पाँच-पाँच विकृतियोंका, जिन्हें सन्त-साहित्यमें प्रकृतियाँ कहते हैं, निरूपण किया है। अग्नि तत्त्वसे आलस्य, तृष्णा, निद्रा, भूख और तेज नाम प्रकृतियोंकी सृष्टि होती है। इस तत्त्वका निवास-स्थान चित्त, वर्ण है काला, इन्द्रिय है नेत्र, इन्द्रियोंके विषय हैं, लोभ, मोह और गुण है रजस। पवन की ५ प्रकृतियाँ है-चलन, गान, बल, संकोच और विवाद। इसका निवास-स्थान है नाभि, वर्ण है हरा, इन्द्रिय है नासिका, विषय है गंध, सुगन्ध और गुण है तमस। पृथ्वीकी पाँच प्रकृतियाँ हैं। अस्थि-मज्जा-रोम-त्वचा-नाड़ी। इसका स्थान है हृदय, वर्ण है पीला, इन्द्रिय है मुख, विषय है भोजन और आचमन, गुण है सत्व। जल की प्रकृतियाँ हैं रक्त, वीर्य, पित्त, लार, पसीना। इसका स्थान है ललाट, वर्ण है लाल, इन्द्रियाँ हैं जिह्वा और जननेन्द्रिय विषय है मैथुन और स्वाद। आकाश की प्रकृतियाँ हैं लोभ, मोह, शंका, भय एवं लज्जा। इसका स्थान है मस्तक, वर्ण है श्वेत, इन्द्रिय है कान, विषय है शब्द-कुशब्द।

इस विवेचनके पश्चात् यह समझना आवश्यक है कि अपने पिण्डमें ब्रह्माण्ड का दर्शन करनेकी प्रवृत्ति जिन लोगोंमें नहीं होती। वे [illegible]

प्राणी अनेक प्रकारकी वासनाओंमें पड़कर पापाचरणमें लिप्त हुये रहते हैं, जिसके परिणाम-स्वरूप वे काल या यमके आखेट बन जाते हैं और निरन्तर चौरासी लाख योनियोंमें भटकते हुये अनेक प्रकारकी यंत्रणायें निरन्तर सहते रहते हैं। उसका विवेचन करते हुये महात्माओंने कहा है कि यमराजका प्यादा उनकी मुश्कें बाँध यमलोक ले जाकर मुँगरीसे पीटता है और उन्हें उनके पाप-पुण्य का स्मरण कराता है। इतना ही नहीं वह उन्हें विष्ठा, मूत्र, रुधिरके कुण्डोंमें डालकर वहाँ भी धुआँ-धार पीटता है। इसलिये मनुष्य को कभी भी निश्चिन्त नहीं बैठना चाहिये, क्योंकि कौन जाने यमराज कब बुलावा देकर बाँध लें और पीटने लगें।

इन वर्णनोंसे यह स्पष्ट हो जाता है कि इन सन्तोंके अनुसार प्रत्येक जीवको पूर्व जन्मके कर्मोंके अनुसार अनेक प्रकारके जन्म लेने पड़ते हैं और पाप कर्ममें अधिक लिप्त रहनेपर उनका बचा-खुचा पुण्य भी क्षीण हो जाता है। इस जन्ममें मिली हुई विद्या, सम्पत्ति, शक्ति, प्रतिष्ठा आदिको पूर्व जन्मका ही फल समझना चाहिये। इसलिये यदि इस जन्ममें हमने सत्कर्म नहीं कमाये और साधन, धाम, विबुध, दुर्लभ तनु मानव देह पाकर सद्‌गुरु की कृपाके सहारे अपनी आत्माको नहीं पहिचाना तो निश्चय ही हमें जन्मके चक्रमें पड़कर भटकते रहना और यन्त्रणायें सहते रहना पड़ेगा।

ज्ञान-भक्ति और प्रेम

संस्कृत की एक पुरानी सूक्ति है : 'शास्त्राण्यधीत्यापि भवन्ति मूर्खा, यस्तु क्रियावान् पुरुषः विद्वान्, सुचिन्तितं मातुराणां न नाममात्रेण करोत्यरोगम्।'

शास्त्र पढ़ने भर से कोई विद्वान् नहीं हो जाता क्योंकि शास्त्र पढ़कर भी लोग मूर्ख रह जाते हैं। वास्तव में पढ़ा-लिखा या शास्त्र-ज्ञाता वही है जो पढ़ी हुई विद्या को कार्य रूप में परिणत कर सके। वैद्य किसी रोग के लिये चाहे कितनी भी अच्छी औषधि का ज्ञान रखता हो, किन्तु नाम लेने भर से वह रोग दूर नहीं कर सकता।

यही बात दार्शनिक ज्ञान के सम्बन्ध में भी है। केवल 'अहं ब्रह्मास्मि, शिवोऽहम् या सर्वं खल्विदं ब्रह्म' कहने या तर्कसे सिद्ध करने वाला कोई भी व्यक्ति तबतक वेदान्ती नहीं कहा जा सकता, जब तक स्वयं उसने अपनी साधनासे ब्रह्म-तत्त्व या शिव-तत्त्वके साथ एकात्मकता स्थापित न कर ली हो। कठोपनिषद् की कथाके अनुसार जब नचिकेताने मृत्यु देवके यहाँ जाकर मृत्युके रहस्य और साम्पराय इतरलोककी विशेषताओंके सम्बन्धमें अध्यात्म-तत्त्व विषयक प्रश्न करना प्रारम्भ किया तो प्रारम्भमें ही मृत्युदेवने उसे समझा दिया।

'नैषा तर्केण मतिरापनेया' या रजिस मति या अनुभूतिकी तुम जिज्ञासा कर रहे हो उसे तर्क समझना या समझाना सम्भव नहीं। इसीलिये सन्तोंने भी कभी कोरे शास्त्रीय ज्ञानके प्रति कोई आस्था नहीं प्रकट की। इतना ही नहीं उन्होंने भक्ति विरहित शास्त्रीय ज्ञानकी निन्दा ही की है। नचिकेता भी जब मृत्युदेवके यहाँ

पहुँचा तो, तार्किक के रूपमें नहीं पहुँचा। वह शुद्ध श्रद्धावान होकर पहुँचा। इसीलिये कबीरदासने कहा है :—

पोथी पढ़ि-पढ़ि जुग मुआ, पण्डित भया न कोय।
ढाई अच्छर प्रेम का पढ़ै सो पण्डित होय॥

तथा

वेद पुरान पढ़त अस पाण्डे खर चन्दन जस भारा।
राम नाम सारा समझता हो अन्तिम परै मुख छारा॥

यहाँ प्रेमका अर्थ भक्ति, निष्ठा, सच्ची लगन या तन्मयता ही है। अर्थात् जिस व्यक्तिके हृदयमें प्रेम, भक्ति, सात्विक-निष्ठा नहीं है उसका समस्त संचित शास्त्र-ज्ञान उसी प्रकार निरर्थक है जैसे गधे की पीठ पर लदा हुआ चन्दन का बोझ।

इस दृष्टिसे विचार करनेपर प्रतीत होगा कि समस्त शास्त्रीय ज्ञान पूर्णतः भक्ति-भावित और प्रेम-भावित ही होना चाहिये। तभी वह ज्ञान सार्थक होता है, अन्यथा उसे निरर्थक ही समझना चाहिये। गोविन्दराम ने लिखा है, कि यदि कोई व्यक्ति निरन्तर वेद-शास्त्र और भागवत पढ़ता हो, किन्तु उसमें अहिंसा आदि सदाचार और भक्तिकी भावना न हो तो उसे यमराजके बन्धनमें बँधना होगा ही। इसीको स्पष्ट करते हुये नारायणदासने लिखा है, कि काजी और मौलवी भी पढ़ते-पढ़ाते हैं और उनकी मददसे लड़के भी पढ़ते हैं, पर योगके साधकको इस पढ़ने-लिखने (शास्त्र-ज्ञान) से प्रयोजन ही क्या है ? वह तो अपने आराध्य देवके प्रेममें मतवाला बना रहता है। किनारामने भी कहा है, कि चाहे मनुष्य कितना भी ज्ञानी, पण्डित और रूप-गुण सम्पन्न क्यों न हो, उसके चतुर और गुणी सुपुत्र क्यों न हो, उसके घर-बाहर बहुत बुद्धिमान लोगोंका जमघट क्यों न हो, उससे स्नेह करने वाली परम मंजुभाषिणी प्रिय पत्नी क्यों न हो, पर जबतक वह आत्मारामका जप नहीं करता है यह सब केवल स्वांग भर है। ज्ञानी भक्तकी तुलना उस कमलसे की जा सकती है, जो अत्यन्त निर्मल जलमें खिला हुआ हो और मन मोहक रंगसे रँगा हुआ भी हो।

सन्तों ने जिस ज्ञान की बात कही है वह ज्ञान तात्त्विक अनुभव है जो विश्वास की परिमिति में पहुँच कर मनुष्य की भावना का अंग बन जाता है। वह केवल शास्त्र-ज्ञान मात्र नहीं रहता, वह पूर्ण तत्त्व ज्ञान हो जाता है। इस दृष्टिसे बिना ग्रन्थ पढ़े भी कोई सन्त ज्ञानी हो सकता है। जिसके मनमें प्राप्तिसे सुख, अप्राप्तिसे दुःख, मान-अपमान, सम्पति-विपत्ति, सबकी दुविधा दूर हो गई हो, उसे ही ज्ञानी समझना चाहिये। चाहे उसने किसी ग्रन्थ का अध्ययन किया हो या न किया हो। इसीलिये हमारे यहाँ ज्ञानियोंके दो भेद बताये गये हैं। बहुश्रुत और बहुपठ। जिसने बहुत सत्संग करके परम ज्ञानियोंसे तत्त्व-ज्ञान प्राप्त कर लिया हो या जिसे गुरुप्रसाद से ज्ञान मिल गया हो वह बहुश्रुत होता है और जिसने स्वयं परिश्रम करके पुस्तकोंसे ज्ञान प्राप्त किया हो या गुरुमुख से ज्ञान सुना हो उसे बहुपठ कह सकते हैं। अतः

ज्ञानी होनेके लिये यह आवश्यक नहीं है कि शास्त्र का क्रमिक ज्ञान प्राप्त किया ही जाय। इसीलिये एक सूफी सन्त ने कहा है :—

आदमियत और सौ है, इल्म है कुछ और चीज ।
लाख तोते को पढ़ाया, फिर भी हैवां ही रहा ।।

मनुष्यता और वस्तु है और विद्या और वस्तु है। तोतेको चाहे जितना भी पढ़ाया जाय, वह पक्षी मात्र रहेगा, विद्वान् नहीं कहलायेगा। इसीलिये सन्तोंने ज्ञान को अनुभव या अनुभूति कहा है। कहीं-कहीं इसे विवेक भी कहा है और इस प्रकारके अनुभूति जन्य ज्ञानको पुस्तकीय या शास्त्रीय ज्ञान से कहीं अधिक श्रेष्ठ बताया है। किनारामने इस प्रकार के ज्ञानको अनुभव जागना ही कहा है।

दिल की दुरमति गिर गई, भई राम सो नेह।
राम किना अनुभौ जग्यौ, मिट गयो सबै सन्देह ।।

चम्पारनके एक सरभंग सन्तने इस भक्ति सिद्ध ज्ञानके लिये दस सोपान बताये हैं :—

श्रद्धा, सत्संग, भजन, विषयों से विराग, निष्ठा या रुचि, ध्यान, नाम में रसिकता, भावना, प्रेमको पूर्णता और भगवान्‌का साक्षात्कार। समग्र अघोर-मतके सन्तोंने प्रेमकी महिमा गाते हुए प्रेमकी गैलको सबसे न्यारा बताया है, जिसमें वही जा पाता है जो नाम का धनी हो, जिसने काम-क्रोध आदि विकारोंको मनसे निकाल फेंका हो, जिसे न जीवनका मोह हो, न मरणका भय हो, जिसने शास्त्रीय ज्ञानकी निरर्थकता समझ कर अपने आचार, कर्त्तव्य और सत्संगको उससे अधिक आवश्यक मान लिया हो और जिसे प्रेमकी अटपटी राहपर सद्‌गुरुके निर्देशानुसार चलनेसे अनुभूति प्राप्त हो गई हो और अन्धकार तथा प्रकाशके बीचकी रेखा दिखाई पड़ गई हो। इस प्रकारके प्रेमके लिये दृढ़ संकल्पकी आवश्यकता है, क्योंकि सांसारिक चमत्कृतियाँ उसे प्रलुब्ध करने के लिये उसके च रों ओर मँड़राने लगती हैं। किन्तु इस समस्त व्यूह को जब वह ज्ञान और विवेक की गदा से चूर्ण कर देता है तब उसकी साधना सफल हो जाती है।

इस ईश्वरीय प्रेमको दृढ़ और स्थिर करनेके लिये नाम भजनकी अनिवार्य आवश्यकता है, यही किनारामका भी मत है। निरन्तर आत्माराम रटने से चित्त-वृत्ति के निरोधमें सहायता मिलती है और मनमें मगन होनेका अभ्यास बढ़ता है। आत्माराम और सत्संग ही भक्ति-मार्गके सब साधनोंमें श्रेष्ठ बताया गया है। किनाराम अपने भक्तोंसे कहते हैं, कि 'तुम आत्मारामकी खेती करो, जिसमें कौड़ी लगे न छदाम' केवल लाभ-ही-लाभ है। इसके लिये अपने शरीरको बैल, सुरतिको हलवाहा, गुरुज्ञानको अरई बनाकर इस प्रकार सुसज्जित होकर सब ऊँच-खाल जमीन जोत डालो। यही सच्चे किसानकी खेतीकी रीति है। भीखमरामने भी दुनियाको काल का चबैना बताकर नामको ही इस क्षणिक संसारमें रक्षक बताया है। भक्त हनीफने नारद, काकभुशुण्डि से लेकर कालूराम, किनाराम, जयनारायण, आनन्द आदिका नाम लेते

हुए बताया है कि ये सब नामकी महिमासे तर गये। केवल केश बढ़ाने, अलफी रंगाने और भेषके बनानेसे कुछ नहीं होगा, जबतक आत्मा रामकी खोज न की जाय। अर्थात् इस प्रेम और नाम भजनमें एकान्तनिष्ठा और तल्लीनताकी नितान्त अपेक्षा होती है।

नाम भजनके दो प्रकार बताये गये हैं। एक सस्वर नामोच्चारण और दूसरा अजपा जाप। राम टहल नारायणने अजपाके सम्बन्ध में लिखा है :—

अजपा शब्द निराला सन्तों अजपा शब्द निराला।
जो-जो अजपामें सुरत लगाई अजपा अजर अमान ?
गुरु के कृपा से पाई अजपा शब्द निराला सन्तों।

किनारामने भी अजपा जापपर विस्तृत विचार करके इस जपके लिये 'सोऽहं' मन्त्रका विधान किया है, जिसे उन्होंने सहज स्वरूप प्रकाश बताया है और कहा है कि इसके मौन जपसे काम और क्रोधका परिहार होता है तथा मोक्षकी प्राप्ति होती है। अलखानन्दने 'सोऽहं' जपकी विधिका विश्लेषण करते हुए बतलाया है कि जब साधक इसका अभ्यास करता है तब अन्दर जानेवाली प्रत्येक स्वाँस सों-सोंकी अन्तर्ध्वनि करती हुई त्रिपुटीकी ओर दौड़ती है और हं हंकी ध्वनि करती हुई बाहर निकलती है। सों शक्तिका प्रतीक है और हं महादेवका तथा 'सोऽहं' घटमें शक्ति-शिव संयोगका। सोऽहंका यह जप रात और दिन मिलाकर २१,६०० बार होता है।

इस प्रेमकी साधनामें साधक उस विरहिनके समान हो जाता है जो अपने इष्ट भगवान् से मिलनेके लिये व्याकुल होती है। मिनक रामने कहा है कि इस साधक रूपी विरहिनके अंग-अंगमें बड़े-बड़े घाव हो गये हैं। वह विरहकी भीषण और प्रचंड अग्निमें जली जा रही है। ऐसी विषम परिस्थितिमें केवल हरि ही ऐसे वैद्य हैं जो चिकित्सा कर सकें। अतः वह उनसे प्रार्थना करती है कि शीघ्रातिशीघ्र आकर मेरी सुध लें। प्रायः सभी सन्तोंने साधकके इस विरहका अत्यन्त मार्मिक रूपक प्रस्तुत किया है। सूफियोंने भी इसी प्रकारसे विरहकी बात की है, किन्तु अन्तर यही है कि सूफी-साधक अपनेको प्रेमी और ईश्वरको (ब्रह्मको) प्रेयसी मानता है। ज्ञान, भक्ति और प्रेमके इस विवरण और विवेचनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि वास्तविक तत्त्व को आत्मसात करना ज्ञान है। इसके लिये निष्ठापूर्ण भक्ति और चित्तवृत्तिकी एकाग्रता नितान्त आवश्यक है, क्योंकि इस एकाग्रतासे ही वह प्रेम उत्पन्न होता है जो तात्त्विक-ज्ञान और सात्विक भक्तिसे पुष्ट होकर ब्रह्म या परमात्माके साक्षात्कारका मार्ग प्रशस्त कर देता है और जो जीवन्मुक्तिकी उस आनन्दमयी दशा में पहुँचा देता है, जहाँ साधक को ब्रह्मानन्द या परमानन्द मिलनेके साथ-साथ सम्पूर्ण दैवी सिद्धियाँ त्रिकाल ज्ञान सब हस्तामलकवत प्राप्त हो जाता है। उसकी वाणीमें ऋत और सत्यका निवास हो जाता है और वह ब्रह्मके साथ एकात्म हो जाता है।

यजुर्वेद में 'याते रुद्र शिवातनूर घोरा पापकाशिनी' के द्वारा शिव के शरीर को अघोर अथवा सौम्य की संज्ञा दी गई है। किनाराम जी की परम्पराके

एक प्रमुख सन्त गुलाबचन्द्र (आनन्द) ने विवेक सारकी भूमिकामें अघोर अथवा अवधूत मतका परिचय निम्नलिखित शब्दोंमें दिया है :—

अघोर या अवधूत मत कोई नवीन मत नहीं है। शिव जी महाराजके पाँच-मुखों में एक मुख अघोरका भी है। यह लिंग पुराणसे सिद्ध है। उपनिषद्, रुद्री और शिव-गायत्रीसे भी भेषका महत्त्व प्रकट है। 'अघोरान्नापरोमंत्रः' यह हमारा कहा हुआ नहीं है। यह आदिकालसे चला आता है। कुछ महाराज किनारामजी हीने इसको नहीं चलाया है। यह सचमुच शिवजीका चलाया हुआ है। जगद्गुरु दत्तात्रेय भगवान् ने भी इसका प्रचार किया और बाद में श्री महाराज कालूराम जी और किनाराम जी के शरीरसे यह चला है। आजकल प्रायः अन्य मतवाले इस मत वालोंको घृणाकी निगाह से देखते हैं पर पहले समयमें ऐसा नहीं था। देखिये पुराणोंमें अवधूत-वेष की कैसी प्रतिष्ठा लिखी है ? राजा परीक्षितको समीक ऋषिके बालकने शाप दिया है कि जिसने मेरे पिताके गलेमें मरा सर्प डाल दिया है उसको आजके सातवें दिनतक सर्प काटे। इस घोर श्रापको सुनकर सारे देशमें बड़ा हाहाकार मच गया। सभी ब्रह्मर्षि, देवर्षि एवं राजर्षि इकट्ठे हुये। ये लोग विचारकर रहे थे कि राजा परीक्षितकी मृत्यु वा मोक्षके लिये क्या करना चाहिये ? इतनेमें ही बालपनसे ही अवधूत-वेष धारण करनेवाले श्री शुकदेवजी आ गये।

श्रीशुकदेवजीके उस समाजमें आनेपर सभी लोग खड़े हो गये। वर्तमान समयमें जो दशा है उसके दो कारण हैं। एक तो यह कि स्वयं इस मतवालोंने अपनेको उस उच्चपदसे गिरा दिया है जिसपर ये प्राचीनकालमें थे। दूसरे यह कि अन्य मत-मतान्तरवाले खुद भी अब इनकी तरह गम्भीर विचारके नहीं हैं जैसे पहले हुआ करते थे।

चार वर्ण अर्थात् ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र तथा चार आश्रम—ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ्य, वानप्रस्थ और सन्यास। ये वेद, शास्त्र, पुराण आदि सभी ग्रन्थोंमें प्रतिपादित हैं। सन्यास आश्रमकी सिद्ध अवस्थाको वैष्णव (परमहंस), शाक्त (कैवल्य) और शैव (अघोर) कहते हैं। उसीका नाम अवधूत-मत है। ये सब पन्थ नहीं अपितु पदके नाम हैं। जब पूर्ण ब्रह्मज्ञान उदय हो जाता है और किसी भी उत्तम, मध्यम तथा नीच पदार्थों में विषम दृष्टि नहीं होती, किन्तु सबमें समान दृष्टि हो जाती है उसीका नाम पूर्ण ज्ञान है। पूर्ण ज्ञान होनेसे ही अवधूत-वेष हो जाता है। यह अवस्था बहुत कालके पुण्य संचित होनेसे होती है।

ऐसा बहुरंगीभेष क्यों रक्खा गया और अब भी रक्खा जाता है। इसके दो कारण प्रतीत होते हैं। एक तो इस वेषवाले शिवके उपासक हैं और यह दस्तूर है कि जिसका जो इष्ट होता है उसका माननेवाला प्रायः वैसा ही हो जाता है। 'जानत तुमहिं तुमहिं होइ जाई।' शिव भगवानका अपूर्व वेष ही इस मतवालोंका वेष है। दूसरी वजह यह मालूम होती है कि प्राचीनकालके योगेश्वरोंने जान-बूझकर ऐसा घृणित वेष धारण किया जिससे संसारी लोग उनको घेरकर उनके तपमें विघ्न न डालें।

'अवज्ञया जनैस्त्यक्तः यस्तस्य वेषो यस्य सः अवधूत वेषः।'

पुराणों और शास्त्रों द्वारा यह स्पष्ट विदित होता है कि सबसे प्राचीन और पूजनीय इस अवधूत-वेषकी प्रतिष्ठा बड़े-बड़े महर्षि लोग सदासे करते आये हैं। परम्परा-से इस वेषको राजर्षि एवं ब्रह्मर्षि लोग धारण करते आये हैं। राजा ऋषभदेवके, जो ईश्वरके अवतार समझे जाते हैं, सौ पुत्र थे। उन्होंने अपने लड़कोंको उपदेश देकर स्वयं अवधूत-वेष धारण किया। उनके बड़े लड़के भरतने भी राज्य करनेके पश्चात् अवधूत-वेष ही धारण किया था। उन्हें लोग जड़-भरत भी कहते हैं।

साधना एवं व्यवहार-पक्ष

अघोरपंथके साधना-पक्ष एवं व्यवहार-पक्षको अवधूत भगवान रामजीके शब्दों में दिया जा रहा है। उनका कथन है कि :—

जो घोर न हों, कठिन न हो, कड़ुवा न हो उसे 'अघोर' कहते हैं। अघोर सुगम पंथ है। इसका अनुगमन स्वभावकी मंथर गतिसे होता है। पापोंका पक्ष, तपोंकी गति जहाँ न हो वही अघोर है। हम घर व बाहर सुगम उपायोंको ढूँढ़ते हैं। वह क्या है? वह अघोर है। यह पावन-पथ है, इसमें जीवनका रस निहित है, ये मर्मीली बातें हैं समझनेपर ही मिलती हैं। यह आनन्द-संग्रहका सब रस है। इसे निःसंकोच पाया जा सकता है। भटकते हुये मानवोंके कृत-संकल्पको यह पुराता है। यह शिव है, यह गूँगोंका रस है। इसे पानेके लिये दृष्टि-भेद छोड़ना होगा। यह न पृथक है न अपना है। जगत्-मिथ्या या सपना नहीं होता। ब्रह्म सत्य है तो ब्रह्मकी सृष्टि भी सत्य है। जिन बीजोंसे पौधे उगते हैं यदि वह सत्य है तो पौधे उससे अलग नहीं। अतः वह सत्य है और उसका जगत सत्य है। यह विचार भी सत्य है। अपनेको तृप्त करनेके लिये जब सुमन-सा प्रसन्न मनका गौरवमय पर्णोंसे हार गूँथोगे तो यह हार हृदयका स्वागत करेगा। अपरिपक्व ज्ञानका त्याग करके जो पूरन है उसके पथपर साधकोंको चलना है। अनन्त आनन्द प्राप्त करनेके लिये मन-विचारके क्रन्दनको अनसुनी करना होगा। तब शान्त-हृदय होकर साधक त्रितापोंको कटाकर सुख-समृद्धिके वेरेमें विश्राम पाता है। जन-समूहके गौरवको उन्नतिशील बनाना साधनाका लक्ष्य है। साधु-पथ इससे भिन्न कुछ नहीं, परन्तु समझनेपर ही वह दीखता है और सभी गुण दिखलाने लगते हैं, यह अविच्छिन्न सत्य है।

औघड़ोंकी दिनचर्या

प्रातःकाल सोकर उठते ही पृथ्वीको अपने हाथसे स्पर्श करना, क्योंकि पृथ्वी जननी है और इस क्रियासे तेज कान्तिका आभा शरीरमें प्रवेश होता है। उठकर बैठनेपर प्रातः कुछ मन्त्रोंको बड़-बड़ाना होता है। अघोरियोंको वाणीपर बड़ा निग्रह रखना होता है। किसीका मनन नहीं है न मन्त्रका न देवताका। कुछ कालतक मनन न हो वही अमोघ पूजा है। लोक-संग्रहके लिये माला फेरना या ध्यान करनेका निषेध नहीं है।

'अमरी' का सेवन प्रायः हर समय होना चाहिये। 'वज्री' का सेवन सदा न हो सके तो कम-से-कम चौबिस घंटोंमें एक बार उसका सेवन आवश्यक है। स्नान-का बन्धन बिलकुल नहीं है। रज-वीर्यका सेवन विहित है। इसका बड़ा महत्त्व है और इसकी उपलब्धिके लिये प्रयत्न नहीं करना चाहिये, क्योंकि आत्मिका शक्ति जो काली है उसकी प्रसन्नताके लिये यह है। अपने होंठ या मुखको प्रक्षालन करके जिस प्रकार उसपर लोग हाथ घुमाया करते हैं उसी प्रकार गुदा और लिंगको प्रक्षालन करके उसपर हाथ बराबर घुमाना चाहिये क्योंकि इन्हीं इन्द्रियोंसे कुंडलिनीका प्रथम मार्ग प्रशस्त होता है।

अघोर-साधक यदि गृहस्थ है तो अपनी प्रियाके होठोंको चूमना अनिवार्य होता है और उससे धन-जन-सम्पन्नता प्राप्त होती है। अपनी भैरवी शक्तिकी योनिको भी जिह्वासे सेवन साधकको सरल-सिद्धियों (वाक्-सिद्धि) के प्रकाशको देनेवाला होता हैं। प्रायः अघोर-साधकको भैरवी उपलब्ध नहीं हो पाती है, इसीलिये इसपर बहुत बल दिया गया है। यह साधना प्रायः गृहस्थोंको सुगम है। किसी उलझनमें उसकी प्रार्थना करके जानेपर वीर्यपात न करे तो तत्काल लाभप्रद होता है। विरक्त साधुके लिये यह आवश्यक है कि वह मनुष्योंके समाजसे अपना डेरा सदैव दूर रखें, क्योंकि रात्रिका समय उसके इष्ट-मिलनका है। अतः रात्रिको गृहस्थका गृह छोड़कर चल देना चाहिये। यदि गृहस्थ परिपक्व है, साधना जानता है तो एकाध रात्रि उसके घर विश्राम किया जा सकता है, अन्यथा नहीं। शौचालयके अन्दर ही अधिकांश ध्यान अथवा मनन लाभप्रद होता है।

सप्ततत्त्वोंका आवाहन तथा प्रयोग यह जानकर करना चाहिये कि उससे ईश्वर साक्षात्कार तथा उसकी शक्तियोंका आदर सम्पन्न होता है और इससे साधक स्वयं प्रभावशाली हो जाता है। इनका सेवन करनेवाला साधक अजय और वीर होता है। स्पष्ट है कि साधनामें उपयोग न होने पर वह पशुरूपी मानव भी इससे कृषि उत्पादन बढ़ानेमें योगदान कर संसारका कल्याण करता है। हे साधक ! तुममें पशुभाव उत्पन्न हो तो खिन्न न मानो। तुममें अघोरियोंके सान्निध्यसे उपकार ही होगा। कम-से-कम जितना एक बैल अपने देशके लिये हितकारी है उतना तो अवश्य ही होगा। इसकी उपलब्धियाँ जगतके प्राणी करेंगे।

हे साधक ! तू नाम रट, तू साधना पथपर अग्रसर हो, तू गुरुमूर्तिको अपना प्राण समझकर उसका आलिंगनकर, उसका ध्यानकर तो एक दिन अवश्य ही तुम वह समरूप प्राप्त करोगे जिसे बड़े-बड़े मुनि और योगी प्रयत्नसे भी नहीं पाते।

हे साधक ! तू अधिक प्रयत्न मतकर, अधिक भाग दौड़ मतकर तू कुछ मतकर। तुममें जो प्रेरणा व संकेत मिल रहा है उतना ही कर। अपने मनसे कुछ न कर। तुम इतने हीसे सब कुछ प्राप्त कर जाओगे। जीवनमें सम्मानकी इच्छा न कर, क्योंकि वह बड़ी निरादरकी वस्तु है। अन्यके आश्रित न रह। तू अपने सुझावसे प्रयत्नकर और अपनी साधनामें तू तत्पर रह। किसीके धन-वैभवको अपने जीवनका अंग न समझ।

श्मशान-साधना

यह एकान्त साधनाका पर्याय है और चित्तको एकाग्रता इसका लक्ष्य है। इसी दृष्टिसे पंच श्मशान का ग्रहण है : १—गाँवके बाहरका पीपलका वृक्ष। २—मूँज की खाट। ३—वेश्याका बिस्तर। ४—अपनी पत्नीके सहवासका बिस्तर तथा ५—श्मशान जो सफलता श्मशानमें है वही अन्य वर्णित स्थानों में भी है। वीर्यपात ही जीवकी बलि या चिनगारी उत्पन्न करता है। निश्चिन्त-चिंतनसे अपनी अघोर क्रियाओंका सन्तुलन बनता है और ये सभी स्थल निश्चिन्त-चिन्तनके लिये उपयुक्त हैं। इससे कठिनाइयाँ दूर भाग जाती हैं क्योंकि वहाँ इष्ट अनिवार्य रूपसे उपस्थित होता है। महर्षि, भृगु, वशिष्ठ, गौतम और विश्वामित्रने इसी मार्गसे इष्ट प्राप्त किया था। गौतम बुद्धने भी इस मार्गका अवलम्बनकर बुद्धत्व प्राप्त किया था जिसके पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं। जब साधकके शरीरसे विभिन्न प्रकारकी धुआं जैसी आकृतियाँ उत्पन्न होने लगे तब इन साधना-स्थलोंमें यह समझना चाहिये कि इष्ट मिलने ही वाला है। ऐसे अवसरपर भयभीत या कुंठित कदापि न होवे। इस साधनामें कभी-कभी शरीरसे चिनगारियाँ भी निकलती हैं। मस्तिष्क भी चकराने लगता है। इसीलिये वहाँ पर 'दुधुवा' के सेवनको अनिवार्य बताया गया है। इस साधनाके पूर्ण होनेपर साधक पृथ्वीपर जहाँ भी घूमता-फिरता है, अपने अंगसे बहुत प्राणियों, पवित्रात्माओं-को निकलते, प्रविष्ट होते तथा सम्बोधन करते हुये देखता है। उसे अन्तर्ध्यान शक्ति भी मिल जाती है अर्थात् वह प्रकट भी परोक्ष हो सकता है। वह जिसे चाहेगा उसीको दीखेगा।

पंच महामांस

सूकर, मछली, मनुष्य, गिद्ध और कौएके ही मांसको महामांस कहा गया है। इनका सेवन विरल अवसरोंपर कार्यानुरूप ही करना उचित है। कपाल-पात्रकी पवित्रता इसीलिये है कि उसमें धनंजय प्राणका बास होता है। अनादि कालसे अब तक विश्वके अधिकांश देशोंमें इस कपाल-पात्रका प्रयोग होता है। भूटान और सिक्कमके 'जोंग' अथवा बौद्ध बिहारोंमें इस तरहकी साधनाओं का बाहुल्य है। वहाँ गुरु प्रेमा संभव 'पद्संभव' के हाथमें कपाल-पात्र चित्रित है और अन्य मूर्तियोंके हाथमें भी वह पात्र विद्यमान है। इसके अतिरिक्त जिह्वासे योनिको चाटना भैरवीका होठ चूमना, कपाल-पात्रमें योगिनियोंके साथ आसवपीना आदि अंकित हैं। भूत आदि अपने चक्र मंडलमें कपाल-पात्रसे ब्रह्मांड नायकका आमचन करते और उस पात्रमें शिव-शक्ति सामरस्यसे निकले रजवीर्यका सेवन करते दिखलाये गये हैं। इन क्रियाओंसे साधक गण आश्रम या साधना-गृहोंमें बैठे-बैठे इस सृष्टिके प्रत्येक क्षेत्रके रहस्योंको जान लेते और उद्घाटन करते हैं।

शिवपूजाका प्रचार भारत और अन्यान्य देशोंमें भी पाया जाता है। शैव-उपासनामें जिसे भग-लिंगात्मक यन्त्र बनाकर पूजा जाता है। बौद्ध उसी प्रत्यक्ष

यन्त्रसे आविष्कार करते हैं। पूजामें रत होकर बौद्ध माँगता नहीं है वह अपने अधिकारको लेता है।

भारतमाता ही काली हैं और शहीदोंके शिरका ही वह मुंडमाल पहने हुए हैं। यह धरतीमाता ही पूजा ग्रहण करती हैं। इन्हींकी उपासना और व्यवस्थामें साधकको आत्मबलि देनेको प्रस्तुत रहना चाहिए। "हम शहीदों के गलेका हार बंदेमातरम्" यह इसी साधकका महान् मन्त्र-घोष है।

पंच मकार

मानव-जीवनके रहस्यकी पूर्ति भैरवीके बिना नहीं हो सकती। मनुष्यको शुभेक्षाकी उत्पत्तिका रहस्य ही भैरवी है। साधकके लिये भैरवीकी गोद पृथ्वीकी तरह है। क्योंकि वह साधककी साधनाके रहस्योंका उत्पत्ति-स्थल है और वही उसका भविष्य भी बनाती है। वह जरा, मृत्यु, दुःखके बन्धनोंको काटती है। भैरवी सौभाग्य-की विश्राम-स्थली है। वही नित्यका बोधक है। यह जीवनका पवित्र चिह्न है। वह उदारताकी भी पात्र है। वही साधकसे किसीको कुछ दिला देती है। साधकोंसे जगत्के मनुष्य जो बहुत-कुछ इच्छा रखते हैं, वही उनकी पूर्तिका कारण भी है। इतना माहात्म्य होनेपर भी साधकको भैरवीका मानसिक चिन्तन नहीं करना चाहिए, क्योंकि मानसिक-साधना करनेसे बहुत बड़ा अपराध होता है। इसलिये भैरवीकी साधना प्रत्यक्ष होनी चाहिए। आवश्यकता पूजाकी नहीं बल्कि साधना की है, क्योंकि वही साधक सर्वसंग्रही हो जाता है। साधु वही है जो संस्कृतिकी रक्षा साधनेमें लगा हो। सच्चे साधक देशकी स्वतंत्रता-प्राप्तिमें सहायक हुए और आज जो उसकी रक्षा कर रहे हैं, उसीके कारण हैं। अतः सम्पूर्ण देश व समाज साधकोंका ऋणी है। साधनाकी शृंखला बने रहनेपर संस्कृतिकी जड़ भी अमर हो जायगी। साधक अपने-अपने मतके अनुसार इसी मूल सिंचनमें लगे हुए हैं।

वेश-भूषा

साधक लाल लंगोटी पहनते हैं क्योंकि लाल रंग (रज) का प्रतीक है और उस लंगोटीको धारण करनेवाला अहर्निश लिंग और उस तत्त्वके प्रतीकका सम्पर्क बनाये रखता है। हनुमानजी जो रुद्रके अंश हैं उनकी रुद्राशक्ति लाल लंगोट ही है। शक्तिका प्रतीक सिंदूर उनकी देहमें लगा रहता है। इस प्रतीक ग्रहण का फल प्रखर बुद्धि, तीव्र ज्ञान और अपने इष्टकी मर्यादाकी सुरक्षामें उनकी तन्मयता विदित ही है। साधना-कालमें नीला और काला वस्त्रका उपयोग इसलिये साधकको करना चाहिये कि वह अपनी विद्या और अघोर-क्रियाकी सुरक्षाका साधन है। साधक मतवाला होकर दिन-रातका भी ज्ञान भूल जाता है। अतः रात्रि और अन्धकारका संकेत उसे वस्त्रसे ही मिलता रहता है। जब साधक साधनासे उच्चतर हो जाता है तब उसे श्वेत वस्त्रोंका परिधान करना चाहिए क्योंकि आकाशकी आभा श्वेत है और इससे चित्-शक्ति स्वच्छ निर्मल गुणोंसे ओत-प्रोत रहती है क्योंकि उसमें अब मंगलका सहवास आवश्यक है। वैसे तो काला भैरवका प्रतीक है। काले-घुंघराले बाल शक्तिके प्रतीक हैं। साधकके इन

दोनोंको भैरव-भैरवीके प्रतीक रूपमें धारण करता है। धूमावतीके उपासकको छोड़कर सभी उपासकोंको साधन-कालमें काला या नीला वस्त्र धारण करने का विधान है और वह लाल लंगोटी रजका प्रतीक है जिससे रुद्र-शक्ति धारण करते हैं। कहा भी है— औघड़ गुरु बहुरंगी, सर्वसंघो अर्थात् औघड़ विचित्र वेश-भूषाको ग्रहण करते हैं। पहलवानोंकी साधना उसके लंगोटके बलपर है। उसे खोलनेसे निर्बलता आती है। उन्हें यह ध्यान रखना होगा कि लाल लंगोटको वे स्त्रियोंके सामने न खोलें वह रज तो उन्हें लंगोटके रूपमें प्राप्त ही है, अतः लंगोट खोलनेसे वे निस्तेज हो जाते हैं।

मंत्र

मंत्र और उसकी शक्ति संयुक्त है या अभिन्न है। "गिरा अर्थ जल बीचि सम कहियत भिन्न-न-भिन्न।" मन्त्रके साथ यन्त्रका संयोग विशेष प्रभावोत्पादक होता है। व्यवहारमें चरवाहे जब साँड़-भैसा आदिको डुर-डुरके उच्चारणसे आवाहन करते हैं तो ये मन्त्र स्वयं सिद्ध होनेके कारण यदि मादा पशु उपस्थित हो तो वे स्वयं खिंचे आते हैं। अघोर-मार्गमें जिन साबर मन्त्रोंका प्रयोग होता है वे सभी स्वतः सिद्ध हैं जैसा कि :—

"अनमिल आखर अरथ न जापू। प्रगट प्रभाव महेस प्रतापू॥" से प्रकट है। बुरं, बुरं, बुरं···· महामन्त्र है। यदि साधक कामातुर हो तो इसके अनवरत जपसे शीघ्र ही प्रकृतिस्थ हो जायगा। प्रथम संध्या (प्रातः सोकर उठनेपर) में इसका जप करनेसे दिन मंगलमय बीतता है। इसीलिये शाक्त भी प्रथम संध्यामें छः बार 'त्रिकोण' इस मन्त्रका उच्चारण करता है। अघोरी उक्त मन्त्रका जप काम-संज्ञाके उच्चाटनके लिये करता है। प्रश्न यह है कि जब शाक्त केवल 'त्रिकोण' का छः बार उच्चारण करता हैं तो अघोरी सतत जप क्यों करता है? इसका कारण यही है कि उसे साधना नहीं करना है किन्तु जो साधनरत होनेवाला है उसका छः बार मन्त्रोच्चारण ठीक ही है।

सिद्धियाँ

उक्त व्यवहार अथवा साधनके फलस्वरूप औघड़ोंको सभी सिद्धियाँ सुलभ हैं। अघोर-साहित्य तथा साधकोंके मुखसे यह जाना जाता है कि गिरनार, काशी, भोट देश और विन्ध्यकी पर्वतमालाओंके आकाश-प्रान्तमें इन साधकोंका गमनागमन अथवा विचरना सदैव पाया जाता है। प्रस्तुत पुस्तकमें भी कुछ औघड़ोंके बारेमें एक स्थानसे दूसरे स्थानपर सिंहासनोंमें आसीन आकाश-मार्गसे विचरनेकी चर्चा है। ये महान् सिद्ध विभूतियाँ युगान्तरों पूर्व नहीं, थोड़े ही काल पहले इस भूमंडलपर विचरती थीं। बहुतेरे साधक आकाशमें ऐसे चिह्नोंको देखते हैं, जिससे भूमण्डलपर जो घटित होनेको है उसे पहले ही जान जाते हैं।

सिद्ध या साधकोंके दर्शनका प्रभाव

औघड़ोंकी समाधिपर केवल उपस्थित होने मात्रसे एक अपूर्व प्रेरणा मिलती है। वहाँ ऐसा दिव्य दर्शन होता है जो न सुना है न देखा है। वहाँ अपने जीवनके

लिये सही मानेमें एक बड़ी ही ओजस्वी अनुभूति प्राप्त होती है। हिमालयमें जो बौद्ध या शाक्त मठ हैं, उनमें कपाल रखे गये हैं। ये उन देशोंके वीरों या शहीदोंके हैं। ये मठ उन खोपड़ियोंके माध्यमसे उस क्षेत्रके नागरिकोंको बहुत कुछ देनेमें समर्थ हैं। ये मठ उस कारखानेके समान हैं, जो साधकोंका उत्पादन करते हैं। ये साधक हर देशमें गुप्त रूपसे अपना जाल बिछाये हुये हैं। जो भी विद्वान्, लेखक या कविगण कहीं भी हुये हैं, उन्होंने इस प्रकार आधार-भूतोंसे ही प्रेरणा पाई है। चाहे वह प्रेरणा प्रत्यक्ष न होकर परोक्ष रूपमें ही हो उसीसे उनका मनन, लेखन या मनस्वी शक्तिका उदय हुआ होगा। सुदृष्टि सम्पन्न लोगोंको औघड़ साधकोंके शरीरसे प्रस्फुटित होनेवाली किरणें दिखाई देती हैं। उन किरणोंमें अनेकानेक भैरव, यक्ष उत्पन्न होते हैं। औघड़ जब बड़बड़ाते हैं तो उन्हीं आत्माओंसे बातचीत करते हैं। ये औघड़ साधु विचित्र और बहुरंगी होते हैं। इसलिये अपनी टोलियाँ नन्दिनीकी तरह स्वशरीरसे उत्पन्न करते हैं। पुराणोंमें नन्दिनीकी यह कथा आई है, जहाँ नन्दिनीने अपने शरीरसे सेना उत्पन्न करके वशिष्ठको विश्वामित्रकी सेनाको परास्त करनेमें बड़ी सहायता दी है। किन्तु नन्दिनीके बाद यह परम्परा कदाचित् ही देखनेको मिलती है। बड़ी विद्या प्राप्त या उच्च शक्ति रखनेवाला ही गऊके रूपमें हो जाता है। उसीमें सरलता और सामर्थ्यके परस्पर विरोधी तत्त्वोंका आश्रय हो जाता है। ठीक ही है, बड़े वटवृक्षको देखिये उसकी डाल नम्र होकर जमीनको चूमती है। उसे कोई तोड़े, ढेला मारे अथवा पक्षी उसपर बीट कर दें तो भी वह निर्विकार और सम बना रहता है। ऐसे ही साधकको नम्र होना चाहिये।

आचरण

प्रत्येक प्राणी प्रातः उठकर अपनी गुदा चक्रपर एक हाथ रखता है। जब कई बार उस चक्रको स्पर्श और प्रक्षालन कर लेता है तब वह अनुभव करता है कि मेरा मन-मस्तिष्क स्वस्थ हो गया और मैं कार्य करनेमें प्रवीण होऊँगा। इसी गुदा चक्रसे योगका प्रारम्भ होता है। देवताओंमें प्रथम पूजा गणेशकी होती है। इसलिये प्रातः प्रथम पहरमें प्रथम चक्रका स्वागत करना पड़ता है। यही तो अघोर-उपासना है और इसको करनेके उपरान्त ही वेद-पुराणका पठन-पाठन भी हो सकता है। इस चक्र भेदनका जो मार्ग प्रशस्त कर लेता है उसकी बुद्धि कभी कुंठित नहीं होती, उसकी अस्वस्थता भी दूर हो जाती है। वह तन्मय और तत्पर होकर सभी कार्य सफलतासे कर लेता है।

गुह्य-उपासना

औघड़ोंकी एक गोप्य उपासना है जिसका वर्णन इस प्रकार है। स्त्री-पुरुष मैथुनस्थ हो उसी आसनपर महादीप (महाज्योति) का ध्यानकर संचालन करे यह विधान है। वही साधक अघोराचार्य होता है, वही अधिकारी होता है। इसे ही शाक्त 'कुलद्रव-साधना' कहते हैं। जगन्नाथपुरीमें यह देखनेको मिलता है कि श्रीकृष्णके साथ सुभद्रा हैं, राधा आदि नहीं, यह भैरवी चक्रकी साधना है। उस विमला पीठमें सुभद्राके साथ साधनाका संकेत स्पष्ट ही है। मन्दिरके बाहरी भागके ऊपरसे नीचे

तक जो विग्रह बने हैं, उनका संकेत भी अत्यन्त स्पष्ट है। बौद्धोंके बज्र यानी सम्प्रदायके प्रेरक हिन्दुओंके गीताचार्य अपनी बहिन सुभद्राके साथ कुलद्रव साधना रत हैं। हमारे श्रेष्ठजनोंका आचरित यह मार्ग प्रशस्त है। इसकी निन्दा करनेवाला स्वयं निन्दाका पात्र है। भारतीय साधना विशाल हृदय-साधना है। यह ऋषि-मुनियोंका देश है और उन्हींका रहेगा। अश्लील भाववालोंका न तो यहाँ प्रवेश है न उनकी आवश्यकता है। भू-मंडलका सांस्कृतिक वृक्ष साधकोंके नित-नूतन भावसे ही पुष्पित-पल्लवित है। साधक अपनी उपलब्धियोंसे देश समाजकी उन्नति करता है। यही कारण है कि अघोरका मर्म विदेशी भावापन्न नहीं समझते। परम अघोराचार्य शिवजी-का उदाहरण प्रसिद्ध है, जिन्होंने सागर-मन्थनसे उत्पन्न हलाहलका पान स्वतः कर देवताओंको अमृतका दान किया है।

सहज प्रेम-दृष्टि

शास्त्रोंमें समदर्शीकी प्रशंसाकी गई है, किन्तु सम आचरण तो उससे भी ऊँची वस्तु है। श्रद्धाका मार्ग समदर्शियोंका मार्ग है। वे ईश्वरके सर्वव्यापी रूपको जानकर प्राणिमात्रका नमन करते हैं, किन्तु औघड़ सहज प्रेम दृष्टिवाला होता है। वह सबके साथ अपने ही जैसा व्यवहार भी करता है। श्रद्धा तो सभी कर सकते हैं, किन्तु प्रेम तो केवल अपना प्रेमी ही कर सकता है। यदि श्रद्धा मस्तिष्ककी वस्तु है तो प्रेम हृदय की वस्तु है। वह आलिंगन है अभिवादन नहीं।

सहज अवस्था

भग बिच लिंग, लिंग बिच पारा।
जो राखे सो गुरु हमारा।।

यह औघड़ आचार्योंका प्रधान मत है। अघोराचार्य ऐसे साधना-सम्पन्न व्यक्तियोंको अपना स्नेह तथा शुभ-कामनाएँ देनेमें जरा भी नहीं हिचकिचाते। उक्त पदमें परम उत्तेजनाकी स्थिति पाकर भी सहज बने रहनेकी ओर संकेत है। वस्तुके अभावमें उसके त्यागी सभी हो सकते हैं, किन्तु भोगमें योगको छिपाना केवल उच्च-भावापन्न व्यक्तियोंका काम है। जैसा पहले भी कहा जा चुका है 'रज' सेवनकी अपार महिमा है। इसी तत्त्वके बलपर बड़े-से-बड़े कार्य सहज हो जाते हैं। केवल अपना ही नहीं औरोंका भी कल्याण वह साधक सहज कर सकता है। शिवने कामाख्याके साथ साधनामें उनके स्खलित रजको शरीरमें लगाया और जो नीचे गिरा वही 'भगवा' रंग हुआ, जिसका प्रतीक धारण-मात्रसे साधक देदीप्यमान, कान्ति-मान, योगाचार्य बनता है तथा अनेक क्रियाओंमें प्रवीण हो जाता है।

उपसंहार

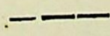
साधुताकी सबसे अधिक मुख्य बात है इष्ट-ध्यान और मन्त्र-जाप। सत्य और प्रिय बोलना चाहिए। सत्य भी अप्रिय हो तो नहीं बोलना चाहिए। ऐसे आचरणवाले साधक गुरुतत्त्वको प्राप्तकर अनेकानेक सिद्धियाँ प्राप्त कर लेते हैं। वे जीवनके मर्मज्ञ और भविष्यद्रष्टा हो जाते हैं। अतः सब प्रपंच छोड़कर सत्यप्रिय भाषणके साथ मन्त्र-

जाप और इष्टका ध्यान करना चाहिए। ध्यानसे नाना प्रकारके क्लेश तत्काल हट जाते हैं। चेतनमें प्राणको स्थिर करके मस्तकमें शून्य स्थितिमें विचरना है। यह ध्यान उसी अमोघ कपालेश्वरका है, जिसके ध्यान अथवा स्मरणसे भी इन्द्रिय-निग्रह हो जाता है। उस साधकका स्वभाव इतना अच्छा हो जाता है कि सभी उसको सुनना चाहते हैं। वह श्रीमान हो जाता है और पवित्र जीवनका अधिकारी हो जाता है। इच्छाओंमें पड़नेसे पवित्र जीवन जर्जर हो जाता है।' यह निरीक्षा 'कुछ काम करना शेष नहीं।' यही आनन्दमय, मंगलमय, सौभाग्यमय और रहस्यमय जीवन है। वह साधक कल-कल करके किलकारियाँ भरता है। उस किलकारीमें श्मशानके देवता, भैरवगण, अनेक देवी-देवता, अनेक प्राणियोंको मुग्ध और मोहित कर लेते हैं।

इस प्रसंगकी पूर्तिमें एक सुभाषित देखिये :—

यत्र तत्र समये यथा योऽसि सोस्यभिधया यथा तथा।
वीतराग कलुश्च चेद भवान् एक एव भगवन् नमोऽस्तुते ॥

जो लोग राग-द्वेष और माया-मोहसे परे हैं वह चाहे किसी नामसे पुकारे जाते हों, किसी देश और कालमें शरीरधारी रहे हों, किन्हीं शब्दोंमें अपने उपदेशोंको कहा करते हों वे समान रूपसे हमारे पूज्य हैं।



रुद्राक्ष ४

वामायन और अघोर-मार्ग

अघोर-पन्थकी ऐतिहासिक पृष्ठ-भूमि

पीछे बताया जा चुका है कि अघोर भी शिवका एक पर्याय है। शिवके पाँच मुखोंमेंसे एकका नाम अघोर ही है। इस दृष्टिसे व्यापक रूपसे यह माना गया है कि अघोर-सम्प्रदायका आधार शैव-दर्शन ही है। अनेक विद्वानोंने इस सम्बन्धमें व्यापक जिज्ञासा और परीक्षण करके यह निष्कर्ष निकाला है कि शिव और शक्ति दोनोंमें अभेद है। महाकवि कालिदासने अपने रघुवंशके प्रथम श्लोकमें ही पार्वती और परमेश्वरको वाणी और अर्थके समान परस्पर सम्पृक्त माना है, जिनकी अलग-अलग कल्पना ही नहीं की जा सकती। जो एक रूप हैं, उन्हें अर्धनारीश्वरके चित्रोंमें अंकित उस शिव-शक्ति स्वरूपके समान नहीं माना जा सकता, जिसके आधेमें पुरुष शिव और आधेमें नारी पार्वती अंकित की जाती हैं। वे तो पूर्णरूपसे ऐसे घुले-मिले हैं कि किसी भी प्रकारसे भेद नहीं किया जा सकता। इसीलिये विद्वानोंका मत है कि शैव और शाक्त दोनों तन्त्रों या दर्शनोंको :समझनेपर ही अघोर-पन्थका स्पष्ट रूप जाना जा सकता है।

शिव या रुद्रकी उपासना-पद्धति वैदिककालसे ही चली आ रही है। यजुर्वेदके शतरुद्रीय अध्यायमें विस्तारसे शिव या रुद्रका रूप और महत्त्व वर्णित किया गया है। तैत्तिरीय आरण्यक १०।१६ में इस समस्त विश्वको ही रुद्र रूप बतलाया गया है। श्वेताश्वतर उपनिषद् ३।११ में भगवान शिवको सर्वानन शिरोग्रीव, सर्वभूत गुहाशय, सर्वव्यापी तथा सर्वगत बताया गया है। किन्तु यह विचित्र बात है कि किसी उपनिषद्में या तन्त्र-शास्त्रमें पशुपतिका निर्दिष्ट स्वरूप प्राप्त नहीं होता। सर्वप्रथम अथर्व शिव उपनिषद्में पशुपतिव्रत, पशु-पाश आदि उन सब पारिभाषिक शब्दोंका प्रयोग मिलता है, जिनका पीछेके तन्त्र-ग्रन्थोंमें व्यापक प्रयोग हुआ है। इससे इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि पाशुपत-मत निश्चय ही बहुत प्राचीन है, क्योंकि महाभारतमें भी शैव-मतोंका विवरण प्राप्त होता है।

वामन पुराण ६।८६।९१ में शैवोंके चार सम्प्रदायोंका उल्लेख मिलता है। शैव, पाशुपत, कालदमन और कापालिक। इतना ही नहीं शंकराचार्यने अपने प्रसिद्ध ब्रह्मसूत्रके भाष्य २।२।३७ में भी माहेश्वरोंका और उनके प्रसिद्ध पंच-पदार्थोंका परिचय दिया है। कार्य, कारण, योग, विधि और दुःखान्त। इसी सूत्रकी भामती और रत्नप्रभा टीकाओंमें वामन पुराणमें बताए हुये कालदमनके स्थानपर कारुणिक सिद्धान्ती नाम मिलता है, जिसे भास्करने काठक सिद्धान्ती और यामुनाचार्यने कालामुख नाम (आगम प्रमाण्य पृष्ठ ४८-४९) दिया है। इस क्रमके अनुसार

माहेश्वर-सम्प्रदाय चार समझे जाते हैं। पाशुपत, शैव, कालमुख और कापालिक। इन्हीं मतोंके मूल ग्रन्थोंको ही शैवागम कहते हैं। शैव-तन्त्रोंको पूर्णतः वैदिक माना गया है। अनेक प्राचीन ग्रन्थोंमें इसका विस्तृत विवेचन प्राप्त होता है। यद्यपि महिम्नस्तोत्र और ब्रह्मसूत्रके तर्कवाद २।२।३७ में पाशुपत मतको वेद-बाह्य माना गया है, तथापि श्रीकंठाचार्यने अत्यन्त प्रबल तर्कोंके आधारपर शिवागमको वेदके ही समान प्रामाणिक और मान्य बताया है। अप्पय दीक्षितने शिवार्क मणिदीपिका २।१।२८ में शिवागमके दो पक्ष स्थापित किये हैं, वैदिक और अवैदिक और बताया है कि वैदिक-तन्त्र तो उन लोगोंके लिये है जिन्हें वेद पढ़नेका अधिकार है और अवैदिक-तन्त्र उन सब व्यक्तियोंके लिये है, जिन्हें वेद पढ़नेका अधिकार नहीं है।

दार्शनिक दृष्टिसे माहेश्वर-तन्त्रोंके तीन प्रधान भेद माने जाते हैं—द्वैतपरक (शिव-तंत्र), द्वैताद्वैतपरक (रुद्र-तंत्र) और अद्वैतपरक (भैरव-तंत्र) इन विभिन्न माहेश्वर-मतोंका प्रचार भारतके भिन्न-भिन्न प्रदेशोंमें व्याप्त रहा। पाशुपत मतका प्रचार गुजरात और राजपुतानेमें था। शैव-सिद्धान्तका प्रचार तामिल प्रदेशमें और वीर शैव-मतका प्रचार कर्नाटक प्रान्तमें है। स्पन्द या प्रत्यभिज्ञा मतका केन्द्र काश्मीर है।

पाशुपत-मत

पाशुपत मतकी स्थापना नकुलीश या लकुलीशने की है। शिवपुराणके कर्विण माहात्म्यमें इनका जन्म भृगुकच्छ (भड़ोच) के पास कर्विणमें होना प्रतीत होता है। राजपुताना और गुजरात आदि भारतके अनेक पश्चिमी प्रदेशोंमें नकुलीशकी मूर्तियाँ मिलती हैं, जिनके मस्तकपर घने केश, दाहिने हाथमें बिजौरे नीबूका फल और बाएँ हाथमें लगुड (दण्ड) रहता है। इसी लगुडके कारण ही जान पड़ता है कि वे लगुडेश या लकुलीश कहलाये। शिवके अट्ठारह अवतारोंमें नकुलीशको ही आद्य अवतार माना गया है। ये अवतार हैं:—लकुलीश, काशिका, गार्ग्य, मैत्र्य, कौरुष, ईशान, पारगार्य, कपिलाण्ड, मनुष्यक, अपरकुशिक, अत्रि, पिंगलाक्ष, पुष्पक, बृहदार्य, अगस्ति, सन्तान, राशीकर और विद्या गुरु।

विक्रम द्वितीयके राज्यकालमें गुप्त संवत् ६१ (३८० ई०) का एक बड़ा महत्त्वपूर्ण शिलालेख मथुरासे मिला है, जिसमें कहा गया है कि पाशुपतमतानुयायी उदिताचार्यने गुरुमंदिरमें उपमितेश्वर और कपिलेश्वर नामक शिव लिंगोंकी स्थापना की है। उदिताचार्यने अपनेको भगवान कुशिकसे दशम बताया है, जिनके गुरु लकुलीश थे। इस प्रकार एक पीढ़ीके लिये २५ वर्ष मानकर लकुलीशका समय १०५ ईस्वीके लगभग सिद्ध होता है। यह वही समय है जब कुषाण नरेश हुविष्कके सिक्कोंपर लगुडधारी शिवकी मूर्तियाँ मिलती हैं। पाशुपतोंका सम्बन्ध न्याय वैशेषिक-वालोंसे नितान्त प्रसिद्ध है। इसीलिये गुणरत्नने नैयायिकोंको शैव और वैशेषिकोंको पाशुपत कहा है। न्याय वार्तिककार उद्योतकरने अपनेको पाशुपताचार्य कहा है।

शैव-सिद्धान्त

शैव-सिद्धान्तका प्रचार दक्षिण भारतके तमिलप्रदेशमें है और इस दृष्टिसे इस प्रदेशको शैव-धर्मका दुर्ग (गढ़) समझना चाहिये। यहांके अनेक शैव-भक्तोंने अत्यन्त भव्य शिवस्तोत्रों और ग्रन्थोंकी रचना तमिल भाषामें की है, जिनका उस प्रदेशमें व्यापक आदर है। इन भक्तों या ८४ शैव-सन्तोंमें चार अत्यन्त प्रमुख आचार्य हो गये हैं। संत अप्पार, संत-ज्ञान सम्बन्ध, संत सुन्दर और संत मणिक्कवाचक। इन चारों महापुरुषोंने क्रमशः शैव धर्मके प्रमुख मार्ग स्थापित किये। चर्या (दास-मार्ग), क्रिया (सत्पुत्र-मार्ग), योग (सह-मार्ग) और ज्ञान (सन्मार्ग)। ये सभी आचार्य ७वीं और ८वीं शताब्दीमें हुये, किन्तु इनसे बहुत पहले सन्त नक्कीर प्रथम शतक, संत कण्णप्प द्वितीय शतक और तिरुमूलरने शैव-मतका अत्यधिक प्रचार किया था। इनकी तमिल रचनायें ही शैव-सिद्धान्तकी मूल नींव हैं।

भगवान शङ्करने अपने भक्तोंके कल्याणके लिये अपने पाँचों मुखोंसे अट्ठाईस तन्त्रोंका आविर्भाव किया। सद्योजात मुखसे कामिक, योगज, चिन्त्य, कारण और अजित। वामदेव मुखसे दीप्त, सूक्ष्म, सहस्र, अंशुमान और सुप्रभेद। अघोर-मुखसे विजय, विश्वास, स्वयंभुव, अनल और वीर। तत्पुरुष मुखसे रौरव, मुकुट, विमल, चन्द्रज्ञान और बिम्ब। ईशान मुखसे प्रोद्गीत, ललित, सिद्ध, सन्तान, सर्वोत्तर, परमेश्वर, किरण और बातुल। जयरथने तन्त्रालोककी टीकामें इन तन्त्रोंका नाम दिया है। इनमेंसे दस द्वैत मूलक शैव-तन्त्र हैं, जिन्हें परम शिवने प्रणव आदि दस शिवोंको पढ़ाया था। अठारह द्वैताद्वैत प्रधान रुद्र-तन्त्र हैं, जिन्हें परम शिवने अघोर आदि अठारह रुद्रोंको पढ़ाया। यही उपदेश महौघ-क्रम और प्रति संहिता-क्रमके नामसे दो प्रकारके माने जाते हैं जिनकी संहिताओंकी संख्या दो सौ आठ है। इन सिद्धान्त वादियोंके अनुसार ज्ञान रूप वेद तो केवल मुक्तिका साधन है, परन्तु परज्ञान रूप यही शिव-शास्त्र मुक्तिका एक मात्र उपाय है। कामिकके उपागमोंमें मृगेन्द्र तन्त्रका प्रकाशन नारायण कंठकी वृत्ति और अघोर शिवाचार्यकी दीपिकाके साथ प्रकाशित हुआ है।

वीर शैव-मत

वीर शैव-मतके अनुयायियोंका नाम लिंगायत या जङ्गम है। ये लोग वर्ण व्यवस्था नहीं मानते। शङ्करकी लिंगात्मक मूर्ति हर समय गलेमें लटकाये रहते हैं। इस मतका प्रचार कर्णाटक देशमें बहुत है। इस मतके आद्य प्रचारक वसव (१२वीं शताब्दी) थे, जो कलचुरी नरेश विज्जलके मन्त्री बताये जाते हैं। वीर शैवोंके अनुसार उनका मत अत्यन्त प्राचीन है, जिसका उपदेश पाँच आचार्योंने भिन्न-भिन्न समयमें किया। ये आचार्य थे, रेणुकाचार्य, दारूकाचार्य, एकोरामाचार्य, पण्डिताराध्य और विश्वाराध्य। यह माना जाता है कि इन पांचों आचार्योंने क्रमशः सोमेश्वर, सिद्धेश्वर, रामनाथ, मल्लिकार्जुन और विश्वनाथ नामक प्रसिद्ध शिव लिंगोंसे आविर्भूत होकर शैव-धर्मका प्रचार किया। इन्होंने क्रमशः वीर

सिंहासनकी स्थापना रम्भापुरी (मैसूर) में, सद्धर्म सिंहासनकी उज्जैनीमें, वैराग्य सिंहासनकी केदारनाथके पास उखीमठमें, सूर्य सिंहासनकी श्रीशैलमें और ज्ञान सिंहासनकी काशी जंगमबाड़ी विश्वाराध्य महासंस्थानमें की। सिद्धान्तके अट्ठाईस आगम ये भी मानते हैं। श्रीपति (१०६० ई०) ने ब्रह्मसूत्रपर श्रीकर भाष्यमें सिद्ध किया है कि इसका आधार उपनिषद् है।

प्रत्यभिज्ञा-दर्शन

काश्मीरमें पल्लवित होनेवाले अद्वैतवादी शैव-दर्शन प्रत्यभिज्ञा, स्पन्द, षड्द्धं शास्त्र, षड्द्धं क्रमको विज्ञान कहते हैं। इस दर्शनका प्रमुख सिद्धान्त है, प्रत्यभिज्ञा अर्थात् अज्ञानकी निवृत्ति हो चुकनेपर गुरु वचनके आधारपर जब जीवको यह ज्ञान हो जाता है कि मैं शिव हूँ त्योंही उसे तुरन्त आत्मस्वरूप शिवत्वका साक्षात्कार हो जाता है। उस सिद्धान्तके अनुसार परमेश्वर अपनी स्पन्द रूपा शक्तिसे सदा अविमुक्त रहता है। यही स्पन्दरूपा शक्ति ही उसका नित्य स्वभाव है। इसीलिये इस सिद्धान्तका नाम स्पन्द भी है। इसे त्रिक भी कहते हैं, क्योंकि इसमें तीन तन्त्रोंकी प्रधानता है। सिद्ध-तन्त्र, नामक-तन्त्र तथा मालिनी-तन्त्र। इस मतमें पर, अपर और परापर रूप नामक तीन त्रिक माने जाते हैं। शिव, शक्ति और उनके संघटको परत्रिक, शिव-शक्ति तथा नरको अपरत्रिक तथा परा, परापरा और अपरा नामकी तीन अधिष्ठात्री देवियोंको परापर त्रिक कहते हैं।

षड्द्धं-शास्त्रके अनुसार वर्णमालाके प्रथम छः स्वर अ आ, इ ई, उ ऊ इसी उन्मेष क्रमका प्रतिनिधित्व करते हैं। जिस क्रमसे अनुत्तर, आनन्द, इच्छा, ईशना, उन्मेष तथा ऊर्मिशक्तियोंका परम तत्त्वसे उन्मेष होता है, इनमेंसे आनन्द-शक्ति, ईशना-शक्ति और उर्मि-शक्ति तो क्रमशः अनुत्तर इच्छा और उन्मेषपर आश्रित होती हैं और ये उन्हींकी कुछ-कुछ विकासोन्मुख अवस्थायें हैं। इस प्रकार अनुत्तर, इच्छा तथा उन्मेष नामक स्वरूपमय ही प्रधान है, जो क्रमशः चित्त, इच्छा और ज्ञान कहलाती हैं। यह कहा जाता है कि परम शिवने अपने पाँचों मुखोंसे उत्पन्न होनेवाले शैवागमोंकी द्वैतपरक व्याख्या देखकर अद्वैत-सिद्धान्तके प्रचारके लिये इस मतका आविर्भाव किया और दुर्वासा ऋषिको अधिकार दिया कि आप जाकर ज्ञान शैव-शासनका प्रचार कीजिये। दुर्वासाने त्र्यम्बकादित्य नामक मानस-पुत्र उत्पन्न करके उन्हींसे इस मतका प्रचार कराया। इसीलिये इस शैव-शासनको त्र्यम्बक-शास्त्र भी कहते हैं। इन्हींकी परम्परामें सोलहव पुरुष संगमादित्यके शिष्योंने काश्मीरमें इस मतका विकास किया। संगमादित्यकी चौथी पीढ़ीमें सोमानन्द नामक प्रख्यात तान्त्रिकने शिव-दृष्टि नामक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थकी रचना की। इसके इतिहाससे यह प्रतीत होता है कि तृतीय शताब्दीमें काश्मीरमें शैव-मतका उदय हुआ।

स्पन्द-शास्त्र

स्पन्दशास्त्र वास्तवमें शैव-दर्शनका साधना पक्ष है। परमेश्वर शिवकी स्वतंत्र

शक्ति ही किंचित गतिशील होनेके कारण स्पन्द कहलाती है और यह स्पन्द ही परम

शिवका नित्य स्वभाव है। बसुगुप्तके शिष्य कल्लटने स्पन्द-सिद्धान्त या स्पन्द-शास्त्रकी स्थापना की और बसुगुप्तने प्रत्यभिज्ञा-शास्त्र की। वामनपुराणमें जिन चार सम्प्रदायोंकी चर्चा है, वे आज उसी रूपमें नहीं पाये जाते। शैव, पाशुपत, कालमुख और कपालीके बदले सर्व दर्शन-संग्रहमें सायणने माहेश्वर-सम्प्रदायके चार सिद्धान्त बतलाये हैं, शैव, प्रत्यभिज्ञा, रसेश्वर और लकुलीश पाशुपत। कूर्मपुराणके अनुसार पाशुपत मत तीन प्रकारके हैं, वैदिक, तांत्रिक और मिश्र।

शैव-दर्शन

शैव-सिद्धान्त और पाशुपत-सिद्धान्त तो समान ही हैं। केवल लकुलीश पाशुपत-सिद्धान्तमें इससे कुछ अन्तर है। इसीलिये पाशुपतके पहले लकुलीश विशेषण लगाया गया है।

पाशुपत-सिद्धान्तकी तरह शैव-सिद्धान्तमें भी जीवमात्र पशु कहलाता है। उसका पति पाशुपति भगवान माहेश्वर वा शिव हैं। परन्तु शैव-सिद्धान्तवाले परमेश्वरको कर्मादि सापेक्षकर्ता मानते हैं। जीवके कर्मानुरूप परमेश्वर ही फल देता है। एक ओर उसने इन्द्रियाँ दीं और दूसरी ओर विषय भी बनाये। वह केवल अपनी इच्छापर संसारको नहीं चलाता। फिर भी उसके स्वतंत्र कर्तृत्वमें कोई बाधा नहीं पड़ती।

यह संसार कार्य है। ईश्वर कारण है। वह शरीरधारी है। उसका शरीर निर्दोष है। पंच मंत्रात्मक है। ईशान, तत्पुरुष, अघोर, वामदेव और सद्योजात। ये मन्त्र क्रमानुसार मस्तक, मुख, हृदय, गुह्य और चरण स्वरूप हैं। वह सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान् है।

पति, पशु और पाश ये तीन पदार्थ हैं। मल, कर्म, माया और रोध-शक्ति ये चार पाश हैं। स्वाभाविक अपवित्रताका नाम है मल जो दृक और क्रिया शक्तिको ढके रहता है। धर्माधर्मका नाम है कर्म। प्रलयमें जिसके भीतर सारे कार्य समा जाते हैं और सृष्टिमें जिससे सारे कार्य निकलते हैं, उसे माया कहते हैं। पुरुषकी गतिमें रुकावट डालनेवाले सभी कर्मरोध-शक्ति कहलाते हैं। पशु-पदार्थ, जीवात्मा महत् क्षेत्रादि पदवाच्य, देहादि भिन्न, सर्वव्यापक, नित्य, अपरिछिन्न, दुर्ज्ञेय एवं कर्त्तास्वरूप है। भगवान शिव ही पति हैं और दीक्षादि उपाय ही शिवत्व-प्राप्तिकी साधनाएँ हैं।

जीवनके तीन प्रकार हैं। १–विज्ञानाकल, २–प्रलयाकल और ३–सकल।

१–विज्ञानाकल—केवल मल स्वरूप पाशबद्ध जीवको कहते हैं।

२–प्रलयाकल—मन, कर्म, और मायाके पाशोंसे बँधे जीवको कहते हैं।

३-सकल—मल, कर्म और मायाके पाशोंसे बँधे जीवको कहते हैं।

समाप्त कलुष विज्ञानाकल जीवको भगवान दया करके अनन्त सूक्ष्म एक नेत्र, शिवोत्तम, त्रिमूर्तिक, श्रीकण्ठ एवं शिखण्डी आदि विद्येश्वरोंका पद देते हैं। असमाप्त-कलुष जीवोंको मन्त्रेश्वर बना देते हैं। ये सप्त [illegible] करोड़ हैं।

प्रलयाकाल जीवोंमें पक्व पाशद्वय मुक्तिपद पाते हैं और अपक्व पाशद्वय पुर्वष्टक देह धरकर स्वकर्मानुसार तिर्यक् मनुष्यादि विभिन्न योनियोंमें जन्मते हैं। पुर्वष्टक देह छत्तीस तत्त्वोंवाली देहको कहते हैं। ये छत्तीस तत्त्व इस प्रकार हैं। चार अन्तःकरण, योग-साधन कला, काल, नियति, विद्या, राग, प्रकृति और गुण ये सात तत्त्व, पञ्चभूत, पञ्च भूतात्मा और दसो इन्द्रियाँ और पाँच शब्दादि विषय, ये छत्तीस तत्त्व हुये। इन अपक्व पाशद्वय जीवोंमें जो अधिक पुण्यवान है, उन्हें दयालु-शङ्कर पृथ्वीपति बना देते हैं।

सकल जीवोंमें पक्वकलुष मन्मेश्वर पद पाते हैं, जिनकी संख्या मण्डल्यादि भेदसे ११८ हैं। अपक्व कलुष भवकूपमें गिरते हैं। सायणोक्त शैव-दर्शनका सार यही है।

शैव मात्र निगमागम दोनोंको प्रमाण मानते हैं। निगम है सांगोपांग चारों वेद और आगम है उमा-महेश्वर संवादात्मक समस्त तन्त्र। निगमागम मात्र स्वतः प्रमाण और ईश्वरोक्त है। आगमोंमें भी शैवागम ही उनके विशिष्ट आधार है। पहले बताये गये अट्ठाईस शिवागमोंके अतिरिक्त १७० से अधिक उपागम हैं। सब मिला-कर कई सौ हैं। इनमेंसे कुछ ही अबतब प्रकाशित हुये हैं। इनमें मत, कुल-शील, शिल्प, कर्म-धर्म, व्यापार-उद्योग आदि विषयोंका रहस्य बतलाया गया है।

पाशुपत-मत

शैव-तन्त्र सिद्धान्तके अन्तर्गत पाशुपतमतोंने पाँच पदार्थ माने हैं :—कार्य, कारण, योग, विधि और दुःखान्त। इन पदार्थोंको भली प्रकार समझे बिना पाशुपत मतको भली प्रकार नहीं समझा जा सकता।

कार्य—कार्य उस तत्त्वको कहते हैं, जिसमें स्वतन्त्र शक्तिका अभाव हो। यह तीन प्रकारका होता है। विद्या, कला और पशु। जड़ और चेतन दोनों कार्यके ही अन्तर्गत आते हैं। क्योंकि ये दोनों ही परतन्त्र हैं और इसलिये परमेश्वरके अधीन हैं। जीवोंके गुण-रूप अविद्या दो प्रकारके होते हैं। बोध-अबोध। जो बोध स्वभावा विद्या होती है उसीको चित्त कहते हैं और पशुत्व प्राप्त करनेवाली धर्म और अधर्मसे युक्त विद्या ही अबोध रूपा है। चेतनके अधीन अचेतन पदार्थ ही कला कहलाता है। इसी कार्य रूपा कलाके अन्तर्गत पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि तथा आकाश पाँचों भूत और उनके गुणों शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्धका समावेश होता है। कारण रूपा कलामें त्रयोदश इन्द्रियोंका अन्तर भाव होता है। (पाँच कर्मेंद्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि और अहङ्कार) पशुका अर्थ है जीव, क्योंकि कार्य कारण रूपी कलासे बँधकर शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध विषयोंके वश होनेके कारण यह जीव पशु कहलाता है। शरीरकी इन्द्रियोंसे सम्बद्ध जीवको साञ्जन और शरीरकी इन्द्रियोंसे विरहित जीवको निरञ्जन कहते हैं। निरञ्जनका यह स्वरूप स्पष्टतः समझ लेना चाहिये।

कारण—संसारकी सृष्टि, उसका संहार तथा उसपर अनुग्रह करनेके कारण महेश्वरको ही कारण कहते हैं। इनका शास्त्रीय नाम पति है। महेश्वर अपनी

अपरिमित ज्ञान-शक्तिके द्वारा जीवोंको प्रत्यक्ष करते हैं और अपनी अपरिमित प्रभु-शक्तिके कारण जीवोंका पालन करते हैं, इसलिए ज्ञान-शक्ति और पशु-शक्तिको आश्रय देनेवाले सर्वशक्तिमान माहेश्वरको पति कहा गया है। यह पति स्वतन्त्र, ऐश्वर्य-सम्पन्न, आद्य एकमात्र तथा कर्त्ता है। उसीके हाथमें अनुग्रह-शक्ति भी है। उसीकी इच्छासे जीवोंको इष्ट और अनिष्ट स्थान शरीर और विषयेन्द्रियाँ प्राप्त होती हैं। ज्ञान-शक्ति होनेके कारण ही वे परमेश्वर कहलाते हैं और सारी सृष्टि होनेके कारण वे कारण कहलाते हैं। वे अपने खेल व मनोविनोदके लिए संसारका आविर्भाव (उत्पत्ति) और तिरोभाव (विनाश) करते रहते हैं। इसी कारण वे देव कहलाते हैं और सब क्रियाओंसे निरपेक्ष होनेके कारण वे सार्वकालिक कहलाते हैं।

योग—चित्तको एकाग्र करके आत्मा और ईश्वरका सम्बन्ध स्थापित करनेको योग कहते हैं। यह दो प्रकारका होता है—क्रियात्मक जिसमें जप, ध्यान आदिकी क्रियाएँ की जाती हैं और दूसरा क्रियोपरम (क्रियाकी निवृत्ति) अर्थात् भगवानमें एक निष्ठ भक्ति, ज्ञान प्राप्ति और शरणागति। यह शरणागति छह प्रकारकी होती है।

आनुकूल्यस्य संकल्पः प्रातिकूल्यस्य वर्जनं रक्षिष्यतीतिविश्वास।
गोपतृत्ववरणं तथा आत्मनिक्षेप कार्पण्येषड् विद्याशरणागतिः॥

(सब प्रकारसे अपने इष्टदेवके अनुकूल ही बना रहना और आचरण करना, अपने इष्टदेवके प्रतिकूल जितनी क्रियाएँ व्यक्ति और भाव हों सबका परित्याग कर देना, यह दृढ़ विश्वास कर लेना कि केवल मेरा इष्टदेव ही मेरी रक्षा करेगा दूसरा कोई नहीं, अपने इष्टदेवको अपने रक्षकके रूपमें वरण कर लेना कि केवल आपको ही मैं अपना रक्षक मानता हूँ दूसरे किसीको नहीं, सब प्रकारसे अपनेको अपने इष्टदेवके हाथमें सौंप देना कि तेरी जो इच्छा हो वही तू कर और सदा अपने इष्टदेवके सामने तुच्छ और दीन बना रहना कि मेरा कोई अस्तित्व नहीं है।) इस प्रसंगमें यह भी समझ लेना चाहिये कि पातंजल योगका फल तो केवल कैवल्यकी प्राप्ति ही है, अर्थात् ब्रह्ममय हो जाना ही है, किन्तु पाशुपत योगका फल दुःखकी निवृत्ति के साथ-साथ परम ऐश्वर्यकी प्राप्ति भी है, जिसके कारण संसारकी समस्त शक्तियाँ और सिद्धियाँ उसे हस्तामलकवत् स्वतः अनायास प्राप्त हो जाती हैं।

विधि—जिन साधनोंसे माहेश्वरकी प्राप्ति की जाती है, उन्हें विधि कहते हैं। इनमेंसे मुख्य विधिको चर्चा कहते हैं, जिसके दो भेद हैं—व्रत और द्वार। इस विधिके लिए छः प्रकारके उपहार या नियम हैं—

हसित (हँसते रहना) गीत, नृत्य, हुडुक्कार (गाल बजाना) नमस्कार और जप्य। इस प्रसंगमें यह बताया गया है कि माहेश्वरकी पूजाके समय हँसने, गाने, नाचने, जीभ और तालुके सम्बन्धसे बैलके समान हुडहुड करके डकारने, नमस्कार करने और जपका अभ्यास करना चाहिये। इसी उपहार या नियमके साथ पंच विध व्रत किया जाता है। अर्थात् भस्म स्नान, भस्म शयन, जप, पूजन

तथा प्रदक्षिणा। यही चर्याका व्रत कहलाता है। द्वारके अन्तर्गत ६ विधियाँ आती हैं—

(१) क्राथन—जागते हुए पुरुषको सोते हुए पुरुषके समान चित्त धारण करना अर्थात् सोये हुएके समान दिखाई पड़ना।

(२) स्पन्दन—अर्थात् वात-व्याधिसे ग्रस्त पुरुषके समान शरीरके सब अंगोंको कँपाते रहना।

(३) मन्दन—लँगड़ाते हुए मनुष्यके समान तिड़बिड़ंगी चालसे चलना।

(४) शृंगारण—किसी रूप, यौवन-सम्पन्न सुन्दरीको देखकर कामियोंके समान चेष्टा करना।

(५) अवितत्करण—अर्थात् अत्यन्त अविवेकी पुरुषके समान निन्दित-कर्म करना और

(६) अवितद भाषण—अर्थात् ऊट-पटांग, उचित-अनुचित, फूहड़ शब्द बोलना।

इनके अतिरिक्त अनुस्नान और निर्माल्यधारण आदिको गौण-विधि कहते हैं।

दुःखान्त—पाशुपत-मतका पाँचवाँ पदार्थ दुःखान्त अर्थात् दुःखोंकी आत्यन्तिक अर्थात् पूर्ण निवृत्ति या मोक्ष है। यह जीव या पशु पाँच प्रकारके दोषोंसे बन्धनमें पड़ा हुआ है। इन दोषोंको मल कहते हैं, जिनके नाम हैं—मिथ्याज्ञान, अधर्म, शक्तिहेतु (विषयोंमें आसक्तिके कारण बने हुए विषयोंसे सम्पर्क) च्युति (रुद्रतत्त्वसे चित्तका तनिक भी विचलित होना) तथा पशुत्व (अल्पज्ञता आदि पशुत्व उत्पादन करनेवाले) धर्म हैं। ऊपर जो योग तथा विधिका अनुष्ठान बताया गया है उनकी साधनासे मलोंका पूर्ण नाश हो जाता है। मोक्ष प्राप्त करनेके लिए गणकारिकामें जो पाँच प्रकारके उपाय बताये गये हैं उनमें प्रपत्ति (शरणागति) अन्तिम उपाय है। भगवान पशुपतिकी शरणमें जानेपर जब उनका नैसर्गिक प्रसाद मिलने लगता है तब जीव इस क्लेशसे भरे हुए संसारसे सर्वदाके लिये मुक्त हो जाता है।

यह दुःखान्त दो प्रकारका होता है। (१) अनात्मक और (२) सात्मक। अनात्मक दुःखान्तमें दुःखोंकी केवल आत्यन्तिक पूर्ण मात्र निवृत्ति होती है किन्तु सात्मक दुःखान्तमें परम ऐश्वर्य भी प्राप्त होता है और दृक् शक्ति (त्रिकाल दर्शनकी शक्ति) और क्रिया-शक्तिका उदय होता है। वह मुक्तात्मा सूक्ष्म व्यवहित और विप्रकृष्ट (दूरके पदार्थोंका ज्ञान प्राप्त कर लेता है। इस शक्तिको दर्शन कहते हैं। उसे संसार भरके सब शब्दोंका ज्ञान हो जाता है, जिसे श्रवण कहते हैं। चिन्तित विषयोंकी सिद्धि हो जाती है, जिसे मनन कहते हैं। सब शास्त्रोंके विषयों और उनके अर्थोंका परिज्ञान हो जाता है, जिसे विज्ञान कहते है और सर्वज्ञता स्वतः सिद्ध हो जाती है। इस प्रकार यह दृक्शक्ति पाँच प्रकार की होती है।

क्रिया शक्ति तीन प्रकारकी होती है। (१) मनोजवित्व—किसी कार्यको मनकी गतिके समान तत्काल कर सकनेका सामर्थ्य। (२) कामरूपित्व—इच्छाके अनुसार जैसा चाहे वैसा रूप धारण करनेकी शक्ति और (३) विकरण धर्मित्व—

इन्द्रियोंकी सहायताके बिना ही सब पदार्थोंका जानना और करना अर्थात् निरतिशय ऐश्वर्यका लाभ। अन्य सब दर्शनोंमें कार्य जितना होता है, वह उत्पत्ति और विनाश-शील होता है तथा कारण अन्य सापेक्ष रहता है, परन्तु पाशुपत-मतमें पशु आदि कार्य भी नित्य हैं और कारण केवल निरपेक्ष भगवान ही है। अन्य दर्शनोंमें विधिका फल यह है कि पुनरावृत्तिके साथ स्वर्ग प्राप्त होता है किन्तु पाशुपत-विधिका फल है पुनरावृत्ति रहित भगवान महेश्वरका सान्निध्य।

कापालिक और कालमुख

कापालिक और कालमुख-सम्प्रदायोंका इस समय न तो कहीं प्रचार है, न अस्तित्व ही है, किन्तु भारतमें किसी समय सम्भवतः ३री शताब्दीसे ८वीं शताब्दी तक इनका बड़ा व्यापक प्रचार था। सम्भवतः मुसलमानोंके शासन कालतकमें व्यापक इनका सम्प्रदाय चलता रहा। यामुनाचार्यने आगम प्रमाण्यमें इनका संक्षिप्त परिचय देते हुये बताया है कि कापालिकोंके मतानुसार निम्नांकित ६ मुद्रायें धारण करनेसे अपवर्ग या मोक्ष प्राप्त हो जाता है—

कर्णिका, रूचक, कुण्डल, शिखामणि, भस्म और यज्ञोपवीत। इन मुद्राओंके धारणके साथ-साथ अनेक प्रकारकी गुप्त क्रियायें की जाती थीं। कालमुख-सम्प्रदायके लोग कपाल पात्रमें भोजन, शरीरपर शव-भस्मका लेपन (शव-भस्म-स्नान) शव भस्मका प्राशन, लगुड धारण और सुराकुम्भका स्थापन आदि अनेक विधियोंका अनुष्ठान करके अनेक दृष्ट और अदृष्ट सिद्धियाँ प्राप्त करते थे। ये लोग अपने आचार और अपनी विधियोंको इतना गुप्त रखते थे कि धीरे-धीरे उनकी लोकप्रियता समाप्त हो गयी और उनका रहस्य जाननेवाला भी कोई नहीं रहा है।

वीर शैव-सिद्धान्त

जैसे ब्रह्मसूत्र द्वारा प्रतिपादित वेदान्तके ही आधारपर केवलाद्वैत, विशिष्टाद्वैत, द्वैताद्वैत और अचिन्त्य भेदाभेद वाद है, उसी प्रकार वीर शैव या शक्ति विशिष्टाद्वैत सम्प्रदायका भी शैव-सम्प्रदायमें विशेष महत्त्व है। यह भी वेदान्तका ही प्रधान सम्प्रदाय माना जाता है। इसीलिये इसे शिवाद्वैत, वीर शैव, विशेषाद्वैत या शक्ति विशिष्टाद्वैत अथवा द्वैताद्वैत भी कहते हैं। परन्तु इसका प्रधान नाम वीर शैव या शक्ति विशिष्टाद्वैत ही है। शङ्कराचार्यका केवलाद्वैत मार्ग त्याग प्रधान है इसमें कर्मसे उपरत (निवृत्त) करके ब्रह्मवादकी स्थापना की गई है। किन्तु शक्ति विशिष्टाद्वैत सिद्धांत तो पूर्णतः कर्म प्रधान है। इस सिद्धान्तके अनुसार निष्काम कर्मका मार्ग प्रशस्त किया गया है। इसलिये इसे वीर-धर्म या वीर-मार्ग भी कहते हैं। इस सम्प्रदायके प्रधान देवता शिव हैं। इसलिये इस मतका नाम वीर-शैव पड़ा। इसे शक्ति विशिष्टाद्वैत इसलिये कहते हैं कि इसमें शक्ति विशिष्ट जीव और शक्ति विशिष्ट शिव दोनोंका सामरस्य या एकात्म्य प्रतिपादित किया गया है। स्थूलचिद चिदात्मक शक्ति विशिष्ट जीव और सूक्ष्म चिदचिदात्मक शिव इन दोनोंका अद्वैत या एकात्म होना ही शक्ति विशिष्टाद्वैत कहलाता है।

शक्ति—शक्ति विशिष्टा द्वैतमें शक्तिके दो भेद माने गये हैं। सूक्ष्म चिदचिद विशिष्ट शक्ति और स्थूल चिद-चिद विशिष्ट शक्ति। इनमेंसे प्रथमको शिव और द्वितीयको जीव माना गया है। शक्ति और शिवमें अभिन्न सम्बन्ध है। यह शक्ति परशिव ब्रह्ममें अत्यन्त गुप्त रीतिसे बनी रहती है।

वीर शैव-सिद्धांतमें शिव और शक्तिमें ऐसा अविनाभाव (समवाय) सम्बन्ध है जैसे सूर्यमें प्रकाशका और चन्द्रमामें चन्द्रिकाका है अर्थात् जो एक दूसरेसे अलग नहीं किये जा सकते। इसीलिये इस मतमें ब्रह्म और शक्तिका नित्य सम्ब्रन्ध माना गया है। जो परब्रह्मनिष्ठ चित्‌शक्ति है वह सर्वज्ञतामयी है और जो सूक्ष्म अचित शक्ति है, उसमें सर्वकर्तृत्व शक्ति है। इन दोनों शक्तियोंको आश्रय देनेवाली जो इच्छाशक्ति है, वह विमर्श-शक्ति कही जाती है। यही चराचरात्मक विमर्श-शक्ति ही सत्व, रज और तमोगुणसे युक्त रहती है। तमोगुण शक्ति ही जड़माया कहलाती है। शिवकी विमर्श-शक्ति ही (इच्छाशक्ति) जड़माया शक्तिमें प्रतिस्फुरण गतिसे प्रवेश करके सुख-दु:ख और मोह उत्पन्न करनेवाली त्रिगुणात्मिका प्रकृति कहलाती है, जिसे वीर शैवाचार्योंने चित्त कहा है। यही चित्तशक्ति विशिष्ट शिव प्रकाश रूप शिवांश ही जीव कहलाता है। वीर शैव मतके अनुसार शक्तिका यही स्वरूप है।

वीर शैव मतके अनुसार यह जगत् सत्य है। यह शांकर अद्वैत मतके 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या'से मेल नहीं खाता। इसके अनुसार ब्रह्म (शिव) के साथ ही जगत् भी सत्य माना गया है और जीवको शिवांशके रूपमें ही माना गया है।

शिवतत्त्व—सच्चिदानन्द स्वरूप सत्य नित्य आदन्तरहित और सर्वशक्ति समन्वित उस चिरशिव ब्रह्ममें अविनाभाव सम्बन्धसे विद्यमान रहनेवाली विमर्श शक्तिका स्फुरण छत्तीस तत्त्वोंके रूपमें होता है, जिनमेंसे मुख्य हैं—शिव, शक्ति, सदाशिव, ईश्वर, माया, विद्या, पुरुष, प्रकृति, मन और अहंकार। परशिव जब ज्ञानशक्तिसे एकात्म होकर 'मैं सर्वज्ञ हूँ', ऐसा अभिमान करने लगता है तब उसे शिवतत्त्व कहते हैं। पर शिव जब क्रियाशक्तिमें लीन होकर 'मैं सर्व कर्ता हूँ' यह अभिमान करने लगते हैं तब वह शक्ति कहलाती है। इसी प्रकार परशिव जिस शक्तिके साथ योग करता है, उस-उसके अनुसार भिन्न-भिन्न तत्त्वोंकी उत्पत्ति होती है।

वीर शैव-सिद्धान्तमें परशिव ब्रह्मको स्थल कहा गया है अर्थात् वह ब्रह्म जिसमें चराचर जगत्‌की उत्पत्ति और लय होता है। इस स्थलरूपी परशिवको लीलाके अनुसार अङ्गस्थल और लिङ्गस्थल कहते हैं। इन लिङ्गस्थल और अङ्गस्थलके भी तीन-तीन भेद होते हैं। यद्यपि इन विभिन्न अंग और लिङ्गोंकी सत्ता भिन्न-भिन्न दिखाई देती है, परन्तु अन्तमें शुद्धात्मा अङ्ग नामक जीवका लिङ्ग नामक जीवमें सामरस्य प्राप्त कर लेना ही लिङ्गाङ्ग सामरस्य कहलाता है। यही शिव तथा जीवका ऐक्य और शक्ति विशिष्टाद्वैत सबका सार है और यह मत दार्शनिक दृष्टिसे भेदाभेद विशिष्टाद्वैत या शक्ति विशिष्टाद्वैत कहलाता है।

शैवोंका सिद्धान्त (मत)—शैव-सिद्धान्त दार्शनिक दृष्टिसे भेद प्रधान है। क्योंकि इसमें शिव, शक्ति और विन्दु—ये तीन रत्न माने जाते हैं। ये तीन रत्न (रत्नमय) ही समस्त तत्त्वोंके अधिष्ठाता और उपादानके रूपमें प्रकाशमान होते हैं। शुद्ध तत्त्वमय शुद्ध जगत्के कर्त्ता शिव, करणशक्ति तथा विन्दु हैं। पाञ्चराम आगममें जिसे विशुद्ध तत्त्व कहा गया है वही विन्दु है। उसीको महामाया कहा गया है। यह विन्दु ही शब्द, ब्रह्म, कुण्डलिनी, विद्या, शक्ति और व्योम इन विचित्र भुवन तथा योग्य रूपमें परिणत होकर शुद्ध जगत्की सृष्टि करता है। क्षुब्ध होनेपर इस विन्दुसे एक ओर तो शुद्ध देह, इन्द्रिय-भोग और भुवनकी उत्पत्ति होती है जिसे शुद्ध अध्वा कहते हैं और दूसरी ओर शब्दका उदय होता है। सूक्ष्म नाद अक्षर विन्दु और वर्णभेद शब्द तीन प्रकारका होता है। इनका कारण भूतविन्दु जड़ होनेपर भी शुद्ध है।

शिवकी दो शक्तियाँ मानी गयी हैं—समवायिनी और परिग्रहरूपा। समवायिनीशक्ति चिद्रूपा, निर्विकारा और परिणामिनी है जिसे शक्तितत्त्व कहते हैं। यह शक्तितत्त्व परमशिवमें नित्य समवेत भावसे रहती है। शिव और शक्तिका सम्बन्ध तादात्म्य सम्बन्ध होता है। जिसके कारण ही शक्ति ही शिवकी स्वरूपशक्ति बन जाती है। दूसरी परिग्रह शक्ति अचेतन और परिणाम-शालिनी है। यही शक्ति विन्दु कहलाती है, जिसके दो रूप होते हैं—शुद्ध और अशुद्ध। शुद्ध विन्दुका नाम महामाया और अशुद्धका नाम माया है। दोनोंमें यही अन्तर है कि महामाया तो सात्त्विक जगत् (शुद्ध अध्वा) उत्पन्न करती है और माया इस प्राकृत जगत् (अशुद्ध अध्वा) की जननी है। मायाके क्षोभ होनेसे अशुद्ध प्राकृत जगत् (मायाध्वा) की उत्पत्ति होती है।

कौलदर्शन (शाक्तदर्शन)—कौलदर्शन अत्यन्त प्राचीन माना जाता है। सत्ययुगमें खगेन्द्र नामक आचार्य कौलधर्मके व्याख्याता हुए। इसी प्रकार त्रेतामें कूर्म, द्वापरमें मेष और कलियुगमें मच्छन्द्र या मत्स्येन्द्र (मीनानाथ) कौलधर्मके प्रति-ष्ठापक हुए। शैव-तन्त्रके इतिहासमें यह प्रसिद्ध है कि श्रीकण्ठने त्र्यम्बक, मर्दक और श्रीनाथ नामक सिद्धोंको शैव मतके अद्वैत, द्वैत तथा द्वैताद्वैत रूपको क्रमशः प्रवर्तित करनेका आदेश दिया। त्र्यम्बकके दौहित्र मच्छन्द्र या मीनानाथने इस चतुर्थ तान्त्रिक-सम्प्रदायकी प्रतिष्ठा की, इसीलिए इसका नाम अर्धत्र्यम्बकमठिका (सम्प्रदाय) पड़ा।

अभिनवगुप्तने अपने तन्त्रालोकके आह्निकमें अपने कौलगुरु शम्भुनाथका उल्लेख किया है। इसका अर्थ यह है कि काश्मीरमें भी कौल-मतका पर्याप्त प्रचार था। अभिनवगुप्तने जालन्धर जाकर अपने गुरु शम्भुनाथसे तान्त्रिक विद्याका रहस्य प्राप्त किया था। अभिनवगुप्तके दादा गुरु उत्पलदेवके गुरु सोमानन्दने इस मतके प्रतिपादक परात्रिंशिकापर टीका लिखकर काश्मीरमें कौल-मतके प्रचलनको प्रमाणित कर दिया।

अभिनवगुप्तने स्पष्ट कहा है कि प्रत्यभिज्ञायतमें तो प्रत्यभिज्ञाया अनुयायके द्वारा (शिवोऽहं यह अनुभव कर लेनेपर) मोक्ष प्राप्त होता है किन्तु कौलमतमें

शाम्भ उपायसे मोक्ष प्राप्त होता है। स्थूल रूपसे कहा जा सकता है कि तीसरी शताब्दीमें मत्स्येन्द्रनाथके समय ही उत्तर भारतमें कौलमतका प्रचार हुआ।

कुल और कौल—कुलकी उपासनाके कारण ही इस तन्त्रको कौलतन्त्र कहते हैं। कुलका अर्थ है :—

१—परमेश्वरकी सर्वोर्ध्ववर्तिनी स्वातन्त्र-शक्ति।

२—शिव तथा शक्तिका सामरस्य रूप संयोग।

३—नित्यानामक शक्ति।

४—वह परत्व जो शिव-शक्ति आदि समग्र पदार्थोंको आभासित करता है। जिसमें यह विश्व अवस्थित रहता है और अन्तमें जिसमें लीन हो जाता है।

आचार्योंका मत है कि इसी अन्तिम अर्थमें ही कुलकी उपासनाके कारण यह कौल तन्त्र प्रख्यात हुआ। इस कुल मार्गको ऊर्ध्वाम्नाय भी कहते हैं, क्योंकि यह शिवके पाँच मुखोंमें ऊर्ध्वमुखसे उत्पन्न होनेवाले तन्त्रपर आश्रित है। इसमें नियतिकी मर्यादाका भी अतिक्रमण होता है, इसलिए यह ऊर्ध्वाम्नाय कहलाता है।

कुलाचार—पञ्चमकारका प्रयोग करनेका वास्तविक अभिप्राय न समझ सकनेके कारण आचारकी बड़ी आलोचना हुई है। साधारण मनुष्य इस आचारका अधिकारी नहीं होता। केवल निर्विकल्प दशाकी पराकाष्ठामें पहुँचा हुआ साधक ही, अथवा राजयोगमें सिद्ध व्यक्ति इसका अधिकारी होता है। राजयोग और हठयोगमें थोड़ा-सा भेद है। हठयोगके अनुसार तो मन प्राणके अधीन रहता है किन्तु राजयोगके अनुसार प्राण मनके अधीन होता है। मध्यनाड़ीमें मनके प्रवेश करनेपर प्राण स्वयं उसका अनुगमन करते हैं। जिसे ऐसी सिद्धि प्राप्त हो जाय वह राजयोगी ही इस आचारका अधिकारी होता है। जो परतत्त्वका ज्ञाता हो, जिसने आगम शास्त्रोंका अध्ययन किया हो और जो काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, राग, द्वेष आदि भौतिक विकारोंसे पूर्णतः मुक्त हो।

कुलार्णव तन्त्रमें कौल आचारका विवेचन करते हुए लिखा गया है कि धार्मिक कृत्योंसे बाहर मद्य पीना, सूँघना और दर्शन भी निषिद्ध है और इसके लिए प्रायश्चित भी है। विशेष अवस्थाओंमें अर्थात् मनकी स्थिरताके लिए, मन्त्रार्थके स्फुरणके लिए और भवपाशकी मुक्तिके लिये मद्यपान विहित है।

कौलदर्शन—कौलदर्शनमें संवितको परतत्त्व माना गया है और यह ३७वाँ तत्त्व माना जाता है, क्योंकि यह ३६ तत्त्वोंके ही प्रश्रणका कारण नहीं है वरन् आदिम दो तत्त्व प्रकाश और विमर्शके रूपमें स्वीकृत वास्तवमें यह तत्त्व सच्चिदानन्द ब्रह्मसे अभिन्न तत्त्व है। कौल-मतमें इस संवित तत्त्वको महात्रिपुर सुन्दरी नाम दिया हुआ है। इसलिए यह परासंवित ही परब्रह्म स्वरूपिणी है। यह परमाशक्ति है तो एक रूपा ही, किन्तु बीजकी उच्छून दशामें ज्ञान, क्रिया तथा इच्छा नामक तीन बिन्दुओंमें बाहर प्रकट होनेके कारण यह त्रिपुरी कहलाती है।

श्रीचक्र—त्रिपुराकी उपासनाका श्री चक्र ही त्रिपुराका प्रतिनिधि या ललिताका प्रतिनिधि माना जाता है। पच्चीस शालाओंसे युक्त इस चक्रके मध्यमें चिन्तामणि गृह ही भगवती ललिता या त्रिपुराका प्रसाद है। सोलह आवरणोंके कारण यह गृह कमलके समान प्रतीत होता है। इसके मध्यमें विन्दुपीठ या ललिताका सिंहासन है, जो श्री पीठ, महापीठ, विद्यापीठ और आनन्द पीठ कहलाता है। वहाँ एक दिव्य पर्यङ्क है, जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर और ईश्वर ये चारों देव पायेका काम करते हैं। इस पर्यङ्कके फलक स्वयं सदाशिव हैं, जिसपर कामेश्वरी, ललिता या त्रिपुराके साथ कामेश्वर गाढ़ालिंगनमें शयन करते हैं।

अनुत्तर तत्त्व—कुल दर्शनमें अनुत्तर नामक तत्त्व माना गया है, जो प्रत्यभिज्ञा दर्शनके ३६ तत्त्वोंसे भिन्न है। अनुत्तरका अर्थ है जिससे उत्तर (अधिक) किसी तत्त्वकी सत्ता न हो। इसकी शक्तिका नाम है अनुत्तरा, जिसे कौलिकी शक्ति भी कहते हैं। इसी शक्तिसे अन्तःकरण आदि षोडश कलाओंका उदय होता है।

कामेश्वर और कामेश्वरीके सामरस्य रूपको त्रिपुरा मतमें सुन्दरी या त्रिपुरा सुन्दरी कहते हैं। यह त्रिपुरा ही सकल अधिष्ठानरूपा, सत्यरूपा समानाधिकवर्जिता, सच्चिदानन्दा, समरसा, सर्ववेदान्त तात्पर्य भूमि श्रीललिताम्बिका हैं। इस सुन्दरीके उपासक चन्द्र रूपमें इसकी उपासना करते हैं। जैसे चन्द्रमाकी सोलह कलाएँ होती हैं, इसी प्रकार इनकी सोलह कलाएँ नित्य हैं और नित्याषोडशिका कहलाती हैं। इनमेंसे पहलीसे पन्द्रहतककी कलाओंका उदय-अस्त होता रहता है, किन्तु षोडशो कला सदानित्य हैं और यही अमृताकला कहलाती है, जिसे वैयाकरण लोग पश्यन्ती वाणी कहते हैं। यही षोडशी महा त्रिपुर सुन्दरी ललिता ही सौन्दर्य और आनन्दका परमधाम है और इसीको अद्वैत-भावनासे श्रीविद्याके उपासक उपासना करते हैं। पूषा, यशा, सुमनसा, रति, प्राप्ति, धृति, ऋद्धि, सौम्या, मरिचि, अंशुमालिनी, अंगिरा, शशिनी, छाया, संपूर्णमण्डला, तुष्टि और अमृता—ये चन्द्रमाकी सोलह कलाएँ हैं।

शैव और शाक्त दर्शनोंका सूक्ष्म अध्ययन और अनुशीलन करनेपर यह स्पष्ट हो जाता है कि अघोर-पंथमें जो अनेक प्रकारके आचार और दार्शनिक तत्त्व विद्यमान हैं, उन सबके मूल सूत्र शैव और शाक्त तन्त्रोंमें कहीं-न-कहीं अवश्य प्राप्त हो जाते हैं। इतना ही नहीं जिन अनेक साधनाओंका विचार शैव और शाक्त दर्शनमें किया गया है, उन सबका किसी-न-किसी रूपमें पर्यवसान अघोर-पंथमें प्राप्त हो ही जाता है। इसलिए अघोर-पंथका मूलस्रोत इन दर्शनोंमें ढूँढ़ लेनेसे अघोर-पंथका रूप स्पष्टतः अत्यन्त प्राचीन सिद्ध हो जाता है।



रुद्राक्ष ५

अघोर–साधना

अघोर-साधनाकी प्राचीनताका वर्णन आप पढ़ चुके हैं। प्रस्तुत अध्यायमें आपको इतिहास, साहित्य और अन्य विवरणोंके द्वारा अघोर-साधनाका परिचय दिया जा रहा है। यद्यपि अघोर-साधना ईसाके पूर्व कालसे ही चली आ रही है, किन्तु जैसा सर्वविदित है जिस रूपमें अन्य देशोंमें तिथि-क्रम और घटना क्रमके अनुसार लिखित इतिहास प्राप्त है, वैसा इतिहास हमारे यहाँ सुलभ नहीं है।

अन्य साधना-पन्थों और सम्प्रदायोंके समान ही भारतमें अघोर-पन्थियोंके भी कई प्रसिद्ध केन्द्र थे जिन्हें 'स्थल' कहते हैं। इनमेंसे प्रसिद्ध स्थल पश्चिम भारतमें आबू पर्वत और गिरनार, पूर्व भारतमें बोधगया तथा असमके कई स्थानोंमें, मध्य आर्यावर्तमें काशी तथा सिन्धमें हिंगलाजमें विद्यमान हैं। इनका बहुत बड़ा केन्द्र बड़ोदामें था किन्तु पिछले कई दशकोंसे वह निर्जन हो गया है। वहाँ अघोरेश्वरका मन्दिर भी था और वहाँ अघोराचार्य नामके अघोर-पन्थी महन्थ भी थे। इस सम्प्रदायकी प्राचीनताका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि अरस्तू जैसे दार्शनिक, प्लिनी तथा मार्कोपोलो जैसे विश्व यात्रियोंने अघोर-पन्थियोंके केन्द्रोंका यत्र-तत्र उल्लेख किया है। ईरान देशमें भी इनके केन्द्र विद्यमान थे, क्योंकि एक समय वह प्रदेश भारत का अंग था और शैव-धर्म उस समयका सबसे प्राचीन और व्यापक धर्म था। इसलिए यह कोई आश्चर्यकी बात नहीं कि अघोरी-शैव अपनी साधना, अपने सिद्धांत तथा अपने सम्प्रदायके साथ सुदूर पूर्वसे लेकर सुदूर पश्चिम तक फैले हुए थे। इनमें केवल पुरुष अघोरी साधु ही नहीं वरन् अघोरिनें भी रहती थीं, जो दल बाँध-बाँधकर भारतमें स्थान-स्थानपर घूमा करती थीं। इनके जो विवरण मिलते हैं उनके अनुसार ये अघोरिनें सिरपर जटा बढ़ाये और फैलाये, गलेमें अनेक प्रकारकी पत्थर और स्फटिककी मालाएँ लटकाये, कमरमें घाघरा बाँधे और हाथमें त्रिशूल लिये रहती थीं। मद्रास नगरका सबसे बड़ा शिवमन्दिर कपालेश्वर का है जो कि सागर तटसे लगभग चार फर्लाङ्ग की दूरी पर है। जैसा कि इसके नामसे स्पष्ट है यह ब्रह्म निष्ठ (अघोरियों) का प्रधान स्थल है। यहाँ की पूजामें अघोर-पद्धति ही अपनायी जाती है और इस मन्दिरमें अघोरी-साधकोंकी समाधियाँ भी हैं। मन्दिरके प्रांगणमें एक अघोराचार्य की मुख्य समाधि है।

ह्वेनसांगने अघोरियोंका वर्णन करते हुए लिखा है कि अघोरी लोग नंगे रहते हैं, भभूत रमाते हैं और हड्डियों की माला पहनते हैं। उसने निग्रन्थ (नग्न) कपालधारियोंका भी उल्लेख किया है। भारतीय संस्कृत-साहित्यमें

अनेक काव्यों और नाटकोंमें कापालिकोंके अद्भुत वर्णन मिलते है। शंकर विजयमें आनन्दगिरिने कापालिकोंका वर्णन करते हुए लिखा है कि वे शरीरपर चिता भस्म रमाये रहते हैं, गलेमें खोपड़ियों की माला डाले रहते हैं, माथेपर काली रेखाका टीका लगाते हैं, कमरमें कभी-कभी व्याघ्रचर्म लपेटते हैं। बायें हाथमें कपाल और दाएँ हाथसे घण्टी बजाते हुए बार-बार "हे शम्भु, भैरव, कालिनाथ" आदि शिवके नामोंका उच्चारण करते रहते हैं।

जिस प्रकार अघोरियों का वर्णन प्राप्त होता है उसी प्रकार कापालिकोंका भी वर्णन मिलता है जो अपनी साधनाके लिए बलि भी देते थे। भवभूतिने अपने "मालती-माधव" में अघोर-घण्ट नामक एक इसी प्रकारके कापालिक का चित्रण किया है। प्रबोधचन्द्रोदयमें भी कापालिक-व्रतका उल्लेख प्राप्त है। सत्रहवीं शताब्दीके उत्तरार्धमें लिखे हुए 'दबिस्तां' नामक ग्रन्थमें ऐसे योगियोंकी चर्चा है जो महामांसका सेवन तो करते ही थे साथ ही और भी अभेध्य पदार्थोंका प्रयोग इस लिए करते थे कि उनसे अद्भुत दृष्टि प्राप्त होती है। बाणने अपने हर्ष चरितमें राजा पुष्पभूतिके साथ अघोरी भैरवाचार्यकी श्मशान-साधनाका अत्यन्त विशद वर्णन किया है, जिससे यह भी सिद्ध होता है कि तत्कालोन राज-सभाओंपर इनका बड़ा प्रभाव था। कर्नल टॉडने भी अपनी पुस्तक पश्चिम भारतकी यात्रामें (Travels in western India) आबू पर्वतपर अवस्थित अघोरियोंकी टोलीका वर्णन किया है।

वैदिक यज्ञोंमें भी नरमेध वेदी आदिका वर्णन है। कौशाम्बीकी खुदाईमें मिली वेदोके नरमेधकी वेदी है ऐसा कुछ विद्वानोंका विचार है।

पिछली तीन शताब्दियोंसे अघोरियोंके जिस पन्थका व्यापक प्रचार हुआ वह बाबा किनाराम द्वारा प्रवर्तित अघोर-पन्थ है, जिसका केन्द्र काशी है। इसी कारण इस सम्प्रदायके अघोर-पन्थियोंको किनारामी भी कहा जाता है। उनकी वृत्ति इतनी उच्च हुई रहती है कि वे जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति अवस्थासे ऊपर उठकर केवल तुरीय अवस्थामें विचरते हैं, क्योंकि उनक लक्ष्य ब्रह्म-चिन्तन और परानन्दकी अनुभूतिमात्र है। इन साधकोंने इतनी तितिक्षा सिद्ध करली है कि उनके लिये सुख-दुःख, शीत-उष्ण, भाव-अभाव, सब समान हो जाते हैं। इसी लिये वे साधक प्रायः नग्न और मौन रहते हैं। वे भिक्षाचरण भी नहीं करते। जो कुछ उनके शिष्य उन्हें ले जाकर पहुँचा देते हैं, वही ग्रहण करके तृप्त रहते हैं।

किनारामी पन्थमें दीक्षित मुण्डित-मस्तक मुड़ियोंको सरभंगी कहते हैं। सरभंगी और किनारामी दोनों ही महातत्त्वोंको भक्षण करते हैं, किन्तु केवल विरले अवसरोंपर ही इस प्रकारका आचार विहित समझते हैं।

वेदोंमें 'देवनांपुर अयोध्या' की बात कही गयी है। जिसका अर्थ है देवताओंकी नगरी, जो अजेय है और जिसमें सभी देवताओंके साथ देवाधिप शिव या रामभी रहते हैं। योगियोंने बतलाया है कि आठ चक्रवाली और नौ

द्वारों वाली शरीर-नगरी ही गो अर्थात् इन्द्रियोंकी अथवा देवताओंकी शाश्वत आवास-भूमि है। उसके बिना देवता प्रकट ही नहीं हो सकते हैं। इसलिए शरीर अयोध्या है और आत्मा इस पुरीका राजा शिव, इन्द्र, ब्रह्म या राम है। योगियोंके कामकी शिवपुरी यही है। यहीं मनरूपी मणिकर्णिका है और अन्तः करण रूपी ज्ञानवापी है जिसमें षड्रिपु रूपी म्लेच्छोंसे बचनेके लिए आत्मारूपी शिवका प्राकट्य हुआ है। यही मुक्ति भूमिकाशी है और यह पंचकोशी (अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनन्दमय) के बीच अवस्थित है। योगीजन इसी काशीमें सदा निवास करते हैं। शरीरमें मध्यदेश नितम्बको कहते हैं। दोनों नितम्बोंसे तिर्यक् 'ड'की आकृति बनती है, जिस प्रकार दोनों पसलियोंसे कलेजेके पास मनुष्य शरीरमें देवनागरी 'ल' की आकृति बनती है। मध्यमावाणी वहीं अवस्थित है और उसीसे जाप करना विहित बताया है। नितम्बको स्पर्श करके 'ड' की आराधना होनी चाहिए। यह अक्षर शिव तथा शिवा या कालीका स्वरूप और बीज मंत्र रूप है। मुखसे लेकर गुदातक एक ही महान् स्रोत है। अभेद-वृत्तिसे जिसने यह समझ लिया वही अघोरी है। वही दूसरोंके मनकी बात जान पाता है। उसीके पेटमें ज्योति (ज्ञान) पैदा हो सकती है। ज्ञान वह है जो शरीरके अलग-अलग विभाग करके देख लेता है। अघोरी अभेदवादी होता है। इसलिये उसमें घृणाभाव नहीं होता। वह ज्ञानी होता है।

अघोरी सिरपर नीला वस्त्र लपेटते हैं। शिव नील लोहित हैं और शिरको ईशान कहा जाता है। इसलिए इष्ट रूप प्राप्तिके लिए वे उक्त वस्त्र धारण करते हैं। रसायन-क्रियाका भी अघोरीको ज्ञान रहता है। अघोर-क्रिया रूपान्तर करनेकी ही क्रिया है। इसलिए वह दुर्गंधको सुगंधमें बदल सकता है। अघोरियोंके मल-मूत्रसे सुगंध आनेका यही रहस्य है।

मंत्र-चैतन्यके बिना दीक्षा फलवती नहीं होती है। गुरु जब अपनी चेतना-शक्तिके साथ शिष्यकी चेतना-शक्तिका तार जोड़ देता है इसे मंत्र देना या दीक्षा देना कहते हैं। "अघोरान्ना परो मंत्रः" कथनका यही अभिप्राय हैं कि जब सिद्ध गुरुसे चैतन्य मंत्रकी दीक्षा मिल जाती है तो शिष्य कृतार्थहो जाता है और उसको पूर्ण सिद्धि केवल समय मात्रकी अपेक्षा रखती है।

औघड़ भगवान रामजीने अघोर-क्रियाओं, साधनाओंकी तुलना एक वैज्ञानिक परीक्षणसे करते हुएकहा है कि मैंने मेक्सिकोकी यात्रामें उस नगरके प्रमुख गिरजाघरको देखा जिसकी वेदी पर नर-कपाल रक्खा था। अन्य देशोंमें भी उन सभी अघोर-पूजा अवयवोंका उपयोग या उन क्रियाओंमें रत लोगों को मैंने पाया। अतः मेरे मतसे अघोर एक सार्वभौम पंथ या क्रिया है। अन्तर यह है कि पाश्चात्य देशोंमें साधकोंकी वेश-भूषा भद्र पुरुष जैसी होती है और समाजमें उन लोगोंके प्रति घृणा, शंका या अविश्वासका भाव कहीं भी नहीं होता। सामाजिक स्वीकृतिके कारण वे लोग बड़ी सुविधासे दिव्य भवनों, होटलके कमरों

पूजागृहों अथवा अन्य सुविधाजनक स्थानोंमें अपनी क्रियाओं द्वारा परीक्षण करके, उन्नति करते जा रहे हैं।

"भारतमें इस मतके अनुयायी समाजसे दूर रहते आए हैं। अतः उनकी साधन-स्थली खण्डहर, शून्य स्थान या अन्य जन-सम्पर्क वर्जित, स्थल हुए हैं; यहाँ तककि श्मशानको साधना-स्थल बनानेका मर्म भी यही है कि जन साधारण अत्य आवश्यक होने पर ही कभी कभी वहाँ जा निकलते हैं, अन्यथा सामान्यतःवे स्थान जन शून्य होते हैं। वहीं साधकोंने रस-क्रियाओंकी परोक्षण द्वारा सिद्धिकी है।

कहावत है कि 'औघड़के नौ घर बिगड़े तो शव-घर।' किसी भी साधनोंमें पूर्ण इन्द्रिय-जय अथवा मनोविकारोंका जय करना प्राथमिक आवश्यकता है। यह शरीर अथवा पिण्ड नव द्वारों वाला घर है। इसे वशमें करने पर साधक आध्यात्मिक उन्नतिकी ओर तीव्रगतिसे अग्रसर होने लगता है। बहुधा यह शरीर जय या नौघरको वशमें लानेमें असफल होनेपर एक दूसरे उपायका अवलम्बन लेता है, जो कठिन अवश्य है किन्तु सिद्धि-प्रद है। यही अभिप्राय बिगड़े पर शव-घर या श्मशानके संकेतमें है। साधकको इन्द्रिय-जयके लिए ही श्मशान साधना या शव-साधनामें भी प्रवृत्त होना पड़ता है, किन्तु औघड़ोंके लिए ये साधनाएँ अनिवार्य नहीं हैं।

डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारीने 'संतमत का सरभंग-सम्प्रदाय' नामक अपनी पुस्तकमें औघड़ोंकी निम्नलिखित क्रियाओंकी व्याख्या इस प्रकारकी है—

"महातत्त्व-मांसका भक्षण और बलिका सम्बन्ध मुख्यतः तांत्रिक विधियोंसे माना जाता है, जिनमें काली, दुर्गा, चामुण्डा आदि रूपोंमें शक्तिकी पूजा होती है। अनुमानतः तंत्राचारका आविर्भाव पूर्वी बंगाल अथवा आसाममें ५वीं शताब्दी (ईस्वी) में हुआ। कालिका पुराणमें बलिका विधान है और उसीके बदले आजकल कबूतर, बकरे और कभी-कभी भैंसेकी बलि चढ़ाई जाती है। अबभी आसामके कुछ अंचलोमें विधिवत् बलिकी प्रथा प्रचलित है। प्राचीन जातियोंमें कहीं-कहीं यह पाया जाता है कि जो जादू-टोना करने अथवा औषधि-उपचार करने वाले होते थे, वे स्वयं अग्राह्य या विषमय वस्तुओंको ग्रहण करते थे, जिससे कि जन सामान्य, उनमें अद्भुत शक्तिकी विद्यमानता स्वीकार करले। पाश्चात्य विद्वान् हेडनने प्राचीन टोरेस स्ट्रेट्स (तौरेस स्थलडमरूमध्य) के जादूगरोंके सम्बन्धमें कहा है कि वे हर प्रकारके घृणित तथा विषैले पदार्थ खा सकते थे। वे प्रायः शव-मांस खाते थे और अपने भोजनके साथ शवोंका रस मिलाते थे। इसका परिणाम यह होता था कि वे बावले हो जाते थे और घर-परिवारसे उनका सम्बन्ध टूट-सा जाता था। कॉड्रिङ्ग-टनके अनुसार मेलानीशियामें मांस-भक्षण द्वारा आध्यात्मिक उन्माद प्राप्त किया जाता है तथा समझा जाता है कि जिस शवको खाया जाता है, उसका प्रेत

खाने वालेके वशमें हो जाता है। मैक्डोनालने लिखा है कि यदि कोई प्रेत या डाइनके खाए हुए शव-भक्षण करे, तो वह स्वयं ही वैसी शक्तिवाला हो जाता है। वाएटू नामक नीग्रो जातियोंमें यह विश्वास है कि शव-भक्षणसे जादू-भरी शक्तियाँ प्राप्त होती हैं। उगाएडामें इस प्रकारके शव-भक्षकों को बासेजि कहा जाता है। आज भी मालाबारमें 'ओडी' नामके जादूगर इस उद्देश्यसे शव-भक्षण करते हैं कि उनमें असाधारण-शक्तिका समावेश हो।

नरकपालके पात्र—जिन नरमुण्डोंके पात्रोंमें भोजन तथा जलका सेवन किया जाता है उनमें असाधारण-शक्ति मानी जाती है। उदाहरणतः, पूर्वी अफ्रीकाकी वाडो जातिमें यह प्रथा है कि जब राजाका चुनाव होता है, तब किसी अपरिचितकी हत्याकी जाती है और निहत व्यक्तिकी खोपड़ीसे ही अभिषेकके समय जलपात्रका काम लिया जाता है। बागण्डाके राजाका नया पुरोहित भूतपूर्व पुरोहितकी खोपड़ीसे इस अभिप्रायसे पान करता है कि मृत पुरोहितका प्रेत उसमें समाविष्ट हो जाय। जुलू-जातिमें यह प्रथा है कि युद्ध-अभियानके अवसरपर दुश्मनकी खोपड़ीको पात्र बनाकर उससे सैनिकोंपर औषधि छिड़की जाती है। हिन्दुस्तान, अशएटी, आट्रेलिया, चीन, तिब्बत और निचले हिमालयमें खोपड़ोके अनेक पात्र मिले हैं। जिनका उल्लेख बालफरने किया है। कपाल-पात्रका उपयोग यूरोपमें भी होता था। पुराने जर्मनी और केल्टोमें इसका प्रचार था।

वैटिकन सिटीके धर्माचार्य रेवरेन्ड कोन सेतोने प्राण शून्य मानव शरीरका भक्षण धर्म विहित बताया है। इसकी पुष्टि दैनिक समाचार पत्र "जनवार्ता" वाराणसीके ३० दिसम्बर, १९७२ के अंकमें प्रकाशित समाचारसे होता है जो इस प्रकार हैं :—

वैटिकन सिटी २९ दिसम्बर :—कल वैटिकनके एक धर्म-शास्त्रीने बतायाकि आन्देस पर्वतपर ध्वस्त विमानके बचे लोगोंका नर-मांस भक्षण धर्मशास्त्र और नैतिकताकी दृष्टिसे उचित है।

धर्मशास्त्री गिनो केनसेतोने कहा कि जीनेके लिये प्राणशून्य मानव शरीरका आहार वैध है।

वैटिकनके दैनिक-पत्र ओसेबातोर रोमानोके विभागीय धर्मशास्त्री रेवरेण्ड कोनसेतोने एक वक्तव्यमें कहा है कि आन्देस शिखरके १९ जीवितोंकी स्थिति व्यग्र कर देने बाली है।

वस्त्र और वेश

अघोरीकी मुख्य विशेषता यह है कि वह अपने शरीरपर चिताकी भस्म रमाये रहता है। वह त्रिशूलकी छापा धारण करता है। जो ब्रह्मा, विष्णु और शिवके एकत्वके प्रतीक हैं। वह रुद्राक्षकी, सर्पकी हड्डियोंकी और बनैले सूअरके दाँतोंकी माला धारण करता है और हाथमें खोपड़ी लिए रहता है।"

अघोर-पन्थ

महानिर्वाणतंत्रमें चार प्रकारके अवधूत संन्यासियोंका विवरण प्राप्त होता है। ब्रह्मावधूत, शैवावधूत, वीरावधूत और कुलावधूत। जो ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य ब्रह्मके उपासक होते हैं, वे चाहे गृहस्थाश्रमी हों, चाहे संन्यासी हों, वे ब्रह्मावधूत कहलाते हैं। विधि पूर्वक पूर्णतः अभिषिक्त होने वाले संन्यासीको शैवावधूत कहते हैं। कुलाचारके अनुसार अभिषिक्त होकर जो साधक गृहस्थाश्रममें रहकर साधना करता है उसे कुलावधूत कहते हैं। वीरावधूतोंका वर्णन करते हुए कहा गया है कि उनके सिरपर लम्बे बिखरे उलझे हुए बाल फैले रहते हैं। इनमेंसे कोई रुद्राक्ष और कोई हड्डीकी माला पहिने रहता है, कोई नग्न रहता, कोई कौपीन पहने रहता। कोई शरीरपर भस्म रमाये रहता और कोई अपनी देहपर लाल चंदनका लेप किए रहता है। वे अपने हाथमें डण्डा, मृगचर्म, फरसा, खाटका पावा, डमरू या झाँझ लिए रहता है। इनमेंसे कोई-कोई गेरुआ वस्त्र भी पहिनते हैं किन्तु ये सभी वीरावधूत गाँजे व मदका सेवन अवश्य करते हैं।

शंकर दिग्विजयमें तीर्थ, आश्रम, बन, आरण्य, गिरि, पर्वत, सागर, सरस्वती, भारती और पुरी नामके दस प्रकारके अवधूतोंसे शैव अवधूतोंका कोई सम्बन्ध नहीं है।

रामानन्दके शिष्योंमें भी एक प्रकारके अवधूत होते हैं, जो प्रायः बंगालमें अधिक हैं। वे न तो कोई जाति भेद मानते, न तो इनके खान-पानका कोई नियम है। ये भी सिरके बाल बढ़ाये गलेमें स्फटिक आदि की माला पहने कमरमें कौपीन बाँधे, शरीर पर घज्जियों का कुर्ता डाले और हाथ में समुद्री नारियलकी किस्ती लिए रहते हैं और बड़े गंदे ढंगसे रहते हैं। बंगालके लोग इन्हें बाउल कहते हैं। बंगालमें स्थान-स्थानपर इनके अखाड़े हैं, जिनमें २-३ अवधूत और उनकी कई-कई दासियाँ रहती हैं। विचित्र बात है कि ये अपने हाथमें गोपी-यंत्र और एकतारा आदिके समान वाद्य-यंत्र लेकर भिक्षा माँगते हुए किसी भी गृहस्थ के द्वारपर पहुँचकर वीर अवधूतको स्मरण करते हैं और फिर बाजा बजाकर भिक्षा माँगते हैं। यह संभव है कि पहले इनका सम्बन्ध शैव-संप्रदायके वीर अवधूतोंसे रहा हो।

वीर अवधूतोंके जो लक्षण बताये गये हैं, वे सभी अघोर या औघड़ संप्रदायके साधुओंपर पूर्णतः लागू हो जाते हैं।

औघड़ोंके दो घराने प्रसिद्ध हैं—हिमाली और गिरनाली। भगवान शंकरका निवास-स्थान होनेसे हिमालयको अघोर-मतका उद्गम माना गया है। एक विद्वानने लिखा है कि औघड़ोंमें यह सामान्य धारणा है कि उनके मतके प्रवर्त्तक गोरखनाथ थे। यह हिमाली घराना है। अघोर-साधना सद्गृहस्थों द्वाराकी जा चुके इसलिए हिमालयकी पुत्री श्री पार्वतीजीसे विवाह कर आदर्श गृहस्थ-जीवन

बिताते हुए भगवान शिवने इस अभेद-उपासना का अत्यन्त उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसलिए इस परम्पराके अन्तर्गत अघोर-साधकोंका एक दल हिमालयसे अपनी परम्परा जोड़ते हुए अपनेको हिमाली घोषित करता है। एक कारण यह भी हो सकता है कि तन्त्र-प्रधान तिब्बतमें इस सम्प्रदायका जन्म हुआ हो और बौद्ध-धर्मकी अवनति होनेपर इस मतके प्रचारक वहींसे मैदानोंकी ओर अग्रसर हुए हों, जिससे इन साधकोंको हिमाली कहा गया हो। गोरक्ष देश नेपालमें श्री गोरखनाथ का प्रभाव अत्यधिक था। कालान्तरमें इस मतवाले ही अघोर-उपासना करते हुए मैदानोंमें आये। ये हिमालय प्रदेशसे आ रहे थे इसी लिए हिमाली कहलाए।

अवधूत मतके दूसरे मान्य आचार्य दत्तात्रेय, मुनि अत्रि एवं अनसूयाके पुत्र रूपमें अवतरित हुए हैं। इनको भगवान विष्णुका अवतार माना गया है। विन्ध्यगिरिके दक्षिण भागमें इनका क्षेत्र है। त्रिपुरा–रहस्य तथा अन्य तान्त्रिक-ग्रन्थोंके अनुसार श्री परशुरामजी आप हीसे दीक्षा लेकर आत्मकालीकी उपासना करके सिद्धिको प्राप्त हुए थे। कलिके आरम्भमें प्रभास पत्तनके निकट यादवोंने परस्पर लड़ते हुए अपने कुलका संहार कर डाला था। सौराष्ट्र (वर्तमान गुजरात राज्य) के जूनागढ़में गिरनार पर्वतके निकट ही यह क्षेत्र है। इस क्षेत्रमें भयंकर संहार होनेके कारण यह एक महाश्मशान है। जहाँ सोमनाथ निवास करते हैं। अवधूत सन्त गिरनार पर्वतको परम पवित्र मानते हैं। गिरनार शिखर पर श्री दत्तकी पादुका तथा कमण्डलु तीर्थ है। उच्च संस्कार वाले साधक आज भी यहाँ आकर श्रीदत्तका सम्पर्क पाते हैं। यहीं बाबा किनारामजीको अघोरी-वेशमें मिलकर श्रीदत्तने दीक्षा देकर कृतार्थ किया था। यहीं पूज्य भगवान रामजीको श्रीदत्तका साक्षात्कार मिला। अतः गिरनारके श्रीदत्त स्थानकी परम्पराके औघड़ गिरनारी कहलाते हैं।

अघोरियों तथा कापालिकोंका विशद परिचय सोमनाथ म्यूजियम देखनेसे लगता है। यजुर्वेदमें "याते रुद्र शिवातनूरघोरा पापकाशिनी" के द्वारा शिवके शरीरको "अघोर" अथवा "सौम्य" की संज्ञा दी गई है। गिरनारके तीन शिखरोंके मध्यका अघोरी-शिखर है यह बात सर्व विदित है। यह प्रत्यक्ष है, और अनादि कालसे चला है। जैन प्रभावके पूर्व हीसे औघड़ टेकरो प्रसिद्ध था। इसलिए यह उनके प्रभावमें न आ सका। श्रीदत्तात्रेयजीके स्थानके प्रबन्धकोंका भी उसपर अधिकार नहीं है। जूना अर्थात् प्राचीन होता है। वह स्थान गिरनार या जूनाके साहित्यमें सर्वत्र उसकी चर्चा है। आज भी उस पर्वत पर जैन प्रभाव अधिक है, पहले और भी रहा होगा परन्तु पुराना होनेसे कोई न ले सका। वहाँके समाजमें प्रचलित है – 'दत्त गोरखकी एकहि माया बीचमें औघड़ आन समाया।'

'औघड़' शब्द 'अवघट' का अपभ्रंश कहा गया है। जिसका अर्थ हुआ टेढ़े रास्ते चलने वाला। वस्तुतः 'औघड़' शब्द 'अघोर' शब्दसे ही उत्पन्न है और

यह शैव-मतका एक मुख्य अंग है। अघटित घटनाको जो घटित बनादे वह औघड़ है। स्वयं शिवके विषयमें 'भाविहु मेट सकहिं त्रिपुरारी' प्रसिद्ध है। जो देखनेमें अमंगल रूप परन्तु परम मंगलकारी है वही शिव-स्वरूप है। "अमंगल्यं शीलं तव भवतु नामैवमखिलं तथापि स्मर्तृकं वरद परमं मंगलमसि।" औघड़ोंकी नग्नवत् स्थिति हाथमें कपाल तथा अंगमें भभूत देखने हीमें रौद्र या घोर है वह साधक परम सौम्य या अघोर है क्योंकि वह प्रणत-कल्पतरु है। 'भवअंग भूति मसानकी सुमिरत सुहावनी पावनी' यह मानसका प्रमाण है।

'सर साधे सरभंग कहावे' 'सर' स्वर या 'शर' का एक रूप है। शर कामके पाँचों वाण या पाँच संख्याका भी द्योतक है। शरका तात्पर्य जीव आत्माको विद्ध करने वाली पाँचो इन्द्रियोंसे भी है। तंत्र-शास्त्र तथा त्रिगुण दर्शनमें 'स्वर' इडा, पिंगला और सुषुम्ना इन तीन श्वाँस-प्रश्वाँसकी क्रियाओंको सूचित करता है। अतः सरभंग वह साधक अथवा संत है जो इन्द्रियों और उनकी वासनाओंको नियन्त्रण करे तथा जो योगकी प्रक्रियाओं द्वारा प्राणायामकी साधना और उनके द्वारा चित्तवृत्तिका निरोध करे। सन्तदरियाने 'सरवंग' शब्दका प्रयोग निर्गुणब्रह्म तथा संसारसे निर्लिप्त सन्तोंके लिए किया है। सर्वाङ्ग या 'सर्वम् अंगम् अस्य' अर्थात् सब कुछ जिसका अंग हो, जो सबके लिए समान रूपसे अंगीकरणीय हो वही सरभंग है। औघड़ भीख नहीं माँगता, भक्त लोग स्वयं आकर जो कुछ भी देते हैं, उसे वह ग्रहण कर लेता है। पंजाबमें 'सरभंग', मद्रासमें 'ब्रह्मनिष्ठ' बंगालमें 'अघोरी' तथा उत्तर प्रदेश एवं बिहारमें 'औघड़' नामसे एकही प्रकारके सन्तोंको पुकारा जाता है।

औघड़ोंको दो भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—'निरबानी' (निर्वाणी) और 'घरबारी'। बाबा किनारामजी तथा बिहारके बाबा भिनकराम दोनों निरबानी थे। निरबानी मतमें स्त्रियोंको स्थान नहीं हैं। साधु खेती-बारी भी नहीं करते और न भिक्षाटन करते हैं। भीखमरामने जो परम्परा चलाई, उसमें घरबारी हो सकते थे। बालखण्डी बाबाके मतमें भी माईराम होती हैं, जो घर-गृहस्थी भी चलाती हैं। सरभंग-मतके साधु तथा अनुयायी अपने नामके पीछे राम, दास, गोसाईं, सखी आदि जोड़ते हैं। यह स्पष्ट नहीं कि वे अलग-अलग शाखा अथवा सम्प्रदायके हैं या एकके। रामका उपपद अधिक प्रचलित है।

ऐसा लगता है कि निरबानियों पर वैष्णवोंकी गोप्य-पूजाका प्रभाव अधिक पड़ा और घरबारियों पर तान्त्रिक-शाक्तोंका। तन्त्र-साधनोंमें शक्तिके रूपमें नारीकी पूजाकी जाती है। अतः साधकके साथ एक नारीका होना आवश्यक हो जाता है। नारीके साथ का यह अर्थ नहीं कि यौन सम्बन्ध अवश्य हो। कन्या-पूजामें कन्या-शक्तिकी प्रतीक मानकर पूजी जाती है। तांत्रिकोंकी वाम मार्गी अथवा कौल-शाखामें यौन सम्बन्धका भी समावेश है।

किनारामी मिट्टीके पुरवों तथा थालीका प्रयोग खाने-पीनेके लिए करते हैं। ये आत्मारोपित निर्धनताके प्रतीक हैं। इनका वस्त्र सादा, गेरुआ, एकरंगा या खाकी रंगका होता है। किनारामी औघड़ लाल लंगोट, भूल (ढीला-लम्बा कुर्ता) लुंगी, चादर तथा कम्बलका प्रयोग करते हैं। कुछ हाथमें कंगन भी पहिनते हैं तथा शरीरमें भभूत लगाते हैं। कुछ केवल कोपीनधारी नग्नवत् भी होते हैं।

सरभंग-मतके लोग परस्पर 'बन्दगी' कहकर अभिवादन करते हैं, राम-राम' भी कहते हैं। भक्ष्याभक्ष्यका आरोप इनपर लगाया जाता है, परन्तु ये वस्तुतः समताको अपनाते हैं। ये उदार विचारके होते हैं। सदाचारका पूर्ण निर्वाह करते हैं और त्यागकी मानो प्रतिमूर्ति होते हैं। वे प्रायः मन्त्र आदि तथा जड़ी-बूटियोंसे रोगोंका उपचार करते हैं। जब कभी इन्हें जनताकी सेवाका अवसर मिलता है, ये उसमें प्रवृत्तहो जाते हैं। काशीके किनारामकी बहुत अधिक प्रसिद्धि है और उनके मठके प्रति लोगोंके हृदयमें सम्मानकी भावना है।

गुरुके निर्वाणके दिन भण्डारा दिया जाता है, जिसमें मांस, मदिरा, अन्न आदिका उपभोग होता है। इसके अतिरिक्त निश्चित तिथियों और स्थानों पर मेले लगते हैं। यथा-भाद्रपद शुक्ल षष्ठी (लोलार्क छठ) को वाराणसीके शिवाला मुहल्लेमें स्थित किनाराम स्थल पर मेला होता है। आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा (गुरु पूर्णिमा) को अवधूत भगवानरामजीके सर्वेश्वरी समूह कार्यालय पड़ावमें एक बड़ा मेला होता है, जिसमें सहस्रों नर-नारी उपस्थित होते हैं। यह उत्सव तीन-चार दिनों तक चलता है।

किनाराम स्थलका द्वार सभीके लिए समानरूपसे खुला है। वेश्याएँ भी इस सम्प्रदायकी शिष्या हैं। वे वर्षमें दो बार स्थलमें जाती हैं और भेंट चढ़ाती हैं। उनका विश्वास है कि ऐसा न करनेसे उनका गला खराब हो जायगा। मेलेमें साधु इकट्ठे होते हैं। महिलाएँ भी वरदान माँगने आती हैं। स्थलके क्रीं कुंड नामक तालाबमें स्नान करनेसे अनेक रोगोंसे छुटकारा होता है। अखण्ड धूनीकी भभूत लगानेसे सद्यः निर्मलता प्राप्त होती है। समाज तथा जातिसे च्युत व्यक्तियोंको भी यहाँ आदर दिया जाता है, क्योंकि ये उनके मसीहा हैं जिनका कोई न हो।

इसमतमें समाधि-पूजा प्रचलित है जिसकी निम्नांकित विधियाँ हैं—

(१) जमीनको चौखूँटा खोदकर सन्दूक-घर जैसा बनाया जाता है। चारों ओर पाये छोड़ दिए जाते हैं। शवको सन्दूकमें उत्तराभिमुख बैठाया जाता है। किवाड़ बन्दकर सन्दूक-सहित गढ़े पर पटरा रखकर ऊपर पक्का पाट दिया जाता है। उस पर मन्दिर या छतरी बना दी जाती है।

(२) जमीनको छाती भर गोलाकार खोदकर उसमें घर बनाया जाता है तथा उसमें बिछावन लगाया जाता है। उसमें शवको उत्तराभिमुख पल्थी मारकर बैठानेके बाद ऊपरसे पटरा रखकर गढेको मिट्टी नमक और कड़वी खलीसे भर

दिया जाता है। मस्तकके ऊपर गुम्बजाकार मिट्टी रखी जाती है। श्रद्धा तथा धनके अनुसार वहाँ मन्दिर आदि बनाया जाता है।

(३) गोल गढेमें माला पहना, भभूत लगा तथा शृङ्गारकर, पल्थी मारकर शवको उत्तराभिमुख बैठाया जाता है। ऊपरसे पटरा रखकर मिट्टी अथवा ईंटोंकी जुड़ाई की जाती है और पिंडी, मन्दिर या समाधिका निर्माण होता है।

सबसे ऊपरी हिस्सोंमें भगलिंग युक्त यन्त्र होता है। जिसे इस देशमें शिव लिंगके रूपमें पूजा जाता है। संभवतः कालान्तरमें यही यन्त्र इतना जागृत हो जाता है कि इसके पूजने, स्पर्श या आलिंगनसे हर इच्छाको पूरा करता है। काशीमें अौघड़ोंकी समाधि, मन्दिर या साधन-केन्द्र बन चुके हैं।

समाधिके आगे समाधिस्थकी प्रिय वस्तुएँ स्मारक रूपमें रख दी जाती हैं। उनकी पूजा भी होती है। प्रतिदिन समाधिपर धूप तथा दीप दिखाया जाता है। सभी खाद्य समाधि पर चढ़ाए जाते हैं। विशेष अवसरों पर मदिरा, मछली, माँस आदि भी चढ़ाये जाते हैं। कहीं-कहीं जलके अर्घ्यके साथ समाधि-प्रक्रिया भी की जाती है वर्षीके मेले भी समाधि पर लगते हैं, जब अन्य वस्तुओंके साथ गाँजेकी चिलम भी चढ़ाई जाती है। इस मतमें पितृ-पूजा या किसी अन्य देवी-देवताकी पूजा नहीं होती है। ये लोग निर्गुण उपासना के समर्थक हैं।

इनके पार्थिव शरीरकी समाधि तो देखनेमें ही होती है, किन्तु साधकोंसे विशेष बात यह मालूम हुई है कि ये पर्दाकर लेने पर कपाल खप्परमें सदा निवास करते हैं तथा साधक शिष्योंको सहयोग देते रहते हैं और विशेष समय पर दर्शन भी देते हैं। ब्रह्मांडमें जो घटित होता है उसका यन्त्रवत् संकेत भी दे देते हैं। इसके प्रमाण हमारे देशके साधकोंके यहाँ सैकड़ों पड़े हुए हैं और इन्हें भक्त-जन, शिष्यजन, साधकजन आकाश मण्डलमें विशेष पूजाकी पूर्वा (उपरान्त) में उनके संकेतोंका और उनका साक्षात्कार भी मिलता है। इसी दृष्टिसे जन समाजमें धारणा है कि इनको मुक्तिकी आवश्यकता नहीं होती, यह अज्ञानी कहता है। ये आत्मानन्दमें रहे ये देह-बुद्धिसे रहित होनेसे मुक्तिकी इन्हें आवश्यकता नहीं। इसी प्रमाणसे प्रमाणित होता है कि जो साधकके निकट मैंने सुनाकि ब्रह्मांड खप्पर या अन्तरिक्ष में महान् विभूतियोंका जमघटसा है, जहाँसे समय व काल पाकर उच्च कुल की वंश-परम्परा में जन्मने वाले बच्चेकी आत्माको लुप्त कर अपने प्रविष्ट हो जाते हैं जिन्हें ज्योतिषी और विद्वानोंने मीलों दूरवाली या नक्षत्र वाला कहते हैं अतः वही दिव्य आत्मा है जो ब्रह्माण्ड खप्पर में विचरता है।

अपने गुरुकी मूर्तिको ही पूजते हैं। प्रतिदिन स्नानके बाद वे गुरुकी समाधि पर पुष्प-माला चढ़ाते हैं। भोजन बन जाने पर समाधिके निकट आहुति देते हैं। पूजा सामग्रीमें मद्य-मांस भी रहता है। ये लोग आत्मानुभूति या ब्रह्मके साक्षात्कारमें रत रहते हैं। इनमें सद्गुरुका बड़ा महत्त्व है। ये वस्तुतः सद्गुरु को ही सत्पुरुषका पार्थिव प्रतीक मानते हैं। किसी अन्य प्रकारकी पूजा या नमाज ये नहीं करते हैं।

इनसाइक्लोपीडिया ऑफ रिलीजन एण्ड एथिक्स' में क्रूकने 'अघोरी' 'अघोरी पंथी' और 'औघड़' के सम्बन्धमें अनेक आधारों पर यह कहा है कि वे मरे हुए पशु तथा मनुष्यका माँस, आदि सब कुछ खाते हैं। इन्होंने इस प्रसंगमें 'किनाराम' 'किनारामी' तथा 'सरभंगी' मतोंकी चर्चाकी है और यह कहा है कि ये उन अघोरियोंसे बहुत भिन्नता रखते हैं, जिनके कृत्योंकी चर्चा उन्होंने विस्तारसे की है।

भाव चूड़ामणि तन्त्रमें कौल की जिस अद्वैत भावनाका परिचय निम्न पंक्तियोंमें दिया गया है वही अघोरीका सहज जीवन है।

कर्दमेचन्दनेऽभिन्नं पुत्रे शत्रौ तथा प्रिये।
श्मशाने भवने देवि! तथैवं काञ्चनेतृणे॥
'नभेदो यस्यदेवेशि! सकौलः परिकीर्तितः॥' भावचूड़ामणितन्त्र चन्दन और कीचड़, शत्रु और मित्र, श्मशान और भवन, सोना और तिनका, में जिसे भेद न हो, हे, देवियोंमें श्रेष्ठ अर्थात् पार्वती वह कौल है। इन पंक्तियोंको कहना-सुनना जितना सरल है व्यवहारमें उतारना उतना ही कठिन है। इसीलिए पाश-विमुक्त औघड़ ही इसका सच्चा उदाहरण प्रस्तुत करता है।

सिद्धान्त—प्रकरणमें जीव और शिवकी चर्चा है। उस सम्बन्धमें निम्न श्लोक द्रष्टव्य है :—

'घृणा शंका भयं लज्जा जुगुप्सा चैव पंचमी कुलं जातिं च शीलं च
अष्टौपाशाः प्रकीर्तितः।'

अर्थात् घृणा, शंका, भय, लज्जा, निन्दा, कुल-अभिमान, जाति-अभिमान और शील ये आठ पाश हैं।

आगे कहा है :—

"पाशबद्धो भवेज्जीवः पाशमुक्तः सदाशिवः।"

पाश से बँधा जीव और पाशमुक्त शिव है। अघोरी अपनी साधना की चरमावस्थामें शिव स्वरुप होता है। अतः वह बन्धन रहित आचरण भी करता है। विधि-निषेधकी सीमा साधारण जीवोंके लिए है, किन्तु जो गुणातीत अर्थात् सत, रज और तम इन तीनोंके परे हो जाता है उसपर विधि निषेधात्मक नियम लागू नहीं और उसके आचार-विचारको इसी दृष्टिसे देखना चाहिए :—

"निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतांको विधिः को निषेधः।"

चक्रपूजन या गोप्यपूजन

अघोरियों द्वारा अनेक गोप्यपूजन किए जाते हैं। कुछ साधनाएँ तो ऐसी हैं जिनमें केवल साधक ही रहता है। ये साधनाएँ परम गोप्य साधनाओंकी श्रेणीमें हैं। इसके साथ-साथ चक्रपूजन आदि साधनाओंमें आचार्यकी स्वीकृति मिलने पर कुछ लोग सम्मिलित हो सकते हैं। श्रद्धेय बाबा भगवान रामजीने बतलाया कि इस साधनामें केवल वीर-भाव वाले ही व्यक्ति सम्मिलित किए जाते

हैं, अन्य नहीं। यह चक्र-पूजन कुछ निश्चित तिथियों पर ही किया जाता है। जैसे-कृष्णपक्षकी एकादशी।

चक्रपूजन की विधि

एक बड़े कमरेमें समस्त साधक आचार्यके साथ बैठते हैं, बीचमें घटकी स्थापना कर दीपक जला दिया जाता है। कुछ भोजन सामग्रीभी साधकोंके समक्ष रहती है। प्रारम्भमें आचार्य द्वारा पूजनका कार्य सम्पन्न होता है। माँके आवाहनके बाद हाथमें त्रिकोण मुद्रा बनाकर सर्वप्रथम आचार्य औषधि पान करते हैं और इसके बाद आचार्य उसी पात्रको अपने दाहिने ओरसे साधकोंमें चलाते हैं। प्रत्येक साधक औषधि पान कर अपने दाहिने ओर पात्रको बढ़ाता जाता है और अन्तमें इसी क्रमसे वह पात्र पुनः चक्रकी समाप्ति पर आचार्य तक पहुँच जाता है। आचार्य पुनः अवशिष्ट औषधिका पान करते हैं। दूसरा पात्र बाएँसे प्रारम्भ होता है। हाथमें पुनः त्रिकोए मुद्रा बनाकर आचार्य औषधि पान कर अपने बाएँ वाले साधकको देते हैं और वह औषधि पान कर अपने बाएँ वाले साधकको दे देता है। इसी क्रमसे पात्र पुनः चक्र-पूर्ण होने पर आचार्यके हाथोंमें आजाता है और आचार्य पुनः शेष औषधिका पान करते हैं। औषधि पानके क्रमके बाद आत्माहुतिका क्रम चलता है। प्रत्येक साधक ३ या ५ आहुति देकर उसी हाथसे आचार्यके मुखमें आहुति देता है। आहुतिमें खाद्य वस्तुका कोई परहेज नहीं है उपस्थित सभी वस्तु ग्राह्य हैं। आहुतिके क्रमके बाद तृतीय पात्र पुनः दक्षिणसे उसी क्रम द्वारा चलाया जाता है। इसके बाद पूजन क्रियाका विसर्जन होता है और आचार्य सहित समस्त साधक एक दूसरेसे गले मिलते हैं।

सभी महापुरुषोंकी यही शिक्षा है कि प्राणिमात्रको समबुद्धिसे देखना चाहिए। ऐसेही महात्माओंके बारेमें कहा गया है, "उदार चरितानां बसुधैव कुटुम्बकम्।" लेकिन प्रश्न यह उठता है वैसे तो सभी दूसरोंको शिक्षा देनेके लिए लम्बी चौड़ी बाते हाँकते हैं, विश्व बन्धुत्व, विश्वकल्याणका नारा लगाते हैं पर कितने लोग ऐसे हैं जो उन सब बातोंका आचरण करते हैं जो कहते हैं। वैसे तो कलि-कालमें सभी वेदान्ती हैं। यथा-'कलौ वेदान्तिनः सर्वे फाल्गुने बालका इव' पर श्रद्धेय महातमाजीके चक्र पूजनका रहस्य औषधि पान या कोई गोष्ठी नहीं वरन् इसी विश्व-बन्धुत्वकी भावना और प्राणिमात्रमें समबुद्धि रखनेका प्रयोगात्मक रूप है। केवल कहने मात्रसे कल्याए नहीं हो सकता। महात्माजीने इस सम्बन्धमें मुझे बतलाया कि यदि किसीको क्षुधा मालूम होती हो तो केवल सुन्दर भोज्य वस्तुओंके चित्रसे उसकी क्षुधा न मिटेगी जब तक कि वह स्वयं उसका रसास्वादन न करेगा। उसी प्रकार विश्व बन्धुत्व, विश्व-कल्याण नारोंसे ही नहीं वरन् इसी प्रकारसे हो सकता है ऐसी मेरी धारणा है। इस चक्र पूजनके पीछे यही लोक-कल्याणकी भावना निहित है।

चक्र पूजा विधान

भगवान शिवने कहा—कि अपने साधकोंके साथ पूजा करनेके समय

चक्रका अनुष्ठान करना योग्य है। जो उत्तम साधक हैं विशेष पूजाके समय ऐसे चक्रोंका अनुष्ठान करें। हे प्रिये! भैरवीचक्र या तत्त्वचक्रके विषयमें ऐसा कोई नियम नहीं है चाहे जिस समय इस शुभ भैरवीचक्रका अनुष्ठान किया जा सकता है। इस भैरवी-चक्रका विधान कहता हूँ। इससे साधकोंका मंगल होता है भैरवी चक्रमें आत्मिका शक्तिकी आराधना करनेसे वे शीघ्रतासे अभीष्टको सिद्ध कराती हैं। रमणीय स्थानमें आसन बिछा 'क्लींफट्' इस मन्त्रसे आसनको शुद्ध करके उसपर बैठे। ज्ञानवान साधक सिन्दूर, लालचन्दन या केवल जलसे त्रिकोण और चौकोण मंडलको बनावे। फिर उस विचित्र घटको स्थापना करके उसमें दही और अक्षतदान करे और उस घड़ेमें सिन्दूरका तिलक लगाकर उसमें फल और पल्लव संयुक्त करें। फिर साधक इस घड़ेको सुगंधित जलसे परिपूर्ण करे। फिर प्रणव करके उसके इस त्रिकोण बना हुआ मंडल पर उसकी स्थापनाकर धूप-दीप दिखावे। गंध पुष्पसे अर्चना करके उसमें इष्ट देवताका ध्यान करे और पूजाके संक्षिप्त विधानानुसार उसमें इष्ट देवता का पूजन करे। इस पूजामें गुरुपात्र, नौ पात्रोंका कोई प्रयोजन नहीं। साधक इस पूजाके समय अभिलाषानुसार तत्त्वोंके सम्मुख स्थापना करके अपने इष्ट मंत्रके अन्तमें फट् लगाकर पढ़े तथा सामग्री पर जल छिड़के। अन्दर की दृष्टिसे देखें फिर मद्यपात्रमें गन्धपुष्प डालकर उसमें देवी अनन्तेश्वरीकी और अनन्त भैरवका ध्यान करे जो सुन्दर, तरुण, मनोहर कमलवदना भैरवी हैं तथा आनन्दकन्द सौभाग्य देनेवाली भैरवीकी ओठोंसे अपने ओठोंको लगाये हुए विचित्र मुद्रामें मुद्रित भैरव हैं उनका ध्यान करे। इस तरहका ध्यान करने वाला साधकचक्र पूजामें उपस्थित पुरापात्रमें दोनोंका सम्मिश्रण ध्यान-प्रणव फिर नाम जप तदुपरान्त नाम उच्चारण करके गन्ध-पुष्प द्वारा दुधुवाका शोधन करे। दुधुवा, मांस, मच्छ, मुद्रा, योनि 'ॐ ह्लीं क्रीं स्वाहा' इस मंत्रसे अभिमंत्रित करे। भैरवीचक्रकी पूजाके बीचमें प्रणवका उच्चारण करना उचित है। भैरवीचक्रमें जाति तथा जूठनका विचार नहीं है। चक्रमें बैठे साधकगण शिवका रुप ही हैं भैरवीचक्रमें देश कालका विचार नहीं परन्तु पात्रका पूरा विचार है। कोई किसीका मित्र हो परन्तु उसमें पात्रता नहीं हो तो उसे नहीं लाना चाहिए नहीं तो बड़ा पाप लगेगा। जहाँपर भैरवीचक्रका पूजन होता है वहाँपर सब तीर्थ उपस्थित रहते हैं। देवताओंके साथ भृगु-वशिष्ठ भी साधकोंके रूपमे उपस्थित होते हैं और उस प्रसादको पानेके लिए देवतालोग लालायित रहते हैं। चक्रपूजनमें झूठ न बोले, चपलता प्रकाश न करे, बहुत न बोले, थूके नहीं, अधोवायु न त्याग करें। जो गुरु निन्दक, चक्रनिन्दक और समूह निन्दक हैं उन्हें चक्रमें कभी न सम्मिलित करे चाहे वे देशका राष्ट्रपति ही क्यों न हो? जो जातिका अभिमान करता हो वह चक्रपूजनमें निन्दित है उसे उस पूजामें कभी न बैठावें। यह पूजन अपने गुरुदेव या किसी ब्रह्मनिष्ठ के सान्निध्य में करे।

विभिन्न इतिहासकारोंने अघोरी या औघड़ साधुको कटु आचरण या व्यवहारमें प्रवृत्त दिखाया है। वास्तवमें यह बड़ा सतही विवरण मात्र कहा जा सकता है। एक तो ये विवरण सदियों पूर्वके हैं और

दूसरे उन लेखकोंने औघड़ोंको निकटसे देखनेका कोई प्रयत्न नहीं किया था। आज भी औघडोंको आप तभी समझ पायेंगे जब आप उनका सान्निध्य प्राप्त करें और उनके बीच पूरा प्रवेश करलें। कहावत है कि "साधक बनकर ही साधकको समझा जा सकता है।" इन साधकोंने सदियों पूर्वकी बहुत सी मान्यताओंको बदल दिया है।

आज आप प्रोफेसर, बैरिस्टर या ब्रिगेडियर रूपमें इन्हें पायेंगे। ये अपने सार्वजनिक दायित्वोंके निर्वाहके साथही अपने साधन पथपर भी बढ़ते रहते हैं इसीलिए इनको पहिचानना आसान नहीं है। एक और बात है कि उनका सान्निध्य पाकर भी केवल उनके वाह्य आचार-विचारका ही ज्ञान होगा और उनके रहस्यमय मार्ग, साधनाओं और विधाओंको समझनेका अवसर मिलेगा, उसे करनेका नहीं। ये आचार्य न तो बाजारमें घूमकर अपनी पुरानी रहनीका प्रचार करते हैं और न देश कालातीत प्रथामें बँधे हैं। प्रक्रिया और साधन पुराना हो है परन्तु समयानुसार वह परिवर्तित या उन्नत हो चुका है। इसलिए इन साधकोंके सम्पर्कमें वे भी आते हैं जो धन और विद्यामें उच्च हैं।

वैज्ञानिक और व्यावहारिक दृष्टिसे यह भारत ही नहीं अपितु विश्वमें क्रान्तिकारी परिवर्तनोंका समय है। अतः कालके अनुसार औघड़ोंने वेश-भूषा, रहन-सहनको देशकालके अनुसार ढाला है। अपने देशमें शिक्षा, यातायात और वार्ता-सहनके साधनोंमें अप्रत्याशित वृद्धि हुई है और इन परिवर्तनोंसे साधकोंने पर्याप्त लाभ उठाया है। तत्परता बरत कर तत्से परे होना ये भली भाँति जानते हैं। तत्से परे होने पर आवागमनकी कठिनाई नहीं रह जाती है। पहले भी साधकोंका पारस्परिक सम्बन्ध इस आधारपर होता रहता था परन्तु आज इनका सम्पर्क बहुत ही व्यापक हो गया है।

सदियों पूर्वसे लेकर आज तक इन साधकोंने समाजको बड़ी उदारतापूर्वक अपनी उपलब्धियोंसे लाभान्वित किया है। इन उच्च शिवकल्प साधकोंके मठों या स्थलोंमें आज भी मिट्टीके बर्तनों का ही उपयोग होता है और कहीं-कहीं और बर्तन भी प्रयोगमें लाये जाते हैं। इनकी उत्कट सिद्धियोंके कारण आज भी इन्हे पर्याप्त भेंट-चढ़ावा आदि मिलता है जिसे वे दुर्बल मनुष्यों की सेवामें लगा देते हैं। क्षेत्रीय जनता इनके मठोंको इतने प्रचुर मात्रामें इसीलिये देती रहती है कि उससे सर्वदा जनहित साधन होता है। भारतीय ग्रामोंमें आज भी यह अटूट विश्वास है कि यदि सौभाग्य-वश किसी औघड़ साधुका साक्षात्कार हो जाय तो बिना किसी प्रार्थना या याचनाके भी उनकी कृपा दृष्टि पड़जाने मात्रसे सभी कार्योंमें सफलता का प्राप्त होना अवश्यम्भावी है और सफलता मिलती भी है।

अघोर उपासकोंको सुगम उपासक कहा जाता है। ये दयावान चित्तके होते हैं और अन्यकी अपेक्षा शीघ्र द्रवीभूत होने वाले साधु हैं। यद्यपि इनमें विविध योग्यता और क्षमता प्रचुर मात्रामें होती है, परन्तु इनका कोई वहिष्कार करे तो भी ये अपनी सहज नम्रता न छोड़ेंगे। इनके स्वभावमें बनावट नामको

भी नहीं मिलेगा। ये बड़े ही खुले उदार और सरल हृदयसे लोगोंसे मिलते हैं। इनके यहाँ धनी-निर्धन, नेता-जनता, पंडित-मूर्ख, राजा-रंक, सभीके साथ समबर्ताव होता है और सभीके लिए सम व्यवधानभी रहता है। ये बड़े ही खुले दिलसे सम्मान देते हैं। संभवतः दूसरा ऐसा नहीं कर सकता है। ये शील और शीलवानके प्रति विशेष आकृष्ट होते हैं। जिस व्यक्तिमें शील नहीं होता वह दूसरोंसे ही नहीं अपने घर परिवारसे भी बहिष्कृतहो जाता है अतः विद्या धन, पद द्वारा नहीं ये व्यक्तिका आदर उसके शीलके अनुसार करते हैं।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि दुःशील नर-नारीको सभी छोड़ना जानते हैं परन्तु ये उन्हें अपनाकर सुधारना भी जानते हैं। ये शील-भ्रष्टको पुनः शीलवान होनेका आशीर्वाद और प्रेरणा देते हैं जिससे वे पुनः अपने घर, परिवार और समाजमें प्रतिष्ठित हो सकें। ये जाति और धर्म च्युतको भी सहर्ष अपनाते हैं और उन्हें न केवल विधर्मी होनेसे विरत करते हैं बल्कि सदा घृणाकी आगमें जलनेसेभी बचा लेते हैं। इस प्रकार जिन्हें अघोरी या औघड़ कहा जाता है वे सुदृढ़ मतवाले भारतीय संस्कृतिकी जड़ोंको सींचनेवाले होते हैं। पुरुष हो या महिला जो भी अपने पद, अधिकार या शीलसे च्युत हो जाय उसे प्रेरणा और संबल प्रदान कर खोयी प्रतिष्ठा, पद यहाँ तक कि पारिवारिक जीवनको एकबार नये सिरेसे बसाने का भी आशीर्वाद ये देते हैं।

दशकुमारचरितमें अघोराचार्य ने राज्यच्युत कुमारोंको अपने तपोबलसे उनका अधिकार दिलाया था। कुमारोंको उनका अधिकार दिलाने में अघोराचार्यने जन-बल का सहारा लिया था। भारतवर्षमें हिमालयसे कन्या-कुमारी तक जनता शैव और अघोरेश्वरकी उपासक रही है। अघोरेश्वर के अंशभूत औघड़ उसी शिवकी आत्मा हैं। सागर-मंथन प्रसंग सर्वविदित है जिसमें भगवान शिवने स्वयं हलाहल (विषपान) पीकर देवताओंको अमृत सुलभ कराया था। ऐसाही जीवन अघोर-साधकोंका होता है। अघोर-साधक ही कैवल्य पदमें स्थित होते हैं।

इस संदर्भके समापनसे पहले अवधूतिनोंकी चर्चा आवश्यक है। आजभी देशमें लगभग तीसकी संख्यामें उच्चकोटिकी अवधूतिन हैं। जिनमें कन्याकुमारीके क्षेत्रमें विचरने वाली एक अवधूतिनकी यश-सुरभि मद्राससे ही मिलने लगती है। इन्हें सभी श्रद्धा और आदर प्रदान करते हैं। कुछ खेचरी अवधूतिनें भी हैं जो कभी प्रकट होकर पुनः अन्तर्धानहो जाती हैं। इनमें कुछ राष्ट्रमें नेताओं तथा सम्मानित व्यक्तियों द्वारा पूजित हैं। इन्हीं देवियोंके आशीर्वादसे राष्ट्रकी सब तरहकी इच्छाओंकी पूर्ति और विजय प्राप्ति हुई है।

इन सभी दिव्यात्माओंकी प्रेरणासे हमारे चरितनायक औघड़ भगवान राम समाज, राष्ट्रकी सेवा करते हुए मानवताको कुछ देनेमें प्रयत्नशील हैं।

—:०:—

रुद्राक्ष ६

अघोर-साधकोंके 'प्रतिहार्य'

दार्शनिक, आध्यात्मिक, धार्मिक तथा इन्द्रियातीत अनुभवोंमें चमत्कार (प्रतिहार्य) एक विवाद ग्रस्त विषय है। पूर्व एवं पश्चिममें अनेक व्यक्तियोंने चमत्कार देखे हैं। उनके विषयमें सुना और पढ़ा है। कट्टरपन्थी और परम्परावादी विचारधाराओंने विश्वभरमें चमत्कारोंका विरोध और निन्दा की हैं। इस विचार-धारा वाले चमत्कार प्रचारको आध्यात्म-पथका बाधक मानते हैं। आत्म-साक्षात्कारमें सहायक होनेके विपरीत चमत्कार बड़ी भ्रान्तियाँ उत्पन्न करते हैं। जो चमत्कार दिखाते हैं, वे सस्ता प्रदर्शन मात्र करते हैं। आध्यात्मिकता अथवा आध्यात्मिक जीवनका लक्षण प्रदर्शन एवं विज्ञापन नहीं है। चमत्कारोंको देखने-दिखानेसे आध्यात्मिक स्वास्थ्य एवं विकासमें हानिप्रद उत्तेजना आती है। इसीलिए शास्त्रों एवं धर्मग्रन्थोंमें साधकोंको आदेश है कि वे चमत्कारोंसे विमुख रहें।

चमत्कार भूतमें हुए हैं, वर्तमानमें होते हैं तथा भविष्यमें भी होंगे। अवतारों धार्मिक एवं आध्यात्मिक गुरुओं तथा योगियोंके जीवनमें चमत्कार भरे पड़े हैं। इन सबको बाजीगरी, सम्मोहन या दृष्टिबन्ध कहकर टालना तर्क-प्रेमी बनकर तर्क हीनता को प्रश्रय देना है। अतः चमत्कारोंके विषयमें तटस्थ दृष्टिकोण अपनाना ही अधिक उपयुक्त है।

एक अर्थमें चमत्कार होते ही नहीं। विज्ञान एवं भौतिक प्रगतिके युगमें भी हम प्रकृति ओर परिवेशका पूर्ण परिचय नहीं पा सके हैं। अतः जो हमारी बुद्धिसे परे है, हम उसे चमत्कार मानते हैं। आधुनिक विधानसे अनभिज्ञ एक आदिवासीके सामने एक सभ्य मानव जब बटन दबाकर बिजलीका बल्व प्रकाशित करता है तब उसे यह आश्चर्य (चमत्कार) प्रतीत होता है। अतः चमत्कार प्रकृतिके उच्च नियमोंके ज्ञान एवं व्यवहारके प्रतीक-मात्र हैं। इन्द्रियातीत अनुभव तथा परामनोविज्ञानमें दिव्य दृष्टि, दूर श्रवण, वस्तु प्रकटीकरण तथा आनयन को चमत्कारिक न मानकर वास्तविक माना गया है। मनोविज्ञान तथा अतीन्द्रिय बोध भौतिक विज्ञानसे होड़में पीछे रह गये हैं (दृष्टव्य 'स्पॉन' नवम्बर, १९७२ के अंकमें प्रकाशित लेख)।

चमत्कार हमारी प्रवणता एवं जागरूकतासे भी प्रकट होते हैं। यदि हम विचारकर देखें तो यह विश्व अथवा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड और इसकी क्रियायें स्वयं अपनेमें एक बड़ा चमत्कार हैं। एक नबीके शिष्यने उनकी शक्तिके परिचय रूपमें उनसे कुछ चमत्कार दिखानेका अनुरोध किया। नबीने उत्तर दिया तुम अपनेको देखो। तुम विचित्र एवं अद्भुत चमत्कार स्वयं हो। केवल अस्थि-मांसके पुतले होकर तुम चलते हो, बोलते हो और ईश्वर का साक्षात्कार करना चाहते हो। इससे बड़े चमत्कारकी न तो मुझे जानकारी है और न मैं दिखला पाऊँगा। चमत्कार विश्व-व्यवस्थाके अंग

हैं। आवश्यकता है, उन्हें सीखने और समझनेकी। धर्म-मार्गमें अविश्वासीको विश्वास, दम्भीको उसकी अल्पज्ञताका बोध कराना चमत्कारों का प्रयोजन है। यह भी सत्य है कि चमत्कारोंके नामपर ठगी भी खूब फैली है।

महर्षि पतंजलिने योग दर्शनमें चमत्कारोंको एक अन्तराय (विघ्न) बतलाया है। 'मानव अमृत पुत्र 'है' जो श्रुतियोंकी घोषणाके अनुसार स्वयं ईश्वरत्व सम्पन्न है। उसके ऐश्वर्यकी चर्चामें अचम्भा क्या है ? सच्चा मानव बनना अथवा ईश्वर साक्षात्कार करना ही पुरुषार्थ है। शेष मृग-मरीचिका मात्र है। परात्रिंशिका की व्याख्यामें महामाहेश्वर अभिनव गुप्तने लिखा है कि अणिमादि अष्टसिद्धियाँ आत्माका सहज रूप ही हैं। अतः आत्मबोध होने पर सिद्धियाँ निष्प्रयास उत्पन्न हो जाती हैं। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सुभाषित दृष्टव्य हैं—

१-अलौक सामान्य मचिन्त्य हेतुकं द्विषन्ति मन्दाश्चरितं महात्मानाम्।

अर्थात् अलौकिक होनेसे महात्माजन-चरित मन्द बुद्धि गम्य नहीं होता।

२-ऋषिणां पुनराद्यानां वाचमर्था-नुधावती।

अर्थात् प्राचीन ऋषियोंके शब्दोंके अनुसार कार्य होता था।

किनाराम

काशीके राजा चेतसिंह बाबा किनारामके समकालीन थे। उन्होंने दो-तीन अवसरों पर बाबाका अपमान करना चाहा था, पर वे सदैव असफल रहे। राजप्रासाद में जाकर बाबाने राजासे भोजन करानेको कहा। राजाने गंगामें बहते एक शव को सैनिकोंसे मँगाकर बाबाके आगे रखवा दिया और भोजन करनेको कहा। बाबाने अम्लान मुख अपनी चादर शव पर डाल दी, जिसे उठाने पर वहीं थालोंमें सजे विविध व्यंजन मिले जिन्हें खाकर बाबा लौट गये।

\+ \+ \+

एक समय राजा चेतसिंह शिवालामें शिवलिंग स्थापना कर रहे थे। पहरेदारों को आदेश था कि बाबा किनारामको भीतर न आने दिया जाय। ठीक प्राण-प्रतिष्ठाके समय एक हाथसे मुर्देकी टाँग घसीटते हुए बाबा उपस्थित हो गये। इस पर राजाने क्रोध-वश बाबाको अपशब्द कहे। वहीं बाबाने शाप दिया कि यह मन्दिर विधर्मियोंके अधिकारमें चला जायेगा और इसमें कबूतर बीट करेंगे। वहाँ उपस्थित सभी निसन्तान होंगे। यह बात सच्ची हुई।

\+ \+ \+

बख्शी सदानन्दजीने जो शिवलिंग स्थापनाके समय उपस्थित थे और जो काशीनरेशके यहाँके कर्मचारी थे, बादमें बाबासे मिलकर क्षमा-प्रार्थना की। बाबाने प्रसन्न होकर उन्हें आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे वंशमें लड़कोंके नाममें जब तक आनन्द शब्द लगा रहेगा तब तक तुम्हारी वंश-परम्परा चलती रहेगी। प्रकाण्ड विद्वान और राजनेता डॉक्टर सम्पूर्णानन्द उन्हीं बख्शी सदानन्द के वंशज थे।

\+ \+ \+

काशीनरेशके यहाँ वेदवाह्य समझे जाने वाले बाबाने अपनी विभूतिसे एक गदहेसे वेद मंत्रोंका उच्चारण कराकर सभी विद्वानोंको आश्चर्यमें डाल दिया था।

\+ \+ \+

उत्तर भारतमें अन्य सन्तोंकी भाँति बाबा भी गंगा-किनारे विचरते थे। वहाँ गीली मिट्टीसे घर बना देते थे, जो गंगामें बाढ़ आनेपर प्रतिवर्ष गिर जाता था। वर्षों तक यह लीला चलती रही। एकबार उस कच्ची दीवारको उठाकर बाबा बोले कि तू पक्का हो जा। तत्काल यह भवन पक्का हो गया।

× × ×

बाबाके जन्म-स्थान रामगढ़में रामशालाके बाहर मैदानमें एक बड़ा भव्य कुँवा है, जो बाबा किनारामका बनवाया हुआ है। कहा जाता है कि जब यह कुँवा बन रहा था उसे बाँधते समय ईंटें घट गईं। बाबाने तत्काल आदेश दिया कि गोहरा (उपली) लगाकर जोड़ाई पूरी कर दी जाय। वैसा ही किया गया और वह कुँवा आज भी विद्यमान है।

× × ×

उक्त कुँआके चार घाट हैं, जिसमें पानीका स्वाद अलग-अलग है। आज भी चौथिया ज्वरसे पीड़ित लोग यहाँ आकर पूरब घाटसे पाँच लोटा जलसे स्नान करके बाबाके यहाँ धरना देते हैं और निश्चित रोग मुक्ति पा जाते हैं।

× × ×

एक समय बाबा उक्त कुँएमें कूदकर उसके पश्चिमोत्तर कोनेमें बने एक कुण्डमें अन्तर्ध्यान हो गये। उसके बाद ही क्रीं कुंड शिवाला वाराणसीमें बाबा दिखलायी पड़े।

× × ×

बाबा किनारामजीके प्रमुख शिष्य बाबा विश्रामरामजी कुछ लोगोंकी चुनौती पर गुरु स्मरणकर लहकते (तपते) हुए ईंटके भट्ठे पर नंगे पाँव चले थे, किन्तु जब आश्रममें लौटे तो उन्होंने दुःखके साथ पाया कि उनके गुरुके पाँवमें आग से जलनेके फफोले आ गये हैं। इसपर उन्हें बड़ा पछतावा भी हुआ था।

× × ×

चंक्रममें जाते समय गुरुने आदेश दिया कि शिष्य मौनव्रतका पालन करे। अतः शिष्य आजीवन मौन ही रह गये। इस तपस्याके फलस्वरूप उक्त महात्माको सभी सिद्धियाँ प्राप्त थीं। ये गुरु बाबा किनाराम तथा शिष्य बाबा विश्रामराम थ।

× × ×

सन्त भ्रमणशील होते हैं और विशेषतया तीर्थोंको समर्थन देने वे अवश्य जाते हैं। बाबा किनारामने जिन दिनों गिरनार यात्राकी थी उन दिनों वह क्षेत्र

जूनागढ़ की मुसलिम रियासतमें था। राजाज्ञासे भिक्षा माँगनेवालोंको जेलमें डाल दिया जाता था। सत्याग्रही बाबाने पहले अपने शिष्यको और बादमें स्वयं को गिरफ्तार कराकर जूनागढ़में एकबार पुनः साधु सत्कारकी व्यवस्था करायी। हुआ यह था कि जेलमें स्वयं चक्की पीसना तो दूर अन्य साधुओं को भी रोककर केवल नाम-भजन की महिमासे बाबाने सभी चक्कियाँ चला दी थीं।

× × ×

सन्त अमर हैं। औघड़ोंपर यह बात विशेष रूपसे लागू है। अन्तरिक्षमें विचरण करनेवाले कापालिक योगी लोग सुन्दर भावापन्न व्यक्तियोंसे न केवल सम्पर्क स्थापित करते हैं, किन्तु वे उनका निरन्तर मार्ग-दर्शन भी करते हैं। काशीमें समाधि ले लेनेके पश्चात् भी बाबा किनाराम जगन्नाथपुरी, गंगासागर, गिरनार और अन्य पवित्र क्षेत्रोंमें साधकों तथा भक्तोंको दर्शन देते रहे हैं।

श्री कच्चा बाबा

जब आप काशी आये तो एक तीर्थ पुरोहित आपकी सेवामें दो सेर आटा पहुँचाता था। बाबा उसे कच्चा ही खा लेते थे। बाबाकी कृपासे उस निःसन्तान सेवकको दो पुत्र रत्न प्राप्त हुए और उनकी वंश-परम्परा चल रही है।

× × ×

बिहार तथा उत्तर प्रदेशके अनेक भक्तोंने बाबाके सिंहासनमें बैठ आकाश-मार्गसे गमनागमन करते देखा है।

× × ×

एक समय बाबाने अपने स्थान तथा आसपासकी भूमिकी विशेष सफाई तथा सजावटका आदेश दिया। भक्तोंकी जिज्ञासापर आपने बताया कि सम्राटके स्वागत की तैयारी हो रही है। कुछ दिनों बाद स्वर्गीय जार्ज पंचम, जो उस समय राजकुमार थे, बाबाके दर्शनार्थ आए।

× × ×

आपने दृष्टि द्वारा शक्तिपातकर कई साधकों की दीक्षाकी थी।

औघड़ हीरा राम बाबा

रामशाला, रामगढ़ वाराणसीके तेजस्वी साधक हीरा रामजी बड़े गुरु भक्त थे। एक समय कुछ काल तक वे ऐसे स्थानपर रहे, जहाँ दिन-रात वेश्याओंसे घिरे रहे। गुरु स्थानपर लौटने पर लोगोंने उनपर चरित्र-भ्रष्ट होनेका आरोप लगाया। उन्होंने अपने गुरुके सामने अपनी निष्ठा व्यक्त करनेके लिये जलती धुनीमें अपनी लंगोटी खोलकर डाल दी और कहा कि यदि स्वप्न में भी मेरा ब्रह्मचर्य खंडित न हुआ हो तो यह लंगोटी नहीं जलेगी। वैसा ही हुआ और गुरु आज्ञासे उन्होंने जलती आगमेंसे निकाल कर पुनः लंगोटी धारण कर ली।

तारापीठ के अघोराचार्य बामाक्षेपा

बालपनमें अपने गाँवके एक छोरपर पुआलके ढेरके ऊपर भाव तन्मय अवस्थामें आप बैठे थे। सहसा पुआलके ढेरमें आग लग गई। लोग जब बुझानेके लिये वहाँ पहुँचे तो देखा कि बामा ढेरके ऊपर आनन्द मग्न बैठे हैं।

इनके गुरु महान् साधक कैलासपति एकबार बाढ़से भरी हुई नदीके ऊपर खड़ाऊं पहनकर पैदल पार आकर बालूपर खड़े हो गये। बामाको दिखाकर गुरुने मृत तुलसीके झाड़के बारेमें पूछा था कि वह जीवित है या मृत। बामाने कहा बाबा यह तो एक बारगी सूख गया है, मरा हुआ पौधा है। जीवन और मृत्यु एकही है बेटा- 'तुलसी जीओ तुलसी जीओ' कह कर महानपुरुषने कमण्डलसे उसपर जल डाल दिया। कहना न होगा तत्काल वह मृत पौधा हरा-भरा हो लहलहाने लगा। पिता की मृत्युके बाद इनके परिवारकी स्थिति अत्यन्त शोचनीय थी। माताकी मृत्यु पर बढ़ी द्वारिका नदीको पारकर पीठपर लाकर तारा पीठ श्मशानमें उनका शव दाह स्वयं आश्चर्य जनक था, किन्तु छोटे भाईको जब यह आदेश दिया कि 'देखो माँका श्राद्ध जैसे-तैसे नहीं कर लेना, कई गाँवोंको निमंत्रण देकर खिलाना।' तो छोटे भाई चकित हो गये। बाबा तो श्मशानमें बैठे रहे, किन्तु भारोंमें लादकर सभी सामग्री लोग नियत समयपर दे गये। ब्राह्मण-भोजनके समय वर्षाकी झड़ी लग गई, लोग हताश हो रहे थे, यकायक बाबा श्मशानसे चलकर अपनी माँके श्राद्ध-स्थल पर पहुँच गये। चारों ओर जोरोंकी झड़ी लगी रही, पर श्राद्ध-स्थलपर एक बूँद भी नहीं पड़ी।

\+ + +

एक बार एक युवती बाबाके दर्शनार्थ आई। उसका घर रामपुर हाटमें था। शुद्ध मन एवं पवित्र भावसे वह खीर बनाकर लाई थी। बाबाने उसकी भेंट स्वीकार की और कहा बहुत अच्छा माँ, बहुत अच्छा। तुम्हें धन और पुत्रका सौभाग्य प्राप्त होगा। वह रो पड़ी क्योंकि वह विधवा थी। बाबा बोले—माँ रोओ मत, मैंने जो कुछ कहा है सब होगा। तारा माईने मुझसे कहा है तुम्हें पुत्र होगा। एक नहीं अनेक। क्षेपाका वचन सत्य हुआ और एक धनवान वणिकने उससे विवाहकर लिया और वह धनी तथा पुत्रवती हुई।

\+ + +

एकबार महाराजा दरभंगा बाबाके दशनार्थ तारापीठमें गये। लोगोंने कहा बाबा ये आपके बड़े भक्त हैं, अतः दर्शनार्य आये हैं। बाबा बोले—यह कैसी बात! मैं श्मशानका भिक्षुक, साधारण मनुष्य, मेरे यहाँ राजा-महाराजोंका क्या काम? तब तो मुझे यहाँ से हटजाना पड़ेगा। लोगोंके सुझावपर महाराजा अकेले क्षेपाका दर्शन करने आये। बाबाके आशीर्वादसे उन्हें पुत्र लाभ हुआ और उनकी मनोकामना पूरी हुई।

श्री तैलंग स्वामी

वाल्यकाल में आपकी जननो शिव पूजाके लिये गई थीं। जब वे शिवाराधन में मग्न थीं तो पूजाकी समाप्ति पर उन्होंने देखा कि शिवकी मूर्तिसे एक ज्योति पुंज निर्गत होकर मंदिर गर्भको आलोकित करता हुआ भूमिस्थबालकके देहमें प्रविष्ट हो गया।

\+　　+　　+

तीर्थाटन क्रममें आप सेतुबंध रामेश्वर पहुँचे। एक दरिद्र एवं रोगी ब्राह्मण पुत्रकी उस तीर्थमें अचानक मृत्यु हो गई। मृत व्यक्तिके साथी करुण विलाप कर रहे थे। बाबाका मन पसीज उठा। उन्होंने कमंडलसे जल अपने हाथमें लिया और अस्फुट मंत्रोच्चारण करने लगे। अभिमंत्रित जल छिड़कतेही मृत व्यक्ति जीवित हो खड़ा हो गया।

\+　　+　　+

नर्मदा माताकी स्तन्य धारा पान करनेके लिए इस महायोगीके हृदयमें किस क्षण अभिलाषा जाग उठी थी यह कौन बता सकता है? संभव है कि उनकी अमोघ इच्छाके कारण ही जलधाराने पीयूषधाराका रूप धारण कर लिया हो। नर्मदाकी इस दुग्ध धाराको पान करनेके लिये खाकी बाबा भी उत्सुक हो उठे। किन्तु उनके स्पर्श करते ही नदीका जल पहलेकी तरह हो गया।

\+　　+　　+

एक दिन स्वामी जी त्रिवेणी संगम घाट पर बैठे हुये थे। आकाशमें घन घटा छाई हुई थी। राम तारण भट्टाचार्य बाबाके निकट जाकर उनसे घरमें चलकर बैठने का अनुरोध करने लगे। स्वामीजी बोले मेरे लिये चिन्ता न करो मुझे कोई कष्ट न होगा। लेकिन उस नावके यात्रियोंकी रक्षा तो करनी होगी। सचमुच नदीकी बीच धारामें फँसी नाव डूब गई परन्तु आश्चर्य यह है उस रोते-चीखते यात्रियों सहित वह पुनः जलपर तैरने लगी। उस नावके किनारे लगने पर स्वामीजी भी अन्य यात्रियों सहित घाट पर उतरे।

\+　　+　　+

उक्त घटनाके सम्बन्धमें जिन भक्तका समाधान करते स्वामीजीने मंद मुस-कानके साथ कहा था कि, राम तारण, इसमें आश्चर्य चकित होनेकी कोई बात नहीं है। सब मनुष्योंमें ऐसी शक्ति सुषुप्त रहती है। उसे जाग्रत करने पर सब कुछ संभव हो सकता है। इसमें अस्वाभाविकता कुछ भी नहीं है। प्रकृत स्वभावसे च्युत होकर ही मनुष्य अस्वाभाविक बन गया है। यही कारण है कि जो उसकी अति स्वाभाविक शक्ति है उसे अलौकिक एवं अस्वाभाविक समझकर वह विस्मित होता है।

\+　　+　　+

काशीके अंग्रेज मजिस्ट्रेटके न्यायालयमें जब आप पर नग्न घूमनेके अपराध में मुकदमा चल रहा था आप एकाएक अन्तर्ध्यान हो गये। जब सभी अत्यन्त विस्मित

हुए तो बाबा पुनः हँसते हुए अपनी जगह खड़े मिले। मजिस्ट्रेटको जब समभाव वाले योगीराजका परिचय दिया गया तो वह बोला अच्छा तो इन्हें मेरा भोजन ग्राह्य करना होगा। बाबा बोले, मैं तुम्हारा भोजन तबकर सकता हूँ जब तुम मेरा भोजन ग्रहण करो। बाबाने तत्काल अपने हाथ पर मल त्यागकर साहबकी ओर बढ़ाया। वे बोले, साहब यही मेरा आज का खाना है। सबके देखते ही बाबा उसे निगल गये। वास्तवमें वह दिव्य-खाद्य वस्तुमें परिणत हो चुका था और पूरे इजलासमें उसकी सुगन्ध फैल रही थी। मजिस्ट्रेट बाबाको एक अलौकिक पुरुष जान चुका था। उसने आदेश दिया—तैलंग स्वामी नग्न रहकर चाहे, जहाँ विचरणकर सकते हैं, इसमें उन्हें किसी प्रकारकी बाधा नहीं दी जायेगी।

मोकलपुर के बाबा

बनारस जिलाके टूंडी भगवान पुर ग्राममें उमा बाबू अपने ससुराल जा रहे थे। बाबा रास्तेमें कूड़ेके ढेर पर खड़े मिले और ठठाकर हँसे, कहा कि "ससुराल अकेले ही जा रहे हो, चलो अब यह नाता टूटनेवाला है।" उसी साल उनकी पत्नी का जब देहांत हो गया तब उन्होंने बाबाकी बातका मतलब समझा। श्री भगवती सिंह जो स्व० उमा बाबूके लड़के हैं अभी जीवित हैं।

अन्य विवरण

काशीके एक फकीरसे मिलने लखनऊसे नवाब आए। फाटकपर दरवानने नवाब को टोक दिया। नवाब बोला दरवेशके दरवाजेपर दरवानकी क्या आवश्यकता? (दर-दर फिरनेवाला ही दरवेश है)। फकीर साहबने सुन लिया और कड़कती आवाज में कहा कि "इसलिये जरूरी है कि दुनियाके कुत्ते न आएँ।" अर्थात् दुनियादारीकी इच्छामें फँसे व्यक्ति जो फकीरकी दृष्टिमें कुत्ते हैं न आ पावें। (दृष्टव्यः जो विषया सन्तन तजी मूढ़ ताहि अपनात। ज्यों नर डारत वमन करि स्वान स्वाद सो खात ।।) सन्त अन्तर्यामी होते हैं उन्हें प्रपंची लोगोंसे अलग रहना ही सुहाता है।

× × ×

एक अघोर अवधूतिन विचित्र साधिका थी। श्मशानमें जली हुई चिताओंकी राखपर लाल कपड़े बिछाकर प्रायः साधना किया करती थी। उसकी दृष्टि विचित्र हो गयी थी जैसी भावनासे वह दृष्टिपात करती थी देखा जाने वाला तत्काल उसका फल पा जाता था। कल्याणकी दृष्टि पड़ते ही तत्काल सफलता मिलती थी। ये चिरकाल तक गंगा और सोनके संगमपर विचरती थीं। बहुतसे श्रीमान तथा अधिकारी वर्गके लोग आपके शिष्य रहे हैं।

+ + +

अफगानिस्तानके काबुल नगरमें प्रसिद्ध अघोरी रतन लालकी समाधि है। उनके आश्रममें एक चमत्कारिक शहतूतका वृक्ष है। कहा जाता है कि बाबाने एक

शहतूतकी दतुवन गाड़ दी थी उसीसे यह वृक्ष निकला है। यह पेड़ सूखता है तो उसी मेंसे नया निकल आता है।

\+ + +

एक समय अफगानिस्तानके शाह बाबाका दर्शन करने आये। बाबाने इसी चमत्कारिक वृक्षसे बिना मौसम शहतूत निकालकर शाहको प्रसाद दिया था। उस क्षेत्रके हिन्दू और मुसलमान समान रूपसे इस वृक्षके प्रति आस्था रखते हैं। वे इसका दर्शन करने और मनोरथके लिए भी सदा यहाँ आते रहते हैं।

\+ + +

वाराणसी किनारामस्थलके प्रसिद्ध मुड़िया बाबा भोलाराम थे। वे बहुत दूर-दूर ग्रामोंमें जाकर भिक्षाटन करते थे किन्तु रहते स्थलमें ही थे। कुछ सहयोगी साधकोंने उन्हें अपने खप्पड़ पर सवार हो आकाश-मार्गसे जाते देखा था वैसे गाँवके भक्तोंने भी देखा था कि भिक्षा करके वे ज्यों ही गाँवके बाहर आते अपने खप्पड़ पर सवार होकर आकाश-मार्गसे लौट जाते थे। वाराणसीके औघड़ोंमें यह कथा प्रसिद्ध है। बादमें गुरुस्थानपर मतभेद हो जानेसे आप बिहार राज्यके गंगा तटपर विचरण करते थे। उक्त क्षेत्रमें इनकी शिष्य-परम्परा पाई जाती है। यदि आश्रममें रहते तो ये महन्थकी गद्दीपर बैठाये जाते।

\+ + +

वाराणसी किनारामस्थलके महन्थ बाबा जयनारायण राम एक ऊँची अवस्था-प्राप्त अवधूत थे। आप उच्चकोटिके संगीतज्ञ भी थे। आपके समयमें छठ लोलारक तथा रामनवमीके अवसर पर स्थलमें अनेकों कलाकार अपना नाच, गाना, बजाना आदि बाबाकी सेवामें प्रस्तुत करते थे। एक वर्ष छठ लोलारकके उत्सवमें बादल घिरे थे और लगता था तत्काल जोरोंकी झड़ी लग जायगी। एक उस्तादने कहा कि सरकार ! बादल आ गये हैं कैसे कार्यक्रम किया जाय। बाबाने अपनी मस्तीमें एक प्रिय कलाकारसे गाना आरम्भ करनेको कहा। कार्यक्रम रात्रि-पर्यन्त चलता रहा। ज्योंही बाबा कार्यक्रम समाप्त कर अपने कमरेमें गये जोरोंकी झड़ी लग गई और दिनभर अनवरत वर्षा होती रही।

\+ + +

काशीके मूर्धन्य साहित्यिक पं. देवीप्रसाद कवि चक्रवर्ती काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्कृत महाविद्यालयमें प्राध्यापक थे। वे अपनी कक्षामें बोतल तथा पान-पात्र लेकर पढ़ाते थे। लोगोंने मालवीयजी जो कुलपति थे उनके यहाँ शिकायत की। एक दिन मालवीयजी आपकी कक्षामें गये। उनके सामने पंडितजीने गिलासमें बोतलमेंसे दुधुवा ढालकर पिया जो देखने व गन्धमें मात्र सुगन्धित दूध था।

× × ×

काशीनरेश महाराज विभूतिनारायणसिंह को गंगामें नहाते समय नाव पर

आकर एक औघड़ साधुने आलिंगन किया था। कहा जाता है कि उसके बाद ही महाराजको पुत्र लाभ हुआ है।

× × ×

आजसे आठ वर्ष पूर्वकी सरस्वती पत्रिकामें स्व० पं० ब्रजमोहन व्यासके धारावाहिक संस्मरण प्रकाशित हुए हैं। उन्हींमें पं० जवाहरलालनेहरू की जन्मकथा भी दी गयी है। सर्वविदित है कि ये अपने माता-पिताके एकमात्र पुरुष सन्तान थे और उक्त विवरणके अनुसार आपका जन्म एक साधुके आशीर्वाद-स्वरूप हुआ था।

× × ×

देवरिया जिलाके पयोहारी बाबाने एक समय साधुओंकी भोजके लिये एक भण्डारा दिया। वहाँ एक औघड़ बाबा आये और आधा भण्डारका सामान खा गये। लोग विस्मित तथा चिन्तातुर हो गये। बाबाने उन्हें संकेतसे पासके अरहरके खेतमें भेजा जहाँ सभी खाद्य-सामग्री यथावत सुरक्षित रखी मिली। इस घटनाके बादसे आजतक यह परम्परा हो गयी है कि भण्डाराका आयोजन करनेपर उन साधुओं द्वारा पहला पत्तल औघड़का निकालकर तब लोग प्रसाद पाते हैं।

+ + +

मकर संक्रान्तिके गंगासागर मेलाके अवसर पर काली कमलीवाले बाबा कलकत्ता गये थे। तत्कालीन कम्पनीके गवर्नर जनरलकी फिटिन गाड़ीको मैदानमें योगबलसे लाकर जला डाला और साधु समाजका शीत-निवारण किया। राज्य-चिन्ह जो उस गाड़ीके थे उन्हीं अवशेषसे जब गाड़ीका पता लगा तो बाबाको चितामें जीवित जला देनेका हुक्म हुआ। चितापर बाबा बैठाये गये आग लगा दी गयी। चिता शान्त होनेपर हँसते हुए उठकर बाबा अधिकारीके सामने आये तथा कहा कि 'बाबा गंगासागरका मेला है और लकड़ी की व्यवस्था करा देनी चाहिये।

× + +

पाल ब्रंटनने अपनी पुस्तकमें नर्मदा तटके एक औघड़ साधुका चमत्कार लिखा है। उस साधुने कोठरी बन्दकर अपने शरीरको अभेदवादी क्रियासे अंग-अंग अलग-अलग कमरे में कर डाला था। यह दृश्य दरवाजेके छिद्रमें से देखकर प्रश्नकर्त्ता और उसके साथी चकित हो गये। थोड़ी देर में द्वार खुलने पर बाबा हँसते ाये गये तथा प्रश्नकर्त्ता महिला को बताया कि तुम चिन्ता न करो तुम्हारा पति न्यूयार्कमें स्वस्थ और सानन्द है।

+ + +

काशीके सुप्रसिद्ध सन्त कच्चा बाबाने एकबार अपने शिष्यको आदेश देकर कमरेमें एक अतिरिक्त आसन लगवाया। तत्काल एक महात्मा आए और उस पर बैठ गये। बाबाने उनका स्वागत किया और आम खिलाया। कुछ काल सत्संग करके वे

महात्मा चले गये। भक्त ने उनके आने-जानेको रहस्यमय जानकर बाबासे पूछा तब बाबाने बताया " ये गिरनार से आकाश-मार्ग द्वारा आए एक अघोराचार्य थे।

\+ \+ \+

जंगमबाड़ी वाराणसीके कविराज हाराण चन्द्रराय चौधुरी बड़े भावात्मक भक्त हैं। औघड़ भगवान रामजीसे बहुधा मिलकर दर्शन और सत्संग लाभ करते रहते हैं उनकी तीन दैवी अनुभूतियाँ निम्नलिखित हैं।

× \+ \+

कविराजजी एक समय अपने कलकत्ता स्थित मकानपर रह रहे थे। निकटके मुहाल में रात्रि भोजके लिये गये थे लौटते समय ११-१२ बजेका समय हो गया था। और आपको मार्ग-भ्रम हो गया था। आपने देखा कि मुण्डमाल पहने भक-भक मुख से आग फेंकते एक स्त्री उस निर्जनमें इनकी ओर आ रही है। वह आत्मा निकट आ गयी। इनकी दृष्टि भी बदल गई और इन्होंने देखा कि काला गुलेबन्द लगाये, सिगरेट पीते, लम्बे बालों वाला एक पुरुष सामने खड़ा है। तुरन्त उस आत्माने प्रश्न किया कि "क्या आप घर की राह भूल गये हैं ? चलिए आपको राह बता दें।" थोड़ा ही चलने पर आपने अपने दरवाजे पर अपने को खड़ा पाया किन्तु मुड़कर देखने पर आत्मा अन्तर्ध्यान हो चुकी थी। इन्हें बड़ा दुःख और ग्लानि हुई कि भगवती का दर्शन मिलने पर भी मैं अभागा ही रह गया।

\+ \+ \+

वाराणसीमें कविराजजीके घरके निकट एक देवी-मन्दिर है। यहाँ रहने पर वे नित्य देवीकी पूजा करते और किसमिसका भोग लगाकर मुहालके लड़के-लड़कियोंमें बाँट देते हैं। एक दिन भूलसे किसमिस न ला सके तो गुड़का भोग लगा दिया। जब वे बच्चोंमें गुड़का बाँट रहे थे तो उन बच्चोंके बीचसे एक कन्या बोल उठी कि घरमें किसमिस रखकर गुड़का प्रसाद बाँट रहे हो। इतना कहकर वह लड़की उन्हीं बच्चोंके साथ आँखोंसे ओझल हो गयी। उसी दिन पुनः कविराजजीको बड़ा पछतावा और ग्लानि मालूम हुई कि यह जिसकी वाणी थी मैंने क्यों न उनका आदर सम्मान किया।

× × ×

एक दिन कविराजजीने भगवतीको बड़ी सुन्दर माला पहनाकर जंगला बन्दकर ताला लगाकर कहीं चले गये। लौटा तो देखा कि एक लड़की जंगलेमेंसे छड़ीके सहारे माला निकालकर अपने गलेमें पहन रही है। क्रोधसे कविराजने कन्या पर हाथ छोड़ दिया। जब वह अपने घरकी सीढ़ी पर चढ़ने लगे तो उसने पूछा कि किसे माला पहनाया था ? नीचे आकर देखा तो लड़की गायब थी। दिलमें घबड़ाहट तथा कमजोरी उत्पन्न हो गयी। वर्षों वही हाल था। कई बार औघड़जीसे मिलने पर मनोदशा सामान्य हुई है।

अघोरी गणेशनारायण

आप राजस्थानके चिड़ावा स्थानपर विराजते थे। आपके विषयमें अनेकों चमत्कार प्रसंग लेखकको सुनने तथा पढ़नेको मिले हैं इनमेंसे स्थानाभावके कारण केवल निम्नलिखित ही दिये जा रहे हैं।

× × ×

स्व० सेठ जुगलकिशोरजी बिड़लासे आपका विशेष लगाव था। वे उनसे बहुत ही घुल-मिलकर बातें करते थे। एकबार श्री बिड़लाजी उनके पास गये तब बाबाजीने कहा— रे जुगल्या आज तो तेरो चोखो दिन छः करणी बरणी चालु रखाजे जा भागज्या' (ऐ जुगल! आज तेरे लिये उत्तम दिन है कुछ कारबार चालू कर भाग जा)। सेठजीने यह सुनकर अच्छा मुहूर्त जान कलकत्ताके लिए सीधे ही जानेका विचार किया, उन दिनों ट्रेन नारनौलमें मिलती थी। सेठजीने अपना रथ नारनौल वाले रास्ते पर डाल दिया। चाँदनी रात थी। रास्तेमें दायीं तरफ उनको काला सर्प फन उठाये बैठा मिला जो उनके लिए अच्छा सगुन था, परन्तु सेठजी उसे अपसगुन समझकर वापिस आ गए। उन्हें देखते ही बाबाजीने वापिस आनेका कारण पूछा तो उन्होंने सर्पवाली घटना कह सुनाई फिर बाबाजी बोले—'रे जुगल्या तू तो गलती करी छ तू चल्यो जातो तो चक्रवर्ती वण ज्यातो, जा अब भी तेरी सार कीर्ति फैल ज्यागी' (अरे जुगल! तूने गलती की यदि तू चला जाता तो चक्रवर्ती बन जाता, जा अब भी तेरी कीर्ति संसारमें फैल जायगी)। यह शब्द सुनते ही सेठजी कलकत्ता चले गये और उनका वहाँ पुराना धंधा था ही, करने लगे। कुछ ही दिनोंमें खूब पैसे कमाये धीरे-धीरे सभी कामोंमें सफल होते गये। आज ऐसी स्थिति है कि भारत ही नहीं दुनियामें भी उनका नाम और यश फैला हुआ है। यह सब बाबाजीकी ही कृपाका फल है।

× × ×

आप अघोरी होनेके नाते टट्टी-पेशाब चाहे जहाँ ही कर देते थे। यह देख कुछ लोगोंको शिकायत हुई कि शिवालयके पासमें मल त्यागना अच्छा नहीं है। इनको रोकना चाहिये। परमहंसजी पड़ोसियोंकी भावना समझ गये तो एक दिन पेशाब अपनी हंडियामें करके बोले "थाने शिवालयके आसपास टट्टी पेशाबकी बाँस आव है के। ल्यो मेरी हांडीमें कोई पेशाब है सूँघल्यो" (क्या तुम लोगोंको शिवालयके पास टट्टी-पेशाबकी दुर्गन्ध आती है। लो मेरी हंडियामें वही पेशाब है सूँघ लो।) उपस्थित लोगोंने हंडिया सूँघी तो उसमें भीनी-भीनी सुगन्ध आ रही थी। यह देख सभी लोगोंको बाबाजीके परमयोगी रूपका पता चल गया और वे सब उनको प्रणाम करके चले गये। श्रीमद्भागवतके पंचम स्कन्धमें भी एक प्रसंग है कि योगीराज श्री ऋषभदेवके टट्टी-पेशाबमें सुगन्ध आया करती थी।

× × ×

एक बार परमहंसजीके पास पंडित स्नेहीरामजी बैठे थे परमहंसजी उनसे बोले—"स्नेहीड़ा न्याय सिद्धान्त सुना है।" स्नेहीरामजी बोले आप पागलको क्या

न्याय सुनाऊँ। इतना सुनकर परमहंसजी बोले "पंडतड़ा तू तो गरबागो, ले मैं सुनाऊँ।" इतना कहकर आप जो धारा-प्रवाह न्याय-सिद्धान्तपर बोलने लगे तो स्नेहीरामजी मंत्र मुग्ध हो गये और अपनी गलती पर क्षमा माँगा।

\+ + +

आप जब नवलगढ़ रहा करते थे उन्हीं दिनोंकी बात है पिलानीका एक नाई नवलगढ़ आया था। उस समय अधिकांश लोग पैदल यात्रा करते थे। ऊँटके अतिरिक्त और कोई वाहन न था। नाईने सोचा चाँदनी रात है रातभर चलकर झुन्झुनू पहुँच जाऊँ तो दूसरे दिन पिलानी चला जाऊँगा। अतः यह निश्चयकर वह पैदल चल पड़ा। रास्तेमें गाँवके बाहर एक टीले पर परमहंस जी बैठे मिले। नाईसे उसका वृत्तान्त पूछकर बोले यहीं सोजा सुबह चले जाना। नाईने सोचा कि रास्तेमें टोक दिया तो चलना नहीं चाहिये। वह उसी टीलेपर सो गया। सुबह जब उसकी आँखें खुलीं तो क्या देखता है कि पिलानी गाँवके बाहर ही टीले पर वह सोया हुआ था। उठकर वह घर चला गया। इस घटनासे उसे बड़ा आश्चर्य हुआ।

\+ + +

गोंडा जिला उत्तर प्रदेशमें पंथूपुरके काँसके जंगलमें एक औघड़ बाबा रहा करते थे। एक समय कुछ व्यापारी हाट करने लकड़मंडी जा रहे थे वे राह भूल कर उक्त जंगलमें भटकने लगे। घूमते-घूमते वे थक गए और प्यासके मारे उनका बुरा हाल था। उन्हें जंगलके बीच एक कुँआ दिखाई पड़ा वे उस ओर गये पर रस्सी या डोल न होनेसे वे निराश होकर वहीं बैठ गये। इतने ही में बड़े विकट वेश वाले एक साधु उसी पतलो या सरकंडेके जंगलमें से आकर उन व्यापारियों को बुलाने लगे। उसी कुँएके ऊपर उनके हाथ फैलाते ही उसमें से जल बाहर धारमें गिरने लगा। उन व्यक्तियोंने अपनी प्यास बझाई और बाबाको चार-चार आने पैसे भेंट चढ़ाकर अपनी राह हो लिए। उसके बादसे बाबा न जाने किधर निकल गये। उस क्षेत्रमें एक सरकारी डाक बंगलाके पास बनी एक समाधि उनका स्मारक है।

\+ + +

औघड़ सन्तोंके कोपसे 'ब्रह्म लूक' उत्पन्न होनेकी घटना प्रायः देखने सुननेमें आयी है। बिहार राज्यके भोजपुर जिलाके गुंडी और पैगा ग्रामके बीचमें परमहंस जी नामक एक उच्च साधुकी समाधि है। वहीं कुँआ और आमकी वाटिका है। परमहंसजीकी पक्की कुटी आज भी मौजूद है। औघड़ साधु टंगिया बाबा एक समय परमहंसजीसे मिलने आये। चमत्कार दिखानेका आग्रह करने पर उनके फूँक मारते ही परमहंस जीके दुशालाका एक कोना जल गया। जब उन्होंने पूरा दुशाला जला डालने को कहा तो टंगिया बाबा औघड़ने एक फूँक मारी और सम्पूर्ण दुशाला राखका ढेर हो गया। उक्त स्थानमें आज भी उस दुशाला की राखको बोतलमें बन्दकर बाबाके कीर्ति-स्मारकके रूपमें सुरक्षित रक्खा गया है।

\+ + +

अघोरी आत्माराम जीने आरामें एक समय एक कनफटा योगीके ललकारने पर एक छाँटामें रखे भूसे को फूँक दिया था। वह आगका शोला बन कनफटा योगीकी ओर बढ़ चला था।

\+ \+ \+

आराके गाँगी श्मशानमें साधनरत अघोरी आत्माराम पर लकड़ीसे मार देनेके कारण एक स्थानीय जमीन्दार कुलके नाशकी कथा उस क्षेत्रमें सर्व विदित है। बादमें उसके वंशमें या तो लोग औघड़ होकर कहीं चले गये अथवा पागल होकर मर गये थे।

\+ \+ \+

टंगिया बाबा औघड़ एक चौकीपर एक अन्य महात्माके साथ बैठे थे। उस महात्माने चमत्कार दिखानेका अनुरोध किया। टंगिया बाबाने अपनी टाँगी (कुल्हाड़ी) से चौकी को ठोंक दिया। वह जमीनसे एक हाथ उठकर काँपने लगी थी।

———

रुद्राक्ष ७

बाबा किनारामकी अघोर-साधना

भारतवर्ष जिस प्रकार प्राकृतिक वैभवकी दृष्टिसे अत्यन्त सरस व समृद्ध है, उसी प्रकार आध्यात्म-साधना और अन्यान्य साधन और पंथ, ब्रह्म-निरुपण, परमानन्दकी अनुभूति, निर्गुण और सगुण ब्रह्मकी प्राप्तिकी दृष्टिसे भी उतना ही अधिक समृद्ध रहा है। शैव, शाक्त, वैष्णव, सौर और गाणपत्य सम्प्रदायोंके अतिरिक्त कई सहस्र वैचारिक और साधना-सम्प्रदाय हमारे देशमें समुद्भूत हुए। असंख्य साधकोंने अपनी तपस्या द्वारा जिन अलौकिक तत्त्वोंका दर्शन करके आलोक-सामान्य-शक्तियाँ हस्तगत कर लीं या यों कहना चाहिये कि वे शक्तियाँ या सिद्धियाँ स्वतः उन्हें प्राप्त हो गयीं, जिनके चमत्कारिक गुणोंके कारण वे सामान्य जनताके श्रद्धा भाजन बन गये। हमारे यहाँ पुरानी सूक्ति ही है 'सर्व देव नमस्कारं केशवं प्रति गच्छति' सम्भवतः इसीलिये अनेक प्रकारके दर्शनों और विचार सरणियोंके होते हुए भी यहाँ किसी प्रकारका वैसा धार्मिक संघर्ष नहीं हुआ जैसा योरोपमें धार्मिक जेहाद या धर्म-युद्ध हुआ करते थे। हमारे यहाँ विभिन्न-मतावलम्बी गृहस्थ, साधक और विरक्त सभीको अपनी-अपनी भावनाके अनुसार किसी विशेष देवी-देवतामें आस्था रखने या किसी विशेष साधना-पंथका अवलम्ब लेनेमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं हुई। यद्यपि दार्शनिक और सैद्धान्तिक-दृष्टिसे परस्पर खण्डन-मण्डन होते रहे तथापि साधनाके क्षेत्रमें किसी प्रकारका संघर्ष या विरोध कभी नहीं हुआ। इन्हीं अनेक प्रकारके साधना-पंथोंमें अघोर-पंथका भी विशिष्ट महत्त्व है।

अघोर-पंथके जिन अनेक प्रसिद्ध साधकोंका व्यापक सम्मान है उनमें काशीके बाबा किनारामका बड़ा महत्त्व माना जाता है। बाबा किनारामका जन्म वाराणसी जनपदकी तहसील चन्दौलीके रामगढ़ ग्राममें हुआ था। उन दिनों वहाँ रघुवंशी क्षत्रियोंका बोलबाला था। उन्हींके कुलीन वंशमें बाबा किनारामका जन्म हुआ था। ये तीन भाई थे, जिनमें ये सबसे बड़े थे। इनका जन्म संवत् १६५८ विक्रमीमें हुआ था। श्रीमद्भगवद्गीतामें कहा हुआ है—

'शुचीनां श्रीमतां गेहे योग भ्रष्टोऽभिजायते'

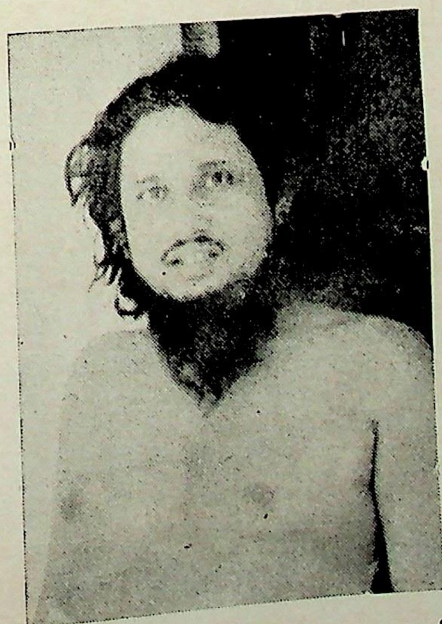
(जिन योगियोंकी किसी कारण योग-साधनामें बाधा पड़ जाती है तो वे अगले जन्ममें किसी श्रीमान् संपत्तिशाली परिवारमें या विद्वत्-परिवारमें जन्म लेते हैं) वे केवल ऐसे उच्च कुलीन परिवारोंमें जन्म ही नहीं लेते बल्कि प्राक्तन-जन्मके सभी आध्यात्मिक संस्कार भी लिए चले आते हैं। ठीक यही दशा बाबा किनारामकी भी थी। अपनी अबोध बाल्यावस्थामें ही इनके प्राक्तन-जन्मका

सुप्तबोध इन्हें निरन्तर प्रेरित करता रहता था और ये अपने समवयस्क बालकोंको एकत्र करके नाम-कीर्तन उनसे कराया करते थे।

उस समयकी सामाजिक परिपाटी और रीतिके अनुसार छोटे-छोटे जामाता और छोटी-छोटी बहुएँ देखनेका व्यापक प्रलोभन था। इसीलिये जब ये केवल १२ वर्षके बालक ही थे तभी इनका विवाह कर दिया गया। यद्यपि इन्होंने अपने पूर्व-जन्मके संस्कारके कारण बहुत आनाकानी की, किन्तु उन दिनों बालकोंकी बात सुनता कौन था? तीन वर्ष पश्चात् जब द्विरागमन (गौना) का निश्चय किया गया तो ससुराल जानेके एक दिन पूर्व अपनी मातासे आग्रह किया कि आज मुझे दूध-भात खिलाओ। माताने तत्काल टोककर कहा कि ऐसे अवसरपर दूध-भात नहीं खाया जाता, किन्तु बालहठ तो बालहठ ही होता है। इन्होंने हठ करके दूध-भात ही खाया। दूसरे दिन उनकी ससुरालसे क्या समाचार आता है कि वे अपनी जिस पत्नीका गौना लेने जानेवाले थे, उसका देहावसान हो गया है। यह समाचार सुनते ही परिवारवालोंको बड़ा दुःख हुआ और साथ ही सबको बड़ा आश्चर्य हुआ कि किनारामको अपनी पत्नीके मृत्युका आभास कैसे हो गया कि उन्होंने दूध-भात माँगकर खाया, जो कि केवल मृतक कर्मके अवसरपर ही ग्राह्य होता है।

घरके काम और पढ़ने-लिखनेमें रुचि न होनेके कारण ये अनमनेसे रहा करते थे। एक दिन अचानक इनके मनमें क्या आया कि विरक्त होकर घरसे निकल पड़े और घूमते-घामते गाजीपुर जनपदके कारों ग्राममें जा पहुँचे, जहाँ उस समय रामानुजी सम्प्रदायके अनुयायी महात्मा शिवारामजी रहा करते थे जिनके स्मारककी पूजा अब भी कारों ग्राममें होती है। बाबा किनारामजी इन्हीं महात्मा शिवारामजीकी निरन्तर सेवामें तल्लीन हो गये। इन्होंने कई बार महात्मा शिवारामजीसे प्रार्थनाकी कि हमें शिष्य बना लीजिए किन्तु वे निरन्तर टाल-मटोल करते रहे किन्तु जब किनारामजीने अपनी सेवासे उन्हें प्रसन्न कर लिया तब एक दिन शिवारामजीने इनसे कहा कि चलो हमारे साथ आज गंगातट चले चलो, वहीं हम तुम्हें उपदेश देगें।' यह सुनकर किनारामजी उनका बाघम्बर और पूजनका सामान लेकर साथ-साथ चल पड़े। कुछ दूर चलनेपर शिवारामजीने इनसे कहा कि "तुम यह सब लेकर गंगातटपर चलो हम अभी शौचसे निवृत्त होकर आते हैं।" अपने गुरुजीकी सब सामग्री लेकर बाबा किनाराम घाटकी ओर बढ़ चले और तटसे कुछ दूरपर ही खड़े होकर बड़े भक्ति भावसे गंगाजीको प्रणाम करनेको झुक गये। ज्योंही उन्होंने सिर उठाया तो देखते क्या है कि गंगाजीका जल बढ़कर उनके चरण छू रहा है। अपने गुरुकी इस महिमासे बाबा किनारामजी बड़े प्रभावित हुए और उनके मनमें यह विचार हुआ कि जिस महात्माकी सेवा करनेमें इतनी शक्ति है उनसे मंत्र-दीक्षा प्राप्त करनेपर कितना बड़ा फल मिलेगा। महात्मा शिवाराम भी दूरसे यह लीला देख रहे थे और उन्हें

बाबा किनाराम जी को अपने जीवन काल में उत्तराधिकार सौंपते हुये बाबा कालूराम जी तथा बाबा बीजाराम एवं बाबा भवानी राम।



विचित्र मुद्रा में औघड़ भगवान राम जी



भी यह विश्वास हो गया कि यह अधिकारी शिष्य है इसे अवश्य मंत्र-दीक्षा देनी चाहिए।

स्नान-पूजन आदिसे निवृत्त हो जानेपर महात्मा शिवारामने इन्हें मन्त्रोपदेश दिया और अपने साथ ठाकुर द्वारेमें ले आए, तबसे बाबा किनाराम अपने गुरुके साथ ही रहकर अत्यन्त निष्ठाके साथ उनकी सेवा करते रहे।

इसी बीच संयोगवश बाबा शिवारामजीकी धर्मपत्नीका स्वर्गवास हो गया। महात्मा शिवारामजीकी इच्छा हुई कि उजड़ी हुई गृहस्थीको बसानेके लिए दूसरा विवाह कर लिया जाय। यह बात बाबा किनारामजीको अच्छी न लगी। उन्होंने अपने गुरुजीसे स्पष्ट कह दिया कि "महाराज! यदि आप दूसरा विवाह कर लेगें तो मैं दूसरा गुरु कर लूँगा"। इसपर बाबा शिवरामजीने झल्लाकर कहा, "जा कर ले दूसरा गुरु।" बस फिर क्या था बाबा किनारामने उसी समय अपना आसन उठाया और नईडीह गाँवमें जा पहुँचे। वहाँ पहुँते ही आप देखते क्या हैं कि एक बुढ़िया बैठी अपने भाग्यपर कलप रही है। इन्होंने उससे दुखका कारण पूछा तो बुढ़ियाने कहा, 'जाओ बाबा तुम माँगो खाओ, हमारा दुखड़ा जानकर क्या करोगे?" पर जब इन्होंने बहुत आग्रह किया तो बुढ़ियाने कहा—'बाबा हमारे बेटेपर जमींदार-का पोत चढ़ गया है, इसलिए वह उसे पकड़ ले गया।' यह सुनते ही बाबा किनारामने कहा कि "चल तू मुझे उस जमींदारके यहाँ ले चल।" बुढ़ियाके मनमें न जाने क्या बात आई कि आगे-आगे बुढ़िया और पीछे-पीछे बाबा किनारामजी जमींदारके द्वार पर जा पहुँचे। बुढ़ियाने लड़केकी ओर संकेत करके कहा "देखो वही धूपमें हमारा बच्चा बैठा है।" बाबा किनारामने उस जमींदारसे कहा कि उस लड़केकों मुक्त कर दो। जमींदार बोला–'अरे बाबा! तुम साधु हो भिक्षा लो और अपना काम देखो।' पर जब बाबा अड़ गये तो जमींदारने चिढ़कर कहा कि ऐसा ही इससे मोह है तो इसके सिर जितना पोत है वह दो निकाल कर। बाबा किनारामने उस लड़केसे कहा, "खड़ा तो हो जा बेटे।" जब लड़का खड़ा हो गया तब बाबा किनारामने जमींदारसे कहाकि 'ले यहाँकी धरती खुदवाले और जितना तेरा रुपया हो निकलवा ले।' ज्योंही हाथ-दो हाथ धरती खोदी गई त्यों ही सब आँखें फाड़-फाड़कर देखते क्या हैं कि वहाँ रुपया-ही-रुपया पड़ा है। जमींदारका माथा चक्कर खाने लगा और वह दौड़कर उनके पैरपर जा पड़ा।

बुढ़ियाके लड़केको वहाँसे छुड़ाकर इन्होंने उस बुढ़ियासे कहा—"जा अपने लड़केको ले जा।" न वह बुढ़िया इनसे इतनी प्रभावित हुई कि उसने कहा कि—"महाराज! यह लड़का आपका है आपको सौंपती हूँ, आप साथ ले जायँ।" बाबा किनारामने उसे बहुत समझायापर वह कहाँ माननेवाली थी। अन्तमें विवश होकर ये उस बालक बीजारामको अपने साथ लेकर गिरनारकी ओर चल पड़े। वहाँ पहुँचकर उन्होंने बीजारामको तो नीचे छोड़ा और आप तप करने ऊपर चढ़ गये। कहा जाता है कि वहींपर त्रिमूर्तिके अवतार अन्तरिक्षवासी दत्तात्रेयजीका

इन्हें दर्शन हुआ और उनसे सत्सङ्ग करके ही उसका विवरण इन्होंने 'विवेक सार' नामक पुस्तकमें दिया।

इन्होंने अपने शिष्य बीजारामको आदेश दे रखा था कि केवल तीन घरोंसे भिक्षा माँग लाया करो। गिरनारसे उतरनेपर ये उसी नियमका पालन करते हुए उत्तराखण्डकी ओर चल पड़े। जूनागढ़ पहुँचकर जब इन्होंने वहाँपर आसन जमाया और बीजारामको भिक्षा लानेका आदेश दिया तो जूनागढ़के मुसलमान शासककी आज्ञासे बीजाराम पकड़कर कारागारमें डाल दिये गये। वहाँ जाकर बीजारामने देखा कि यहाँ सब साधु ही साधु बन्दी हैं, जिन्हें चक्की पीसनी पड़ती है। वहाँ ९८१ चक्कियाँ थीं, जिनमेंसे एक चक्की इन्हें भी थमा दी गयी। यह घटना संवत् १७२४ विक्रमी को है। जब बाबा किनारामजीने देखा कि बीजाराम लौटकर नहीं आया तो उन्होंने ध्यान करके बन्दी गृहका सारा समाचार जान लिया। फिर क्या था ? वे तत्काल नगरमें जा धमके और ये भी भिक्षा माँगनेके आरोपमें पकड़कर उसी कारागारमें पहुँचाये गये। इन्हें भी एक चक्की दी गयी। आपने चक्की देखकर उससे कहा चल पर वह न चली, इसपर इन्होंने एक कुबरी चक्कीपर मारा तो देखते-देखते वहाँकी सभी चक्कियाँ चलने लगीं। जब यह समाचार वहाँके शासकके कानोंतक पहुँचा तो वह चकित रह गया और उसने आज्ञा दी कि 'उस साधुको हमारे पास ले आओ।' सिपाहियोंने पहुँचकर बाबाको अत्यन्त आदरके साथ प्रणाम किया और शासकके पास चलनेकी प्रार्थना की। बाबा किनारामजी अपने शिष्य बीजारामको लेकर शासककी राजसभामें जा पहुँचे। उनको देखते ही बादशाहने उनका बड़ा सम्मान किया और बहुतसे रत्न लाकर उन्हें भेंट किया। बाबा किनारामने उनमेंसे दो चारको उठाकर मुखमें डालकर थूक दिया और कहा, 'यह तो न मीठा है न खट्टा'। तब उस शासकने हाथ जोड़कर उनसे सानुरोध निवेदन किया कि 'हमें कुछ सेवाका अवसर दिया जाय।' बाबाने कहा, 'तेरी यही श्रद्धा है तो आजसे यह नियम बना दे जो साधु-फकीर यहाँ आवें उन्हें हमारे नामसे ढाई पाव आटा दिया जाय।' उस मुसलमान शासकने इस आदेशको स्वीकार कर लिया और इस नियमका निरन्तर पालन किया गया। इतना ही नहीं बाबाके आशीर्वादसे ही उस शासककी वंश-परम्परा भी चली।

वहाँसे चलकर ये उत्तराखंड हिमालयमें जा पहुँचे और वहाँ बहुत दिनों तपस्या करनेके उपरान्त लौटकर काशी चले आये और केदारघाटके पास हरिश्चन्द्र-घाटपर श्मशानमें जा पहुँचे। उन दिनों वहाँ एक अघोरी साधु बाबा कालूराम रहा करते थे। उनकी विशेषता यह थी कि वे उस श्मशानपर दाहके लिये आनेवाले मृतकोंकी पड़ी हुई खोपड़ियोंको अपने पास बुलाकर उन्हें चना खिलाया करते थे। यह चमत्कार देखकर बाबा किनारामजी चकित हो उठे। इन्होंने भी तत्काल अपनी शक्तिका परिचय देकर ऐसा स्तम्भन किया कि जब बाबा कालूरामने खोपड़ियाँ बुलाईं तो वे आईं ही नहीं। बाबा कालूरामने तत्काल ध्यान किया तो ज्ञात हुआ कि बाबा किनाराम आये हुए हैं। बाबा किनारामजीने आगे बढ़कर कहा,

महाराज! 'यह क्या खेल कर रहे हैं चलिए अपने स्थानपर चलिए।' बाबा कालूरामने कहा कि 'मुझे बड़ी भूख लगी है मछली खिलाओगे।' बाबा किनारामजीने तत्काल गंगाजीसे कहा, 'गंगिया ला एक मछली तो दे जा।' इतना कहना था कि एक बड़ी-सी मछली पानीसे बाहर आ खड़ी हुई। बाबा किनारामजीने उसे उठाकर भूना और तीनोंने उसे भोग लगाया। वहाँसे उठकर आगे बढ़े तो कालूरामजीने एक मुर्दा बहते हुए देखा और बाबा किनारामजीसे कहा, 'देख मुर्दा आ रहा है।' बाबा किनारामजीने कहा, 'महाराज! यह मुर्दा नहीं यह तो जीवित है।' इसपर बाबा कालूरामने कहा कि 'जीवित है तो बुला ले।' बस बाबा किनारामजीने वहींसे मुर्देको ललकारा कि इधर आ। वह मुर्दा किनारे आ लगा और तत्काल किनारे बाबा आकर खड़ा हो गया। किनारामजीने कहा देख क्या रहा है अपने घर जा।' वह अपने घर लौट गया। इस लीलाको देखकर सबको बड़ा विस्मय हुआ।

जब यह सब समाचार उस मुर्देकी माँने सुना जिसे उन्होंने जिला दिया था तो उसने महाराजके पास आकर कहा, 'महाराज! आपने इसे जीवन-दान दिया है तो आजसे यह आपका ही बालक है।' बाबा किनारामजीने उसे अपने साथ ले लिया और उसका नाम रामजियावनराम रख दिया। यह घटना संवत् १७५४ विक्रमीके आस-पासकी है।

इतना परिचय प्राप्तकर चुकनेपर बाबा कालूरामने बाबा किनारामको अपने वास्तविक स्वरूपका दर्शन देकर उन्हें क्रींकुण्ड (शिवाला, वाराणसी) में ले जाकर बताया कि यही गिरनार है और इसी कुंडमें सारे तीर्थ विद्यमान हैं। वहीं बाबा किनारामको अघोर-मंत्र देकर उन्हें शिष्य बना लिया। कुछ लोगोंका मत है कि श्रीदत्तात्रेयजीने ही उन्हें गिरनार पर्वतपर अघोर-मंत्रका उपदेश दिया था और कुछ लोगोंका मत है कि दत्तात्रेयजीने ही कालूरामजीका रुप धरकर उन्हें काशीमें उपदेश दिया।

तबसे बाबा किनाराम उसी स्थानपर रहते रहे और बीच-बीचमें कभी रामगढ़ भी आया-जाया करते रहे। इन्होंने अपने प्रथम गुरु बाबा शिवारामजीकी स्मृतिमें चार वैष्णव मठ स्थापित किए, मारुफपुर, नईडीह, परानापुर और महुआरमें तथा द्वितीय गुरुकी स्मृतिमें क्रींकुण्ड काशीके अतिरिक्त रामगढ़ जिला बनारस, देवल जिला गाजीपुर और हरिहरपुर जिला जौनपुरमें अघोर-मतकी गद्दियाँ स्थापित कीं। इनके अतिरिक्त कुटियाँ तो अपरिमित स्थापित कीं। संवत् १८२६ में १४२ वर्षकी अवस्थामें इन्होंने शिवलोक प्राप्त किया। इनकी रची हुई अनेक पुस्तकोंमेंसे केवल पाँच प्रकाशित हुई हैं (विवेकसार, रामगीता, रामरसाल, गीतावली और उन्मुनीराम)।

बाबा किनारामने अघोर-मतको अपनी पुस्तक विवेकसारमें निम्न प्रकारसे स्पष्ट किया है। इसीके अनुशीलनसे उनकी अघोर-साधनाका परिचय भी मिलता है।

अघोर-मत

विवेक सार नामक ग्रन्थ परम पूज्य अघोरेश्वर महाराज किनारामजी कृत है। किस मत, पंथ या विषयका विवेचन इस ग्रन्थमें किया गया है, इसका पुस्तकसे ही ढूँढ़ना अधिक युक्ति संगत होगा। ग्रन्थके लेखके विषयका अपनी बुद्धि विलासके आधारपर निरूपण करनेके बजाय ग्रन्थकारके ही कथनका सर्वप्रथम सहारा लिया जाता है। महाराज किनाराम पुस्तकके अन्तमें लिखते हैं कि—

यह संसार असार अति पाँच भूतको वारि।
ताते यह अवधूत मत विरच्यों स्वमति विचारि ॥

इसके अनुसार महाराज किनारामने अवधूत मतके विभिन्न पहलुओंपर प्रकाश डालनेके लिये विवेकसार लिखा।

(१) अवधूत मत क्या है और उसका प्रादुर्भाव कब और कैसे हुआ ?

अवधूत और अघोर दोनों शब्द एक ही अर्थमें प्रयुक्त होते हैं। अवधूत या अघोर शब्द जहाँ भी इस पुस्तकमें आवे उसे इसी रूपमें ग्रहण किया जाय। अघोर या अवधूत वास्तवमें एक पद है। जब पूर्ण ज्ञानकी प्राप्ति हो जाती है तो संसारके सभी पदार्थोंमें भेद-बुद्धिका विनाश हो जाता है और उसी अवस्थाको प्राप्त करनेवालेका नाम अवधूत या अघोरी है। अघोरका शाब्दिक अर्थ भी यही है कि जहाँ घोर अथवा भेद बुद्धिका अभाव हो जाय। इस प्रकार देखनेसे परमहंस गति कैवल्यपद अथवा अघोर एवं अवधूतपद एक ही स्थितिके विभिन्न नाम हैं।

अघोर-मतके सर्वप्रथम उपदेशकर्ता और वेषधारण करनेवाले भगवान शंकर ही माने जाते हैं। उनको अनेक ग्रन्थोंमें अघोरेश्वर शब्दसे सम्बोधित किया गया है। प्राचीनकालसे अनेक संत, सिद्ध और महात्मा इस अवस्थामें आये हैं और उन्होंने इस पदकी प्राप्ति की है, किन्तु भगवान शंकरके बाद भगवान दत्तात्रेय ही इस मतके उपदेशक, प्रतिपादक एवं आचार्य माने गये हैं। उनके बाद भी अनेक संत, महात्मा एवं सिद्ध समय-समयपर अवतरित होते रहे और अघोर अथवा अवधूत-पदकी प्राप्तिके लिये उपदेश देते रहे।

जैसा कि ऊपर लिखा गया है, अवधूत या अघोर एक स्थिति अथवा पद है, जो पूर्ण ज्ञान प्राप्तिके पश्चात् प्रत्येक पदार्थमें भेद-बुद्धिके विनाश होनेपर प्राप्त होती है। तब प्रश्न यह उठता है कि महाराज किनारामने इसे मतकी संज्ञा क्यों दी ? समाज और समयके अनुरूप मूल तत्त्वको समझानेके लिये संतोंने विभिन्न प्रणालियाँ अपनायी हैं। इसीके अन्तर्गत महाराज किनारामने अवधूत अथवा अघोर पदकी प्राप्तिके लिये कुछ सुलभ तथा ग्रहण करने योग्य उपदेश दिया और उसे लिपिबद्ध किया। उन्हीं तरीकों या प्रणालियोंका नाम उन्होंने अवधूतमत दे दिया। विशेष रूपसे इसका कथन इस प्रकार है कि—जिन तौर-तरीकोंको अपनाने या जिन

साधनोंके करनेसे अभेद बुद्धि उत्पन्न हो, पूर्णज्ञान उपलब्ध हो, उसीका नाम अवधूत अथवा अघोर-मत है।

महाराज किनाराम प्रारम्भमें बाबा शिवारामके शिष्य थे, जो कि ग्राम कारों जिला गाजीपुरमें रहते थे और रामानुजी सम्प्रदायके एक महात्मा थे। उनसे गुरु मन्त्र लेनेके पश्चात् और बहुत दिनों तक उनकी सेवा तथा साधना सम्पूर्ण करनेके पश्चात् महाराज किनारामका चित्त वहाँसे भी विरक्त हो गया और वे अनेक तीर्थोंमें भ्रमण करते, संतोंसे समागम करते, ज्ञानार्जनके निमित्त जब उन्मुनि अवस्थामें समय बिता रहे थे तो उन्हें भगवान दत्तात्रेयने दर्शन दिया। श्रीदत्तात्रेयसे जब महाराज किनारामने अपनी अवस्था और क्लेशका वर्णन किया तो दत्तात्रेयने उन्हें आत्मज्ञानका उपदेश दिया। महाराज किनारामने "विवेकसार" पोथीमें लिखा है कि दत्तात्रेयके उपदेशके पश्चात्—

"जस कछु मो कहँ लखि परयो सोई समझ उर राखि।
कहों सो तेहि अनुसार अब सत्य नामकी साखि॥"

भगवान दत्तात्रेय भगवान शंकरके बाद अघोर-मतके उपदेशकर्ता थे और उन्हींके उपदेशसे महाराज किनारामको ज्ञान प्राप्त हुआ। बाबा कीनारामके लिखनेके अनुसार जैसा भी उनको श्रीदत्तात्रेयजीका उपदेश समझमें आया जिसको कि उन्होंने हृदयंगम किया उसीके अनुसार उन्होंने उपरोक्त ग्रन्थकी रचना की। इन्हीं कारणोंसे मैं महाराज किनाराम द्वारा रचित पोथी "विवेकसार" को अघोर-मतपर परम प्रामाणिक पुस्तक मानता हूँ।

(२) साधनाकी महत्ता तथा व्यापकता एवं बाबा किनारामके अनुभव

महाराज किनारामने जो "विवेकसार" ग्रन्थकी रचनाकी है वह केवल प्रगाढ़ अध्ययन या बुद्धि-बलके भरोसे नहीं। उन्होंने सत्यका अन्वेषण किया। पूर्व-जन्मके संस्कारके प्रभावसे प्रेरित होकर उन्होंने बाल्य अवस्थामें ही अपने माँ-बाप कुटुम्ब, परिवारका परित्याग कर दिया। पुस्तकमें निर्दिष्ट मार्ग या विधिकी आधारशिला इनकी अघोर-साधना और सत्यको जाननेकी प्रबल इच्छाके कारण अनेकानेक साधन-पद्धतियोंका आलम्बन, व्यापक भ्रमण, सत्संग आदि हैं। महाराज किनारामने अनेक मतोंका आदरपूर्वक आलम्बन किया जो केवल इसी बातसे स्पष्ट होता है कि उनके प्रथम गुरु वैष्णव थे और जिसके लिये उनके हृदयमें सिद्धावस्था प्राप्त होनेके पश्चात् भी पूर्ण श्रद्धा थी। उपर्युक्त ग्रन्थमें उन्होंने लिखा है कि—

"कलपनहूँ के कल्पतरु गुरुदयाल जिय जानि।
सिवा राम है नाम सुचि राम किना पहिचानि॥"

यहाँपर बाबा किनारामने महाराज शिवारामको कल्पतरुसे भी बड़ा माना है और लिखा है कि अपने नामके अंतमें राम शब्द इसलिये जोड़े हुए थे कि शिवारामसे उनका सम्बन्ध चिरस्थायी रहे। चूँकि शिवारामजी रामानुजी

वैष्णव महात्मा थे, अतएव इसमें सन्देहका कोई कारण नहीं है कि इन्होंने बाबा किनारामजीको राम शब्दका उपदेश किया हो। यही कारण है कि ग्रन्थमें श्रीकिनारामजीने लिखा है—

"राम नाम सतसंग सम साधन और न कोय।
श्रुति सिद्धांत विचार यह जानई विरला कोई॥"

अन्तमें जब श्रीदत्तात्रेयजीने उनको साक्षात्कार दर्शन दिया तो उनके विषयमें बाबा किनारामजी लिखते हैं—

"आज्ञापुरी शक्तियुत शिव सिद्धेश्वर जान।"

इस स्थलपर श्रीकिनारामजी दत्तात्रेयको साक्षात्कार शिव एवं सिद्धेश्वर कहा है और दत्तात्रेय द्वारा उपदेशित सिद्धान्तको सर्वोपरि कहा है :—

"यह सिद्धान्त सब पर कह्यो लह्यों लक्ष्य गुरु पाय।
श्रवण करत भव फाँस तें मुक्ति होई नर जाय॥"

इससे प्रकट होता है कि महाराज किनारामने निर्भय होकर, बिना किसी पूर्वाग्रहके, केवल सत्यके अनुसंधानके निमित्त अनेक सम्प्रदायोंके सिद्धों और महात्माओंका सत्संग किया, श्रद्धापूर्वक उपदेश प्राप्त किया, तदनुसार उनके द्वारा निर्देशित साधना-पद्धतिको पूर्ण करते हुए सत्यको प्रत्यक्ष किया। अतएव उनकी अभेद बुद्धि उनके उदार चरित्र और प्रबल जिज्ञासाका सहजमें ही बोध हो जाता है।

महाराज किनारामने दत्तात्रेयके दर्शन करनेपर उनके चरणकी वन्दना करते हुए उनसे जो प्रार्थनाकी वह उन्हींके शब्दोंमें निम्न प्रकारसे है—

"परयो कठिनभव फाँस महँ विकल महा भयभीत।
अपनो तजि प्रतिपालिये और नहीं जगमीत॥
जनम मरन संकट निरखि अधिक माख जिय सोय।
चरन शरण गुरु देव अब मोहि सम दीन न कोय॥"

उपर्युक्त कथनसे सहजमें अनुभव हो जायेगा कि जब बाबा किनारामने महाराज शिवारामसे उपदेश प्राप्तकर उनके संसर्गमें रहते हुए साधना की, तब तक भी उन्हें पूर्ण शान्ति प्राप्त नहीं हुई थी। यद्यपि उस समय भी वे उच्चकोटिकी स्थितिमें पहुँच चुके थे। यही कारण है कि जिस समय भगवान दत्तात्रेयजीने उन्हें दर्शन दिया तो वे अत्यन्त दीनभावसे दुखों के अत्यंतिक निवृत्तिके निमित्त सिद्धेश्वर दत्तात्रेयकी शरणमें अपनेको अर्पित किया। अतएव ऐसे सत्यकी खोज करनेवाले संतकी वाणीपर या उसके बताए हुए मार्गपर चलनेके लिये किसीको भी संदेहका कारण नहीं होना चाहिये।

(३) अघोर-पद (ज्ञान-प्राप्ति) एवं अभेद बुद्धि कब प्राप्त होती है ?

महाराज किनारामको अपने प्रथम वैष्णव गुरु श्रीशिवारामजी महाराज द्वारा निर्दिष्ट मार्गसे साधना पूर्ण कर चुकनेके बाद भी जब समदृष्टिकी प्राप्ति नहीं

हुई तब उनको सत्यके अन्वेषणमें उन्मुनि अवस्थामें भगवान दत्तात्रेयका दर्शन लाभ हुआ। सिद्धेश्वर दत्तात्रेयको देखते ही बाबा किनारामको अपने उच्चावस्थाके प्रभाव, अनुभव तथा संचित कर्मोंके प्रभावसे यह समझनेमें देर नहीं लगी, कि उन्हें एक मुक्त आत्माके दर्शन हो गए, जिसके उपदेश एवं कृपासे वे परम सत्यको उपलब्ध कर लेंगे। अतएव उन्होंने पूर्ण समर्पण करते हुए भगवान दत्तात्रेयसे प्रार्थनाकी कि वे उनको शरणमें लेकर ऐसा उपदेश करें जिसके करनेसे उन्हें क्लेशोंसे अत्यधिक निवृति मिले। बाबा किनारामने सिद्धेश्वरसे प्रार्थनाकी कि—

"ज्ञानाज्ञान विचार पुनि-कहिये दीन दयाल।
जेहि तेहिं आतम को लह्यो मेटि विषय जंजाल॥"

भगवान दत्तात्रेय बाबाजीके उच्च भाव और जिज्ञासाको देखते हुए क्लेशोंके निवारणार्थ जो उपदेश किया उसका मूल था—

"अमर बीज को ज्ञान जो, शिष्य सुनावों तोहिं।
लघु विशाल नाहीं कछु, तू आतम रत होहिं॥"

इससे विदित होता है कि भगवान दत्तात्रेयने श्रीकिनारामजी महाराजको बतलाया कि परम सत्यकी उपलब्धिके लिए उन्हें आत्मामें स्थित होना पड़ेगा, जिससे उन्हें यह अनुभव होगा कि निखिल विश्व एवं ब्रह्माण्डमें न तो कोई वस्तु लघु है और न तो कोई विशाल है। दूसरे शब्दोंमें भगवान दत्तात्रेयने बाबा किनारामको समझाया कि आत्मरत होनेसे शुद्ध ज्ञानकी उपलब्धि होती है और तत्पश्चात् संसारके समस्त पदार्थोंमें समत्व बुद्धि उत्पन्न होती है, जिससे अभेदका अनुभव होनेसे साधक अघोर-पदकी प्राप्ति करता है। भगवान दत्तात्रेयजीने इस प्राप्तिको ज्ञानका अमरबीज कहा है—अर्थात् इस पदकी प्राप्तिके बाद इसका पुनः विनाश नहीं होता और साधकमें पुनः क्लेशोंकी, जो कि अज्ञान अथवा अविद्यासे उत्पन्न होते हैं, पुनः उत्पत्ति नहीं होती।

(४) आत्मज्ञानकी प्राप्तिके उपाय

आत्मज्ञानकी प्राप्तिके लिये महाराज किनारामने परमगुरु दत्तात्रेयसे अनेक प्रश्न किये और भगवान दत्तात्रेयने शंकाओंके निवारणार्थ प्रत्येकका उत्तर दिया। मुझे ऐसा जान पड़ता है कि इन्हीं प्रश्नोत्तरोंमें सत्यके अन्वेषकको किन-किन तत्त्वोंकी जानकारी होनी चाहिए, उसका वर्णन है और जिन-जिन तत्त्वों, वस्तुओं अर्थात् विषयोंका ज्ञान होना एक साधकके लिए आवश्यक है उसको ही प्रत्येक अघोरी या अवधूतको साधनावस्थाके समय उपलब्ध करना चाहिए। मुझे ऐसा समझमें आता है कि जिन अनेक प्रश्नों, पदार्थों या समस्याओंको समुचित रूपसे न जानने या न समझनेके कारण, भ्रम उत्पन्न होता है, उसीके सही रूपसे न समझनेसे जीवकी बुद्धि भ्रमित हो जाती है और वह विघ्नोंके कारण अपनी साधनामें श्रद्धा और विश्वासके साथ लग नहीं पाता, जिसके कारण साधनाके अपूर्ण रह जानेसे उसकी स्थिति आत्मामें नहीं होती और वह अघोर अथवा अवधूत पदकी प्राप्ति नहीं

कर पाता। अतएव महाराज किनारामने, जो इन अनेक समस्याओं और गुत्थियोंके उलझनोंको जान चुके थे, प्रत्येक जिज्ञासुके लाभार्थ, पोथी विवेकसारमें इसकी चर्चा की। भगवान दत्तात्रेय द्वारा जो जानकारी उनके उन प्रश्नोंके उत्तरमें मिली, उसको विचारपूर्वक समझनेकी चेष्टा की और उसको हृदयंगम किया। अतएव पाठकों, जिज्ञासुओं एवं साधकोंके लाभार्थ उसे नीचे दिया जाता है।

(५) अघोर-दर्शन

महाराज किनाराम और परम गुरु दत्तात्रेयके प्रश्नोत्तरका जो वर्णन बाबा किनारामजीने विस्तारपूर्वक पोथी विवेकसारमें किया है उसमें ही अघोर-मतका दर्शन दिया हुआ है। अघोर-दर्शनके मूलमें मान्यता है कि पाँच तत्त्वों एवं तीन गुणोंसे निर्मित जो यह सृष्टि है उसका अज्ञानमूलक सम्बन्ध ही जीवके दुःखका कारण है। उसमें जीव अन्धेके समान भटक रहा है। आशा, चिन्ता, कल्पना, कर्मके बन्धन तथा अनेक अन्य शंकाओंमें पड़ा हुआ जीव दुःख भोगता रहता है और विश्राम नहीं पाता। बाबाजी लिखते हैं—

"विषय वासना जीव तें, टारे टरै न कोय।
कामादिक अतिसय प्रबल, क्यों करि सुख रति होय॥"

अर्थात् आत्माकी अनात्मा विषयोंमें तत्परता ही जीवके दुःखोंके मूलमें हैं। अतएव आत्म एवं अनात्म विषयोंको पूर्ण रूपसे जानना प्रथम कर्त्तव्य है। जिज्ञासु या जीवको यह जानना चाहिये कि सभी दशाओंमें प्रत्येक देश तथा कालमें जो यह विश्व एवं ब्रह्माण्ड पाँच तत्त्वों एवं तीन गुणोंसे आच्छादित हो रहा है, उसका स्वरूप क्या है ? आत्माके गुण क्या हैं और उसका परमात्मासे क्या सम्बन्ध है ? वे कौन-सी वस्तुए हैं जो आत्मासे विलग हैं और जिनकी संज्ञा अनात्मा है। आत्माका अनात्म वस्तुओंसे जो सम्बन्ध हो गया है। बिना विचारपूर्वक ज्ञान और अज्ञानके विषयमें ठीक तरहसे बोध हुए उसका दूर होना सम्भव नहीं है।

(६) सृष्टिकी उत्पत्ति कैसे हुई और ये अनात्म-तत्त्व कैसे हुआ ?

अघोर-दर्शनके अनुसार सत्य पुरुषकी शक्तिसे ही पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि एवं आकाश ये पाँच तत्त्व तथा सत, रज और तम नामक तीन गुण उत्पन्न होते हैं। काम, क्रोध, मद, चिन्ता, आदि जीवके कष्टके कारण हैं, जिनके त्याग करनेसे और दया, आनंद, धैर्य, पवित्रता, जो जीवनके सहज गुण हैं, उनको धारण करनेसे तत्त्वोंकी वास्तविक जानकारी और ज्ञानकी उपलब्धि होती है। जीवके सहज गुणोंके साथ रमते हुए साधकको विज्ञानमय होना चाहिये और जो परम सत्य परमात्मा है उसीका संग करना चाहिये। जो परमात्मा परब्रह्म नामसे जाना जाता है, वही सत्य पुरुष है जिसकी कोई रूप या रेखा न होनेसे उसका किसी प्रकारसे वर्णन करना सम्भव नहीं है। अतएव उस सर्वव्यापी गुणातीत परमात्माका किसी अन्य प्रकारसे बोध कराना नितांत असम्भव है। उसको केवल एक मात्र सत्य सत्ताके

रूपमें ही जानना चाहिये। भगवान दत्तात्रेयने महाराज किनारामकी जिज्ञासाके उत्तरमें उपदेश किया कि—

"सत्य पुरुषको सत्य कहि, सत्य नामको लेखि।
रूप रेख नहि सम्भवे, कहिये कहा विशेष ॥"

ऐसे सत्य पुरुषका मध्य न तो चन्द्र उदयसे और न तो सूर्यके प्रकाशमें देखा जा सकता है। नभ, नक्षत्र, दिवस, निशि, पुण्य, पाप, सेव्य, सेवक, वेद, वाणी, वर्णाश्रम, निर्गुण, सगुण, ब्रह्मा, विष्णु, नारि, पुरुष या नाम और रूप एकके द्वारा भी वह जानने योग्य नहीं है। सृष्टि उत्पत्तिके पहले अनन्तकाल तक वह ब्रह्म एक ऐसी अवस्थामें रहता है, जिसमें उपरोक्त सभी वस्तुओंका अभाव होनेसे उसके स्वरूपका कोई वर्णन सम्भव नहीं है।

सृष्टि उत्पन्न करनेकी जब उसमें इच्छा जागृत होती है तो वह इच्छा ही एक अभूतपूर्व शब्दमें प्रकट होती है, जो ॐ अथवा "प्रणव" है। यही आदिशक्ति है। यही प्रणव वेदकी माता कही जाती है और इसीसे इच्छा क्रिया-शक्तिकी उत्पत्ति होती है जिनका सम्बन्ध पाँच तत्त्वों एवं तीन गुणोंसे होनेपर अगणित विश्व एवं ब्रह्माण्डका ताना-बाना बुनता चला जाता है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि विश्वकी उत्पत्ति, पालन एवं संहार करते रहते हैं और यह अनन्त सृष्टिका चक्र चलने लगता है।

(७) अनात्म अथवा जड़प्रवृतका पूर्णज्ञान प्राप्त कैसे हो ?

अघोर-दर्शनके अनुसार जड़ प्रकृति या माया अत्यन्त सूक्ष्म एवं अनन्त है। इसके विराट् स्वरूपमें कोटि-कोटि सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी आदि हैं, जिनका समस्त ज्ञान ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अनेक चेष्टा करनेपर भी सम्भव नहीं। इसी प्रकार वह अपने सूक्ष्म रूपमें अणु-परमाणुओंमें परिवर्तित हो जाती है तथा सूक्ष्म एवं सूक्ष्मतर तथा सूक्ष्मतम होती हुई ऐसी अवस्थामें स्थित हो जाती है कि वह भी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अग्राह्य हो जाता है। अघोर-दर्शनकी यह भी मान्यता है कि बिना पूर्णतया अनात्म तत्त्वों (माया) का सम्यक् ज्ञान हुए आत्मा जो इसके साथ तदाकार या तदरूप् हो रहा है, अपने शुद्ध स्वरूपको पृथकत्वका बोध न होनेसे जान नहीं पाता। इस अज्ञानमूलक तद्रूपताके कारण न तो उसके स्वरूपमें स्थिति होती है और न तो जीवके दुःखोंकी आत्यन्तिक निवृत्ति।

यही कारण है कि महाराज किनारामने जब भगवान दत्तात्रेय उन्हें आत्म और अनात्मकी भिन्नताका उपदेश कर रहे थे, तो एक सच्चे जिज्ञासुकी तरह बिना सङ्कोच किये पूछा—हे भगवान !

"कहा कहिय समुझी कहा, का करि करौं विचार।
नहिं एको समुझत परै, श्री गुरु ज्ञान आगार ॥"

भगवान दत्तात्रेय इसके निमित्त महाराज किनारामसे स्वयं कहते हैं कि :

"माया अगम अनन्त की, पार न पावै कोई।
जो जाने जाके कछु, काया परिचय होई॥"

इससे स्पष्ट है कि अनात्मतत्त्वों अथवा मायाको जाननेका सहज उपाय काया-परिचय करना है, अर्थात् शारीरिक तत्त्वोंके ज्ञानसे ही मायाका पूर्ण ज्ञान हो सकता है। यह मानव शरीर एक परम दुर्लभ वस्तु है। अनेक धर्मों एवं ग्रन्थोंमें बताया गया है कि ईश्वरको समस्त जीवोंका निर्माण करनेके उपरान्त भी सन्तोष नहीं हुआ, अतएव जब उसने मानव शरीरकी रचना पूरी कर ली तो उसे पूर्ण सन्तोषकी प्राप्ति हुई। इसीलिए महात्मा तुलसीदासजीने लिखा है कि—

"बड़े भाग मानुष तनु पावा। सुर दुर्लभ सद् ग्रन्थनि गावा॥"

'विवेक-सार' ग्रन्थमें लिखा है कि—

"जो ब्रह्मांड सो पिंड महँ, सकल पदारथ जानि।
वृथा शरीर भेद ले, कारन कारज जानि॥"

समस्त विश्व ब्रह्मांड जो हो रहा है वह सबका सब इस मानव शरीरमें स्थित है। इस विराट् विश्वका कोई कारण अवश्य है, जो सर्व प्रकारसे परिपूर्ण है। इस रूपात्मक जगतका कारण मायासे ही है और उसका प्रत्येक रूपान्तर इस शरीरमें विद्यमान है।

इसी पिण्डमें, तीनों लोक, गणेश, विष्णु, महेश आदि देवगण, सुमेरू आदि गिरि, सप्त ऋषि, सूर्य, चन्द्र आदि सब-के-सब अवस्थित हैं। सृष्टि-रचनाके आदि, अन्त, मध्यके दृश्य भी इसीमें हैं। इसी शरीरमें सारे लोक, नर्क, स्वर्ग, अपवर्ग, गंगा आदि नदियाँ, सकल तीर्थ, दस दिगपाल, कर्म, काल, अनेक समुद्र, चारों वेद, विवेक, वैकुण्ठ, शेषनाग, अष्ट सिद्धि सहित नौ निधि एवं अनेक पंच और यंत्र विद्यमान हैं। जिन पाँच तत्त्वों एवं तीन गुणोंको लेकर अनन्त विश्व ब्रह्मांडकी रचना हुई है, वे सबके सब इसी शरीरमें हैं। पिण्डका पूर्ण ज्ञान प्राप्त करके, साधकको मायाके अनेक रूपोंका ज्ञान प्राप्त होता है, जिससे आत्माको उससे माया अथवा चित्त एवं उसकी वृत्तियोंकी भिन्नताका बोध सहजमें होता है। आत्मा चित्तके दर्पणमें अपने स्वरूपको वृत्तियोंके सदृश्य देखनेके कारण ही जीव संज्ञा धारण करता है और अपने शुद्ध स्वरूपको भूलकर चित्तमें प्रतिबिम्बित स्वरूपको देखनेके कारण बहिर्मुख होकर सुखी एवं दुःखी हो रहा है। जब काया-परिचय हो जाता है तो इस झूठे एकत्वका भान आत्माको होने लगता है। वह अपने निज स्वरूपको पहिचानकर (चित्तमें प्रतिबिम्बित रूपको न देखकर) मैं सत्, चित्त एवं आनन्द हूँ ऐसा बोध करता है।

काया-परिचयके लिये भगवान दत्तात्रेयने महाराज किनारामको उपदेश दिया कि मनको अपने वशमें कर या दूसरे शब्दोंमें चित्तकी वृत्तियोंका निरोध करें जिससे मनकी गति बहिर्मुख न होकरके अन्तर्मुख हो जाय और वह अन्तःकरणमें बैठकर शरीरके अनेक चक्रों, मार्ग एवं संस्थानोंमें भ्रमण करता हुआ नाना पदार्थों, देवों और लोकोंका दर्शन करे। मनको अन्तर्मुख अथवा चित्तकी वृत्तियोंके निरोधका

सहज उपाय अघोर-मतमें भगवान दत्तात्रेयने दो प्रकारसे बतलाया है। प्रथम तो 'ताते राम सँभारि गहु।' दूसरा उपाय बतलाया है कि—

"पवन संग मन शब्द ले, ज्ञान ब्रह्म अरु हंस।
सुन्न काल जिव मिलि रहे, निरञ्जनतादि प्रसङ्ग ॥"

प्रथम तो आत्मा राम अथवा प्रणव ॐ का जाप निरन्तर करें। आगे चलकर स्वाँसपर इस जापको स्थानान्तरित करते हुए आन्तरिक शब्दोंकी अथवा अनाहत् शब्दोंकी ध्वनिको जो स्वत: होती रहती है, सुननेका अभ्यास करें। स्वाँस जो प्राणों-का वाहन है, उसमें शब्द विलीन हो जाता है। अर्थात् उसमें सहज रूपसे जो शब्द अपने आप उत्पन्न हो रहा है, उसीको ध्यानके स्रोतोंसे सुनते हुए, शून्यमें प्रवेश करके निरञ्जन हो जाना चाहिए। उस समय स्वाँस, प्राण अथवा शब्द सब तिरोहित हो जाते हैं और केवल शुद्ध चैतन्य आत्मा शेष बचता है।

उपर्युक्त प्रसंगसे विदित होगा कि अघोर-मतमें नाम जपकी बहुत बड़ी महिमा है, जो साधकको प्रथम तो सविकल्प और उसके पश्चात् निर्विकल्प समाधि तक पहुँचाती है, किन्तु अजपा जापके प्रसंगमें जिसका वर्णन बादमें किया जायेगा, प्रणव-को विशेषता दी गई है। अघोर-दर्शनके अनुसार प्राण एवं स्वाँसका अन्योन्याश्रय है, किन्तु साधारणतया जीवमें वह वियोगकी दशामें रहता है। भगवान दत्तात्रेयने महाराज किनारामको उपदेश दिया कि :—

'पवन स्वाँस यह बड़ी संयोगा। सो तो सब दिन रहे वियोगा ॥'

इसलिये नाम जप इस प्रकार करना चाहिए कि स्वाँसकी गति धीमी होती जाय, जिससे प्राण स्थिर होने लगे। प्राणके स्थिर होनेसे मन एकाग्र एवं चित्तकी वृत्तियोंका निरोध होता है। सन्तों द्वारा बतलाये गये हठ-योगमें वर्णित प्राणायामका यह सहज और सुबोध तरीका है। जापका दूसरा विधान यह है कि सतपुरुष (विशुद्ध चैतन्य ब्रह्म) के स्वरूपका, जो सृष्टिके उत्पन्न होनेके पहलेसे लेकर नाम विराट् स्वरूपतक है, उसका चिन्तन करता रहे। अघोर-दर्शनमें बतलाये गये इस स्वरूपका वर्णन पहले किया जा चुका है।

जब काया-परिचय होने लगता है तो जिन अनेक तत्त्वोंका प्रत्यक्ष ज्ञान होता है उनका सूक्ष्म वर्णन पोथी (विवेक सार) में दिया हुआ है। इसके अनुसार काया-परिचयके समय चञ्चल मन, प्राण एवं स्वाँस, शून्यसे शब्दका प्राकट्य, ब्रह्म, तीनों गुण, समाधिके दोनों अंग सविकल्प और निर्विकल्प, काल, जीव, आत्मा, शिव, निरञ्जन आदिका परिचय होता है। वास्तवमें महत्तत्त्व (मूल प्रकृति) एवं चैतन्य तत्त्वोंका विभिन्न स्वरूप सृष्टिके रचनाक्रममें जिस प्रकार मण्डलाकार उदय होता है, उसीका प्रत्यक्षीकरण काया-परिचयके समय होता है। उसी समय यह अनुभव होता है कि आत्मा मूल प्रकृति और उसके अनेक रूपोंमें कोई भी सम्बन्ध नहीं है।

महाराज किनारामने काया-परिचयके बारेमें बड़े विस्तारसे भगवान दत्ता-त्रेयसे सत्सङ्ग किया और शरीरके किस अङ्गमें कौन-सा तत्त्व विराजमान है? जानना

चाहा, जिससे उन्हीं स्थानोंपर मनको अन्तर्मुख करके वे, उन सभीका परिचय प्राप्त करें। महाराज किनारामने यह भी जानना चाहा कि जिस समय जीवोंके शरीरकी रचना नहीं हुई थी उस समय वे तत्त्व किस रूपमें और कहाँ थे ? क्योंकि माया तत्त्वोंका रूपान्तर तो सम्भव है, किन्तु पूर्ण विनाश सम्भव नहीं है। इस क्रममें कुछ एक उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है—

(१) मन—मन बहुत ही चञ्चल है और इसकी प्रभुता सारे संसारमें छाई हुई है। यह मन हृदयमें रहता है, जो बाल्य या वृद्ध अवस्थामें कभी नहीं आता है। अपितु सर्वदा नवीन ही बना रहता है। जब हृदयकी रचना नहीं होती है तब मन अनूपमें वास करता है। इसका जीवन स्वाँस है और यह प्राणसे प्रकट होता है और मनके विनाश होनेपर यह प्राणमें ही लीन हो जाता है।

(२) शब्द—जब सृष्टि प्रारम्भ होती है तब शब्दकी उत्पत्ति होती है जिसको समझ जानेसे संसारका बन्धन शिथिल हो जाता है। शब्दका स्थान अनाहद अथवा हृदयचक्रमें है। इसका जो अनुभव प्राप्त कर लेता है वह अपने स्वरूपको पहचानने लगता है। शब्दका मूलस्रोत ॐकार है और इससे प्राणकी प्रतिष्ठा होती है। इसीसे अनेक तत्त्व उत्पन्न होते हैं।

(३) हंस—हंस जीवकी उस अवस्थाका नाम है जिसका विनाश नहीं होता। जिस पदको पानेके बाद सुख या दुःख नामक भास नहीं होता। हंसका निवास-स्थान गगन है, जो सर्वदा एकरस आनन्दमें मगन रहता है। जब गगनकी रचना नहीं होती है तब वह अविनाशीमें वास करता है। हंसगति पानेसे परम-गतिकी प्राप्ति होती है। इसी प्रकार अघोर-मतमें काया-परिचय करते समय स्थूलसे सूक्ष्ममें तत्त्वोंका, जैसे परिवर्तन या स्थिति होती है, उसका विवेचन किया गया है।

ऊपर केवल उदाहरण मात्र दिये गये हैं। काया-परिचयके समय इसी प्रकारसे अनेक तत्त्वों, शब्दों, रूप और रङ्ग आदिके साक्षात्कार होते हैं। सबसे नीचे जिसे गुह्य-स्थान या मूलाधारचक्र कहते हैं और जो पृथ्वी तत्त्वका स्थान है, उसे लेकर सहस्र दल कमलतक अनेक प्रकारके तत्त्वोंका प्रत्यक्ष अनुभव तो होता ही है, जो भी अपने उत्थानमें सोऽहम्, हंस, शिव, निरञ्जन, देव आदिकी अवस्थाको प्राप्त होता हुआ अपने निज स्वार्थको पहिचानता है, उसे महाराज किनारामने पोथी "विवेक सार"के प्रारम्भमें ही आत्मारामकी संज्ञा दी है। महाराज किना-रामने योगकी अनेक पद्धतियोंका समन्वय कर, जिसके द्वारा मन अन्तर्मुख हो काया-परिचय कराते हुए समाधिके द्वारतक पहुँचाता है, उसके लिये दो पद्धतियोंपर विशेष जोर दिया। पहली तो यह है कि प्राणका स्वाँससे संयोग करना, जिससे चित्तकी वृत्तियाँ स्थिर होने लगती हैं। दूसरी पद्धति जो पहलेके साथ-साथ चलती है या जिसे पहले ही प्रारम्भ करना चाहिये, वह है आत्माराम या प्रणवका जाप। यह जाप यदि मानसिक रूपसे प्रारम्भ न कर सके तो वाणीसे शुरू करके

मानसिक जपमें परिवर्तन करें और बादमें इसे अजपा कर दें। अजपा जाप जब पूर्णताको प्राप्त होता है, तो स्वाँसोंमें प्रवाहित प्राणकी ध्वनि स्वत: उठने लगती है और साधक केवल श्रोता मात्र रह जाता है। परमगुरु दत्तात्रेयने विस्तारसे अजपा जाप एवं 'सोऽहं' मन्त्रका उपदेश महाराज किनारामको दिया। सोऽहं मन्त्र जो सोऽहंको उलटने और उसमें प्रणव लगनेसे होता है। उसके निमित्त कहते हैं कि जिस समय अजपा जाप अपने चरम अवस्थामें पहुँचता है, उसी समयसे जीवको यह होने लगता है कि वह सच्चिदानन्द है। जाप करते समय साधक संसारमें किस प्रकार रहे, उसके लिए लिखते हैं—

रहे निरन्तर अन्तर कोई। सब तेहि महँ सबमहँ है सोई॥
यह विचार सुनि सदा दुहेला। रमै राम महँ रहै अकेला॥
बरनाश्रम को भेद न राखे। बानी सत्य सहज जो भाखे॥

इससे स्पष्ट होता है कि अजपा जापके पूर्णावस्थामें समाधिकी स्थिति प्रारम्भ हो जाती है। जाति-पाँति कुल आदिका अहंकार नष्ट हो जाता है और जीव संसारमें परम शान्तिको प्राप्त करता हुआ अपनेको एकमात्र अकेला अनुभव करता है, अर्थात् परम वैराग्यको प्राप्त करने लगता है। भगवान दत्तात्रेयने पुनः कहा है—

सहज प्रकाश निरास अमानी। रहनि कहौं यह अजपा जानी॥

सारांश यह है कि अघोर-मतके अनुसार जब नाम जप प्राणोंके द्वारा अबाध गतिसे निरन्तर होने लगता है तो मनके अन्तर्मुखी ध्यानसे काया-परिचय पूर्ण हो जानेके पश्चात् आत्म और अनात्म तत्त्वोंका पूर्णतया सम्बन्ध-विच्छेद हो जाता है और ऐसी अवस्थामें आत्माकी अपने सहज स्वरूपमें स्थिति होनी प्रारम्भ हो जाती है।

(८) उस समय अनात्म तत्त्वोंका क्या होता है?

अघोर-दर्शनके अनुसार आत्म तथा अनात्म तत्त्वोंका बोध होते ही जड़-चेतनकी ग्रन्थि, जो अनादिकालसे चली आती है, शिथिल पड़ने लग जाती है, फिर भी उसका सर्वथा विनाश नहीं होता। उस समय परम वैराग्य उत्पन्न होने लगता है और आत्माको तत्त्वोंकी कोई आवश्यकता महसूस नहीं रहती। इसलिए निज-स्वरूपमें स्थित हुई आत्मा उनकी अपेक्षा नहीं करती। सारे-के-सारे तत्त्व विनाश होनेके बजाय अपने-अपने आदि कारणमें लीन हो जाते हैं। तब निर्विकल्प समाधिकी प्राप्ति होने लगती है। इसके लिये पोथी 'विवेक सार'में लिखा हुआ है—

"पट बिनसे ते वस्तु सब, पट महँ देत देखाय।
घट पट उभय विनाश में, वस्तु निरन्तर पाय॥"

और जब निरन्तर वस्तुकी प्राप्ति हो जाती है तो—

"स्वाँस समानों प्राण मों, शब्द-शब्द ठहराय।
प्राण समानों प्राण में, ब्रह्म-ब्रह्म में जाय ॥
हंस समानों हंस मों, अविनाशी अविनाश।
काल समानों सन्त में, निरभय सदा निराश ॥"

(९) समाधिकी प्रथम अवस्था

जब सब अनात्म तत्त्व अपने कारणमें लीन हो जाते हैं तब आत्माके साथ केवल सात्त्विक अहंकार मात्र शेष रहता है और आत्माको अनुभव करने लगता है कि मैं ही जीव और मैं ही जगत आदिका कारण, मैं ही विकराल काल हूँ और मैं स्वतः जन्म धारण करता और स्वतः मरता हूँ। मैं स्वतः पुष्पोंमें सुगन्ध हूँ एवं स्वतः मधुकर होकर अपने ही सुगन्धपर मस्त रहता हूँ। मैं ही दानव, देव, सिंह, स्यार, परम निडर और अत्यन्त डरनेवाला हूँ।

"मैं ही रंक मैं राय, सखा मैं साच्यों।
मैं गोपी में ग्वाल, कृष्ण वृन्दावन नाच्यों ॥
मैं सारायन राम हों दस सिर रावन छेदिया।
राम किना हनुमान मैं राम काज लगि सब किया ॥
नहिं आवौं नहिं जाउँ मरों जिवों नहिं कबहूँ।
त्रिगुनादिक मिट जाय अमर मैं गावौं तबहूँ ॥"

उपर्युक्त अवस्था आत्माके अपने स्वरूपमें स्थिति होनेपर प्राप्त होती है।

(१०) आत्मस्थिति जब प्राप्त हो जाय तो साधकको कैसे रहना चाहिये (निर्बीज समाधि) ?

इसके लिये प्रथम कर्त्तव्य तो यह है कि समाधिके समय जब सारे तत्त्व अपने आदिकारणमें विलीन हो जाते हैं तथा तमोगुण और रजोगुण भी निर्जीव एवं शून्य हो जाते हैं, उस समय सतोगुण भी प्रायः समाप्त हो जाता है किन्तु दुर्बल हुआ सतोगुण केवल सात्त्विक अहङ्कारके रूपमें आत्माको उसके सच्चिदानन्द स्वरूपका सात्त्विक अहङ्कारके रूपमें अनुभव कराता रहता है। उसकी यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिये। भगवान दत्तात्रेयने महाराज किनारामको उपदेश दिया कि—

"आतम रक्षा चार विधि, है शिष सहज सुबोध।
दया विवेक विचार लय, सन्त संग आरोध ॥"

सन्तोंका संग करते हुये समस्त प्राणियोंपर दया दृष्टि रखे और विवेकपूर्वक विचार करता रहे। पुनः लिखते हैं कि—

"आप माह सब देखिया, सब मा आप समाय।
पालन एक प्रतीत कह, दुरमति दूर बहाय ॥"

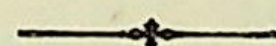
ऐसी अवस्थामें दुर्बल सात्त्विक अहंकार निर्जीव हो जाता है और आत्माकी पूर्ण-प्रतिष्ठा अपने स्वरूपमें हो जानेसे उसको न तो कुछ कहते ही बनता है और न बिना कुछ कहे ही बनता है। यहाँतक कि जब उसे पाना कुछ शेष नहीं रह जाता है तो उसकी यह भावना भी कि सारे विश्व ब्रह्माण्डमें व्याप्त हो रहा है या कि मैं सत्, चित्, आनन्द हूँ, शेष नहीं रहती है। यह परम शून्य अवस्था है और जैसा कि पोथी 'विवेक सार'में लिखा है—

"जिन्ह पाया तिन्ह पाया नाहीं। अनपाया सो पाया माहीं॥"

तब वह जीव आत्मा, या जो भी संज्ञा देना चाहें, न तो कुछ पाया हुआ होता है और न तो कुछ पाना शेष रह जाता है। यह निर्वाणकी गति महाराज किनारामके शब्दोंमें—

"बिनु गुरु कृपा न कोई लहै, राम किना निर्वान॥"

गुरु कृपा और ईश्वरकी कृपामें कोई भेद नहीं, अतएव उन्हींकी कृपाका आवाहन करके मनुष्यको परमशान्ति प्राप्त हुई है।



रुद्राक्ष ८

बाबा किनारामका सिद्धपीठ

जिस स्थानपर किसी तपस्वी, सिद्ध, योगी, महात्मा या तांत्रिकने योग साधना, तपस्या, या तांत्रिक प्रयोग करके सिद्धि प्राप्तकी हो, वह स्थान ऐसा सिद्ध-पीठ हो जाता है कि वहाँ किसी देवी या देवताकी उपासना या पूजा करनेसे मन्त्र की सिद्धि हो जाती है। तन्त्र-शास्त्रमें लिखा है कि जिस स्थानमें देवोके उद्देश्य से एक लाख पशुओंकी बलि हो चुकी हो या एक करोड़ तक आहुतिवाले यज्ञ हो चुके हों या महाविद्या मन्त्रका एक करोड़ जप हुआ हो उस स्थानको सिद्धपीठ कहते हैं। योग, तप, तांत्रिक-प्रयोग, बलि, यज्ञ तथा मन्त्रके जपसे उस स्थानका सम्पूर्ण वातावरण सिद्धिमय हुआ रहता है। वहांके कण-कणमें ऐसी सिद्धि व्याप्त रहती है कि जो साधक वहां किसी कामनासे अथवा निष्काम मनसे किसी प्रकारकी आध्यात्मिक शक्ति या सिद्धिके लिए प्रयत्न करता है उसे अत्यन्त सरलतासे और बहुत थोड़े समय में ही इष्ट-सिद्धि प्राप्त हो जाती हे।

श्री सदा शिवने माँ पार्वतीसे, श्री वशिष्ठने रामसे, श्री कृष्णने उद्धवसे, श्री गुरुमूर्तिने शिष्योंसे सिद्धियोंके गुण और लक्षणोंको इस प्रकार कहा है—जब कोई साधक अपनी इन्द्रियोंको तथा प्राण और मनको अपने वशमें करके अपना चित्त गुरुमूर्ति भगवानमें, या अपने इष्टदेवमें लगाने लगता है और उन्हींकी धारणा करने लगता है तब उसके सामने बहुतसी सिद्धियाँ आ उपस्थित होती हैं। इस कथनके अनन्तर शिष्योंने जिज्ञासा की कि कौन सी धारणा करनेसे किस प्रकार कौन सी सिद्धि प्राप्त होती है और उनकी संख्या कितनी है इसका परिचय देनेका कष्ट कीजिएगा।

इस जिज्ञासाका समाधान करते हुए भगवान गुरुमूर्तिने कहा कि धारणा योगके पारगामी योगियोंने अट्ठारह प्रकार की सिद्धियाँ बताई हैं, जिनमेंसे आठ सिद्धियाँ तो प्रधान रूपसे गुरुमूर्तिमें ही रहती हैं और अन्य लोगोंमें कुछ न्यून मात्रामें रहती हैं। शेष दस सिद्धियाँ सत्त्व गुणका विकास होनेपर स्वतः प्राप्त हो जाती हैं। आठ सिद्धियोंमेंसे तीन सिद्धियाँ तो शरीरकी है, अणिमा, महिमा और लघिमा। इन्द्रियोंकी सिद्धि है प्राप्ति। लौकिक और पारलौकिक पदार्थोंका अपनी इच्छाके अनुसार अनुभव करानेवाली सिद्धिको प्राकाम्य कहते हैं। माया और उसके द्वारा अनेक प्रकारके कार्य करानेकी सिद्धिको ईशिता कहते हैं। अनेक प्रकारके सांसारिक विषयोंमें रहकर भी उनमें आसक्त न होनेको वशिता कहते हैं और जिस-जिस सुखकी कामना हो उसकी चरम सीमा तक पहुँच जानेको कामावसायिता कहते हैं। ये आठों सिद्धियाँ गुरुमूर्ति भगवानमें स्वभावसे रहती हैं और ये सिद्धियाँ जिन्हें मैं दे देता हूँ उन्हें अंशतः प्राप्त होती हैं।

इनके अतिरिक्त दस और सिद्धियाँ हैं—१ भूख-प्यास आदिका आवेग होना। २—बहुत दूरकी वस्तु देख सकना। ३—बहुत दूरकी बात सुन सकना। ४—मनके

साथ ही शरीरको इच्छित स्थान पर लेकर पहुँच जाना। ५—जैसी इच्छा हो वैसा रूप बना लेना। ६—किसी भी दूसरेके शरीरमें प्रवेशकर जाना। ७—जब इच्छा हो तभी शरीर छोड़ना। ८—देवताओंको सब क्रीड़ाओंका अवलोकन करना। ९—जो संकल्प हो उसे पूराकर सकना। १०—जिसे जो आज्ञा जहाँ दी जाय उस आज्ञाका पालन करा लेना।

इन अट्ठारह सिद्धियोंके अतिरिक्त पाँच और भी सिद्धियाँ योगियोंको प्राप्त हो जाती हैं—१—भूत, भविष्य और वर्तमानको हस्तामलकवत् जान लेना, २—शीत, उष्ण सुख, दुःख और रागद्वेष आदि द्वन्द्वोंसे मुक्त रहना, ३—दूसरोंके मनकी बात जान लेना, ४—अग्नि, सूर्य, जल, विष आदिकी शक्तिको स्तम्भित कर देना, ५—संसारमें किसीसे भी पराजित न होना।

इसके पश्चात् श्रीगुरुने शिष्योंको बताया है कि किस धारणासे कौनसी सिद्धि कैसे प्राप्त होती है? इसका विवरण देते हुए उन्होंने बताया है कि पंचभूतोंकी सूक्षतम मात्राएँ (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) रूपी मेरे शरीरकी जो उपासना करता है और अपने मनको तदाकार बनाकर उसीमें लगा देता है अर्थात् श्रीगुरुमूर्ति भगवानके (इष्ट देवके) तन्मात्रात्मक शरीरके अतिरिक्त और किसी भी वस्तुका चिन्तन नहीं करता उसे वह अणिमा नामकी सिद्धि प्राप्त हो जाती है कि वह अणु बनकर पत्थर की चट्टान आदिमें प्रवेश करनेकी शक्ति प्राप्तकर लेता है। महतत्त्व (बुद्धितत्त्व) के रूपमें भी श्रीगुरुमूर्ति भगवान ही प्रकाशित हो रहा हूँ और उस रूपमें समस्त व्या-वहारिक ज्ञानोंका केन्द्र हूँ जो मेरे उस रूपमें अपने मनको महतत्त्वाकार करके तन्मय कर देता है उसे महिमा नामकी सिद्धि प्राप्त हो जाती है अर्थात् आकाश आदि पंचभूतोंमें अलग-अलग मन लगानेसे उन-उनकी महत्ता उसे प्राप्त हो जाती है। जो योगी या साधक वायु आदि चार भूतों (जल, वायु, अग्नि, आकाश)के पर-माणुओंको श्रीगुरु रूपही समझकर अपने चित्तको तदाकार कर देता है उसे लघिमा सिद्धि प्राप्त हो जाती है अर्थात् उसे परमाणु कालके समान सूक्ष्म बननेका सामर्थ्य प्राप्त हो जाता है। जो साधक सात्त्विक अहंकारको श्रीगुरुमूर्ति भगवानका स्वरूप समझकर उसी रूपमें चित्तकी धारणा करता है वह समस्त इन्द्रियोंका अधिष्ठाता हो जाता है। श्री गुरुमूर्त्ति भगवानका चिन्तन करनेवाला भक्त इस प्रकार प्राप्ति नामकी सिद्धि पा लेता है। जो साधक महत्त्वाभिमानी सूयात्मा गुरुमूर्ति भगवानमें अपना चित्त स्थिरकर लेता है उसे प्राकाम्य नामकी सिद्धि प्राप्त हो जाती है जिसे मिलनेपर उसे इच्छानुसार सब भोग प्राप्त हो जाते हैं। जो त्रिगुणमयी मायाके स्वामी श्रीगुरु मूर्तिके काल-स्वरूप विश्वरूपका मनमें ध्यान करता है वह संसारके सब शरीरों और जीवोंसे अपनी इच्छाके अनुसार काम करा लेनेका सामर्थ प्राप्त कर लेता है इसी सिद्धिको ईशित्व कहते हैं। जो योगी श्रीगुरु स्वरूपमें जिसे तुरीय और भगवान भी कहते हैं अपना मन रमा देता है उसमें गुरुमूर्ति भगवानके स्वाभाविक गुण प्रकट होने लगते हैं और उसे वशिता नामकी सिद्धि प्राप्त हो जाती है अर्थात् वह अनेक प्रकार की सांसारिक वस्तुओंके बीच रहकर उनसे अलिप्त रहता है। जो साधक

अपना निर्मूल मन श्री गुरुमूर्ति भगवानके निर्गुण ब्रह्म-स्वरूपमें स्थित कर लेता है उसे परमानन्द-स्वरूपिणी कामवसायिता नामको सिद्धि प्राप्त होती है जिसे मिलने पर सारी कामनाएँ पूर्ण हो जाती और समाप्त हो जाती हैं।

इसके पश्चात् दस सिद्धियों का विवेचन करते हुए श्री गुरुमूर्ति भगवानने कहा जो श्री गुरुमूर्ति भगवानके श्वेत द्वीपके स्वामी-रूपी अत्यन्त शुद्ध और धर्ममय रूपको धारणा करता है वह भूख-प्यास, जन्म-मृत्यु और शोक-मोह नामक छः उर्मियोंसे मुक्त हो जाता है और उसे शुद्ध स्वरूप प्राप्त हो जाता है। जो श्रीगुरुमूर्ति भगवानके समष्टि प्राणरूप आकाशात्मा स्वरूपमें अपने मनके द्वारा अनाहत नादका चिन्तन करता है उसे दूर-श्रवण नामकी वह सिद्धि प्राप्त हो जाती है, जिससे वह आकाशमें सुनाई पड़नेवाली अनेक प्राणियों की बोली सुन व समझ सकता है। जो योगी नेत्रोंको सूर्यमें और सूर्यको नेत्रोंमें संयुक्त कर देता है और दोनोंके संयोगमें मन-ही-मन मेरा ध्यान करता है उसकी दृष्टि इतनी सूक्ष्म हो जाती है कि इस दूर-दर्शन नाम की सिद्धि से वह सारे संसारको देख सकता है। जो साधक मन और शरीरको प्राण-वायुके साथ श्री गुरुमूर्ति भगवानमें संयुक्त कर देता है और उनकी धारणा करता है उसे मनोजव नामकी वह सिद्धि प्राप्त हो जाती है, जिसके प्रभावसे वह जहाँ जानेका संकल्प करे वहाँ तत्क्षण सशरीर पहुँच जाता है। जो योगी श्री गुरुमूर्ति भगवानके साथ अपना चित्त जोड़ लेता है और मनको साधन बनाकर किसी भी देवता आदि का रूप धारण करना चाहता है तो उसका वैसा ही रूप बन जाता है। जो योगी किसी दूसरेके शरीरमें प्रवेश करनेके लिए यह भावना करे कि मैं उस शरीरमें विद्यमान हूँ तो उसका प्राण ऐसा वायुरूप धारण कर लेता है कि वह एक फूलसे दूसरे फूल पर जानेवाले भौंरेके समान अपना शरीर छोड़कर दूसरे शरीरमें प्रवेश कर जाता है। जिस योगीको अपना शरीर छोड़ना हो उसे चाहिए कि एड़ीसे गुदा-द्वार दबाकर प्राणवायुको क्रमशः हृदय, वक्षस्थल, कण्ठ और मस्तकमें ले जाय और फिर ब्रह्म-रन्ध्रके द्वारा उसे ब्रह्ममें लीन करके शरीरका परित्याग कर दे। यदि साधक या योगी को देवताओंके विहार-स्थलमें विहार करने की इच्छा हो तो श्री गुरुमूर्ति भगवानके शुद्धसत्त्वमय स्वरूपका भावना करे जिससे सत्त्वगुण की अंश-स्वरूपा सुर-सुन्दरियाँ विमान पर चढ़कर उसके पास पहुँच जाती हैं। जो साधक श्री गुरुमूर्ति भगवानके सत्य संकल्प-स्वरूपमें अपना चित्त स्थिर कर देता है और उसीके ध्यानमें संलग्न रहता है वह जिस समय जैसा संकल्प करता है उसी समय उसका वह संकल्पपूर्ण हो जाता है। जो साधक श्री गुरुमूर्ति भगवानके ईशित्व और वशित्व स्वरूप का चिन्तन करता है वह उसी भावसे युक्त हो जाता है। जिसके परिणाम-स्वरूप वह मायासे इच्छानुसार कार्य करा सकता है और संसारके सब प्रलोभनोंसे निर्लिप्त रह सकता है।

जिस योगीका चित्त श्री गुरुमूर्ति भगवानकी धारणा करते-करते उनकी भक्तिके प्रभावसे शुद्ध हो जाता है, उसकी बुद्धि, जन्म, मृत्यु आदि अदृष्ट विषयों को भी जान लेती है यहाँ तक कि भूत, भविष्य और वर्तमानकी सब बातें ज्ञात हो जाती हैं।

जिस योगीने अपना चित्त श्री गुरुमूर्ति भगवानमें लगाकर तन्मय कर दिया है उसके योगमय शरीर को अग्नि-जल आदि कोई भी पदार्थ नष्ट नहीं कर सकता। जो साधक गुरुमूर्ति भगवानके लक्षणोंका ध्यान करता है। वह अजेय हो जाता है।

इस प्रकार सब सिद्धियोंका विवेचन करके गुरुमूर्त्ति भगवानने शिष्योंसे यह भी कहा कि जो लोग भक्ति-योग, ज्ञान-योग आदि उत्तम योगोंका अभ्यास करते हैं और मुझसे एकात्म हो गये हैं, उनके लिये ये सब सिद्धियाँ विघ्न ही हैं, क्योंकि इनके कारण व्यर्थ ही समयका दुरुपयोग होता है। योगसे वे सभी सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं जो औषधि, तपस्या और मंत्र आदिके द्वारा मिलती हैं किन्तु योगकी अन्तिम अवस्था गुरुमूर्त्ति भगवानके सारूप्य और सालोक्य आदिकी प्राप्ति बिना उनमें चित्त लगाये किसी भी साधनसे नहीं प्राप्त हो सकती।

आगम साधनामें जो अनेक प्रकारके व्रत, उपासना-पद्धति, पूजा-पद्धति और साधना-पद्धतियोंका उल्लेख किया गया है, उनके साथ यह भी बताया गया है कि किस प्रकारकी आगम साधनासे कौनसी सिद्धि प्राप्त होती है ? आगमोंमें बताया गया है कि दिव्य, वीर और पशुभावसे देवीकी पूजा करनेसे इच्छित सिद्धि प्राप्त होती है। इनमेंसे दिव्य और वीरको महाभाव और पशुभावको अधम कहा गया है क्योंकि पशु-भावसे भय उत्पन्न होता है और यह कहा गया है कि जो भयभीत हो जाता है। उसकी सिद्धि नष्ट हो जाती है और वह विक्षिप्त हो जाता है। इस प्रकार सिद्धि प्राप्त करनेके असंख्य उपाय यन्त्र, मन्त्र और तन्त्र ग्रन्थोंमें तथा योग-साधनाके ग्रन्थोंमें विस्तारसे मिलते हैं। इस प्रसंगमें सर्वत्र यह स्पष्ट निर्देश मिलता है कि सिद्धि प्राप्तकर लेनेपर किसी भी साधक को चमत्कार नहीं प्रदर्शित करना चाहिए अर्थात् अपनी सिद्धिका प्रभाव दिखाकर लोगोंकी श्रद्धा अर्जित करनेका अथवा उनपर आतंक जमानेका प्रयत्न नहीं करना चाहिये। उन सिद्धियों द्वारा केवल लोक-मंगलकी साधना करनी चाहिये और परमात्म तत्त्वके चिन्तन और अनुभव में निरत रहना चाहिए। अघोर-साधकोंका और उनकी प्रक्रियाओंका साक्षात्कार करने पर यह अनुभव हुआ है कि इन अघोर-साधकोंको अनेक प्रकारकी सिद्धियाँ अपने सत्त्वगुण सम्पन्न होनेके कारण प्राप्त हो गयीं और उसके द्वारा उन्होंने निरन्तर लोक-मंगलकी साधना भी की है।

ऐसे सभी स्थल, स्थान-स्थानपर सिद्ध-पीठ बन गये हैं, जहाँ इस प्रकारके साधकोंने अपनी तपस्या, गुरुप्रसाद या साधनासे सिद्धियाँ अर्जित कीं। ऐसे ही स्थलोंमें वाराणसी के भदैनी मुहल्लेमें स्थित बाबा किनारामका क्रींकुंड सिद्धपीठ है, जहाँ बाबा किनाराम ने अपने गुरु बाबा कालू रामजीसे दीक्षा ली और जहाँ उन्होंने अपने स धक जीवनका अधिकांश उत्तर भाग बिताया।

बाबा किनारामकी शिष्य-परम्परामें और भी सिद्ध पीठ विकसित हुए जिनमें से इस स्थानके अतिरिक्त तीन अन्य स्थान भी उतने ही महत्त्वके माने जाते हैं। वे हैं हरिहरपुर स्थल (परगना चन्दवक जिला जौनपुर) रामशाला रामगढ़ (तहसील चन्दौली जिला वाराणसी और देवल (तहसील जमानियाँ जिला गाजीपुर)। इनके

अतिरिक्त औघड़-सम्प्रदायकी ही चार वैष्णव गद्दियाँ भी हैं, क्योंकि बाबा किनाराम के आदि गुरु बाबा शिवाराम अर्ध वैष्णव थे। ये स्थान हैं–रामगढ़, महुअर, मारुफपुर जो सभी जिला वाराणसीमें हैं और नईडीह जिला गाजीपुरमें है। इनमेंसे रामगढ़में औघड़के अतिरिक्त रामगढ़ ग्राममें जहाँ किनारामजीकी जन्मभूमि है वहीं एक राम-मन्दिर है और वहीं वैष्णव गद्दी है।

बाबा किनारामके वैष्णव स्थानोंकी विशेषता यह है कि वहाँ पहले गुरुकी आरतीकी जाती है और उसके पश्चात् अन्य देवी-देवताओं की। इतना ही नहीं, इन स्थानोंके महन्थों या साधुओंका न तो दाह किया जाता है, न जल समाधि दी जाती है वरन् वे सभी भूमिमें समाधिस्थ किए जाते हैं और इन सभी स्थानों पर इस प्रकार की अनेक समाधियाँ बनी हुई हैं। इन सिद्धपीठों का विशेष विवरण और महत्त्व नीचे विस्तारसे दिया जा रहा है।

क्रींकुंड वाराणसी स्थल

वाराणसीके पौराणिक वित्ररणमें इसकी कल्पना गंगाकी ओर मुखकर लेटे व्यक्तिके रूपमें की गई है जिसका सिर अस्सी और पैर वरुणा नदी है, बीचका हिस्सा कमर, वक्ष, हृदय और हाथ है। इस दृष्टिसे शिवालामें बना राजा बलवन्त सिंहका किला वाराणसीके दक्षिण बाहुपर अवस्थित है और क्रींकुंडका स्थल ही वाराणसीका हृदय प्रदेश है। भौगोलिक दृष्टिसे वर्तमान हरिश्चन्द्र घाट और अस्सीपर पश्चिमसे आकर दो नाले गंगाजी में गिरते थे। उनके बीच यही ऊँची भूमि थी जो कि तपो भूमी और राज प्रासादके लिए उपयुक्त थी। इस क्षेत्रमें मंदारके वृक्ष बहुतायत थे इसी-लिये इसको आकबन या मंदारबन नामसे पुकारा जाता था। यही शिव-पार्वतीका बिहार स्थल रहा है। यह ध्यान देने योग्य है कि शिवालाके राजप्रासाद और स्थलके फाटक आमने-सामने हैं। राजा बलवन्तसिंहको श्रद्धा बाबा किनाराममें थी इसीलिए ऐसा हुआ होगा।

कुछ दिनों पूर्व तक वर्तमान स्थानके चारों ओर उपवन था और यह स्थल एक सुरम्य सिद्धपीठ देखनेमें लगता था। उस समय स्थलकी पूर्वी सीमा अस्सी जाने वाला मार्ग, पश्चिमी सीमा मुड़कटवा बाबा तक, दक्षिणी सीमा श्रीरेणुका मन्दिर तक तथा पश्चिमोत्तर सीमापर महाराजकुमार विजयानगरमका किला और थाना भेलूपुर पड़ते थे। स्थलके पश्चिमी भागमें वनको साफकर खेतीकी जाती थी और कुछ वर्ष पूर्व इस भूमिको लेकर नगरपालिकाने रवीन्द्रपुरी नामसे एक कालोनी बसायी है।

स्थलके पश्चिम भागमें चार-पाँच एकड़का एक मठ था जिसमें शिव-मन्दिर और बहुतसे ताड़के पेड़ भी थे। बाबाकालूरामकी परम्पराका यह शैव मठ था। बादमें दक्षिणात्य शैवोंने इसपर अधिकार कर लिया। औघड़ोंने वहाँसे हटाये जानेपर शाप दिया था जिससे ५० वर्षों तक यह खण्डहर बना रहा और इस स्थान पर ताड़ी बिकने लगी थी। अन्तमें कारपोरेशनने इसे लेकर नयी बस्ती बनवा दी है।

कई शताब्दियों से जलती आरही धूना बाबा किनाराम स्थल, वाराणसी।

औघड़-तख्त वाराणसी।



इसी स्थलपर बाबा किनारामकी अघोर-दीक्षा बाबा कालूरामने की थी। अन्यत्र आप देख चुके हैं इस स्थलके प्रथम महन्थके रूपमें बाबा कालूरामका नाम दिया गया है। पोथी विवेकसारमें यह पद दिया है :—

कीना कीना सब कहै, कालू कहै न कोय।
कालू कीना एक भये, राम करैं सो होय॥

इससे स्पष्ट है कि बाबा किनारामको दीक्षा देकर बाबा कालूराम स्थल भी उन्हीं को सौंपकर उनमें प्रवेश कर गये। प्रवेश करते समय बाबा कालूरामने स्थलकी महिमा बाबा किनारामको बताते हुये कहा कि 'यह गिरनार है और इस क्रींकुंड में सभी तीर्थोंका वास है।' इस विवरणसे यह स्थल अनादि सिद्धपीठ प्रमाणित होता है। स्वयं बाबा कालूरामको दत्तात्रेयजी का अंश बतलाया गया है जो कि बाबा किना-रामको दीक्षा देकर उन्हींमें एकाकार हो गये। भगवान दत्तात्रेयके समान महान अघोराचार्यका जो साधन स्थल है उसकी महिमाका पूरा वर्णन करनेकी क्षमता किस लेखकमें है।

एक पौरणिक आख्यान के अनुसार काशीके जिस डोमने राजा हरिश्चन्द्रको खरीदा था, उसका नाम कालू था। उसी कालूने क्री-कुण्डके आस-पासकी सारी भूमि अघोराचार्यको दान दिया था। इसलिये वैदिक-युगमें उस गद्दीपर बैठनेवाले आचार्यों को यहाँकी जनता कालूराम कहकर संबोधित करने लगी। उस गद्दीपर जो भी बैठता वह कालू रामके नामसे सम्बोधित किया जाता था। क्योंकि डोमके दानको ब्राह्मण निन्दनीय दृष्टिसे देखते थे। यह शक्ति अघोराचार्योंमें ही था। जो कि डोमका दान पचाते थे। वही परम्परा कालूरामके १५ वीं-१६ वीं सदी तक चली आ रही थी। और वही बदल कर किनारामी परम्परा हुयी अब जो भी इस गद्दी पर बैठता है। किनाराम कहा जाता है। यह मान्यता है कि क्रीं-कुण्ड वाला स्थान भी उन्हीं कालू-बाबा का उपवन था। परम्पराके अनुसार किसी भी पदपर आने वालेको प्रायः किसी एक बड़ेके ही नाम पर सम्बोधित किया जाता है।

स्थलके कुण्डको क्रीं-कुण्ड भी कहते हैं, कृमिक का अर्थ कीड़ा होता है और देशके इस भाग में सर्पको कीड़ा कहते हैं। इस प्रकार यह स्थल वही उपवन हो सकता है, जहाँ पर पौराणिक कालमें राजा हरिश्चन्द्रके पुत्र रोहितास को फूल एकत्र करते समय सर्पने काटा था और उसकी मृत्यु हो गयी थी। सम्भवतः यह उस कालसे चली आ रही साधकों की साधना-भूमि हो।

इस स्थलमें जो क्रीं-कुण्ड है वह एक अनादि काल-सिद्ध तीर्थ है। बाबा किनाराम और उनके शिष्योंने अपनी तपस्यासे इसमें जो अपूर्व शक्ति ला दी है। उसका आँखों देखा हाल यह है। स्थलमें होनेवाले उत्सवोंमें आनेवाले सहस्रों नरनारी श्रद्धापूर्वक इसमें स्नानकर सफल मनोरथ होते हैं। बालरोग छुड़ाने का तो यह अचूक साधन है। प्रत्येक रविवार और मंगलवारको माताएँ अपने बच्चोंको लेकर स्नान कराने आती हैं। पांच बार स्नान करानेसे रोगमुक्ति हो जाती है। अनेक दो-तीन बार

नहाकर पूर्ण-स्वस्थ हो जाते हैं। स्नान विधिमें पहिना हुआ वस्त्र और कोई गंडा-ताबीज हो तो छोड़ना होता है। सफल मनोरथ माताएँ आश्रममें पका चावल और मछली भेंट चढ़ाती हैं। आधुनिक विज्ञान की सुविधाएँ दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही हैं और अनेक चिकित्सक तथा चिकित्सालयोंके रहते इस सिद्ध कुण्डका आश्रय ग्रहण करना अपने आपमें एक बड़ी बात है।

इस स्थलमें एक अखण्ड धूनी महन्थ गद्दीके सामने दालानमें है। हजारों सदियोंसे इसे श्मशानसे लाई लकड़ियों से प्रज्ज्वलित रखा जा रहा है। विशेषता यह है कि उन लकड़ियोंसे जलती इस धूनीसे कोई दुर्गन्ध नहीं आती। इस धूनीकी विभूति का भी बड़ा माहात्म्य है, साधुओं द्वारा दी गयी इस विभूति से अनेक रोग-शोक दूर भाग जाते हैं। इतने चिरकालसे जलती इस धूनीको कई उच्च साधकों की तपस्या व योग देनेका अवसर मिला है। स्थलके निवासी इसी धूनी पर पका भोजन ग्रहण करते हैं।

औघड़ों में समाधि पूजा का बड़ा महत्त्व है। इन समाधियोंके ऊपरी भाग में भगलिंगात्मक यन्त्र बना होता है, जिसकी अर्चना करने से अनेक सिद्धियाँ मिलती हैं। अधिकारी साधकों को इन समाधियोंसे प्रेरणा तथा मार्ग-दर्शन मिला है। यद्यपि इस स्थलमें सभी महन्थ, मुड़िया व अघोर अनुयायी गृहस्थ साधकों की भी अनेक समाधियाँ हैं, पर इनमें मुख्य-समाधि बाबा किनाराम की है जिसका पूजन करके अनेकानेक साधक, गृहस्थ और दर्शनार्थी लाभान्वित हुए हैं।

इस स्थलके प्रांगण में इमली के पेड़की शाखा में सैकड़ों चमगादड़ लटकती रहती हैं। चाहे उत्सवका धूमधाम हो या साधारण दिन की सी शान्ति, ये अचल रूप में अपने स्थान पर लटकती रहती हैं। स्थलमें धूनीकी दालानके पास ही रखे एक पत्थरके हौद से कबूतर और अन्य पक्षी जल पीते हैं। बाबा किनारामकी छतरी और आसपासके वृक्षों पर पाये जानेवाले असंख्य पक्षीगण औघड़ोंकी जीवदयाके जीवन्त उदाहरण हैं।

इस स्थल में औघड़ोंका सिंहासन भी प्रांगणके मध्य रखा है, जिससे सटकर बाबा किनारामका भव्य चित्र रखा है। इसकी नित्य पूजा होती है। इसकी वन्दना से भी लोगोंको अनेक लाभ मिले हैं। बाबा किनारामका दूसरा भव्य चित्र उनकी समाधि से सटा रखा गया है, जिसे सीढ़ी चढ़ने पर पहले ही देखकर लोग प्रदक्षिणा करते हैं।

काशी के अनेक परिवारों में आज भी यह प्रथा चली आ रही है कि जब भी कोई मांगलिक कार्यक्रम उनके घर होगा, वे प्रथम पूजा और भेंट इस स्थलमें चढ़ाकर तब अपना कार्यारंभ करते हैं। इस प्रकार इस सिद्धपीठ से साधक, गृहस्थ और दर्शनार्थी सदा प्रेरणा ग्रहण करते हैं।

साधकों के लिए इस स्थल के गर्भगृह में भी पूजा करने के लिए एक बड़ा कमरा बना है। इसे काली-मन्दिर भी कहा जाता है, जिसमें एक बड़े चाँदी के दीवट

पर रखा दीप पूजाके अवसरपर प्रज्ज्वलित किया जाता है। ध्यान करनेका कमरा छोटा, स्वच्छ और दिव्य होनेसे एकाग्रता शीघ्र प्राप्त हो जाती है। इस गोप्य पूजा-स्थलमें साधकों को बाहरी आवागमनसे कोई विघ्न उपस्थित नहीं होता। भारतके प्रसिद्ध देवालयों और सिद्धपीठोंमें ऐसे गर्भगृह अवश्य मिलते हैं।

रामशाला-रामगढ़-वाराणसी

बाबा किनारामकी जन्म भूमि रामगढ़ है। यह स्थान वैराट के इतिहास प्रसिद्ध किलाके पूर्वी छोरपर तहसील चन्दौली वाराणसीमें स्थित है। डॉ० मोती चन्द्रने काशीका इतिहास पृष्ठ ११ पर यह बतलाया है कि यह पुरानी काशी है। इसी ग्रामके नामके आधारपर मेरा अनुमान है कि बाबा किनारामके नाममें 'राम' लगा है, ऐसी प्रथा आज भी देशके विभिन्न भागोंमें पायी जाती है। पौराणिक आधार पर रघुवंशी अवधके राजकुमारने एक समयमें काशीको जीत लिया था। उन्हींके वंशज रघुवंशी क्षत्रिय इस भू-भागमें अधिक संख्यामें आज भी पाये जाते हैं। मुसलिम शासन कालमें औघड़ोंसे द्वेष न था। प्रमाण स्वरूप मुगल शासकोंके दिए सनद को दिया जा सकता है, जिसके आधार पर औघड़ों को श्मशान की आय का निर्धारित भाग आज भी मिलता है। सम्भवतः इसी कारण क्षेत्रीय जनताने औघड़ोंके स्थल निर्माणके लिए पर्याप्त भूमिदान दी थी। वहाँ जो रामशाला है, उसमें बाबा किनारामका आसन और समाधियाँ मुख्य हैं। इसी स्थलके बाहर दो मन्दिर और एक चमत्कारिक बड़ा कुँआ है, जिसका वर्णन 'प्रतिहार्य' प्रसंगमें दिया गया है।

रामशाला-देव-गाजीपुर

प्रतीत होता है कि देवलका सम्बन्ध देवालय शब्दसे है। हिन्दू धर्म-ग्रन्थोंमें कर्मनाशा नदीके प्रति हेय भावना है, अतः पश्चिम निवासी देवल तक आते-जाते रहे होंगे, क्योंकि इसीके पूर्वी छोरपर कर्मनाशा नदी है। गाधि नामक राजाके नामसे गाजीपुरका सम्बन्ध जोड़ा जाता है और यह स्थान विश्वामित्रजी की अनुष्ठान-भूमि प्रतीत होती है। इस स्थलके पूर्व और उत्तर भागमें बड़ा विस्तृत सपाट मैदान है जो यज्ञानुष्ठान के लिए उपयुक्त है। यहीं विश्वामित्र-कालीन एवं अंगुष्ठमात्र मूर्ति या यंत्र था जिसे विश्वामित्र-माताकी मूर्ति कहा जाता है। इसीलिये इस बस्तीका नाम देवल पड़ा है। दुर्भाग्य-वश मूर्तियों की रहस्यमय चोरीके क्रममें यह मूर्ति अब अप्राप्त है, किन्तु जहाँ यह मूर्ति अवस्थित थी, उसी भूमिको लीप-पोत कर आज भी श्रद्धापूर्वक स्थल-पूजा चालू है। इस अनादि सिद्ध-स्थलपर स्थापित बाबा किनाराम की रामशाला दूर-दूर तक एक सिद्धपीठके रूपमें सुविख्यात है। इसी पूजा स्थलमें एक बड़ी दालान है, जिसमें लगी शहतीर एक प्रसिद्ध औघड़के डंडा मार देनेसे बढ़ गयी थी, जो आज भी लगी है। स्थानीय जनताके लिए और बाहरसे आनेवाले श्रद्धालुओंके लिये यह एक कामनापूर्ति स्थलके रूपमें आज भी प्रसिद्ध है। स्थानके पूर्व-उत्तर दिशामें एक परम्परागत तालाब है। इसे राम तलाई भी कहते हैं। राम तलाईके बारेमे लोक-कथा प्रचलित है कि एकबार एक लड़की इसमें डूबकर

मर गयी, तभी एक औघड़ने श्राप दिया—जा तू अब सूखा ही रह। तबसे यह तालाब सूखा ही रहता है। बहुत बड़ा तथा गहरा तालाब है। इसके दो तरफके घाट पक्के हैं। तालबके बीचमें एक प्राकृतिक श्रोत बहता रहता है, जिसे ईंटसे घेरकर कुँयेका आकार दे दिया गया है। तालाबके पास एक पीपलका वृक्ष है। लोगोंका विश्वास है कि इस तलाई में स्नान करके पीपलके पेड़के नीचे थोड़ी देर तक बैठ लेने से बुखार तथा अन्य रोग भी अच्छे हो जाते हैं।

इस स्थलके बारेमें गाजीपुर जनपदके जमानियाँ क्षेत्र जिसमें स्थल अवस्थित है, के लोगोंसे अनेक कथायें सुननेको मिलती हैं। कहा जाता है कि जब बाबा किनाराम सर्वप्रथम यहाँ आये तो वर्तमान किनारामी गद्दीके स्थानपर आसन लगाकर बैठ गये। उस समय यहाँके लोग सूखे और अकालसे त्रस्त थे। लोगोंके अनुनय-विनय पर बाबाने वर्षा होनेका बरदान दिया, परन्तु यह भी कहा कि यहाँ जो भूमि नहीं भींगेगी वह साधुओं की होगी। कहते हैं कि इसके बाद ही मूसलाधार वर्षा हुयी। चारों ओर की भूमि जलमग्न हो गयी। केवल बाबाका आसन और उसके आस-पासके बागकी जमीन सूखी ही रह गयी। लोगोंने अपार श्रद्धाके साथ यह जमीन बाबाके चरणोंमें सर्मपित किया और किनाराम स्थलका निर्माण हुआ।

स्थल एक एकड़ भूमिके चौकोर अहातेमें स्थित है। इसके विशाल भवनके दो मुख्य भाग हैं—प्रथम भागमें बाबा किनाराम की गद्दी एवं धूनी है तथा दूसरे भागमें भण्डार गृह एवं मुड़िया साधुओंके निवास-गृह हैं। भण्डारमें एक हवन कुण्ड है। अहातेमें रामतलाईके सीढ़ीके पास शिव मन्दिर तथा एक हाथीखाना है।

मुख्य भवन के चबूतरेके नीचे एक शिला-लेख है जो इस प्रकार है :—

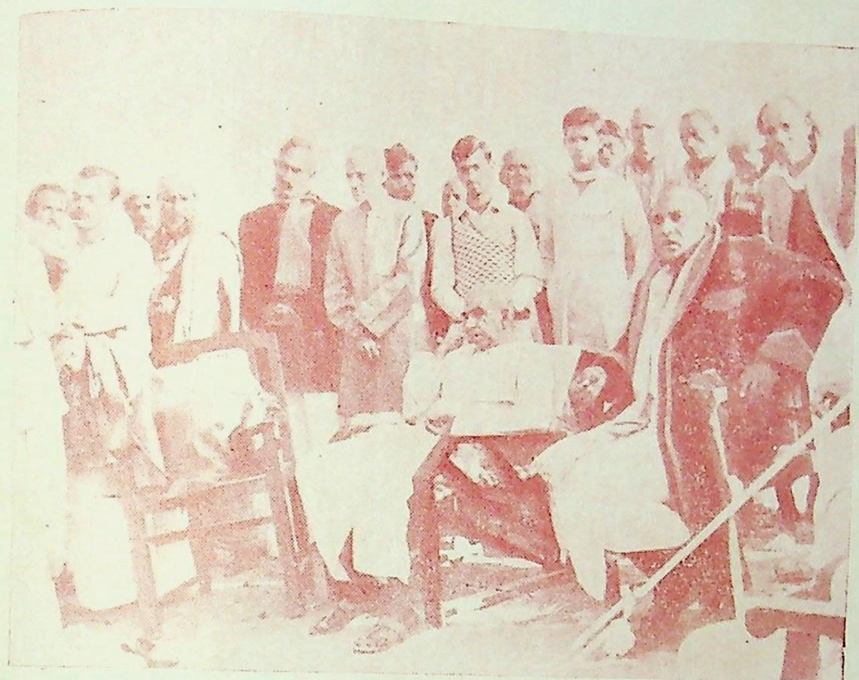
श्रीगणेशाय नमः

श्री रामजी सहाय ॥ श्री दत्तात्रेयजी परमात्मा ॥ श्री कालूरामजी ॥ श्री सोवारामजी ॥ श्री किनाराजी सहाय ॥ श्री प्रान नाथजी ॥ हुब्बा रामजी ॥ श्री गुलाब रामजी सहाय ॥

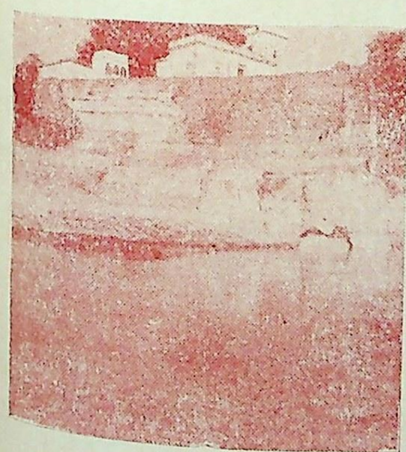
श्री सम्वत १९४६ सन् १८९२ ई० पुराना कच्चा रामशाला तोड़कर पक्का बनाया।

बाबा लक्षीमन राम महन्थने सम्मत् १९५२ मी० कुआर सु० १५ तैयार हुआ सन् १८९५ ई० सर्व महात्मा के कृपासे तैयार हुआ।

उक्त शिला-लेख द्वारा पुरानी रामशाला तुड़वाकर नयी बनाये जानेकी जानकारी प्राप्त होती है। इसमें बाबा किनारामके दोनों गुरुओंका नाम अंकित है और बाबा प्राननाथ राम, बाबा हुब्बा राम तथा बाबा गुलाब रामका भी नाम अंकित है, इस गद्दीके महन्थ हो चुके हैं। यह भवन शिलालेखके अनुसार बाबा लक्ष्मण राम महन्थने आजसे लगभग ८० वर्ष पूर्व बनवाया था। उनकी उदारताका परिचय अन्तिम वाक्यसे मिलता है जिसमें उन्होंने इसके निर्माणका श्रेय सभी महात्माओं को दिया है।



औघड़ भगवान राम एवं औघड़ रामनरेश प्रयाग में औघड़ मुनिनाथ के समाधि के समय श्रद्धालुओं के मध्य।



हरिहरपुर में बाबा किनाराम की तकिया के पास गोमती एवं पक्का घाट का एक दृश्य।



बाबा किनाराम स्थल हरिहरपुर, (जौनपुर) के वर्तमान महंथ बाबा शम्भूराम जी।

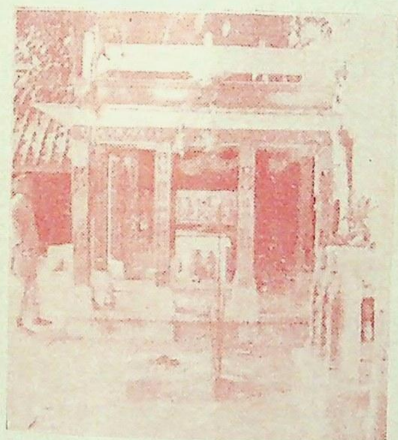




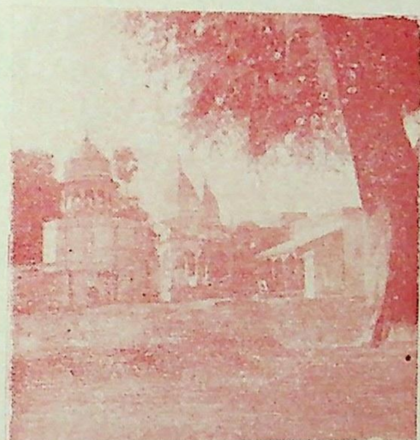
बाबा किनाराम की समाधि
क्रीं कुण्ड वाराणसी .



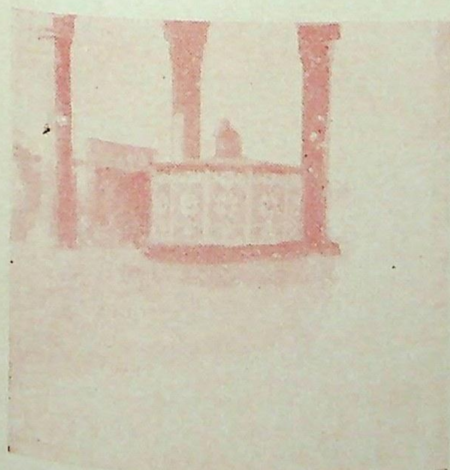
बाबा किनाराम की तकिया
हरिहरपुर जौनपुर



बाबा किनाराम जी का बैठक
रामगढ़, वाराणसी ।



वाराणसी स्थित बाबा किनाराम जी
एवं अन्य औघड़ सन्तों की समाधियां



बाबा किनाराम जी के समाधि
का एक दृश्य वाराणसी



बाबा शिवाराम जी की समाधि
रामगढ़, वाराणसी ।



बाबा किनारामका पुरवा

बाबा किनाराम जी जो पुरवा-परई प्रयोगमें लाते थे, जिसे किनारामी पुरवा-परई कहते हैं। उसका संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है। उनके पहले इस प्रकारका पुरवा नहीं बनता था। सम्पूर्ण भारतवर्षमें एक ही कुम्हार परिवार इस पुरवा (प्याला) को बनाता था। गाजीपुर जिलाके रामपुर मटीखन्ना ग्राममें यह पुरवा बनता था। लगभग दो सौ वर्षों से ऐसे पुरवे ग्राम तोफापुर थाना चौबेपुर, जिला वाराणसीमें बनते हैं। मुंशी कोहार अभी इसे बनाते हैं। ये भगेलू कोहारके पुत्र हैं, इनकी उम्र चौहत्तर सालकी है। ये रामपुर मटीखन्ना, गाजीपुरके कुम्हारोंके रिश्तेदार हैं।

मुंशी कोहार बहुत अच्छे मूर्तिकार हैं। इन्होंने बाबा किनाराम शोध मण्डलको एक परई, पुरवा एवं चिलम भेंटकी। 'चिलम कलापूर्ण है' नीचेका भाग ऐसे बना है जैसे कोई हाथसे चिलम पकड़े हो। विचित्रता यह है कि चिलमका छिद्र बिल्कुल सीधा है, ऊपरसे नीचे तक। आजभी गिरनाली औघड़ साधु जो किनारामी पुरवा व्यवहारमें लाते हैं, वह मुंशी कोहारका तथा इनके पूर्वजों द्वारा निर्मित ही व्यवहारमें लाते हैं। चाहे वे साधु उत्तर प्रदेशके हों अथवा बिहारके या भारतके किसी अन्य भाग के।

रामशाला-हरिहरपुर-जिला जौनपुर

जिला गजेटियर संयुक्त प्रान्त जिल्द संख्या २८ में जौनपुर को विवरणके साथ उक्त गजेटियरके पृष्ठ संख्या १५, १६, २०५ और २०९ पर हरिहरपुर का विवरण दिया है। "इसका परगना चन्दवक है। राजा हरिहरदेवका बड़ा किला हरिहर पुर में है जो कि अघोर-पंथी फकीरोंके कब्जेमें है। आज वहाँ का घना जंगल, जिसमें जंगली सूअर तथा भेड़िये बहुतायत में रहते थे, धीरे-धीरे कट चला है। कुछ भूमि कृषि-कार्यमें लाई जा रही है। डोभी का क्षेत्र रघुवंशी क्षत्रियोंका है। श्री गणेशराय इनके पूर्व पुरुष थे। इनका विस्तार सात कोस (चौदह मील) में है। चन्दवक मुहानाके निकट ही हरिहरपुर है। यहीं रामदेवका किला था। यहाँ चाँदशाह पुत्र इफ्तिखार खाँ रईस शर्की राजाओंका फकीर हो गया था। वह हरिहर चन्दवकके बीचमें रहा।"

इस स्थलपर भव्य समाधियाँ हैं। यहाँ बाबा किनारामका सिद्धासन, पक्की दालान, कमरे, पक्का कुँआ आदि हैं। यह स्थान गोमतीके ठीक कगारपर स्थित है। इस स्थानमें मोर भी हैं। पौराणिक श्रृंगी ऋषिका आश्रम भी यहीं निकट था, जिन्होंने राजा दशरथका पुत्रेष्टियज्ञ कराया था। इस स्थलपर आनेपर आज भी अपूर्व शान्ति और आध्यात्मिक प्रेरणा मिलती है। औघड़ोंमें यह विश्वास प्रचलित है कि इस किलाके अवशेषकी खुदाई कराने पर पर्याप्त ऐतिहासिक सामग्रीके साथ गड़ी धन-राशि भी मिलेगी। आशा है भारत सरकारके सम्बन्धित अधिकारी इस ओर ध्यान देगें।

यहाँ एक महत्त्वपूर्ण शिलालेख लगा है जिसपर चूनेकी पोताई होते रहनेसे उसे स्पष्ट पढ़ पाना कठिन है, जहाँ तक उसे स्वच्छ पढ़ा जा सका है उसके आधारपर निम्न अनुसार ही इसका रूप है :—

श्री सम्वत् १६४० मीना धरा है। प्रवरतक बाबा कीनाराम जीका प्रायः नवां परमहंसजी महंथका चेला बाबा रामबरन राम महंथने बनवाया। महंथ राजनारायणराम सोऽहम, सिऽहम, रोऽम, ओऽम्। भरोसराम, भगीरथ मिस्त्रीने बनाया। सावन सन् १३०० फसली।

उक्त शिलालेखसे यह स्पष्ट है कि यह शिलालेख लगभग एक सौ साल पुराना है। इसके अनुसार उक्त गद्दी परम्पराके तीन महंथ बाबा परमहंस राम, बाबा राम बरनराम और बाबा राजनारायण रामका नाम ज्ञात होता है और महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसपर बीज मंत्र भी अंकित है।

इस स्थलमें ग्यारह महंथों की समाधियाँ हैं। यह स्थल गोमतीके कगार पर स्थित है। अतः एक समाधि नदीकी बाढ़में आधा गिर चुकी है। यही दो समाधियाँ एकही चबूतरे पर बनी है जो कि बाबा जगरदेव राम और बाबा बच्चन रामकी हैं। बाबा किनारामकी समाधिके दाएँ बाबा बीजाराम और बाएँ बाबा रामजियावन रामकी समाधियाँ हैं। यहाँ मुड़िया औघड़ोंकी दस पक्की और एक कच्ची समाधि भी है।

इन सभी स्थलोंके अलावा एक स्थान है जो बहुत गोप्य है। जहाँ कि औघड़ लोग पर्दा करके सदैव विचरते हैं और संसारके मनुष्योंको व्यवहारोंके बारेमें चर्चाएँ करते हैं। योग वाशिष्टमें इसकी थोड़ी चर्चा आयी है जहाँ कि भैरव नृत्य कर रहे हैं। यह स्थान परम पवित्र, शान्त, दिशाएँ वहाँ की धक-धक, धिग-धिग, धड़-धड़ की आवाज करती है। इस पृथ्वीपर नहीं है इसी ब्रह्मांडमें आकाश-खप्परमें स्थित हैं और वहींसे समय-समय पर साधक जन अघोर आचार-विचार अर्चना करके जगत-कल्याणार्थ भूमंडलमें उतरते हैं। इसीलिए इन्हें अपने क्षेत्रपालोंके साथ लेकर यहाँके प्राणियोंको सहज और सुगम मार्गका अवलोकन कराके अपने दिव्य धामको लौट जाते हैं। मणि द्वीपके बराबरमें ही यह स्थान विरचित है। जहाँ कि सदाशिव अपने निर्मल शक्तियोंके साथ और अपने गणोंके साथ औघड़ रूप रश्मियोंके साथ लीला करते हैं। बड़े उच्च कोटिके अवस्थामें अवस्थित साधक अपनी साधनाके प्रभावसे उसे जानता है और वह इसी देहसे समय-समयपर वहाँ जाकर अमृतरस पान करता है। मणिद्वीपकी देवियोंसे सम्मानित अपने सुभावोंमें विचरते हैं। कभी-कभी यह लोक औघड़ोंको साधना कालमें बड़ा सन्निकट दीखता है। अघोरेश्वरके सन्निकट अनेकानेक ऋषि, महर्षि, सिद्ध, गन्धर्व, किन्नर बहुतसी देवियाँ उपस्थित रहती हैं। भूत भावन अघोरेश्वर भूतों पर दया करने वाले अपने करुणामय दृष्टिसे प्राणियों को प्रेरणा एवं सत्यथपर जानेके लिए प्रेरित करते हैं। रहस्यमय साधनासे आनन्दित जो अवस्था होती है, वह आनन्द सदैव वहाँ स्फुटित पुष्पोंकी तरह गन्ध बिखेरता रहता है। इसी आनन्दके लोभ वश औघड़ लोग विधि-निषेधसे, मंगल अमंगलसे परे होकर रहस्य-

मय साधनाओं को निर्भय होकर साधते हैं। उसी मार्गमें काशी, प्रयाग, रामेश्वर, केदारेश्वर मिलते हैं जिसका प्रतिबिम्ब इस पृथ्वीपर प्रतिरोपण करके यहांके निःसहाय लोग अपनी आशाओंकी पूर्ति करते हैं। हम सत्यं-सत्यं आपको विश्वास दिलाकर कहते हैं कि यदि कोई साधक ध्यानस्थ होकर देखेगा ब्रह्मांड खप्परमें मणिद्वीपके सन्निकट इसे पायेगा। बिरले कोई औघड़ उपासक- यहाँ पहुँचता है। बहुत ही अघोरेश्वरका अनुग्रह होनेपर औघड़ दानीकी दृष्टि पड़नेपर ही साधक इस तत्त्व-स्थलको जान जायेगा और पहुँचनेका यत्न करके अघोरेश्वर गुरुकी कृपासे पहुँच भी जायेगा।

इस पृथ्वीके गोलार्धके निकट कुछ ग्रह सालमें कई बार और कुछ २-४ सालमें आते हैं। औघड़ लोग उसे ध्यान करके अपने सूक्ष्म शरीरसे उन सब नक्षत्रोंके प्राणियोंसे भी सम्पर्क स्थापितकर लेते हैं। क्योंकि हम देखते हैं अपने औघड़ बाबा या अन्य साधक औघड़ोंमें बहुतसी विचित्र अनुभूतियां जो शास्त्रोंमें, शिला लेखोंमें भी नहीं हैं, वह समाधिके उतरने पर कह जाते हैं जो हमारे लिए भी रहस्य बना हुआ है। इसी रहस्यके कारण उन सब बातों का उल्लेख पुस्तकमें नहीं है। एक दिन उन्होंने कहा कि "समुद्रके अन्दर कई एक शहर है, जिसमें बाग, बगीचा, मनुष्य, तिर्यक-योनि सभी हैं और उसमें औघड़ लोगोंका स्थान भी है, क्योंकि हमारे कई एक औघड़ लोग उसमें प्रवेश करके अपने स्थूल शरीरसे देखा है। इसलिये हम कहेंगे कि योगी, महर्षि औघड़, साधक समुद्रकी तलहटीमें समाधिमें बैठे हुए हैं, कारण हरेक भू-भागपर हिमालयसे लेकर सर्वत्र मनुष्योंका आगमन ही है।"

———

रुद्राक्ष ८

बाबा किनाराम की शिष्य-परम्परा

(आरम्भसे अब तक)

'वाराणसी पूर्व दिशाकी शाश्वत नगरी है, न केवल भारतके लिये, किन्तु पूर्वी एशियाके लिये भी।'—जवाहरलाल नेहरू। यदि पाटलिपुत्र (पटना) तथा दिल्ली को भारतकी राजनैतिक राजधानी होनेका गौरव प्राप्त हो चुका है तो वाराणसी को निःसन्देह भारतकी सांस्कृतिक राजधानी कहा जा सकता है। भारतीय संस्कृति की रक्षाका श्रेय उन महापुरुषों को है जिन्होंने अपने त्याग एवं तपमय जीवनसे लोगोंको दूसरेके लिए जीनेकी कला सिखलाया है। ये विभिन्न मतावलम्बी सन्त जिनमें हिन्दू, जैन, बौद्ध, कबीरपन्थी आदि सम्मिलित हैं, इसी वाराणसी नगरी को केन्द्र बनाकर पृथ्वी में चारों ओर प्रेम और सहिष्णुता का प्रचार किया।

इसी वाराणसी जनपदके प्रसिद्ध ग्राम रामगढ़में बाबा किनारामका जन्म हुआ था। कहावत है कि नबीको प्रतिष्ठा उसके जन्म-स्थानमें नहीं होती, किन्तु बाबा किनारामकी बात ही और थी। सम्पूर्ण उत्तर भारत और विदेशोंमें तीन शताब्दीकी दीर्घ अवधिमें किनारामी सन्तोंने मानव सेवा और आध्यात्मिक उन्नतिकी प्रेरणा तो दी ही किन्तु बाबाके जन्म-स्थानमें बनी विशाल 'राम शाला' या बाबाका स्थल आज भी उनकी उच्च साधना और लोकप्रियता का प्रमाण है।

बाबा किनारामने चारों दिशामें स्थलकी स्थापनाकर मानों वाराणसीकी रक्षा का बीड़ा उठाया था। इतिहास साक्षी है कि उत्तर भारतके प्रमुख तीर्थ-स्थल सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दीमें विशेष विनाश लीलाके स्थल बने। धार्मिक असहिष्णुताके कारण हिन्दुओके प्रसिद्ध मन्दिर तोड़े गये, देव-प्रतिमाओं को उखाड़ फेंका गया, धार्मिक मतके आचार्यों एवं रक्षकों को पीड़ित व प्रवाहित किया गया और इस प्रकार जन साधारण को भय, निराशा तथा प्रलोभन दिखाकर धर्म-परिवर्तन के लिए बाध्य किया गया।

यद्यपि प्रकटमें बाह्य-आक्रमणोसे ही किसी व्यवस्थाका विनाश चित्रित होता है परन्तु यह न भूलना चाहिए कि जब तक किसी व्यवस्थामें आन्तरिक विषमताएँ या दुर्बलतायें या तो स्वतः उत्पन्न न हों जायँ या न बोई जायँ तब तक उसका विनाश सम्भव नहीं है। सन्तोंकी सबसे बड़ी सेवा यही रही है कि वे समाज की रक्षा तथा उसके पुनरुत्थानके लिये सदैव सचेष्ट रहे हैं। धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक मिथ्या आचारण तथा दोषोंपर कठोर प्रहार करते हुए उन्होंने पथ-भ्रष्ट मानवताको आशाका सन्देश सुनाया है।



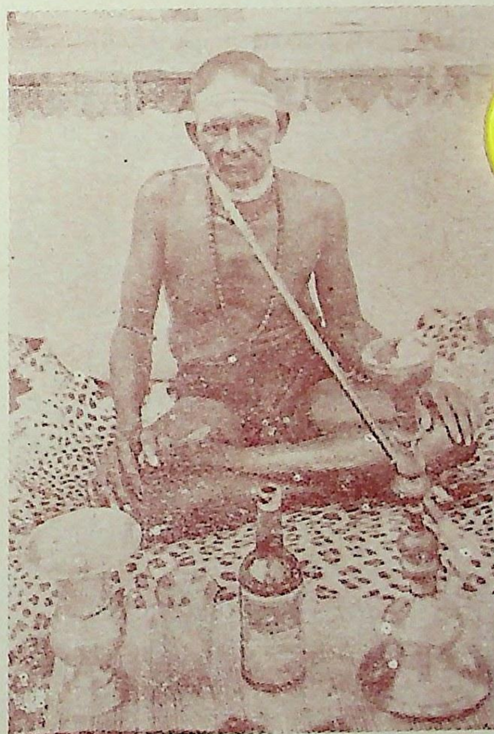
अघोराचार्य महान सन्त
बाबा किनाराम जी



बाबा किनाराम स्थल के महन्थ बाबा दलसिन्गार राम समाधि ले
हुये। साथ में बाबा राजेश्वर राम जी एवं आसुराम



सर्वेश्वरी समूह कैम्प प्रयाग में औघड
भगवान राम के साथ बद्री बाबू



बाबा किनाराम स्थल के ब्रह्मलीन
महंथ बाबा मथुरा राम जी



बाबा किनारामके कालमें हिन्दू समाज जर्जर हो रहा था और पारस्परिक राग-द्वेषके कारण वह दिनोंदिन अवनतिकी ओर जा रहा था। जनता को देवालयों में जाने, पूजा करने और देव-प्रतिमाओंसे प्रेरणा ग्रहण करनेसे रोका जा रहा था। विजेताओं से प्रताड़ित तथा अपमानित होकर भी स्वयं अपने बीच ऊँच-नीच की भावना को बढ़ावा देना बड़ा ही अशुभ सूचक लक्षण था।

ऐसे कालमें निर्गुणवादी सन्तोंकी परम्परामें एक उज्ज्वल नक्षत्र की भाँति बाबा किनाराम आए और उन्होंने अपने पीछे एक सशक्तशिष्य परम्परा छोड़ी। जब पूजास्थल खण्डित या भ्रष्ट किये जा रहे थे उस समय भी कायामन्दिरका कोई कुछ न बिगाड़ सका और उसमें विराजते आत्मारामकी उपासनासे भला किसे वंचित किया जा सकता है। यदि धार्मिक नेतृत्व किसी जाति या वर्ग विशेष तक सीमित हो तो उसे भी क्षति पहुँचायी जा सकती है परन्तु जब जन साधारण के बीच से ही किसी को उसकी साधना की उच्च दशा के बल पर धार्मिक नेतृत्व सौंपा जाय तो उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

बाबा किनाराम द्वारा स्थापित चारों औघड़-गद्दीकी शिष्य-परम्पराका अध्ययन करनेसे पूर्व यह जान लेना चाहिये कि बाबा किनारामकी शिष्य-परम्परामें दो प्रमुख आचार्य बाबा बीजाराम और बाबा रामजियावन राम जातिके कलवार थे। इन गद्दियोंके आचार्य चारों वर्णमेंसे हुए हैं जो स्वतःमें इस बातका प्रमाण है कि बाबा किनाराम जन्मना नहीं बल्कि कर्मणा जातिको महत्त्व देते थे। इस क्रान्तिकारी दृष्टिकोण को अपनाकर उन्होंने अपने कार्य-क्षेत्रमें हिन्दू समाजका मनोबल उठाया और उसे विघटनसे बचाया।

यहां यह बतलाना आवश्यक है कि शैव, शाक्त तथा वैष्णव जो तीन प्रमुख मत हिन्दू धर्मके हैं उनका भी सुन्दर समन्वय बाबाने किया था। औघड़ साधु शैव होता है किन्तु वह शिवाशिव, काली शिव, तारा अघोरेश्वर, भैरवी-भैरव अथवा श्मशान वासिनी देवी और देवता दोनोंकी उपासना करता है। अतः हम कह सकते हैं कि शैवों तथा शाक्तोंके दर्शन, पूजन और आचार का सुन्दर समन्वय औघड़ मतमें है। इसीके साथ वैष्णव मतका भी समन्वयकर बाबाने प्रमुख हिन्दू मतावलम्बियों को एकता सूत्र में आबद्ध किया।

इन सन्तोंने 'आत्मचरितं न प्रकाशयेत्' (आत्मचरितका प्रकाश न करें) की निष्ठा और भक्त शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासके 'लोक मान्यता अनल सम कर तप कानन दाह' में विश्वास रखनेके कारण न तो स्वयं कोई आत्मचरित लिखा है और न उनके भक्तों तथा अनुयायियोंने भी कोई विशेष जीवनीकी सामग्री छोड़ी है। अतः बाबा किनारामकी शिष्य-परम्पराका वर्णन एक कठिन कार्य हो गया है। रामगढ़ तथा क्रींकुण्ड शिवाला वाराणसीके महन्थों अथवा अघोर-आचार्योंकी परम्परामें मात्र उन महानुभावोंका नाम तथा उनकी जातिका पता चल पाया है। एक बात ध्यान देने योग्य हैं कि प्रमुख आचार्यों ने बाबा किनारामकी चारों अघोर-स्थलों की

व्यवस्था अकेलेही सम्भाला है। ऐसे ही एक महन्थ बाबा हुब्बारामका नाम बड़े आदरके साथ लिया जाता है जो कि रामगढ़ स्थलके महन्थ पद पर आसीन रहते हुए चारों स्थलों की व्यवस्था देखते थे।

बाबा किनारामकी शिष्य-परम्परामें दो प्रकारके साधक आते हैं, प्रथम महन्थ अथवा आचार्य जो कि एक समयमें किसी एक गद्दी पर आसीन होकर वहाँ की साधन-व्यवस्था का संचालन करते रहे हैं। इन महानुभावोंने सदा ही आकाश-वृत्ति पर निर्वाह करते हुए अपने शिष्योंमें इष्टके प्रति निष्ठाका भाव दृढ़ किया है। यद्यपि रामगढ़, देवल तथा हरिहरपुर स्थलोंके साथ भक्तों द्वारा प्रदत्त भूमि-सम्पत्ति, हाथी, घोड़ा आदि वैभव जुट गये परन्तु उन समृद्धियों का भी उपयोग जनसेवामें हुआ है। रामशाला, रामगढ़ द्वारा संचालित एक उच्चतर माध्यमिक विद्यालय है जिसकी रजत जयन्ती इसी वर्ष मनायी गयी है और रामशाला-रामगढ़के महन्थ बाबाकी कीर्तिके स्मारक उक्त विद्यालयको महाविद्यालय बनानेके लिए कृत संकल्प हैं।

दूसरे कोटिके शिष्योंको मुड़िया या दीक्षित शिष्य कहा जाता है जो अघोर-साधना द्वारा उत्पादित अपनी शक्तिका जनसेवामें सदुपयोग करते हैं। इनकी संख्या कुल मिलाकर बहुत बड़ी है और इनका विवरण भी नहीं मिलता है। यह बतलाना आवश्यक है कि कुछ मुड़िया साधु चार स्थलोंमें रहकर समाधि, स्थल तथा महन्थ की सेवा और व्यवस्था करते हैं और कुछ बाबा किनारामके नाम पर स्थापित कुटियों में रहते हैं और अधिकांश देश-विदेशमें भ्रमणशील रहते हैं।

बाबा किनारामके स्थल और कुटिया की यह विशेषता पायी जाती है कि उनमें महन्थ अथवा मुड़िया साधकोंकी प्रचुर समाधियाँ हैं। जैसा कि पहले बतलाया जा चुका है औघड़ोंमें समाधिपूजा का विशेष महत्त्व होता है। आप इस पुस्तकमें अन्यत्र पढ़ चुके हैं कि औघड़ साधु केवल परदा करते हैं अर्थात् उनका भौतिक शरीर देहपातके उपरान्त समाधिमें रखा जाता है किन्तु वे अधिकारी साधकों से सम्पर्क करके उन्हें प्रेरणा देते हैं और उनका पथ-प्रदर्शन भी करते हैं। उक्त समाधियोंके अतिरिक्त भक्तजनोंकी श्रद्धाके प्रतीक अघोर-आचार्यों की तकिया अथवा साधन स्थल भी पूजाकी वस्तुके रूपमें साफ-सुथरा रखे जाते हैं और उनपर दालान भी बनी होती है। रामशाला, रामगढ़में बाबा किनारामका साधन-स्थल पत्थरों से बना है जिसके खम्भोंमें अनेक मूर्तियाँ भी उत्कीर्ण हैं। अतिथि तथा साधु सेवापर इन स्थानोंमें बड़ा बल दिया जाता है।

साधुओंके अतिरिक्त गृहस्थ शिष्य भी इस परम्परामें पाये जाते हैं। ये साधक गुरु पदिष्ट मार्गका अनुसरण करते हुए आत्मोन्नतिमें लगे रहते हैं। गुरु तथा इष्टमूर्ति के ध्यानके साथ ही नाम-जप तथा संयमित और सादा जीवन बिताना इनका परम लक्ष्य होता है। इन गृहस्थ साधकों की भी कई कोटि पाई जाती हैं। इनकी संख्या का ठीक-ठीक पता नहीं चलता। यवनोंके शासन कालमें बहुत लोग जातिसे वहिष्कृत कर दिये जाते थे इनको भी इस मतमें स्थान दिया गया है। काशीकी वेश्याएँ भी जिन्हें समाजमें कहीं कोई अपनाने को तैयार न था, इस परम्परामें

शिष्या बनी हैं और उनके जीवनमें महान परिवर्तन आया है। सवर्ण हिन्दूके अतिरिक्त जो परिगणित तथा पिछड़ी जातिके लोग हैं उनके तो एकमेव आश्रय-दाता रहे हैं।

बाबा किनाराम की प्रसिद्ध गद्दी क्रींकुंड शिवाला वाराणसीमें है। यहाँ कि महन्थ-परम्परा निम्नलिखित है। इसका विवरण स्थलमें लगे शिला-लेखमें दिया है। यह स्थान सुप्रसिद्ध अघोराचार्य बाबा कालूरामका था जिन्होंने दीक्षा देनेके उपरान्त इसे बाबा किनाराम को सौंप दिया था। शिलालेख की प्रतिलिपि :—

महाराज किनाराम

गिरनार स्थान कृम-कुण्ड बी० ३।३३५ (भेलूपुर) वाराणसी।

१–बाबा कालूराम २–महाराज किनाराम ३–बाबा बीजाराम ४–बाबा धौताररराम ५–बाबा गइबीराम ६–बाबा भवानीराम ७–बाबा जयनारायणराम ८–बाबा मथुराराम ९–बाबा सरयूराम १०–बाबा दलसिंगारराम ११–बाबा राजेश्वरराम।

सन् १९५८ से वार्षिकोत्सवके अवसर पर वेश्याओंका नाच-गाना निषिद्ध।

इस शिला-लेखके अनुसार बाबा कालूराम सहित अबतक इस गद्दीके ग्यारह महन्थ हुए। पोथी विवेकसारमें जिसे बाबा गुलाबचन्द्र आनन्दने छपवाया था केवल बाबा किनाराम का जीवन-वृत्त मिलता है जिसे इस पुस्तकके रुद्राक्ष सातमें आप पढ़ चुके हैं। इनके अतिरिक्त बाबा जयनारायणराम का जीवन-वृत्त प्राप्त है जिसे नीचे दिया जा रहा है और अन्य आचार्यों की जाति और कुछ प्रतिहार्य की चर्चा छोड़ कर शेष कुछ भी प्रयत्न करने पर भी न मालूम हो सका है।

बाबा बीजाराम का जन्म एक सम्भ्रान्त किन्तु निर्धन कुलमें हुआ था। इनका जन्म स्थान ग्राम नईडीह जिला गाजीपुर था। पाठकोंको बाबा किनाराम की जीवनी के प्रसंगमें इनके मिलने, गिरनार यात्रामें बाबाके साथ रहने तथा बाबा कालूराम से बाबा किनारामके प्रथम साक्षात्कारके समय पर उपस्थित रहनेके अतिरिक्त विशेष विवरण नहीं मिलता। इनकी गुरु-भक्ति और निष्ठाकी विशद चर्चा है। इन्होंने योग्य गुरुके योग्य शिष्यके रूपमें अघोर-साधना को प्रचारित करनेमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है। बाबा किनाराम के जो चित्र मिलते हैं उनमें इनको गुरु-सेवा तत्पर दिखलाया गया है।

बाबा धौताररराम जिनका नाम एक विद्वानने बाबा जबर्दस्तराम बतलाया है बाबा बीजारामके बाद महन्थ हुए। ये जातिके ब्राह्मण थे। यह आपमें एक बड़ी बात है कि अघोर-गद्दी पर एक कलवार आचार्य के बाद ये बैठे। इन्होंने भी इस परम्पराको जीवित रखने और बढ़ानेमें योगदान किया।

बाबा गइबीराम जिनका नाम एक विद्वानने गौरीराम बतलाया है। बाबा धौताररामके बाद गद्दी पर बैठे। कामक्षाके निकट वाराणसीमें एक प्रसिद्ध कुआँ इनके नाम पर 'गैबीका कुआँ' कहा जाता है। वह स्थान बड़ा ही रमणीक है और साधना-प्रतीत होता। इस कुएँ का जल बड़ा चमत्कारिक है और काशीके नागरिक

नगरमें भी अपने निवास-स्थान पर इसे बन्द घड़ोंमें मँगाकर पीते हैं। इस जलमें बाबाकी तपः सिद्धि प्रकट है इसको पोनेसे स्वास्थ्यको बड़ा लाभ पहुँचता है और गुर्देको पथरीका यह प्रसिद्ध इलाज भी है। कहा जाता है कि ये पूर्वावस्थामें एक सरकारी कर्मचारी थे और इनकी जाति ब्राह्मण थी। एकबार मदपान करनेके आरोप में जाति वहिष्कृत होकर ये आश्रममें आए। इनमें संगठनकी अद्‌भुत प्रतिभा थी। इन्हीं के कार्यकालमें क्रींकुण्डके किनाराम स्थलके चारों ओर पक्की चहार-दीवारी बनी थी।

बाबा भवानीराम क्षत्रिय जातिके थे। इस परम्पराके प्रसिद्ध साधकोंमें आपका नाम आदरके साथ लिया जाता है किन्तु आपका विशेष विवरण प्राप्त नहीं है।

बाबा भवानोरामके यशस्वी उत्तराधिकारी बाबा जयनारायण राम हुए। इनका नाम दिनरायराम बताया जाता है और ये जातिके कलवार थे। पोथी विवेकसारमें प्राप्त आपका जीवन वृत्त निम्न प्रकार है:—

वाराणसी जनपदके बलुआ ग्रामके निकट गंगा पश्चिम वाहिनी हैं और यह क्षेत्र बड़ा पुनीत है। माघ महीनामें अमावस्या जिसे मौनी अमावस्या कहते हैं, आजके दिन यहाँ एक बड़ा स्नान-पर्व होता है। इसी ग्रामके प्रसिद्ध व्यवसायी जायसवाल (कलवार) कुलमें बाबा जयनारायण रामका जन्म हुआ था। जन्मतिथिका ठीक पता तो नहीं है किन्तु इतना ज्ञात है कि सन् १८५७ ई० के स्वतन्त्रता युद्धके समय आप युवा हो चुके थे। इनका पैतृक-व्यवसाय गुड़ तथा चीनी का था। ये एक धनवान परिवारमें उत्पन्न हुए थे इसके साक्षीरूपमें आपके पूर्वजोंका बनाया एक शिवमन्दिर उक्त ग्राममें अब भी है।

व्यापारमें उतार-चढ़ाव सामान्य बात है, अतः जब व्यवसाय मन्दीमें चला तो आपके परिवार वाले जन्मभूमि छोड़कर अदलपुरा में जो कि मिर्जापुर जनपद में है चले गये। आपका मन वहाँ भी न लगा और प्राक्तन जन्म-संस्कार वश आप वहाँसे चलकर वाराणसी स्थित बाबा किनाराम स्थलमें आ गए। उस समय महन्थ गद्दीपर बाबा भवानीराम थे जो बड़े वीतराग और पूर्ण अजगर वृत्तिके महात्मा थे। वे गुरु-स्थानमें पड़े रहा करते थे और दो-तीन दिनपर क्षुधा-निवारणार्थ किसी गृहस्थके घर जाकर जो प्राप्त होता उसीसे सन्तोष कर पुनः लौट आते। दर्शनार्थ आये सज्जनों से भी दण्ड-प्रणाम स्वीकारकर उनको विदाकर देते थे। ऐसे ही आत्मराम साधक बाबा भवानीराम को गुरु रूपमें पानेवाले बाबा जयनारायणराम सचमुच बड़े भाग्यशाली थे। उस समय आश्रमकी अवस्था भी ठीक न थी। अपने नवदीक्षित शिष्यको इन्होंने आश्रमसे दूर खोजवाँ बाजारमें रहनेके लिये कहा। बाजारके लोग पहले आपको घृणा की दृष्टिसे देखते थे किन्तु उनकी तपस्या और उनके त्याग तथा प्रेम से थोड़े ही दिनोंमें सम्पूर्ण बाजार आपका भक्त बन गया। वहीं बाबाने एक कुटी और एक कुँआ बनवाया था जो आज भी है। बाजारसे नियमितवृत्ति उनके आश्रमको मिलने लगी और वह आजभी किनाराम स्थल वाराणसीको प्राप्त होती है।

खोजवाँमें रहते हुए बाबा अपने गुरुकी सेवामें पर्याप्त समय लगाते थे। बाबा

भवानी राम कड़ी परीक्षा ले रहे थे और अप्रसन्न होने पर धुनीसे लकड़ी खींचकर शिष्यको बुरी तरह पीट देते थे। बाबा जयनारायण राम बादमें कहा करते थे :—

गुरु भक्ति अति कठिन है, ज्यों खाँडेको धार।
बिना साँच पहुँचे नहीं, महा कठिन व्यवहार।।

आप इस अग्नि-परीक्षामें सफल हुए। बाबा भवानीरामने अपने जीवन कालमें ही इनको अपनी गोदमें बैठाकर गद्दीका उत्तराधिकारी बना दिया था। अतः बाबा भवानीरामकी समाधि होने पर बाबा जयनारायण राम महन्थकी गद्दी पर बैठे। विचित्र बात यह है कि अपने गुरुकी समाधि बनाते समय आपने अपनी भी समाधि बनवा डाली। आप कहा करते थे कि ऐसा इसलिये किया है कि कालका स्मरण सदा बना रहे। आपके गुरु भाई बाबा अयोध्यारामजी भण्डारीका पद योग्यता पूर्वक सम्भालते रहे और आप स्वयं भजनमें तल्लीन रहा करते थे।

आपका निर्वाह केवल आकाश-वृत्तिसे होता था जो कुछ भी चढ़ावा आता था। उसे आश्रमकी उन्नतिमें लगा देते थे। इनके समयमें आश्रमकी बहुत उन्नति हुई। एकबार अपनी मौजमें आकर आपने स्थलके कुँएका उद्धार कर दिया जिसका जल आज तक सभी प्रयोगमें आ रहा है।

अष्टांगयोगमें आप परम निपुण थे। आपको सोते किसीने नहीं देखा और ये अत्यन्त सूक्ष्म आहार करते थे। आपकी सिद्धियाँ बड़ी उच्चकोटिकी थीं। आप आश्रममें विराजते थे। किन्तु कलकत्ता, गंगासागर और अन्य स्थलों पर भी भक्तों को आप दर्शन देते थे। कभी दस-पाँच व्यक्ति मिलकर भी आपके चौकी या आसन को हटा न पाते थे और कभी मौज आई तो एक निर्बल व्यक्ति भी उसे हटा लेता। आप अपनी सिद्धियों को कभी प्रकट नहीं करते थे। यदि कोई मनोरथ लेकर आता तो कहते "जाओ बाबा कालूराम तथा बाबा किनारामकी समाधि पर प्रार्थना करो वही जो चाहेंगे करेंगें।" आप कहते थे "जो कुछ किया सो हर किया, भये कबीर कबीर।"

धन धामकी आपको कभी स्पृहा न थी। वाराणसीमें ही आपके कुटुम्बी लोग थे। परन्तु आपने कभी उनसे कोई सम्पर्क न रखा। यद्यपि अघोर-मतमें मादक वस्तुओंके सेवनका वर्जन नहीं है परन्तु आप शिष्योंसे सदा कहते थे "जो मौज और नशा भजनमें है वह मादक वस्तुओंमें नामको भी नहीं है।"

आपने स्थलमें दो उत्सवों को परम्परा चलाई एक रामनवमीके बारहवें दिन तथा दूसरी भादोंमें लोलार्क छठको। इन दोनों अवसरोंपर काशीकी सभी गायिका अपना नाच-गाना आश्रममें करती थीं। भेंट भी चढ़ाती थीं। ये उत्सव अब भी मनाये जाते हैं किन्तु सन् १९५८ से वेश्याओंका नाच-गाना निषिद्ध हो गया है। बाबा किनारामके चार ग्रन्थ (१) विवेकसार (२) रामगीता (३) रामरसाल और (४) गीतावलीका प्रकाशन आपने कराया था।

आपको शिष्य बनानेका शौक न था क्योंकि आप कहा करते थे कि जैसे माता-पितापर बालकके लालन-पालन का दायित्व होता है वैसे ही गुरुपर भी शिष्यका दायित्व होता है। यदि किसी ने धनका प्रलोभन देना चाहा तो कोरा जबाब मिलाकि "गुरुमंत्र मोल नहीं बिकता।"

आपके वैष्णव चेले भी थे जिनमें श्री रामदास मिश्र कत्थक, बड़ी मोती बाई, सुमेरु तथा भैरवराम बाबाके विशेष कृपा पात्र रहे हैं।

आपको गायन-वादनका उच्चकोटिका ज्ञान था और आपका सितार, ढोल या मृदंग वादन सुनना कलाकारोंके लिए भी सौभाग्यकी बात होती थी। आपकी लोकप्रियता इतनी थी कि आपके जीवन कालमें ही आपके चित्र सैकड़ों घरोंमें पूजे जाने लगे थे। आपने समाधि लगभग १०० वर्ष की अवस्थामें ४ मई सन् १९२३ ई० को ली।

इनके पश्चात् बाबा मथुराराम महन्थ हुए। ये जातिके कुम्हार थे। इनका विशेष विवरण नहीं मिलता और इनके शिष्य बाबा सरयूराम जो जातिके ब्राह्मण थे महन्थ हुए। पता चला है कि ये जौनपुर जिलाके किसी ग्राममें ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुये थे। आज भी आपके वंशज गृहस्थ-औघड़ हैं और प्रायः विचरते रहते हैं।

बाबा दलसिंगाराम का जन्म वाराणसी के उच्च क्षत्रिय कुल में हुआ था। अपनी दीक्षाके उपरान्त आप गंगातटपर कुटीमें रहकर उच्च साधनामें लगे थे। आपने साधनाके बलपर बड़ी उच्च अवस्था प्राप्त करली थी। समय क्रमसे आपको वाराणसीके किनाराम स्थलका महन्थ बनना पड़ा और आपने गुरु-स्थानपर रह कर बड़ी उन्नतिकी।

बाबा राजेश्वर राम जो किनाराम स्थल वाराणसीके वर्तमान महन्थ हैं एक बड़ी उच्च अवस्थामें रहने वाले दिव्य-साधक हैं। आपका जन्म वाराणसीके उच्च क्षत्रिय कुलमें हुआ है। आप 'बालोन्मत्त पिशाचवत्' की दशामें ही रहते हैं। आपका स्वभाव इतना सरल है कि एक अकिंचनको भी बड़ा ही स्नेह आप प्रदान करते हैं। आपके भक्तों के मुख से आपकी अनेक सिद्धियाँ सुनने को मिली हैं जिनका स्थानाभाव से वर्णन संभव नहीं। कहा जाता है कि वर्तमान काशीनरेश और उनके उच्च अधिकारी आपमें बड़ी श्रद्धा रखते हैं। बाबाके आदेशानुसार एक समाधि औघड़ोंके तख्त के बगलमें आपके लिये काशीनरेशने बनवा दिया है। इस समय इससे अधिक लिखनेकी लेखक को आज्ञा नहीं मिली है। आपका सर्वाधिक सुयश यही है कि आपके सुयोग्य शिष्य औघड़ भगवानराम हैं जोकि इस ग्रन्थके चरित नायक हैं।

किनाराम स्थल-काशीके मुड़िया

१-अवतारू राम २-सोमारू राम ३-संगरू राम ४-संतू राम ५-केदार राम ६-सरयू राम ७-गौरमाई राम (औधूतिन) ८-झुलई राम ९-गुलाब राम १०-गोपाल राम ११-जानकी राम १२-अयोध्या राम १३-मुलकी राम १४-पूरन राम (निवास खोजवाँ) १५-सुखराम राम (निवास माँझा) १६-दामोदर राम १७-विश्वनाथ राम

१८-भैरो राम १९-सोमारू राम (निवास-कलकत्ता) २०-पलटन राम उर्फ नागा बाबा (निवास ककरमुत्ता) २१-सीताराम २२-सीरतन राम २३-रघुनन्दन राम २४-वादुल राम २५-कौलेश्वर राम २६-अदालत राम २७-भैरो राम २८-रज्जू राम २९-खेलाड़ी राम (जीवित, रज्जूरामके शिष्य-सुल्तानपुरमें समाधि है। ३०-बलीराम ३१-मंगरू राम ३२-बावन राम (काशीके मुड़िया निवास मिर्जापुर में ३३-बालाराम (निवास टाँडा मुड़िया काशीके) ३४-डोभाराम (कैली कोरामें रहते थे अब समाधि हो गई है।) ३५-तमासा राम (अब समाधि हो चुकी है।)

रामशाला, रामगढ़ वाराणसीके महन्थोंकी परम्परा

१-बाबा किनाराम २-बाबा बीजाराम ३-बाबा विश्रामराम ४-बाबा हुब्बाराम ५-बाबा भक्कड़राम ६-बाबा रामदास ७-बाबा हीराराम ८-बाबा भूरी राम ९-बाबा बुद्धू राम १०- बाबा विसर्जन राम।

बाबा विश्राम राम क्षत्रिय बालक थे। आपकी गुरु-भक्ति अनुकरणीय है। एक समय ग्रामीणोंके ललकारने पर कि "बड़े गुरुके चेले हो तो तपते हुए ईंटके भट्ठे पर नंगे पाँव चलो, तब हम मानेगें।" इन्होंने गुरु स्मरण कर वैसा ही किया और आश्चर्य यह कि इनके पाँवमें एक फफोला भी न पड़ा। परन्तु आश्रममें लौटकर देखा कि बाबा किनारामके पाँवोंमें फफोले आ गये हैं। इन्हें बड़ी ग्लानि हुई और गुरुने भी चमत्कार प्रदर्शनके लिये बुरा-भला कहा। फलतः ये आजीवन मौनव्रती बने रहे। इनको अनेक सिद्धियाँ प्राप्त थीं और सुदूर हैदराबादमें भी आपके अनुयायी आज भी पाये जाते हैं।

बाबा हुब्बाराम भी क्षत्रिय कुलमें उत्पन्न थे। अपने समयमें ये चारों औघड़ गद्दियोंका प्रबन्ध चलाते थे। आप बहुधा यात्रा करते रहते थे। आपके संग हाथी, घोड़े और अन्य सम्मानित चिह्न चलते थे। आप बड़े उच्च अवस्था प्राप्त साधक थे और जन-कल्याण ही आपके चक्रमका प्रयोजन था।

बाबा भक्कड़राम ब्राह्मण कुलोद्भव थे। आप रामशालाके निकट तार गाँव के निवासी थे। आप आजीवन साधनामें दत्त-चित्त रहे।

बाबा रामदास जातिके कलवार थे। एक समृद्ध कुलमें उत्पन्न थे। साधक होनेपर भी आपको धन-मानका गर्व बना था। निदान स्थलके हाथीके पास ज्यों ही पहुँचे, पीलवानने मना किया कि "महराज यह मतवाला है।" आप न माने। उसी हाथीने आपको कुचल कर मार डाला। यह बात ध्यान देने योग्य है कि कुल, जाति, शील और वैभवका थोड़ा भी मद शेष ही तो किनारामी गद्दीका महन्थ न होना चाहिए।

बाबा हीराराम का जन्म पंजाब प्रान्तमें हुआ था। अतः आप पंजाबी बाबाके नामसे भी प्रसिद्ध हुए। आप गौरांग और कमनीय कान्ति वाले थे। आप बाल-योगी थे। कुछ लोगों का विश्वास है कि नेपाल की तराईमें विचरनेवाले बलखण्डी बाबा आप ही थे।

आपके बाद गद्दी पर बैठनेवाले भूरीराम बाबा क्षत्रिय-कुमार थे। आपके कार्यकालमें रामशालाकी बड़ी उन्नति हुई। आपके बाद आपके सुयोग्य शिष्य बाबा

बुद्ध राम गद्दी पर बैठे। इन्हींके कार्यकालमें बाबा किनाराम इण्टर कालेज की स्थापना हुई जिसकी चर्चा की जा चुकी है। आपके प्रिय शिष्य बाबा विसर्जन राम वर्तमान महन्थ हैं। आप भी रघुवंशी क्षत्रिय कुलमें उत्पन्न हैं। आप सुयोग्य साधक तथा सरल स्वभाव-व्यक्ति हैं। क्षेत्रीय जनता की उन्नतिमें आपका महत्त्वपूर्ण योगदान सराहनीय रहा है।

हरिहरपुर आश्रम जिला जौनपुरकी शिष्य-परम्परा

इस स्थलमें ग्यारह महन्थोंकी समाधि बनी है। यह स्पष्ट है कि बाबा किनाराम, बाबा बीजाराम और बाबा रामजियावन रामकी जो समाधियाँ यहाँ बनाई गयी हैं वे प्रतीकात्मक समाधियाँ हैं जिसे परम्परासे यहाँके महंथ, साधक और गृहस्थ भक्त पूजते आ रहे हैं। सभी महंथोंका नाम प्रयत्न करने पर भी मालूम नहीं हो सका है परन्तु निम्नलिखित आठ महंथोंका नाम मिला है, जो इस प्रकार है :—

१–बाबा किनाराम २–बाबा बीजाराम ३–बाबा हुब्बाराम ४–बाबा परमहंस राम ५–बाबा रामबरन राम ६–बाबा बच्चनराम ७–बाबा जगरदेव राम ८–बाबा शंभुराम।

इनके अतिरिक्त यहाँके एक शिलालेखमें बाबा राजनारायण राम का नाम आया है जो कि सम्भवतः यहाँ के महंथ पद पर आसीन रहे होंगे। यह भी जान लेना चाहिए कि कुछ प्रतापी महंथ एक काल में चारों गद्दियों को एक साथ सँभालते रहे हैं, अतः वर्तमान महंथ बाबा शम्भुराम सहित जो नव नाम हो जाते हैं उनके अतिरिक्त दो ऐसे भी महंथ हो सकते हैं जो कि अन्य गद्दीके महंथके रूप में वर्णित हो चुके हैं।

इस स्थल में बड़ी उच्च अवस्था प्राप्त मुड़िया साधु भी हुए हैं, जिनमें सबका परिचय दे सकना सम्भव नहीं हो सका है परन्तु निम्न विवरण से स्थल के मुड़िया साधुओं का भो परिचय मिलता है।

मुड़ियाका नाम	गुरुका नाम	जाति	ग्राम या पता	जिला
१—बाबा दसई राम	बाबा जगरदेव राम	अहीर	कुशमी	जौनपुर
२—बाबा बिहारी राम	बाबा बच्चन राम	क्षत्रिय	मिर्जामुराद	वाराणसी
३—बाबा खटखट राम	बाबा जगरदेव राम	लुहार	कोसइला	जौनपुर
४—बाबा रमित राम	बाबा बच्चन राम	क्षत्रिय	कटारी	वाराणसी
५—बाबा देवन राम	बाबा जगरदेव राम	अहीर	मोहड़ीडीह	वाराणसी
६ - बाबा पुअरा राम	,,	अज्ञात	,,	वाराणसी
७—बाबा छोटू राम	बाबा रमित राम	ब्राह्मण	हरिहरपुर	जौनपुर
८—बाबा गजाधर राम	बाबा बच्चन राम	अहीर	अज्ञात	
९—बाबा खोपड़ी राम	बाबा बच्चन राम	अज्ञात	गया	बिहार
१०–बाबा भरथ राम	बाबा बच्चन राम	क्षत्रिय	गया	बिहार
११–बाबा दुखहरन राम	बाबा बच्चन राम	चमार	बेहड़ा	जौनपुर



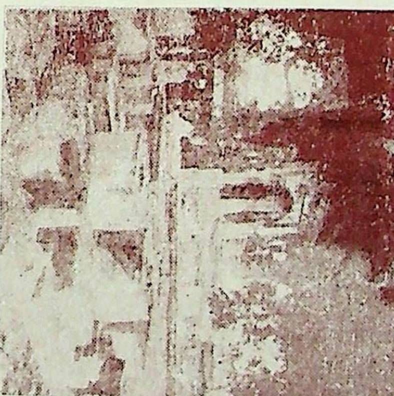
बाबा किनाराम स्थल हरिहरपुर के ब्रह्मलीन महंथ
बाबा जगरदेव राम



किनारामी परम्परा में सरभंग बाबा. होशियार
पुर पंजाब के शिष्य बाबा हजुरीराम जी



हरिहरपुर का मुड़ियासन्त जो
सदा सेवारत रहते हैं।



हरिहरपुर में मुड़िया औघड़
सन्तों की समाधियां



उक्त साधुओंका विशेष जीवन-वृत्त नहीं मिल पाया है। जो थोड़ा विवरण प्राप्त है वह निम्न अनुसार हैं :—

बाबा परमहंस राम क्षत्रिय कुलमें उत्पन्न हुए थे उनका अन्य कोई विवरण नहीं मिलता। शिला-लेखमें उनका उल्लेख यह प्रमाणित करता है कि वे इस स्थलके एक प्रतापी महन्थ हुए और उन्होंने अपनी गुरु-परम्पराको आगे बढ़ाया।

बाबारामबरनराम बाबा परमहंस रामके शिष्य थे। यह बात शिखालेखसे प्रमाणित होती है और उनका महत्त्व भी उसीसे ज्ञात होता है। वाराणसी जनपदके चौबेपुर ग्राम के ये ब्राह्मण थे। अन्य विवरण अभी नहीं मिल पाया है।

बाबा बच्चनराम उज्जैन-ठाकुर थे। ये सनदहाँ बाजार आजमगढ़के थे। इस स्थलके अनेक मुड़िया आपके शिष्य थे और यही आपकी सिद्धि और ख्यातिका पर्याप्त प्रमाण है। अभी अधिक विवरण नहीं मिल पाया है।

बाबा जगरदेव राम इस स्थलके एक सुप्रसिद्ध महन्थ हुए हैं। ये धनवठ क्षत्रिय थे। ये भैंसा, जौनपुरके रहने वाले थे। इनको क्षेत्रीय जनताका बड़ा सम्मान प्राप्त था। स्थलके भवन और गोमती तट तक पक्की सीढ़ी आपकी बनवायी हुई है। आपके समयमें क्षेत्रीय जनताके सहयोगसे स्थलमें वर्ष में कई उत्सव भी मनाये जाते थे। आपको आसपासकी ग्रामीण जनता अपने सुहृदके रूपमें स्मरण करती है। आपके समय तक स्थलमें एक हाथी था और क्षेत्रीय जनता बड़ी उदारता पूर्वक स्थलमें धन और सेवाओंसे सहयोग करती थी। आपको धन मानसे कोई लगाव न था अतः जनसेवामें आप सारी विभूतियाँ लगा देते थे।

स्थलके वर्तमान महन्थ बाबा शम्भुराम बड़े ही सरल हृदय, गुरुभक्त और संगीत प्रेमी हैं। ये बड़े ही अतिथि-परायण हैं यहाँ तक कि अपना सर्वस्व लगाकर भी ये उनकी सेवामें तत्पर रहते हैं।

मुड़िया साधुओंका मूल्य महंथ लोगोंसे भी अधिक जानना चाहिए। सिगधर्म जो कि योगियोंको भी अगम्य होता है उसीका ये आजीवन पालन करते हैं। अपनी गुरुभक्ति, निष्ठा और साधनासे ये बहुत कुछ उपार्जित करते हैं और उसे बिना संकोच जनसेवामें लगा देते हैं। जिन साधकों को देह-गेहकी भी सुधि नहीं आती वे भला क्यों अपना परिचय बताने लगे? इसीलिए इस स्थलमें जिन ग्यारह मुड़ियोंका नाम ऊपर दिया गया है उनका कोई विशेष विवरण नहीं मिलता। आपके साथ ही लेखक भी इन सभी साधकों के चरणोंमें कोटिशः प्रणाम करता है क्योंकि ये विदेह औघड़ बड़े ही लोकोपकारी हुए हैं।

रामशाला देवल गाजीपुर की शिष्य-परम्परा

स्थलमें हमेशा दो-चार औघड़ रहते हैं किन्तु वे वर्षमें लगभग ८ महीने हाथी आदि लेकर विचरते रहते हैं। यहाँ दो-तीन मुड़िया साधु स्थायी रूपसे रहते हैं। मुड़िया वे साधु होते हैं जो महंथके शिष्य हैं तथा औघड़ अवस्था प्राप्त करने के लिये सचेष्ट रहते हैं। इस स्थलके महंथ एवं मुड़िया साधुओंका विवरण निम्न प्रकार है :—

गद्दी-परम्परा के औघड़

गद्दी-परम्पराके पूजनीय औघड़ों की सूची इस प्रकार है जो पूजनीय बाबा लक्ष्मण राम तक एक शिलालेख से प्रामाणित हैं :—

१—परम पूज्य बाबा किनाराम जी २—प्राननाथ राम जी ३—हुब्बा रामजी ४—गुलाब रामजी ५—लक्ष्मण रामजी ६—सुखदेव रामजी ७—आदित्य रामजी ८—बनारसी रामजी (वर्तमान महन्थ)

स्थल के मुख्य भवनमें चार समाधियाँ हैं जिन पर बाबा प्रान नाथ राम, बाबा लक्ष्मणराम, बाबा सुखदेव राम, बाबा राम शरणके नाम अंकित हैं। इसलिये हो सकता है कि बाबा लक्ष्मण रामके बाद बाबा राम शरण रामभी गद्दीके महंथ रहे हों। जहाँ तक विश्वसनीय जानकारी प्राप्त हो सकी है उसके आधारपर बाबा लक्ष्मण रामके बादके महन्थोंका जन्म कुल-परिचय इस प्रकार है :—

१—पूज्य बाबा लक्ष्मण रामजी (गौतम ठाकुर, ग्राम—जमौआ, गाजीपुर)
२— ,, ,, सुखदेव रामजी (रघुवंशी ठाकुर, ग्राम—सोनहरियाँ, गाजीपुर)
३— ,, ,, आदित्य रामजी (ग्वाल, ग्राम—अदेसड़, गाजीपुर)

वर्तमान मुड़िया साधुओं का संक्षिप्त-परिचय

१—श्री मुरली राम—जन्म स्थान देवल। आयु ८५ वर्ष। आप गत दो पीढ़ीसे यहाँ भण्डारी हैं।

२—श्री फक्कड़ राम—जन्म स्थान-चौसा, बिहार। आप स्थलमें ही निवास करते हैं।

३—श्री रामेश्वर राम—जन्म स्थान-ग्राम—बठैरा तहसील बसौली जि० बदायूँ उ० प्र०। यद्यपि आपका जन्म उत्तरप्रदेशमें हुआ पर पंजाब तथा हरियाणाके सन्निकट होनेके कारण आप की बोली पंजाबीसे मिलती-जुलती है।

यद्यपि यहाँ के औघड़-सन्तोंकी कृतियोंकी कोई लिखित पुस्तक या कोई लिखित प्रमाण तो नहीं है किन्तु बड़े-बूढ़ोंने अपने पूर्वजोंसे जो सुना है, उसे बड़ी श्रद्धा एवं दृढ़ विश्वासके साथ कहते हैं जिनमेंसे कुछ एकका विवरण निम्न-प्रस्तुत है :—

१—पूज्य बाबा सुखदेव रामके बरदानसे शिव बरन नामक एक ब्राह्मण को चार पुत्र हुए। आप इसी गाँवके निवासी थे आपको कोई सन्तान नहीं थी। आपके चार पुत्रोंमें से तीन पुत्र श्री मारकण्डेय पाण्डेय, श्री भारखण्डे पाण्डेय एवं श्री रामजी पाण्डेय जीवित हैं और बाबाका गुणगान करते हैं।

२—जहाँ इन औघड़-सन्तोंके कृपा-चमत्कारकी घटनायें सुनने को मिलती हैं वहाँ उनके तेज एवं प्रकोप की बातें भी सुनी जाती हैं। कहते हैं कि देवल गाँवका ही एक राजपूत जिसका नाम जूठन सिंह था, बड़ा कुविचारी था। किसीकी बात नहीं

मानता था। बाबा लक्ष्मण राय ने भी उसे बार-बार समझाया पर नहीं माना। बाबा ने अन्ततोगत्वा क्रुद्ध होकर श्राप दिया—"जा सनक जा।" वह पागल हो गया और आजीवन पागल रहा।

३—एक बार बाबा आदित्य राम समीपके ही गाँव कोदयीं गये थे। गाँवके लोग बाबाको अन्न न देनेकी इच्छासे बुलाने पर भी नहीं आये। बाबाने कह दिया—"जाओ तुम लोगोंके धनमें चींटा लगेगा।" दूसरे दिन ही उस गाँवमें घर-घर अन्न-भण्डारोंमें चींटे भरे पड़े थे। गाँवके लोग त्रस्त होकर बाबाकी शरणमें गिरे और क्षमा माँगने लगे और कृपालु बाबाने क्षमा प्रदान की।

४—स्थलके अहातेमें ही पश्चिमके छोरपर एक कुण्ड है जिसकी बाबा आदित्य रामके समयमें खुदायी हुई उसमेंसे पर्याप्त मात्रामें खड़-खड़ा जौ निकला। लोगोंका कहना है कि यह जौ बाबा किनारामके समयका था जिसे प्रसादके रूपमें लोगोंने आपसमें बाँट कर ग्रहण किया और स्वास्थ्य एवं सुखकी प्राप्ति की।

गद्दीके महंथ औघड़-सन्तोंके अतिरिक्त यहाँ के कुछ मुड़िया औघड़ भी बड़े प्रसिद्ध और तेजस्वी हुए। श्री गरीब रामजी ऐसे ही मुड़िया औघड़ोंमें थे। आप बाबा सुखदेव राम एवं बाबा आदित्य रामके समकालीन थे।

———

रुद्राक्ष १०

जीवन-वृत्त

गुण्डी-ग्राम

बिहार राज्यके भोजपुर जिलेके आरा रेलवे स्टेशनसे ८ मील उत्तर, गंगासे डेढ़ मील दक्षिण और सोनसे ३-४ मील पश्चिम गुण्डी नामका ग्राम स्थित है जो अपने प्राकृतिक सौंदर्यके लिए प्रख्यात है। चारों ओरसे सघन और सुन्दर अमराइयोंसे घिरा हुआ यह विशाल ग्राम प्रथम दर्शनसे ही ऐसा प्रतीत होता है मानो यह सदियोंसे महान् विभूतियोंकी साधना-भूमि रही हो। किसी समय यह आजका ग्राम गोंड़ोंकी बस्ती थी, किन्तु कालान्तरमें यहाँ क्षत्रियोंका आधिपत्य हो गया। इस पावन ग्राममें सदियोंसे अनेक पहुँचे हुए साधक एवं सन्त होते आये हैं। इस ग्राममें हिन्दू और मुसलमान दोनोंकी ५,००० की आबादी है और इन दोनों धर्मोंके माननेवाली महान् विभूतियाँ इसी ग्रामसे प्रेम एवं सद्भावका सन्देश जनताको देती रही हैं जिनमेंसे कुछका परिचय दे देना आवश्यक है।

परमहंस श्री १०८ रामेश्वरदासजी

गुण्डीग्राम एवं उसके निकटवर्ती ग्रामोंके सभी लोग श्रद्धामूर्ति बाबा रामेश्वर दासजीसे पूर्ण रूपसे परिचित हैं। आपका स्वर्गवास हुए करीब १४७ वर्ष व्यतीत हो चुके हैं। आपका जन्म ब्राह्मण कुलमें हुआ था। आपकी विशेषता यह थी कि गृहस्थ आश्रममें रहते हुए भी सांसारिक बन्धनोंसे मुक्त थे और सर्वदा आत्मानन्दमें डूबे रहते थे। आप यज्ञावतारजीके मन्दिरमें रहते थे और उन्हींकी सेवा अर्चना किया करते थे। अपने आराध्य देवकी सेवामें वे इतने तल्लीन रहते थे कि इस नश्वर देहका भाव उन्हें कभी छू तक नहीं गया था।

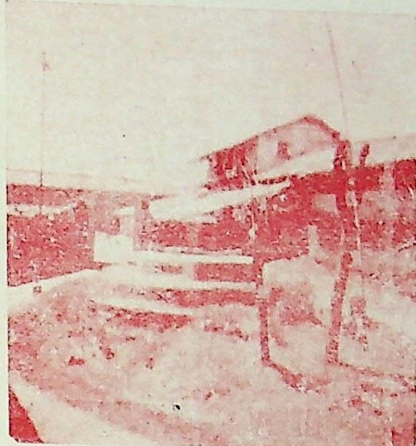
एक बारकी बात है कि बाढ़की वजहसे उनके घरवाले भोजन लेकर बाबाकी सेवामें उपस्थित न हो सके। बाबाका परम सेवक दुबरी भी बाबाके साथ उनकी कुटियामें सेवामें संलग्न था। घनघोर वृष्टि हो रही थी और चारों ओर जल ही जल दृष्टिगत होता था। अर्द्धरात्रिका समय हो गया। बाबाने देखा कि मुझे और इस सेवकको आज भूखा ही रह जाना पड़ेगा। सेवककी क्षुधाकी पीड़ा महात्मासे न देखी गई और उन्होंने कहा :—

'मोरे तोरे राम ही के आस रे दुबरिया। केहि बिधि करब उपास।'

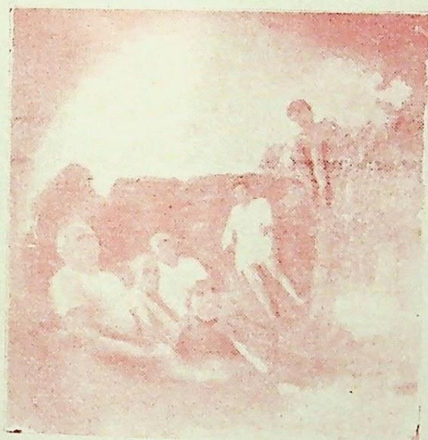
इसी समय देखते क्या हैं कि एक व्यक्ति उस भयानक वृष्टिमें भोजनकी सामग्री लेकर प्रतिदिन भोजन ले आनेवालेके रूपमें आ उपस्थित हुआ। महाराज एवं सेवक दुबरीने प्रसाद पाया। प्रातःकाल होते ही वह सज्जन जो प्रतिदिन प्रसाद ले आया करते थे महाराजकी सेवामें उपस्थित हुए और अपने न आनेकी असमर्थताके लिए



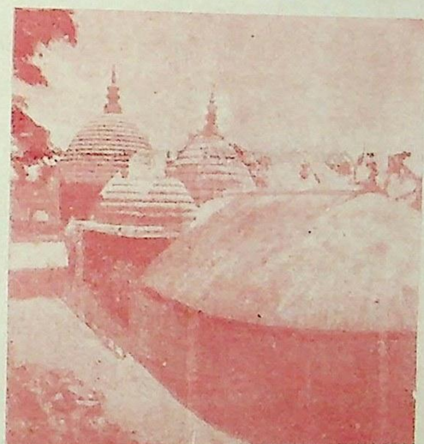
औघड़ भगवान राम जी द्वारा बाल्यकाल में गुण्डी ग्राम में स्थापित शिव मन्दिर



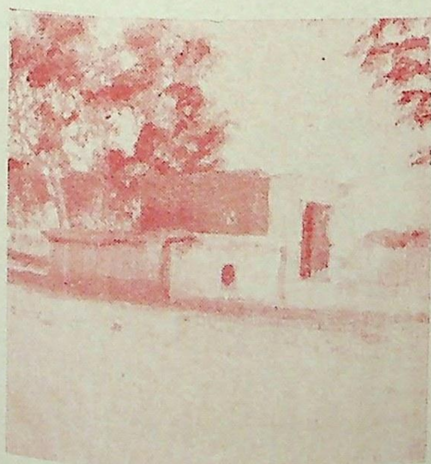
वह पुण्य आवास गृह जहां औघड़ भगवान राम अवतरित हुये।



सिद्धपीठ कालशिला पर औघड़ भगवान राम भक्तों के साथ



सुविख्यात शक्ति पीठ कामक्षा, आसाम



बाराचवर के निकट गुफा (गाजीपुर) औघड़ भगवानराम का साधना स्थल कुछ काल रहा



बाबा कच्चा राम की समाधि, जाल्हूपुर, वाराणसी।



क्षमा-याचना करने लगे। पर बाबाने कहा—"अरे! कैसी बातें करते हो। रात्रिमें तुम स्वयं भोजन ले आये थे और हमने और दुबरीने प्रसाद पाया।" कहा जाता है उस रात्रि स्वयं बाबाके आराध्यदेव राघवेन्द्र बाबाके लिए भोजन ले आए थे।

अनेक साधक एवं सन्त, बाबाके दर्शनार्थ गुण्डी-ग्राममें पधारा करते थे। एक बार कुदूरियाँ ग्रामके बहुत पहुँचे हुए फकीर टिकिया साँई एक बाघपर बैठकर महात्माजीके दर्शनार्थ गुण्डी पधारे। साँई बाबाने शायद अपने ऐश्वर्य एवं सिद्धि-प्रदर्शनार्थ ऐसा किया था। महात्माजी इनका मनोभाव तुरत ताड़ गए। साँई बाबाके आते ही उनका सत्कार करनेके बाद बाबाने बाघको अपनी गौशालामें बँधवा दिया। कुछ देरतक दोनों सन्तोंका सत्संग होता रहा और इसके बाद साँई बाबाने महात्माजीसे बिदा ली। पर जब साँई बाबा अपने वाहन बाघको लेनेके लिए गौशालामें पहुँचे तो उनके आश्चर्यका ठिकाना न रहा। बाघ गौशालामें न था। बादमें महात्माजीने सहजमें ही एक गऊके मुखसे बाघको निकाल दिया।

एक बार एक अवधूतिन अपनी साधना पूर्ण करनेके पश्चात् इस विचारसे भ्रमणार्थ निकली कि योग्य साधक प्राप्त होनेपर उससे वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर लें। अनेक स्थानोंका भ्रमण करते हुए यह अवधूतिन गुण्डी ग्राम आ पहुँची। वे पूर्णतया नग्न रहती थीं और उन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि जो पुरुष मुझे वस्त्र पहनानेमें सफल होगा उसीसे विवाह करूँगी। इस ग्रामके किसी सज्जनकी दृष्टि उस देवीपर पड़ी तो उन्होंने उनके सम्मानार्थ एक वस्त्र उनके शरीरपर फेंक दिया। सुननेमें आता है कि वस्त्र शरीरसे स्पर्श होते ही जलकर भस्म हो गया। क्रमशः यह अवधूतिन यज्ञावतारजीके मन्दिरमें जा पहुँची। उस समय बाबा अपने आराध्यदेवके विग्रहके समक्ष आरती लेकर खड़े थे। इस नग्न अवधूतिनको देखते ही बाबाने एक वस्त्र इनके शरीरपर डाल दिया, पर इस बार वह वस्त्र पहलेकी भाँति नहीं जला। अवधूतिन तत्काल समझ गई कि बाबा ब्रह्मनिष्ठ हैं और अपने मनोनुकूल साधकको पाकर उसने विवाहका प्रस्ताव किया। पर इसी बीच बाबाकी धर्मपत्नी आरती लेनेके लिए वहाँ पधारीं और इनको देखते ही अवधूतिनके आश्चर्यकी सीमा न रही। विवाहके प्रस्तावपर बाबाने छन्दमें ही उस अवधूतिनको यह उत्तर दिया।

तू पर नारी मातु हमारी निज सुत जानि करहु तुम दाया।
आपन लहर कहर तुम राखो उपजावो तुम मोह न माया॥
तोहरे भक्ति से शक्ति पावल बड़ा जतन द्विज पावल काया।
रामेश्वर के रक्षक-दक्षक हैं साहेब एक रघुराया॥

अवधूतिनने बाबाको गृहस्थ आश्रममें पाकर दूसरा प्रश्न किया :—

रामेश्वर केहि जान न भग्यौ ?

तदुपरान्त बाबाने उत्तर दिया :—

केतो जाय अर्द्ध उर्द्ध हेरचो केतो जाय जंगलमें भग्यौ।
तापस भोगी और ब्रह्मचारी मदन बाण उर काहु न लग्यौ॥

नीम ऋषि और भक्त मछेन्दर बामदेव इनके चित ठग्यौ।
तीन लोक सर कामिनी ब्यापे रामेश्वर यहि जान न भग्यौ॥

इसके पश्चात् बाबाने माँके रूपमें इस अवधूतिनको प्रणाम किया और वह इस ग्रामसे चली गई। बाबामें काव्य-प्रतिभा भी बड़ी विलक्षण थी। तत्काल पद्यमें अनेक रचना कर देना इनके लिए बड़ी साधारण-सी बात थी। महात्माजी द्वारा रचित अनेक रचनायें आज भी गुण्डी ग्राम-निवासी बड़ी ही श्रद्धा एवं भक्तिके साथ गाते हैं। बाबाका विश्वास था कि परमात्मा भक्तोंकी त्रुटियोंपर ध्यान नहीं देते और महान्से महान् पतितोंको ऐसी परम गति देते हैं कि बुद्धि द्वारा उसको समझना कठिन ही नहीं वरन् असंभव है। ऐसे ही भावकी एक कविता नीचे दी जा रही है—

कहिया गज गिद्ध कियो तप तीरथ का गनिका गृह-काज सँवारचो।
जीव दया कहिया सदना कहिया मदमाँस अजामिल वारचो॥
कौन विभीषण साधन में केहि राधन में भिलनी तिय तारचो।
रामेश्वर तो बिनवौं प्रभुसे कबहिं नहिं भक्त के भूल बिचारचो॥

बाबाका काव्य आज भी क्षेत्रीय लोगोंकी वाणीपर निवास करता है।

११० वर्षकी आयुमें बाबा सांसारिक लीला समाप्त कर ब्रह्मीभूत हो गए। विमान उठनेपर आकाश-मार्गसे राम-नामका शब्द हुआ था।

साँई सामसीन बाबा

साँई सामसीनजी इसी गुण्डी ग्रामके रहनेवाले रामेश्वर बाबाके समकालीन और बहुत पहुँचे हुए फकीर थे। रामेश्वर बाबा एवं साँई साहबका बहुधा सत्संग भी हुआ करता था। आज दिन भी साँई बाबाके परिवारके लोग पूजे जाते हैं। साँई बाबाकी समाधि ग्राममें घुसनेके पूर्व ही सड़कके किनारे एक बहुत ही रमणीय स्थानपर स्थित है। साँई बाबाकी पूजा ग्रामके हिन्दू एवं मुसलमान दोनों ही करते हैं। लोगोंकी धारणा है कि आज भी साँई बाबा अपनी समाधिसे निकल कर भ्रमण किया करते हैं।

औघड़ बाबा

औघड़ बाबा पकड़ी जगतपुरके बहुत ही सिद्ध अवधूत थे। वे वायु-मार्गसे बहुधा गुण्डी ग्राममें आया करते थे और यहींपर बाबा रामेश्वर दासजी, साँई साहब एवं बँसुरिया बाबा (औघड़ बाबा) का सत्संग हुआ करता था।

इन महापुरुषोंके अलावा और भी अनेक सिद्ध पुरुष एवं साधक इस पावन गुण्डी ग्राममें हो गए हैं। इस ग्राममें चार सती स्थान हैं जहाँ उस वीर-प्रसवा क्षत्राणियाँ सती हुई थीं। इसके अतिरिक्त उस ग्राममें मन्दिर और देवालय भी बहुतसे हैं।

इसी गुण्डी ग्राममें बाबाके प्रपितामह जिन्होंने ग्रामकी शिक्षाके लिये मिडिल स्कूलकी भूमि आदिका दान किया था बाबू हृदयप्रसाद सिंहजी बड़े ही यशस्वी एवं उदार व्यक्ति हो गये हैं। वे इतना उदार थे कि उनके दरवाजेसे

कभी कोई साधु-अभ्यागत खाली हाथ न जाता था, सबका यथोचित सम्मान होता था। गर्व तो आपको छू तक नहीं गया था। एक बहुत ही सम्मानित जमींदार होनेपर भी आपका ग्राम एवं क्षेत्रीय लोगोंसे बहुत प्रेम-पूर्ण बर्ताव रहता था। आज भी गुण्डी ग्रामके लोग बड़ी ही श्रद्धाके साथ आपका स्मरण करते हैं। उनके सुपुत्र बाबू बैजनाथसिंहने भी अपने पूर्वजोंके अनुसार कुल-परम्परा कायम रक्खी। ये ब्रह्मदेशमें रंगूनमें भी रहते थे। वहाँ उनका व्यवसाय था। बाल्यकालसे ही आपको व्यायामका बड़ा शौक था। आप अपने समयके कुशल कुश्ती लड़नेवालोंमें प्रसिद्ध थे। उनको ईश्वर द्वारा दिया हुआ सबल शरीर, अच्छी खासी जमींदारी एवं पर्याप्त धन था जो अन्य किसी दूसरे व्यक्तिको मदान्ध कर देता पर इतना सब कुछ होते हुए भी उस लौह-शरीरके अन्दर एक अत्यन्त पवित्र एवं कोमल हृदय धड़कता था जो दूसरोंके कष्टपर तुरत द्रवित हो उठता था। इसका यह मतलब नहीं कि आपमें वीर भाव सर्वथा लुप्त था। परन्तु यह कहा जा सकता है कि आपमें राजस एवं सात्त्विकका अद्भुत समन्वय था। यह भाव एक छोटेसे उदाहरणसे स्पष्ट हो जायगा।

आपकी यज्ञावतारजीके चरणोंमें असीम भक्ति एवं श्रद्धा थी, गायनका भी शौक था लेकिन एक सच्चे एवं धर्मनिष्ठ साधककी तरह। प्रायः बहुतसे गायक गुण्डी ग्राममें आया करते थे। ठाकुर साहबका आदेश था कि जो भी गायक गुण्डी ग्रामसे गुजरे वह ठाकुर साहबके आराध्यदेव यज्ञावतारजीके चरणोंमें अपनी श्रद्धा अवश्य अर्पित करे। किसीकी यह मजाल न थी कि आपके इस आदेशकी अवहेलना करे। गायकोंको गायन सुनानेके पश्चात् आप यथोचित पुरस्कार दिये बिना जाने न देते थे। यह थी आपकी उदारता, आराध्यदेवके चरणोंमें भक्ति एवं राजस और सात्त्विकके अद्भुत समन्वयका उदाहरण।

बहुत दिनोंतक बाबू बैजनाथ सिंहजीको कोई सन्तान न हुई। यज्ञावतारजी-की कृपासे संवत् १९९४ वि० भाद्रशुक्ल सप्तमी रविवारको आपको एक पुत्र-रत्नकी प्राप्ति हुई। इसके कुछ दिनोंके बाद एक कन्या-रत्नकी भी प्राप्ति हुई। जब बालकका जन्म हुआ तो ठाकुर साहबने कहा कि मेरे परिवारमें साक्षात् भगवान्‌ने जन्म लिया है जो तमाम परिवारको तारनेके लिए आये हैं। आपने अपने इस पुत्र-रत्नका नाम भगवान रक्खा और राशिके अनुसार इनका नाम देवकुमार पड़ा।

कहा जाता है कि सिंहको केवल एक ही संतान होती है और उसकी प्राप्तिके बाद वह अपनी जीवन-लीला समाप्त कर इस संसारसे चल देता है। जब भगवान ५ वर्षके थे तभी सिंह बाबू बैजनाथजी भी अपनी सांसारिक लीला समाप्त कर ब्रह्मीभूत हो गए और इस संसारमें वह नवोदित सूर्य छोड़ गए जिसके चरणोंकी कृपासे अनेकानेक लोगोंकी जीवन नौका पार लगनेवाली थी।

जब बाबू बैजनाथ सिंहजीका अन्तिम समय निकट था, उस समय भगवान अपने कुएँके पास बैठे हुए थे। उन्हें हवेलीके अन्दर बुलवाया गया। उन्होंने जाकर अपने पिताजीके मुखमें गङ्गा जल डाला। मरते सिंहने अपने शिशुको अन्तिम बार

भी वीर भावसे ही देखा मानो मूक रूपसे यह अन्तिम संदेश दे रहे हों कि इसके लिए दुःखी मत होना, यह तो यहाँका नियम ही है। इसके पश्चात् भगवान घरके बाहर चले आए। तत्काल ही घरमें रोना-पीटना शुरू हो गया पर महात्माजीके हृदयमें कोई भाव जागृत न हुआ। परन्तु जब आपकी दादीजी रोने लगीं तो आप भी फूट पड़े। जब वृद्धा दादीने आपको रोते हुए देखा तो आप महात्माजीको धैर्य देनेके निमित्त हँस पड़ी और कहा कि यह कुछ नहीं है।

आपके भक्त श्रीचन्द्रभानु पाण्डेयजी ज्योतिषीने आपकी जन्म-पत्रिका बनायी है जो इस प्रकार है—

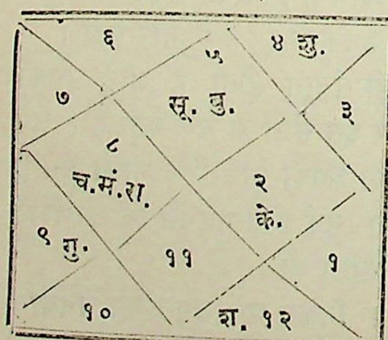
महाप्रभु अघोरेश्वर

"भवतिभव्येष्वनवग्रहग्रहा:" इस लोकोक्तिके अनुसार यह ध्रुव सत्य है कि महापुरुष लोग जन्मान्तरीय पुण्योपार्जित फलजन्य योग युक्त होकर ही इस धरा धामको पवित्र करते हुए सर्वजनहिताय-सर्वजनसुखाय अपनी लीलाका विस्तार करते रहते हैं। इसी सातत्यमें पूज्यपाद श्री श्री १००८ तपोमूर्ति अवधूताग्रगण्य, सन्तशिरोमणि श्रीभगवान रामजीकी जन्म-पत्रिकाके अनुसार कतिपय उन योगोंका वर्णन करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है जिन योगोंमें "महापुरुष" लोकनायक, धर्माचार्य, धर्म-प्रवर्तक, विश्वविख्यात लोग उत्पन्न हुआ करते हैं।

महापुरुष लोगोंकी प्रवृत्ति बाल्यकालसे ही सामान्य जनोंसे अलग चमत्कारपूर्ण रहती है। मेरी दृष्टिमें "अनेकजन्मसंसिद्धिस्ततो याति परां गतिम्" के अनुसार ऐसे लोगोंके संस्कार कई जन्मोंमें पवित्र होते-होते उत्तरोत्तर देदीप्यमान होते जाते हैं।

उपर्युक्त महान् लोगोंकी पहिचान "यदुपचितमन्यजन्मनि शुभाशुभं तस्य कर्मणः प्राप्तिं व्यञ्जयति शास्त्रमेतत् तमसि द्रव्याणि दीप इव" ज्योतिषशास्त्रसे पूर्ण रूपसे होती रहती है क्योंकि मनुष्य जीवनके भूत, भविष्य एवं वर्तमान फलोंका द्रष्टा होनेका गौरव ज्योतिष-शास्त्रको प्राप्त है। तच्छास्त्रानुसार श्रीमहाप्रभु अघोरेश्वर श्रीभगवान रामका जन्म श्री शुभ सं० १९९४ भाद्रपद शुक्ल ७ सप्तमी रविवार ०।३८ दण्डादि इष्टकालपर हुआ है, तदनुसार—

जन्माङ्गम्



(१) शीतांशुराशीशमिनात्मजो वा लग्नेश्वरः पश्यति दीक्षितः स्यात् ॥

अत्र भौमोपरिशनिदृष्टिवशात् यतियोगः। केवलं यतियोग एव नास्ति अपितु पूर्ण दीक्षित योगः।

(२) भौमर्क्षगे शीतांशुं मन्दः पश्यति तेन यतियोगः ॥

(३) स्वभवनोपगतभौमः केन्द्रे रुचकयोगकर्ता। दीर्घास्यो, बहुसाहसाप्तविभवः शूरोऽरिहन्ता बली गर्वितो रुचके प्रतीतगुणवान् सेनापतिर्जितारः ॥

(४) चन्द्राद्द्वितीयगे गुरौ सुनफा योगः। स्वयमधिगतवित्तः पार्थिवस्तत्समो वा भवति हि सुनफायां धीधनाख्यातिमांश्च।

(५) सूर्याद् द्वादशगे भृगौ शुभवशियोगः। चार्वङ्गप्रियवाक् प्रपञ्चरसिको वाग्मीयशस्वी धनी।

(६) लग्नेशो लग्ने स्वक्षेत्रगतः शुभग्रहयुतश्च तेन चामरयोगः प्रत्यहं व्रजति वृद्धि मुदग्रां शुक्ल चन्द्र इव शोभनशीलः। कीर्तिमान् जनपतिश्चिरजीवि श्रीनिधिर्भवति चामरजातः।

(७) सुते सुतेशे शुभग्रहे सति छत्रयोगः। सुसंसार-सौभाग्य-संतान-लक्ष्मी-निवासो यशस्वी सुभाषी मनीषी अमात्यो महीशस्य पूज्यो धनाढ्यः स्फुरत्तीक्ष्णबुद्धिर्भवेच्छत्रयोगे। सन्तानः = शिष्यः।

(८) चन्द्राद्दशमस्थे शुभग्रहे अमल योगः। आचन्द्रतारकी कीर्तिरर्थात् भूमण्डलावच्छिन्नकीर्तिर्यशविस्तारश्च।

(९) बुधादित्ययोगः।

(१०) चतुर्थेशः चतुर्थस्थाने स्वक्षेत्रगते सति श्रीविद्यायोगः।" तन्त्रकीय श्री विद्या, (त्रिपुरसुन्दरी, सर्वेश्वरी वा) तस्यां राजाधिराजः उत राजाधिराजैः प्रियः अर्थात् राजपुरुषमान्यः।

(१) चन्द्रस्थित राशिके स्वामी मंगलको शनि द्विपाद-दृष्ट्या देख रहा है। यह योग प्रवज्याकारक है। प्रवज्या अर्थात् विरक्त। केवल विरक्त ही नहीं बल्कि पूर्ण दीक्षित प्रवज्याका योग है।

(२) इसी प्रकार भौम राशिगत चन्द्रको शनि वही पूर्वोक्त दृष्टिसे देख रहा है। अतः यह योग भी विरक्त अर्थात् योग-साधक बनाने वाला है।

(३) अपने घरमें मंगल केन्द्रवर्ती है, अतः "रुचक" नामक योग बनता है। इस योगमें उत्पन्न जातक "उच्चांग, अति साहसयुक्त, ऐश्वर्य-सम्पन्न, शत्रु-विजयी, स्वाभिमानी तथा गुणवान होते हैं और समूहाग्रणी भी होते हैं।

(४) चन्द्रसे द्वितीय गुरुकी स्थिति है, इसलिए "सुनफा" नामक योग बनता है। इस योगका फल है कि इसमें उत्पन्न जातक अपने प्रतापसे वित्ताधिकारी, राजा वा राजाके समान अतिशय बुद्धि-सम्पन्न होते हैं।

(५) रविसे द्वादश गत शुभ ग्रह शुक्रकी स्थिति है। यह स्थिति शुभवाशि योगकी है। इस योगका फल सुन्दर शरीरयुक्त यशस्वी एवं वाग्मी होनेसे है।

(६) लग्नेश सूर्य लग्नमें अपने घरका है और शुभ ग्रहसे युक्त भी है इससे "चामर" योग बनता है। इस योगका यह फल है कि प्रतिदिन जातक वृद्धिको प्राप्त करता जाता है शुक्ल पक्षके चन्द्रमाकी तरह। साथ-ही-

साथ कीर्तिमान और जनपति जातक होता है, 'श्री' तथा 'निधि' युक्त दीर्घजीवी होता है।

(७) पञ्चममें पञ्चमेश है वह भी शुभ ग्रह है (गुरु है) इसलिए छत्र योग भी है। छत्रयोगोत्पन्न जातक सौभाग्ययुक्त, सांसारिक जीवन व्यतीत करनेके योगमें सन्तानयुक्त, विरक्त जीवन व्यतीत करनेके योगमें शिष्यवृन्दयुक्त सुमधुरभाषी, मनीषी, राजपूज्य, उच्च कोटिके नूतन विचारोंको प्रकट करनेवाला होता है।

(८) चन्द्रसे दशम स्थानमें शुभ ग्रह होनेसे "अमल" नामक योग भी बन रहा है। अमल योगोत्पन्न जातककी कीर्ति आचन्द्रतारकी होती है अर्थात् भूमण्डलावच्छिन्न होती है। कीर्तिमें शुभग्रह-वशात् सत्कीर्तिका ही समावेश है।

(९) लग्नमें बुध तथा सूर्य दोनों स्थित होकर बुधादित्य योग बना रहे हैं। बुधादित्ययोगोत्पन्नजातकके जीवनमें आर्थिक स्थिति-वशात् उसका कोई कार्य कभी नहीं रुकता और अर्थ उसका दास होता है।

(१०) चतुर्थेश चतुर्थ स्थानमें अपने घरका होनेसे श्रीविद्या-योग बनता है। इसके दो अर्थ होते हैं। प्रथम तो गृहस्थाश्रमके लोगोंके लिए, द्वितीय विरक्ताश्रमके लिए। गृहस्थाश्रमी श्री अर्थात् लक्ष्मी तथा विद्या दोनोंसे युक्त होता है। किन्तु विरक्त योगी तन्त्रकीय श्रीविद्या अर्थात् त्रिपुर-सुन्दरी या सर्वेश्वरीके उपासकोंमें राजाधिराजके समान हो जाता है और राजपुरुषोंके द्वारा सम्मान प्राप्त करता है।

उपर्युक्त योगोंके अनुसार श्री श्री अवधूत भगवान राममें महाप्रभुके समस्त लक्षण एकत्रीभूतदृष्टिगोचर होते हैं। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि इनकी छत्र-छायामें जनमानस परमशान्तिका अनुभव करेगा। (चन्द्रभानु पाण्डेय)

यों तो परिवारके अन्य सभी सदस्योंकी ओरसे मोहवश भगवानके साधन-कालमें कुछ बाधाएँ आती रहीं पर श्रद्धामूर्ति माँकी ओरसे कभी भी कोई रुकावट न आई। कुछ ऐसे भी अवसर आए हैं जब भगवानरामजीने मोहपाश तोड़नेके लिए कुछ कटु शब्दोंका भी प्रयोग कर दिया है पर आज तक भी माँके चरण-कमलोंमें उनकी श्रद्धा वैसी ही बनी हुई है।

पिताका देहान्त हो जानेपर इनके पालन-पोषणका कार्य इनके यशस्वी पितामह श्रीहृदयप्रसाद सिंहने किया। अपनी मातासे भी अधिक प्रिय इनकी पितामही (दादी) ने ही इन्हें बचपनमें पाला। वृद्धा दादीने सुन्दर कथाओंके द्वारा बालक भगवान रामके मनमें संसारकी नश्वरताके भाव भरे।

माँ-बापके इकलौते पुत्र होनेके कारण बचपनसे ही बहुत प्यार मिलनेपर भगवानका स्वभाव कुछ हठीला हो गया था। वृद्ध दादा-दादी भी इनके मनको दुःख पहुँचनेके डरसे बाल्यकालमें इन्हींके अनुकूल बने रहे। कुछ बड़े होनेपर उन्हें

पाठशालामें भेजनेकी तैयारी हुई और लोगोंकी अभिलाषा यही थी कि उच्च शिक्षा प्राप्त कर ये कुलको गौरवान्वित करेंगे। पाठशालामें अपने सहपाठियोंसे इनका व्यवहार अत्यन्त स्नेहपूर्ण रहता था। वे गुरुजनोंका भी यथोचित सम्मान करते थे परन्तु वहाँकी पढ़ाईकी तरफ कोई झुकाव न हुआ बल्कि उसे अपने आवश्यक कार्योंमें बाधा समझकर वे पाठशाला जानेके बदले अपने घर, देवालय तथा अपने ही बगीचेमें पूजन-अर्चनमें समय लगाने लगे और वहीं समवयस्क बालकोंको प्रातः-सायं एकत्रित कर कीर्तन आदि तथा प्रसाद-वितरण-द्वारा उनको सन्तुष्ट करने लगे।

इस क्रमको देख... बड़ोंने आपत्ति की और कहा भी कि बिना पढ़े-लिखे केवल पुजारीपनसे क्या होगा, लेकिन वे उस भावको नहीं समझ पा रहे थे।

उन लोगोंकी आपत्तियोंने भी बालक भगवान रामको अपने राह चलनेमें कोई बाधा न दी और यहीसे भावी जीवनकी त्यागमय स्वतन्त्र साधनाका सूत्रपात भी हुआ।

विद्यालयमें साथ न मिलनेपर भी गाँवके बालकोंका स्नेह भगवान रामसे न टूटा था। ये भी अपने बालसखाओंका यथोचित सत्कार करते रहे। भक्त ध्रुव एवं प्रह्लादकी सुन्दर कहानियोंकी पुस्तकें इनके पास रहती थीं और सायं-प्रातः बाल-मण्डलीके एकत्रित होनेपर उनमेंसे ही किसीको वे पुस्तकें दी जाती थीं और कुछ समयतक कथा-प्रसंगमें बालकोंको भी आनन्द मिल जाता था लेकिन उस भक्तिरस-सरितामें ये तो निमज्जन करते ही थे। तदुपरान्त ये अपनी निजी गायके दूधमें पकाई हुई खीर या किसी अन्य प्रसादका बाल-मित्रोंमें वितरण करते थे।

कभी-कभी सामूहिक खेल भी होते थे जिनमें वे ही अगुआ बनते थे। एक बार किसी साथीने झूलेमें जब इन्हें दबाना चाहा तो इन्होंने भी डाँट बताते हुए कहा कि "क्या तुम किनाराम हो जो हम तुमसे डरेंगे।"

भय तो जैसे इन्हें बचपनसे ही न था। कभी-कभी साथी लोग दरवाजेके पीछे छिपकर फट्की आवाज देते थे ताकि भूतकी भावना हो। लेकिन इनपर इस भैरव बीजका प्रभाव कुछ और ही होता था। साथियोंमें लड़ाईका अभिनय होनेपर बचपनमें इनकी सिंह वृत्तिका भी परिचय मिला है। एक बार खेलके सिलसिलेमें एक साथीको अधिक चोट आ गयी। उसके शरीरसे रक्त बहने लगा। इस दृश्यसे सभी बालकगण भय-ग्रस्त होकर भाग चले, किन्तु इनपर इसका विशेष प्रभाव न पड़ा क्योंकि अभिनय वीर रसका था। साथ ही गाँवके एक बड़े जमींदारके बेटेका कोई कुछ बिगाड़ भी नहीं सकता था।

ये केवल सात वर्षकी अवस्थातक ही घरमें रहे। इसके बाद वे गाँवमें रहते हुए भी घरसे बाहर ही रहे। आरम्भमें दो-चार वर्षतक बाहर रहते हुए भी महाराज घरसे लाया हुआ भोजन ही ग्रहण करते थे, परन्तु वह भी बादमें बन्द कर दिया।

प्रारम्भमें ये अपने घरके निकट शिव-मन्दिरके पास जमीनके भीतर कोठरी बनाकर रहते थे। उसमें कभी-कभी दो दिनोंतक बिना अन्न-जल ग्रहण किये ही इनकी पूजा चलती रहती थी। इसके बाद ये अपने ही मकानके एक बाहरी कमरेमें श्रीरामचन्द्रकी मूर्ति रखकर उसीकी पूजा-अर्चामें तल्लीन रहने लगे। दैनिक पूजाका कार्यक्रम भी इनकी अवस्थाके बालकके लिए अति कठोर था। परन्तु दोनों नवरात्रमें विशेष व्रतोपवास एवं पूजन होता था। इस व्रतमें नौ दिनोंतक आप केवल जल पीकर हीं रहते थे और दिन-रात पूजन, सत्संग एवं कीर्तनका कार्यक्रम चलता रहता था।

बाल अवस्थामें ही इस प्रकारकी कठिन तपस्यासे जब महाराजको शान्ति न मिली तब वे गाँवके बाहर अपने खेतके निकट कुटी बनाकर रहने लगे। इन्हें तो बालकोंके साहचर्यमें ही अधिक आनन्द मिलता था इसलिए वहाँ बालकोंकी अधिक भीड़ रहती थी। वहाँ एक अजीब आनन्द मिलता था और सबको भूख-प्यासकी भी सुधि भूल जाती थी। सभी लोग वहाँ बैठकर सत्संगका लाभ उठाते थे और बाल-सखा भी उसी प्रकारकी कथा कहते। तदनन्तर हरिकीर्तन प्रारम्भ होता था और कीर्तनकी आनन्द-लहरीमें कुछ कालतक ये आनन्द-विभोर हो जाते थे।

वह बगीचा जहाँ महाराजकी कुटी थी, बड़ी सुरम्य भूमिपर स्थित है। चारों ओर आमके हरे वृक्षोंकी शोभा देखते ही बनती है। वहाँ पक्षियोंका सुन्दर कलरव सायं-प्रातः बड़ा ही सुहावना प्रतीत होता है। लेकिन उस निर्जन स्थानमें सर्पादिक विषधर जन्तु भी रहते थे। एक बार एक सर्प आपकी कुटीमें जा घुसा। प्रातः जब आप जगे तो देखा कि कुटीमें कुण्डली लगाये एक बड़ा सर्प बैठा है। इतने ही में वहाँ भीड़ एकत्रित हो गयी और लोगोंने सर्पको मार डालना चाहा। इन्होंने उनको ऐसा करनेसे मना कर दिया। थोड़ी ही देरमें वह सर्प कहीं अन्यत्र चला गया। इस प्रकार बाल्यकालसे महाराजमें जीवोंपर दयाका भाव दिखलायी पड़ता है। इस अहिंसा-व्रतका फल यह हुआ कि महाराजकी उपस्थितिमें जीव अपना सहज वैर भाव भी भुला बैठे।

कुछ समय बाद गाँवके मिडिल स्कूलके निकट ही अपने आमके बगीचेमें महाराज एक कुटी बनाकर रहने लगे। अब क्या कहना था ? वहाँ तो स्कूलके छात्र अवकाशके समय उमड़ पड़ते थे। वहाँ भी सत्संग, हरि-कीर्तन एवं रामायण गानेका आयोजन होने लगा। वहाँ कई यज्ञोंका अनुष्ठान भी आपने किया। इस प्रकार पूरे ग्राममें विशेषकर बालकोंमें भगवद्भक्तिका उत्तम प्रचार होने लगा और धीरे-धीरे महाराजके प्रति गाँववालोंमें श्रद्धा व विश्वासका भाव बढ़ने लगा। इस परिस्थितिसे घरवाले असन्तुष्ट रहे क्योंकि उनका स्वार्थ यही बतलाया था कि जिस उपायसे सम्भव हो वे उन्हें अपने जैसा गृहस्थ बनावें। ये ही स्कूली छात्र बाबाको भगवान दास नामसे पुकारने लगे, तभीसे यह नाम प्रसिद्ध हुआ है।

परिवारके लोग इन्हें घर लिवा ले गये लेकिन घरमें रहनेके अपेक्षा महाराज-ने वहीं शिव-मन्दिरमें पुनः स्थान बनाकर रहना प्रारम्भ किया। अब तो बालकोंका

एक बहुत बड़ा दल सदा साथ रहने लगा। इन्होंने वहाँ एक व्यायाम-शाला भी स्थापित की जिसमें गाँवके अन्य बालकोंके साथ कुश्ती, व्यायाम, खेलके कार्यक्रमोंमें ये भी भाग लेते रहे। वहाँ श्री हनुमानजीकी पूजा नियमित रूपसे होती रही तथा महाराजकी ओरसे प्रसाद-वितरणकी भी व्यवस्था की गयी।

बाबा रामेश्वरजीके सुयोग्य वंशज स्व० श्रीकान्त महाराज परम वैष्णव, उच्च साधक एवं एक प्रसिद्ध विद्वान् थे। महाराजने इनका सत्संग प्राप्त करनेके लिये यज्ञावतारजीके मन्दिर पर रहना प्रारम्भ किया। घंटों आप पूजनमें संलग्न रहने लगे। जब आप भगवानकी आरती उतारते थे तो बिल्कुल तन्मय होकर देहभान भी भुला देते थे। वहाँ भी बालकोंने आपका साथ न छोड़ा उनका जमघट वहाँ भी लगा रहता था। मन्दिरके बाहर आपकी एक छोटी कुटिया थी जिसके पास एक धूनी जलती रहती थी। वहीं बालसमाज एकत्रित होकर अपने पूर्व-कार्यक्रमको चलाता रहा। इस बार भी घरके लोग बार-बार आग्रह करके आपको लौटा ले जाना चाहते थे परन्तु इन्होंने उनकी बात न मानी। आपको इस बार कुछ बल-पूर्वक वे घर ले गये पर वही हुआ जो ऐसी परिस्थितिमें हुआ करता है और कुछ ही दिनोंमें ये फिर घरसे निकल पड़े।

इस बार घरसे निकलने पर आप गाँवके दक्षिण ओर स्थित नेमुवा बागमें रहने लगे। वह स्थान बहुत दिनोंसे भूतोंका अड्डा समझा जाता था और लोग दिनमें भी उधर जानेका साहस नहीं करते थे। उस स्थानपर चारों ओरसे बाग होनेके कारण दिनमें भी वहाँ अन्धकार रहता है और एक निस्तब्धता छायी रहती है। वहाँ एक पक्का कुँआ भी है। चारों ओर मीलों दूर जानेपर ही बस्ती मिलेगी, पर जिसे सब ओर अपने उपास्यकी ही मूर्ति दिखलायी देती हो उसके लिए भय कहाँ ? इस निर्जन स्थानको महाराजने साधनाकी उत्तम भूमि मानकर अपनाया। लेकिन घर वालोंको मोहवश उनके वहाँ रहनेसे अनिष्टकी आशंका हुई और तीन ही दिन बाद महाराजको वह स्थान भी छोड़ना पड़ा।

लोगोंके आग्रहपर इन्होंने निजी अमरूदके बगीचेमें एक पीपलके पेड़के तले कुटी बनवाई। यहाँ आप पर्याप्त समय तक टिके रहे। आपका यह अमरूदका बगीचा बारह बीघेमें है। बड़े आनन्दके साथ ये वहाँ दिन बिताने लगे। बालक-वृन्द दिनके समय वहाँ बड़ी संख्यामें एकत्र होते थे और अमरूद भी खाते थे। अब इनकी साधना आगे बढ़नेको हुई और इसीलिये घरवालोंका फिर आग्रह प्रारम्भ हुआ और इन्होंने समझ लिया कि ये लोग गाँवमें रहनेपर इसी प्रकार साधन-भजनमें विक्षेप उत्पन्न करते रहेंगे। इसलिये उसी समय आपने गाँव छोड़नेका निश्चय कर लिया।

ग्रामवासियोंमें विशेषकर स्त्रियोंमें आपके प्रति अत्यन्त श्रद्धाभाव था। इसलिये वे महाराजके निकट अपने मनोरथ ले-लेकर आती रहती थीं और उनको सफलता मिल जाती थी। वे इनका पूजन, भोग एवं प्रसाद वितरण भी करती थीं।

इनके परिवारकी धायको ऐसे ही एक मुकदमेमें सफलता मिली थी जिसके लड़केने कलकत्तेसे एक सुन्दर शिव-लिंग महाराजको भेंट किया था। अपने बगीचेमें छोटा शिव-मन्दिर बनाकर वह शिव-लिंग महाराजने स्थापित किया है जो आज भी उसी रूपमें स्थित है। इन चमत्कारोंसे प्रभावित एक अहीरिन एक दिन महाराजके सामने आकर रोने लगी और उसने बताया कि मेरी भैंस प्रसव-कालमें बच्चा फँस जानेसे मर रही है। दया-वश महाराजने उसके यहाँ जाकर कुछ भगवानका नाम लेकर प्रसाद बाँटा और भैंसके सिरको छू दिया तत्काल वह सकुशल प्रसव वेदना-मुक्त हुई। ऐसी अनेक कथाएँ विस्तार भयसे नहीं दी जा रही हैं। परन्तु गाँवके पुरुष-वर्गके अधिकतर लोग अपने बड़प्पनकी झूठी भावनाको लेकर इस रत्नको पहिचान न सके।

तीर्थाटन एवं काशी-आगमन

श्रीभगवान रामजीका कथन है कि "माँ-बापको छोड़कर निकल पड़नेपर अनेक माता-पिता मिल जाते हैं।" इस "वसुधैव कुटुम्बकम्"के भावकी पुष्टिके बिना राग-द्वेषके बन्धन शिथिल नहीं पड़ते और जबतक इनसे ऊँचा न उठ सके तबतक साधनाकी अपूर्णता बनी रहती है। इससे यह न समझ लेना चाहिए कि घर त्याग कर निकल पड़ने मात्रसे कोई सन्त या महात्मा बन सकता है। "समाधि-सिद्धिरीश्वरप्रणिधानात्"के अनुसार 'ईश्वरके बलपर ही सफलता मिलती है।' इसका कारण यह है कि घर छोड़कर निकलनेपर निश्चित साधनोंका अभाव तत्काल हो जाता है और कुछ कालतक अन्य साधनोंसे सहारा नहीं भी मिलता है। इसी संक्रमण-कालमें निराश होकर लोग पुनः अपनी हार मानकर पारिवारिक जीवनमें सम्मिलित हो जाते हैं। उनका बाहर निकलकर साधन करनेका उत्साह सदाके लिये ठंढा पड़ जाता है। परन्तु सत्य-संकल्प साधकको भगवानपर पूरा भरोसा होता है इसलिये वह कठिनाइयोंपर विजय पा लेता है। स्वयं श्रीभगवान रामजीका कथन है कि जिसे सफलता मिलनी होती है उसे दृढ़ आत्मबल एवं सहायता प्रारम्भसे ही मिलने लगती है।

घरवालोंके हस्तक्षेपसे महाराज ऊब-से गये थे और अब अनन्तकी खोजमें वे निकल पड़े। बाल्यकालमें अपने ग्राम गुण्डीसे आरा तक ही आनेका अवसर इन्हें मिला था इसलिये घरसे निकलनेपर ये स्वयं नहीं जानते थे कि अब कहाँ पहुँचना है? यह पुकार सम्भवतः श्रीगदाधरकी थी और वे अनायास गयाकी ओर बढ़ने लगे। इस समय जाड़ेकी ऋतु थी और महाराज बिना किसी सामानके ही चल पड़े थे। दिन तो धूपके कारण सरलतासे निकल जाता था परन्तु ठण्ढी रातमें अरहरके खेतमें छिपकर कालयापन करना पड़ता था। भोजन-आवास दोनों हीकी कठिनाइयाँ पड़ती रहीं पर आप गयाकी ओर बढ़ते ही रहे। ये दिन भर चलते ही रहे। रात हो गयी तब आप एक ग्राममें भोजन एवं रात्रि-विश्रामके लिये जा पहुँचे। लेकिन रातके समय भला ग्राममें कौन मिल सकता था जो इस भूखे-प्यासे

थके पथिकको आतिथ्य द्वारा सुख पहुँचाता। घूमते-घूमते आप गाँवके मन्दिरके निकट गये परन्तु वहाँ भी सभी निद्रा देवीकी सुखद गोदमें पड़े थे। साहस करके महाराजने उनमेंसे एक महात्माको जगाया और उनसे कुछ भोजन माँगा। इसपर महात्माने बताया कि मन्दिरका पट बन्द हो चुका है इसलिये भोजनकी व्यवस्था न हो सकेगी। आपने पुनः शीत-निवारणार्थ उनसे कुछ ओढ़नेके लिये माँगा। कृपा-पूर्वक एक टाटका टुकड़ा मिल गया और आपने किसी प्रकार वह रात बिता दी। प्रातःकाल होते ही आप वहाँसे चलते बने। सोनेकी सुविधा तों रातको मिल गयी परन्तु क्षुधा अब और सताने लगी थी। निदान विवश होकर एक खेतमेंसे कुछ परवल तोड़कर कच्चा ही खाकर जल पी लिया और फिर आगे चल पड़े।

कुछ समयतक इसी प्रकार घूमते हुए महाराज गया पहुँच गये और वहाँ कुछ काल निवास करके वहाँके सभी तीर्थ-स्थानोंका दर्शनकर आनन्दित हुए।

कुछ दिनों बाद आप गाँव लौट आये परन्तु वहाँ अधिक दिनोंतक नहीं रहे और सत्संग लाभके निमित्त इधर-उधर घूमने जाते रहे। एक बार आप जगन्नाथपुरी गये। उन दिनों ये जटिल ब्रह्मचारी वेशमें रहते थे। साधारण वस्त्र पहिनते थे और सूर्यास्तके पूर्व ही भोजनकर लेते थे। उन दिनों वे जैन मुनियोंके सदृश आचरण करते थे। यद्यपि उनके पास उस समय धनाभाव था तथापि भगवान नीलाचल निवासीके दर्शनकी उत्कट अभिलाषाके कारण आप पुरी जा पहुँचे।

वहाँ जाकर उन्होंने क्षौर कराया एवं स्नान करके सप्रेम श्रीजगन्नाथ मन्दिरमें दर्शनार्थ गये। उस समय महाराजके हाथमें दो पैसे मात्र थे जिन्हें वे बचाकर दोपहरके भोजनकी व्यवस्था करना चाहते थे। मन्दिरमें प्रवेश करते ही महाराजको भावावेश हो आया और सप्रेम भगवानके मंगल-विग्रह दर्शनकर कृतकृत्य हो गये। जब महाराज प्रदक्षिणा कर रहे थे तो एक पण्डेने आपके सिरपर प्रहार किया और कहा कि भेंट चुराते क्यों हो और महाराजने अपने हाथोंका सर्वस्व उसे सौंप दिया। दर्शन-लाभके बाद महाराज लौट आए। कुछ कालतक वहाँ रहकर महाराजने भक्ति सरितामें निमज्जन किया और वहाँसे लौटकर अपने वैष्णव गुरुके साथ रामानुज-सम्प्रदायके एक अधिवेशनमें अपने ही प्रदेशमें सम्मिलित हुए।

यह अधिवेशन एक तपस्वी वैष्णव-सन्तने बुलाया था जिसमें देशके विभिन्न भागोंके सन्त एकत्रित हुए थे। दक्षिण भारतसे भी बड़े-बड़े विद्वान्-आचार्य पधारे थे। इस उत्सवमें ये बड़े उत्साहसे सम्मिलित हुए थे। वहाँके कीर्तन, भजन, सामूहिक, प्रवचन आदि सभी कार्यक्रमोंमें महाराजको बड़ा आनन्द आता था।

उस अवसरके एक पद—"रामानुज पद बिनु तरिहौ न भाई।"

इन्होंने इसका अर्थ यह लगाया कि मुक्ति प्राप्ति का एकमात्र उपाय श्रीरामा-नुज-सम्प्रदायमें भक्तिभावसे सम्मिलित होना है। रामानुज अर्थात् लक्ष्मणने सदैव रामके साथ रहकर जो पद प्राप्त किया था। इन्होंने बताया कि तरन-तारन वही

हो सकता है जो उसी पदको प्राप्त कर ले जिसको श्रीरामानुजाचार्यने प्राप्त किया था। इस अधिवेशनसे लौटकर महाराज एक दालानमें एक चौकीपर लेटे हुये थे। उस समय एक अद्भुत चमत्कारिक प्रकाश दिखाई पड़ा, जिसे देखकर दिनके समय भी महाराजके नेत्र बन्द हो गये थे। उसी समय उन्हें बड़ी तेज धड़कन होने लगी। उनके अनुसार यह जगदीशकी अनुकम्पा हुई थी। इस घटनाके बाद भी वर्षों तक यह धड़कन बहुधा उभड़ आती थी परन्तु अब वह शान्त हो गयी है।

यद्यपि पुरीकी यात्रासे लौटकर कुछ दिनोंतक ये अपने गाँवमें ही रहे, परन्तु वहाँसे कहीं अन्यत्र जाकर साधन करनेकी प्रबल इच्छा उनके भीतर सदैव बनी रहती थी। गाँवके एक वयोवृद्ध सज्जनसे महाराजको साधन-कालमें सदैव प्रोत्साहन मिलता रहा है, जिन्हें ये परमहंस कहते हैं। इनसे ही भावी कार्यक्रमके विषयमें परामर्श लेकर ये काशीके लिये चल पड़े। आपकी काशी यात्रामें न तो कोई साथी था न अधिक सामान ही पास था। गाँवसे चलकर आरामें आप ट्रेनपर सवार हुए और रात्रिके समय गाड़ीसे आप रातके एक बजे बनारस छावनी पहुँचकर उतर पड़े।

यह घटना सावन बदी ८ सन् १९५१ की है, जब आपकी अवस्था पन्द्रह वर्षकी थी। स्टेशनसे बाहर निकलकर आपने श्री विश्वनाथ मन्दिरका पता पूछा। स्टेशनसे बढ़कर आप चेतगञ्ज तक आये। वर्षाकी अँधेरी रातमें कुत्ते भी राह चलनेमें रुकावट डाल रहे थे। निदान वहीं पड़े एक सगड़पर आपने शेष रात्रि बिता दी। ब्राह्म-मुहूर्तमें जब लोग गंगा-स्नानके लिए जाने लगे थे। आप भी बिना जाने ही चल पड़े। सीधी सड़कपर चलनेसे आप दशाश्वमेध घाटकी ओर बढ़े परन्तु डेढ़सीके पुलके पास पहुँचकर आप रुक गये।

जब आप विस्मितसे राहमें खड़े थे तो एक लाल किनारेकी सिल्ककी साड़ी पहने तेजस्वी बुढ़ियाने आपके निकट पहुँचकर बड़े स्नेहसे पूछा—"कि तुम कहाँ जाना चाहते हो? इन्होंने बतलाया कि मैं श्रीविश्वनाथका दर्शन पाना चाहता हूँ। तब उसने फिर पूछा कि स्नानकर चुके हो या नहीं। आपका नकारात्मक उत्तर पाकर उसने पासमें बहती गंगामें स्नान कर आनेका आदेश दिया। थोड़ी ही दूर चलकर आपने घोड़ा घाटपर जाकर स्नान किया। स्नान करते समय आप एक लँगोट और एक धोती पहने हुए थे। यहाँ आपके मनमें कुछ ऐसा भाव आया कि वहीं जलमें धोती बहा दी और केवल लँगोट पहने आप स्नान करके लौटे।

वह वृद्धा अभी हाथोंमें पूजन-सामग्री लिए पूर्व स्थानपर ही खड़ी मिली। आगे-आगे वृद्धा और उसके पीछे सादर आप विश्वनाथजीका दर्शन करने बढ़े। विश्वनाथ मन्दिरमें पहुँचकर आपको अपार हर्ष एवं आश्चर्य हुआ और आपने यही सोचा कि यह स्थान तो बड़ा ही उत्तम है और यदि सदा काशीमें निवास मिल सके तो यहाँका दर्शन भी प्रतिदिन करूँगा। वृद्धाने बड़े प्रेम-पूर्वक आपसे श्री विश्वनाथका पूजन कराया। उस समय केवल भगवानके ऐश्वर्यकी सराहना और उसके सदा

बने रहनेकी भावनाको छोड़कर अपने किसी भी स्वार्थके लिए इन्होंने याचना नहीं की।

श्री विश्वनाथका दर्शन एवं पूजन करके आप उसी वृद्धाके साथ श्री अन्नपूर्णा मन्दिरकी ओर बढ़े। आपके देखते-देखते वह वृद्धा उसी मन्दिरमें समा गई। आप कुछ कालतक मन्दिर द्वारपर यह समझकर खड़े रहे कि यह किसी श्रीमान्‌की कोठी है और इसी संकोचसे अपने दीन वेशमें आप उस भवनमें न घुसे। निदान विवश होकर आप आगे बढ़े और डेढ़सो पुलपर वही वृद्धा आपको फिर खड़ी मिली। आपको कुछ आश्चर्य अवश्य हुआ क्योंकि आप अबतक उस वृद्धाको किसी संभ्रान्त परिवारकी महिला समझ रहे थे और श्री अन्नपूर्णा मन्दिरको उसीकी कोठी समझ रहे थे। आपको चकित देखकर उसने स्नेह पूर्वक पूछा—"कि काशी आनेका तुम्हारा प्रयोजन क्या है ?" जब आपने अपना अभिप्राय बतला दिया तो उसने इतना ही बतलाया आप यहाँसे अस्सीकी ओर जाओ, रास्तेमें परमहंस साधकोंका एक मठ है वहीं आपका अभीष्ट सिद्ध होगा। आगे बातचीत करनेसे पूर्व ही महाराजको वह महिला न दीख सकी। आपने सोचा कि वह दयालु महिला कौन थी ? कुछ निश्चय कर सकनेके पूर्व ही वह भाव उदय हुआ कि उसके बतलाये मार्गपर चलने ही से मेरा हित होगा।

ऐसा निश्चयकर आप हरिश्चन्द्र घाटकी ओर सड़कसे बढ़े। कुछ आगे जानेपर क्रीं कुण्डपर श्री किनारामका स्थल है जहाँ आप लगभग साढ़े सात बजे प्रातः पहुँच गये। उस समय वर्तमान महन्थ श्री राजेश्वर रामजी सो रहे थे। आप भी एक दालानमें बैठ गये।



रुद्राक्ष ११

अघोर-साधना 'दीक्षा'

अघोर-मत की दीक्षा एवं साधना

जब बाबा भगवान रामजी किनाराम मठ में पहुँचे थे उस समय महन्थजी सो रहे थे। उस दिन शनिवार था। दूसरे ही दिन किसी भक्तने रविवारको विशेष उपहार रूपमें भोजन भेजा था। आशु बाबाने आपको चावल मछली आदि मिश्रित करके खानेके लिए दिया था। इससे पूर्व वैष्णवाचारमें रहनेके कारण आपको भोजन करनेमें हिचकिचाहट हुई। थोड़ा चावल ऊपरसे खाकर शेष भोजन क्रींकुन्ड डालकर आप अपनी थाली माँजकर बैठे। इसी समय आपके मनमें यह भाव आया कि यदि हमको अघोरी होना है तो इस भावका परित्याग करना होगा।

क्रमशः भोजनके प्रति कठिनाई न रह गयी। तदनन्तर महन्थजीने आशु बाबाके साथ आपको हरिश्चन्द्र घाट पर श्मशान लकड़ी लानेको भेजा। इस कार्यमें आपसे अधिक कठोरताका बर्ताव किया जाता था और कम आयु और शारीरिक कठोर श्रमका अभ्यास न होनेके कारण एक बार आपने आश्रमसे इसीलिए लौटकर अपने शुभ चिन्तक परमहंसजीसे सलाह ली थी। उन्होंने दृढ़तापूर्वक आगे बढ़नेकी सलाह दी थी और थोड़े ही दिनोंमें यह कठिनाई भी दूर हो गयी।

दीक्षाके अवसरपर तीन-चार साधक आये थे। महन्थजीने चक्र-पूजन प्रारम्भ कराया। जिस पात्रसे मदिरा महन्थजीने पीली थी उसीमेंका शेषांश नव दीक्षित होने वाले शिष्यको मिला। महाराजने बतलाया कि वैष्णव-साधना कालमें जब आप यज्ञावतारजीके मन्दिरपर रहते थे, घरसे लाया हुआ भात तुलसी दल डालकर खा लिया करते थे। यद्यपि यह व्यवहार भी उस आश्रम एवं गाँवकी परिपाटीके अनुरूप न था। महाराजके एक बाल सखा गाँवमें ही मद्य सेवन करते थे। कभी-कभी वे आपसे पानका आग्रह करते थे और आपके मना करनेपर घरसे उठाकर लाया भोजन करनेका प्रसंग चलाकर आपके आचरणको अघोरियोंके सदृश बतलाया करते थे। गुरु-प्रसादके रूपमें आपने मदिराका ग्रहण किनाराम-स्थलमें ही प्रथम बार किया था। इस प्रकार संस्कार हो जानेपर कुछ गोप्य पूजन भी हुआ।

इसके अनन्तर महन्थजीने आपकी शिखाके दो-चार बाल उखाड़ फेंके और उसी समय एक नापितने गुरुके आदेशसे सरके बाल मूँड दिये। गुरुने आपको मन्त्रकी दीक्षा दी और उपस्थित अन्य साधकगण अपने स्थानको लौट गये। बाल्य-काल से ही ब्राह्म मुहूर्तमें उठकर स्नानादिसे निवृत्त होकर भजन करनेका आपका अभ्यास था। इसलिए बड़े ही मनोयोगसे मन्त्र-जप, गुरु-सुश्रूषा एवं आश्रमके

सभी कार्य आप करने लगे। इन्हीं दिनों सूर्योदयके लगभग श्रीहनुमान घाटपर आकंठ गंगामें खड़े रहकर आप मन्त्र-जप भी करते रहे। कुछ कालके उपरान्त ही परम गुरुकी कृपा भी आपको प्राप्त हो गयी।

एक दिन वे धूनीके पास ही आश्रममें अर्द्ध निद्रित अवस्थामें पड़े थे। उन्हें ऐसा भास हुआ कि कोई दिव्य पुरुष खड़ाऊँ पहने उनके पास आ खड़ा हुआ है। उसने खड़ाऊँ समेत अपना चरण उनके छातीपर रख दिया और स्पष्ट स्वरमें कुछ मन्त्रोच्चारण किया। उन्होंने आन्तरिक प्रेरणा-वश उसे दुहराया और वह मन्त्र-उन्हें याद भी हो गया। तबसे आज तक वे उसी मन्त्रका नित्य-जप करते हैं। गुरुकी अचित्य लीलासे थोड़े ही समय बाद एक अन्य ऐसी ही घटना हुई जिससे पूर्वोक्त मन्त्रमें उनकी आस्था दृढ़ हो गयी। बाबा किनारामजीकी समाधिपर वे झाड़ू लगा रहे थे इसी बीच जब वे दक्षिणकी ओर गये तो उन्हें फिर स्सष्ट यही मन्त्र सुनाई पड़ा और साथ ही यह दिव्य आदेश भी मिला कि तुम इसीका जप किया करो। कुछ काल तक वे वहीं रहकर साधन करते रहे।

इसी बीच एक और घटना घटी। शिव महिम्न स्तोत्रमें अघोरान्नापरो मन्त्रःसे इस मन्त्रके तात्कालिक सिद्धिका भी संकेत मिलता है।

अभी वर्षाका ही समय था। महन्थजी भंडार घरकी ताली उन्हें देकर कहीं चले गये थे। वे भी अपनी दिन-चर्यामें व्यस्त थे। एकाएक महन्थजी वापस आते ही भंडार-घरकी ताली माँगने लगे। उन्हें विस्मरण हो गया था कि ताली कहाँ रख दी गयी है। उन्होंनेआग्रह-पूर्वक महन्थजीसे कहा कि मैंने ताली खो दी है, इसलिए आप कल तकका अवसर प्रदान कर तो मैं ताली ला दूँगा। इसपर महन्थजी अत्यन्त क्रुद्ध हो गये। उन्होंने तत्काल कमरा खोलकर अपना सामान देखना चाहा। वे भी कुछ चकित हो गए और पुनः महन्थजीको मनानेका प्रयास करने लगे। जब वे न माने तब उन्होंने उपस्थित लोगोंके सामने ही तालेको स्पर्श कर दिया और वह तत्काल खुल गया। अपना सामान यथा-स्थान पाकर महन्थजी आश्वस्त तो हुएपर उनको एक नई चिंताने घेर लिया कि सम्भवतः मेरे शिष्यका कोई अन्य गुरु भी है। इस भावके कारण भगवान रामजी अधिक समय तक स्थायी रूपसे आश्रममें न रह सके।

इन्हें अधिकांश साधना स्वयं ही करनी पड़ी है। मन्त्र-यन्त्र, साधन एवं उद्यमके लिए यथा आवश्यक साधन स्वयं ही जुटने लगे। अपने आप ही उन्हें निश्चय भी हुआ कि मैं ठीक दिशामें बढ़ रहा हूँ। इसी समय योगिराज कच्चा बाबाके शिष्य परम्पराके अवधूत बाबा छेदी रामसे महाराजका सम्पर्क हो गया।

काशीमें ईश्वरगंगीके निकट नईबस्ती मुहल्ले में कुलीन क्षत्रिय परिवार है जिसमें बाबू विश्वेश्वर सिंह बड़े यशस्वी एवं सन्त सेवी हुए हैं। इन्हींके वंशज छेदी बाबा अवधूतके वेशमें रहा करते थे। ये कभी-कभी क्रींकुण्ड स्थित किनाराम स्थलपर भी जाया करते थे। श्री भगवान रामजीको आश्रमसे दूर रहकर वहीं साधन करने की इच्छा हुई और वे सीधे ईश्वरगंगीके निकट व्यायामशालामें रहने चले

गये और वहीं कुछ काल तक रहकर छेदी बाबाकी देखरेखमें साधन करते रहे।

ब्राह्ममुहूर्तमें जगनेका अभ्यास तो आपको बाल्यकालसे ही था इसलिये प्रातः-काल स्नान आदिसे निवृत होकर आपका अधिक समय ध्यान-जप आदिमें बीतता था। इस परिस्थितिमें भिक्षा-सम्बन्धी कठिनाइयाँ बहुधा उपस्थित हो जाया करती थीं क्योंकि आप दोपहरके समय गृहस्थ के दरवाजे 'माँ रोटी दो' की याचना करते थे लेकिन कुछ मिलनेका दुराग्रह कभी नहीं करते थे। इसलिये छेदी बाबा द्वारा सदैव भिक्षा की व्यवस्था हो जाया करतो थी। इतना ही नहीं, साधनाकालमें श्रद्धा और धैर्य इन्हें बढ़ानेके निमित्त वे सुन्दर आख्यान सुनाया करते थे। वरुणा नदीके तटपर नक्खीघाटपर एक वैरागी महात्मा द्वारा स्थापित एक सुन्दर स्थान है वहाँ भी छेदी बाबा आपको ले जाया करते थे और आज भी वैष्णव सन्तोंसे सद्भाव बना रहता है। काशीके काजीमण्डी मुहल्लेके बाबू उमाशंकरजी एवं उनके परिवारसे भी छेदी बाबाने आपका परिचय कराया था। बाबू उमाशंकर इलाहाबाद रहते थे और वे सदा महाराजकी बड़ी श्रद्धा एवं उदारतासे सेवा करते थे। इसी प्रकार लगभग दो वर्ष व्यतीत हो गये और प्रयागमें कुम्भके अवसरपर महाराज पैदल ही चल पड़े और सम्भवतः इसी समयसे छेदी बाबाका साथ भी छूट गया था।

छेदी बाबाके परिवारका काशीके सुप्रसिद्ध सन्त कच्चारामजीसे घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। स्वर्गीय सन्त कच्चारामजीकी समाधि वाराणसी जिलेके जाल्हूपुर नामक ग्राममें है। बाबा भगवान राम भी एक समय इस समाधिके दर्शनके लिये ईश्वरगंगा मुहल्लेसे पैदल ही चल पड़े थे। मार्गमें फल खाकर दिन बिताकर आप सायकाल जाल्हूपुर पहुँचे। वहाँ समाधिके दर्शन एवं कुछ काल निवाससे आपको एक अपूर्व शान्ति मिली। किन्तु किशोरावस्थामें एक साथ ही दस मीलकी पैदल यात्राके फल-स्वरूप आप ज्वराक्रान्त हो गये।

इस समय आप इसी मुहल्लेके आस-पासके तीन प्रमुख स्थानोंपर अधि-कांश समय तक रहे हैं पूनास्टेटका बगीचा, राय पनारूदासका बगीचा और ढेलव-रिया जो चौकाघाट स्थित रेलवे लाइनके उत्तर की ओर वरुणा नदीके सुन्दर तटपर सुन्दर मठ है। यहाँ रहते हुए आप श्री धूमावती देवीजीका नित्य दर्शन किया करते थे और कालान्तरमें वासन्त नवरात्रमें वहींसे प्रेरणा मिलनेपर आपने गिरनार पर्वतकी यात्राकी थी आप कुछ काल तक पूनास्टेटके बगीचेमें (नाटी इमलीके पास) रहने लगे जिससे अधिकारियोंको यह आशंका हुई की महाराज सम्भवतः इस स्थानपर अधिकार जमाना चाहते हैं किन्तु महाराज ने उनको अधिक असुविधा देनेसे पूर्व ही स्व० श्री लक्ष्मीशंकर तिवारी जी (महन्थ काशी विश्वनाथ मन्दिर) की सहायतासे स्थानान्तरण करके राय पनारूदासके बगीचेमें रहना प्रारम्भ कर दिया था।

धीरे-धीरे महाराजके पास श्रद्धालु एवं जिज्ञासु दोनों ही प्रकारके व्यक्ति एकत्रित होने लगे।

सन् १९५४ ई०में प्रयागमें कुम्भ-स्नानके लिए बड़ी भीड़ एकत्रित हो रही

थी। महाराज भी उसी ओर चल पड़े। साथमें जाड़के दिनोंमें भी न तो ओढ़ने और बिछावनके लिये था, न तो देह पर ही ढाई गज मलमलके एक टुकड़ेके अतिरिक्त और कुछ था। रास्तेमें यदि कृपा कर कोई कुछ भोजन दे भी देता था तो उसीपर निर्वाह कर लेते थे। कई दिन कुछ भोजन न मिलनेपर केवल गङ्गा जल पी कर निर्वाह कर लिया करते थे। एक दिन एक वृद्धा कुंभ मेलेमें आपसे मिल गयी। उसने सकरुण नेत्रोंसे आपको अपनी कुटीके पास ले जाकर नया वस्त्र लपेटनेके लिये दिया तथा कुछ खाद्य-पदार्थ भी दिये। महाराजने बतलायाकि माँकी भिक्षा मिल जानेके बाद कभी भोजन आदिकी असुविधा नहीं हुई।

रात्रिके समय साधुओं की धूनी ताप कर समय कट जाता था। एक दिन एक ठेकेदार आप पर यह कह कर बिगड़ पड़ा कि महँगी लकड़ी जलानेके लिये मैं अनुमति न दूँगा। महाराज कुछ न बोले उन्हें जाड़ेसे पीड़ित देख एक पुराना लेवा ठेकेदारने ला दिया जिसे वह नित्य प्रातः ले लिया करता था।

इसी समय एक अवधूतिन बिलकुल दिगम्बरावस्थामें आकर उसी धूनी पर आसन जमा बैठी जहाँ महाराज बैठे थे। आपके अलावा तीन साधु और उसी धूनीपर आसन लगाए बैठे थे। प्रातःकाल यह अवधूतिन महाराजके बिलकुल समक्ष उसी दिगम्बरावस्थामें आकर बैठ जाया करती थी। बहुत प्रयास करने पर भी उस अवधूतिनने धूनी न छोड़ी। २०-२५ दिन वह साथ रही वह न मुँह धोती थी। न शौचमें जलका प्रयोग करती थी। वह बड़ी गौरांग और स्वस्थ था। वह मेलेम दिन भर झंडी लेकर घूमती थी और सायं धूनीपर आ बैठती थी। वह अपने केशमें माला और योनिमें अढ़उलका फूल खासती थी। वह किसी उच्च कुलमें जन्मी थी और आरा-बलिया की सी लगती थी। वह बोतल को बुढ़वा कहती थीं आप प्रायः एक बुढ़वा नित्य ले आती थी। अन्तमें परमानन्द जी संन्यासी ही उस अवधूतिनको उस धूनीसे हटानेमें सफल हुए। इनके साधन कालमें ऐसी परिस्थितियाँ अनेक बार उपस्थित हुईं पर आपके हृदयमें स्त्रियोंके प्रति मातृ-भावको छोड़कर और कोई भाव तक नहीं आया। शिशु तो मातासे सर्वदा शक्ति प्राप्त करता रहता है जब कि विपरीतभाव रखने वाले सर्वदा शक्ति खो बैठते हैं।

प्रयागमें इस प्रकार करीब १ माह व्यतीत करने पर आप काशी लौट आये। इसी समय आपके गुरुदेव राजेश्वर रामजीका ऑपरेशन होने वाला था। आपको कुछ काल तक यहाँ गुरुकी सेवामें रहना था पुनः एक रोज आप गुरु आदेश पर स्थल छोड़कर चल पड़े पुण्यसलिला जाह्नवीके तटपर भ्रमण करने।

दिव्य-भाव सम्पन्न साधक एकान्त बास करते हुये भी सचमुच एकाकीपनका अनुभव नहीं कर पाता। उसके शारीरिक अवयव ही सखा बन जाते हैं जिनसे वह मूक वार्तालाप द्वारा सुख पूर्वक समय बिताता है। इस अवस्थामें प्रत्येक बाह्य साधन काले नागसे डरावने प्रतीत होने लगते हैं। उस साधनाकाल

में वर्षो दीपादिकके प्रकाशकी व्यवस्था नहीं थी परन्तु उस रात्रिके अँधेरेमें भी एक अजीब मस्ती थी और आराध्य देवके सान्निध्यका सुख मिलते रहनेसे यह डर बना रहता था कि कही फिर दीपकके उजालेके साथ सांसरिक प्रपंचमें न फँसना पड़े।

कुछ काल बाद भक्तोंके आग्रह पर आपने ग्रामके बाहर कुटीमें रहना प्रारम्भ किया था किन्तु वहाँ भी प्रकाशादिकी व्यवस्था होने पर आप सो नहीं पाते थे। इसलिये कुछ वर्षों तक आप रात्रिके नौ बजेके बाद अपनी कुटी पर किसीको नहीं रहने देते थे। साधकको जनसम्पर्कसे इसलिये अलग रहना चाहिये किसकामी जीवोंके बीच रहकर निष्काम साधनामें विघ्न पड़ता है। इसलिए संसार प्राणयज जीवों के संकल्पका जो प्रभाव वातावरणमें व्याप्त हो जाता है वही साधकको क्षोभ उत्पन्न करा देता है।

जो चरवाहे आदि स्वेच्छया भोजन दे जाते थे उसीसे आप अपना काम चलाते थे। वस्त्र भी लगभग डेढ़ गज मलमलका एक टुकड़ा मात्र था जिसे दिनमें पहनते और रात्रिमें ओढ़नेके काममें लाते थे। किसी एक स्थान पर अधिक दिनों तक आप ठहरते न थे। इसी अवस्थामें जिला गाजीपुरके शेरपुर नामक गाँवके निकट गंगा तट पर एक गुफामें आप कुछ दिनोंके लिये ठहरे थे। एक दिन आप भिक्षाके लिये गाँवमें गये। वहाँ बालकोंने आपको पागल समझ कर बहुत कष्ट दिया। भिक्षा माँगते समय कुछ ग्राम-वासियोंने उपेक्षा भी की किन्तु ग्रामीण महिलाएँ जो अशिक्षित होने पर भी हिन्दू संस्कृति एवं मर्यादाकी रक्षा करने वाले हैं वे भला अपन शिशुको भूखा-प्यासा कैसे देख सकती थीं। इस लिये उनकी अनुकम्पासे ग्राममें जाने पर मध्याह्न में तत्काल भिक्षा मिल जाती थी। परन्तु महाराजने किसी एकान्त स्थानमें कुछ काल बितानेका निश्चय किया। तदनुसार कुछ सज्जनोंके सुझाव पर आप गंगा तटकी गुफामें रहने लगे। वहाँ पासमें हो एक अखाड़ा एवं श्री हनुमान जीका मन्दिर भी था इसलिए गुफाके भीतर बन्द कर रहने पर भी कुछ बालकगण दिनमें उपद्रव किया करते थे। वहाँके भागवतोंके प्रयाससे यह तो कष्ट शीघ्र ही दूर हो गया परन्तु रात्रिके समय एक अजीब सी ग्लानि मनमें आया करती थी और महाराज घंटों बैठकर रोया करते थे। इस समय कोई भी सान्त्वना देने वाला न रहता था। माँ से मिलनेके लिये आपके प्राण अत्यन्त व्याकुल रहने लगे माँने अनाथ बालकको अधिक दिनों तक बिलखने या रोने न दिया। उसका प्यार पाकर आपको वहाँके अन्य सम्भ्रान्त व्यक्तियोंका अधिकाधिक स्नेह प्राप्त होने लगा किन्तु यह भी बन्धनकारी न हो, ऐसा समझ कर आप वहाँसे बिहारकी ओर गंगाके किनारे-किनारे बढ़ने लगे। ठीक होलीके दिन आप बक्सर जा पहुँचे।

शेरपुरसे बिहारके लिए प्रस्थान करनेके पूर्व एक घटना घटी। गुफासे थोड़ी ही दूरपर एक संभ्रान्त परिवारके व्यक्तिने गंगापार जानेका ठेकाले रक्खा

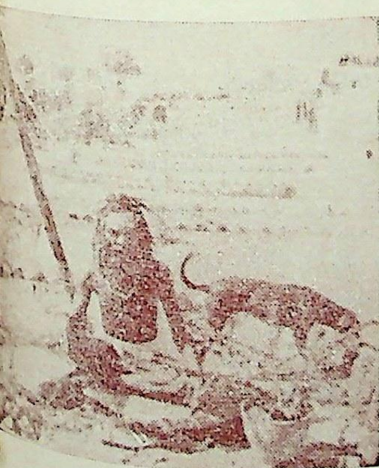
था। होलीसे कुछ दिन पूर्व वह एक दिन सायंकाल आकर महाराज से शेरपुरमें ही होली बिताने का आग्रह करने लगा। उसने यह भी कहाकि हम सब होलीके दिन आपके इसी आश्रम पर उत्सव मनायेंगे और उस अवसरके उपयुक्त वस्त्रादि की भी व्यवस्था कर देंगे। महाराजने प्रेमपूर्वक उत्तर तो दिया लेकिन होलीपर वहाँ रहनेका निश्चित वचन न दिया। अवधूतके जीवन में उन्हीं वस्तुओंका उपयोग होता है जिसे लोग अनावश्यक समझकर छोड़ देते हैं। इस प्रसंगमें एकबार महोख नामक पक्षीका वर्णन करते हुये आपने बतलाया था कि यह पक्षी भी संन्यासी है। जो खेती बारीको कोई हानि न पहुँचाकर केवल कीड़े-मकोड़े आदि पर ही निर्वाह कर लेता है। उसी दिन रात्रिको गंगातटपर आपको एक बहुत विशालकाय शव कफन में लिपटा हुआ किनारे लगा मिला महाराजने यह सोचा कि होलीके लिये हम इसी कफन से काम चला लेंगे। रात्रिमें गुफापर लौट आनेपर आपने आवश्यक कीलन वगैरह करके वहीं विश्राम किया दूसरे दिन प्रातः गंगा तटपर पहुँचनेपर आपने देखा कि गीदड़, कुत्ते और गीधोंने शव माँस भक्षण करनेके लिए कफनको भी फाड़ डाला है। अतः आप उसमेंसे एक ढाई गजका टुकड़ा ही लेकर चुपकेसे उस गुफाको छोड़कर बिहारकी ओर चल पड़े। शेरपुरसे आरा जाते समय आपने एकरात्रि के लिए बक्सरसे उत्तर अहिरौली ग्राममें (अहिल्या) निवास किया। रास्तेमें ही एक उदार-मना महात्माने आपको आतिथ्य स्वीकार करनेके लिये विवश किया। उनके यहाँसे भी शीघ्र ही आप भाग निकले। थोड़ा आगे बढ़नेपर एक बगीचा मिला जिसमें आप गये और वहीं पेड़पर बने एक मचानपर बैठ गए। थोड़ी देर बाद अंग्रेजी वेश-भूषामें सुसज्जित एक नवयुवक उस बगीचेमें आया और जिस मचानपर महाराज बैठे थे उसीके पास खड़े होकर लघुशंका करने लगा। जब महाराजने उसे मना किया तो इनकी वेश-भूषासे डरकर वह भागने लगा। आश्वासन दिलानेपर वह पास आया और उसने बताया कि मैं ही उस बगीचेका स्वामी हूँ और यदि महाराज स्थायी रूपसे उस बगीचेमें निवास करना चाहें तो वह सभी प्रकारसे सेवा करनेके लिये प्रस्तुत रहेगा। महाराजने उसे भी वचन न दिया। जब वह चला गया तब रात्रि के लगभग १०-११ बजे एक ओर वस्त्राभाव से शीतका कष्ट और दूसरी ओर दिन भर भिक्षा न मिल सकनेके कारण जठराग्नि भी सता रही थी। पासके ही एक खेतमें टमाटर के पौधे लगे हुए थे किन्तु वहीं खेतकी रक्षा करने वाला बैठा था। अर्द्धरात्रिके समय जब गाँवमें होली जली तब अन्य लोगोंके साथ इस खेतका रक्षक भी इस उत्सव में सम्मिलित होने चला गया। इसके पश्चात् महाराज मचानपरसे उतर कर इस विचारमें पड़े कि क्षुधा-शान्तिके लिये टमाटर तोड़ कर खा लिये जायँ तो यह चोरी न होगी? कुछ देर तक मनमें यही द्वन्द्व चलता रहा। फल खानेके पक्षमें महर्षिदुर्वासा विश्वामित्र आदिकी कथाएँ स्मरण हो आईं। अन्तमें आपने खेतके निकट जाकर दो-चार टमाटर तोड़े और ज्योंही उनकी आहुतिद्वारा क्षुधा निवारण करने चले कच्चापन एवं कठोरताके कारण हो ही एक ग्रास खानेके बाद फलोंको वहीं छोड़ दिया और तत्काल ही

वहाँसे चल पड़े जिसमें वहाँके भी निवासियोंसे घनिष्ठता न बढ़ाने पाये। वहाँसे चलकर दूसरे ही दिन जब लोग होली के राग-रंग में डूबे हुये थे आप अपनी जन्म-भूमि गुंडी ग्राम में विराजमान थे।

आपके परिवार एवं गृहके लोग आपको बार-बार पकड़ कर घरमें ही रखनेका प्रयत्न कर रहे थे। स्वयं आप भी माँके स्नेहकी याद आने पर इतने प्रेम विह्वल हो उठते थे कि घंटों प्रेमाश्रुओंकी धारा आँखोंसे न रुक पाती थी। आपने अष्ट पाशोंके तोड़नेका दृढ़ निश्चयकर लिया था। इसीलिए परम अघोर रूपमें गाँवमें गये। शरीरपर केवल ढाईगज कफन का टुकड़ा लिपटा हुआ था। एक हाथमें श्वान का शव था और दूसरे हाथमें मदिराकी बोतल थी। आकृति भी बड़ी रौद्र थी। आप अपने प्रयासमें सफल हुए क्योंकि अधिकांश लोगोंने उसी दिन प्रथम निश्चय कर लिया कि अब आप परिवारमें पुनः सम्मिलित करने योग्य न रहे। यह स्मरण करना होगा कि लोक-मर्यादामें दबी हुई माँके मनस इतनेपर भी पुत्र-स्नेह दूर न हो पाया लेकिन इस यात्रामें आपने उस श्रद्धामूर्ति करुणामयी देवी का दर्शन भी नहीं किया। इस प्रकारकी उदासीनता दिखलाकर महाराजने उनके मनमें ढाढ़स बँधानेका प्रयास किया। इतनेमें ही बालसखाओं और परमहंसजी ने आपको घेर लिया और उत्सवमें सम्मिलित होनेके लिए आपसे आग्रह किया। आपने उनसे कहा कि आप लोग चैता गवानेका आयोजन करें मैं भी उसमें सम्मिलित हो जाऊँगा। थोड़ीही देरमें उन अनन्य प्रेमियोंके साथ आपने भी उस उत्सवमें सम्मिलित होकर उन लोगों का उत्साह बढ़ाया। उत्सवकी समाप्तिपर रात्रिके शेष प्रहरमें जब लोग विश्राम करने चले गये, आप चुपकेसे उठकर वहाँ से चल पड़े और पुनः काशी आकर कुछ काल पश्चात् आपने पुनः गंगा तटपर भ्रमण करने का निश्चय किया।

—:o:—

शक्ति पीठ विन्ध्याचल में भैरव कुण्ड के ऊपर पहाड़ी पर औघड़ भगवान राम,
यहां आप कई वर्ष साधना रत रहे।



औघड़ फक्कड़ बाबा जो [illegible]
आश्रम पर रहते हैं।



बाबा किनाराम स्थल, वाराणसी
के वर्तमान महंथ
पूज्य बाबा राजेश्वर राम जी



रुद्राक्ष १२

अघोर-सिद्धि

महड़ौरामें कुछ भक्तोंको प्रथम दर्शन

अघोर-दीक्षाके उपरान्त भगवान रामजीने साधनाके हेतु गंगाके तट पर बहुत दिनों तक भ्रमण किया। गंगातटपर भ्रमण करते-करते वे महड़ौरा श्मशान जा पहुँचे। मुगलसराय स्टेशनसे ६ मील उत्तरकी ओर एक बड़ा विकट श्मशान है जहाँ महड़ौरी देवीका मन्दिर है। मोकलपुरके बाबाने धर्मशाला तोड़कर उसी पत्थर से यह मन्दिर बनवाया था। उसमें चहार दीवारी और बगीचा भी है। वहाँ अर्द्धवैरागी साधु रहते हैं। यह स्थान साधनाके लिए कुछ ऐसा उपयुक्त जान पड़ा कि वे कुछ कालतक यहाँ निवास करते रहे। यह काल उनके जीवनका बहुत महत्त्वपूर्ण काल है क्योंकि इस साधना-कालमें उन्हें कुछ ऐसा अभ्यास-सा हो गया था कि सांसारिकों से कोई विशेष सम्पर्क न रखते थे। जहाँतक सम्भव हो सकता था, उनसे दूर ही रहनेकी चेष्टामें रहते थे। यहीं उन्होंने महातत्त्व का आवाहन भी कई बार किया। इसी श्मशान पर एक कुटिया में उनका निवास था। वेश-भूषा साक्षात् रुद्रकी ही थी। गलेमें माला, हाथ में कपाल, अंगमें श्मशानकी राख पोते जब वे श्मशानमें विचरण करते तो प्रतीत होता कि स्वयं रुद्र अपनी क्रीड़ा-स्थलीमें विचर रहे हों। बहुत कम ही लोगोंकी हिम्मत पड़ती कि उनके निकट सम्पर्कमें आएँ।

सन् १९५१के आस-पास श्रीदेवी प्रसादसिंहजी द्वारा बाबू लोचन सिंहको मालूम हुआ कि संन्यासी के आश्रममें एक महात्मा हैं। आप उनके दर्शनार्थ महड़ौरा श्मशानपर गए। वहाँ पहुँचनेपर आपको टेगरी नामक एक बारी द्वारा पता लगा कि बाबा कुटियाके भीतर हैं। कुटिया एक फूसके टट्टरसे बन्द थी। आपको बाबाजीके दर्शनकी बड़ी प्रबल इच्छा थी। अतः आपने टेगरीसे पूछा कि क्या दरवाजा खोलकर अन्दर जा सकते हैं? पर टेगरीने आपको ऐसा करनेसे मना किया। ठाकुर साहब अपने हृदयकी पुकारको न रोक सके और बिना किसीसे पूछे ही कुटियाका द्वार खोलकर बाबा के सन्मुख जा उपस्थित हुए। उस समय वे एक बाँसकी चालो पर, जो जमीनसे दो हाथ ऊँचे चारपाएपर थी, आधे गजकी लंगोटी लगाए विराजमान थे। एक छोटा सा कफनका टुकड़ा शरीरपर था। आसनके समीप एक बाघंबरकी चप्पल पड़ी हुई थी। आपने तुरत साष्टांग दण्डवत् किया और बाबाके चरणोंमें बैठ गए। कुछ देर पश्चात् बाबाने आपसे पूछा कि आप कौन हैं और किस कार्यके लिए आए हैं? ठाकुर साहबकी आँखोंमें आँसू भर आये। उन्होंने बतलाया कि मैं मुसीबतका मारा हूँ और उसी मुसीबतकी कहानी आपको सुनाने आया हूँ। इतनेमें दिनके करीब ११ बज गए थे। चैत्रका महीना था और धूप तेजीसे चढ़ रही थी। बाबाने ठाकुर साहबको घर जानेका आदेश

दिया और कहा कि गंगास्नान और दर्शन दोनों क्रियाएँ हो चुकी हैं। अब भिक्षाका समय हो गया है जाओ। मेरे पास तो कुछ नहीं है कि मैं तुम्हें भिक्षाके लिए दूँ। इसपर वे बाबाके चरणोंमें गिरकर रोते हुए अपने ग्राम मनिहरामें दर्शन देनेकी प्रार्थना करने लगे। बाबाका विचार था कि गंगा-तट छोड़कर अन्य किसी स्थान पर न जायँ। अतः आपने दो बार ठाकुर साहबकी प्रार्थना अस्वीकार कर दी। परन्तु ठाकुर साहबने अपने प्रेम और दैन्यभावसे अन्तमें उनसे ग्राममें आनेका वचन ले ही लिया।

वे इतने प्रसन्न हो उठे कि उन्हें रात्रिमें नींद भी न आती थी और हमेशा यह आशंका बनी रहती थी कि बाबा कहीं गंगा-तटसे चले तो न जायँगे पर इस रौद्र रूपको देखकर पुनः आग्रह करनेकी हिम्मत भी न पड़ती थी।

इस समय बाबा हाथमें खप्पर लेकर भिक्षाके निमित्त निकलते थे। 'माँ रोटी दो', 'माँ रोटी दो' कहते हुए ग्राम से निकल जाते थे। ग्रामीण माताएँ द्वारपर पहलेसे ही रोटी लिए हुए खड़ी रहती थीं कि कहीं विलम्ब होनेसे बाबा चले न जाएँ। आजकल यह खप्पर राजा साहब सोनपुराके यहाँ है। रोटी लेकर बाबा स्वयं खाते और कुत्तों को खिलाते हुए आगे बढ़ जाते। आपके पीछे-पीछे सैकड़ों लोग दौड़ते हुए चलते थे। इसके बाद वे मनिहरा आश्रमपर आ जाते थे। इसके कुछ दिन बाद उन्होंने आश्रमपर ७२ घंटेका अखंड कीर्तन करवाया।

श्मशानपर आप माला पहने हुए रहते थे। शरीरसे बहुत तेज सुगंध आती थी। गले में माल-पड़ी रहती थी। शरीर पर एक लंगोटीके सिवा कुछ न रहता था। प्रायः उनके पीछे ग्रामीए बालक ईंट-पत्थर लेकर दौड़ते तो बाबा उन बालकों को दौड़ा लेते। यह लीला प्रायः हुआ करती थी।

एक बारकी बात है कि बाबाने ठाकुर लोचन सिंहजीसे पूछा "तुम्हें क्या दें ?" एकाएक ठाकुरको बाल पकड़कर एक तली हुई मछली भोजनके लिए दे दी। इस मछलीको ठाकुर साहबने घरपर ले जाकर रख दिया परन्तु दुर्भाग्यवश यह मछली कुछ दिनों बाद स्वयं लुप्त हो गई। बाबा बीसों धतूरेके फल एक साथ खा जाते थे। सकलडीहा के थाने पर एक बार बाबाने ऐसे तत्त्वका इतना सेवन किया कि दूसरा कोई व्यक्ति होता तो उसने सांसारिक लीला समाप्त कर दी होती पर आप पर कोई असर न हुआ।

ताजपुरके ठाकुर मेवासिंह बिलकुल लुंज थे। जरा-सा भी चलने-फिरने-में आप पूर्णतः असमर्थ थे। बाबाका गुण सुन कर उनकी भी महात्माजीके दर्शनकी उत्कट अभिलाषा उत्पन्न हुई। अब प्रश्न था कि बाबाका दर्शन कैसे करें क्योंकि स्वयं आप चलने-फिरने में पूर्णतः असमर्थ थे। उनको लोग कंधेपर चढ़ाकर हरिहरपुर आश्रममें ले आए। बाबाने उनको उठनेका आदेश दिया पर वे असमर्थ थे। बाबाने उनको बाँह पकड़कर उठाया। जिसकी बाँह स्वयं भगवान पकड़ लें उसका क्या कहना ? बाबा की कृपासे जबतक वह जीवित रहे बिना लकड़ीके सहारे चलते-फिरते रहे। उनके सुपुत्र श्रीरामजी सिंह वकील हैं।

आश्रमोंकी स्थापना

साधना-कालमें जन-समुदायसे दूर रहकर एकान्त-वासमें बाबाने लगभग दो-तीन वर्ष व्यतीत किये। साधनाकी पूर्तिपर आपको लोक-हितका साधन करनेकी प्रेरणा मिली। अतएव महड़ौरा श्मशानमें कुछ भक्तोंको आपने प्रथम दर्शन दिया। यहाँ भी दर्शनार्थी दिनमें केवल घंटे-दो घंटे बैठकर लौट जाते थे। रात्रिके समय किसीको भी वहाँ जानेकी अनुमति न थी। आस-पासकी श्रद्धालु जनताने आग्रह-पूर्वक एक झोपड़ा वहीं बना दी। बाबा दिनमें भी घंटों झोपड़ी बन्द किये रहते थे। जन-सम्पर्क न बढ़ाना तो इसका उद्देश्य था ही किन्तु इससे भी ऊँचा प्रयोजन यह था कि उच्च साधकोंको जब ईश्वरानुग्रहसे भगवत्साक्षात्कार हो जाता है तब वे स्थायी रूपसे उसी आनन्दमें डूबे रहना चाहते हैं। इसीलिए भक्तजनोंका आवागमन, सत्संग अथवा अन्य कोई भी व्यवधान असह्य हो जाते हैं। उस समय रात्रिको तारे एवं दिनमें सूर्यके प्रकाशके अतिरिक्त आप कभी अन्य प्रकाशसे वर्षों तक सम्पर्कमें नहीं आये थे। इसलिए गाँवके बाहर जब आप अपनी कुटियामें रहने लगे और वहाँसे गाँवके दीपकोंका उजाला रात्रिमें देखते थे तो सहम जाते थे। आपको इनमें बन्धनके लक्षण प्रतीत होते थे। भक्तोंकी लाई भिक्षा तथा साधारण वस्त्रोंसे आपका निर्वाह होता था लेकिन इनसे भी बन्धनका भय बना रहता था। केवल दिनमें लोग दर्शनार्थ आते थे रात्रिके नौ बजेसे प्रातःकाल तक कोई भी नहीं आ सकता था।

गणेश, गौरी, शिव, सूर्य और विष्णु ये पंचदेव कहे जाते हैं और इनकी पूजा करनेवाले लोग स्मार्त्त कहे जाते हैं। हिन्दू मन्दिरोंमें जब इनमेंसे किसी एक देवकी प्रधानके रूपमें स्थापना होती है तो शेष चार देवोंको प्रतिमा भी पंचा-यतनके रूपमें स्थापित की जाती है। बाबाने मनिहरा तालाबके पास श्री गणेशजी-की मूर्तिकी स्थापना कराई तथा पूरब दिशामें आश्रममें देवीकी और शंकरजीकी मूर्ति स्थापित की गई। वहीं गोपालजीका भी एक मन्दिर निर्मित किया गया जहाँ वैष्णव रीतिसे श्रीबालमकुन्दकी सेवा-अर्चना होती है। प्रमुख हिन्दू त्योहारोंपर इन देवालयोंमें शृंगार एवं उत्सवके आयोजन होते हैं। सावनके महीनेमें शुक्लपक्षकी त्रयोदशी, चतुर्दशी एवं पूर्णिमा तीन दिनों तक गोपालजी एवं कालीके झूलेका उत्सव बड़े उत्साहसे मनाया जाता है। ऐसे अवसरपर बाबा स्वयं भी आश्रमपर उपस्थित होकर उत्सवको सफल बनाते हैं। यद्यपि स्मार्त मतानुसार पाँचों देवोंके पाँच मन्दिर होने चाहिए फिर भी यहाँ केवल चार मन्दिर ही अब-तक बने हैं। सविता प्रत्यक्ष देव हैं इसलिये उनका मन्दिर न बनाकर केवल सूर्यार्घ्य तथा पुष्पादिसे उनका पूजन हो जाता है। इस प्रकार अपने भक्तोंमें पञ्चदेवोपासनाका भाव लाकर उसकी दृढ़ताके लिए आपने यज्ञोंका अनुष्ठान भी किया था।

सर्वप्रथम मनिहरा ग्राममें, जो मुगलसराय पटना लाइनके सकलडीहा रेलवे स्टेशनके पास लगभग दो मील उत्तर-पश्चिमके कोणमें स्थित है, विष्णु-याग हुआ था। उस क्षेत्रके प्रसिद्ध रईस तथा भक्त स्व० श्री देवीसिंह इस यज्ञके

यजमान थे। आस-पासकी ग्रामीण जनताने उदार मनसे इस यज्ञके लिये सामान एकत्र किया था। कई दिनोंतक सविधिसे यज्ञानुष्ठान चलता रहा। इस बीच प्रतिदिन दर्शनार्थियों की अपार भीड़ लगी रहती थी। यज्ञ-मंडप के पास ही भंडार-गृह सर्वदा मिष्ठान्न-फलादिसे भरा रहता था और जितने लोग आते थे उन सबका यथोचित आतिथ्य किया जाता था। जब यज्ञ की पूर्णाहुति हुई तब सभी आवश्यक व्यय पूरा कर लेनेपर भी कुछ धनराशि बची हुई थी। बाबाकी प्रेरणासे उस धनका व्यय एक मन्दिर बनाकर श्रीगणेशजी का विग्रह स्थापित करनेमें किया गया। वह मन्दिर आज भी वहाँ स्थित है जिसमें लोग प्रेमपूर्वक जाकर दर्शन-पूजन कर कृतार्थ होते हैं।

धीरे-धीरे यह स्थान अधिक प्रसिद्ध हो गया और यहाँ बड़ी भीड़ एकत्र होने लगी। इसलिए बाबा यहाँसे चल पड़े और हरिहरपुर ग्राममें तालके किनारे एक बेलके वृक्षके नीचे रहने लगे। यह स्थान बड़ा बीहड़ था और ग्रामवासियोंकी रायमें यहाँ एक ब्रह्मराक्षस रहता था इसलिये लोग यहाँ दिनमें भी आते डरते थे। कुछ काल तक आपके रहनेसे यहाँ भी एक कुटिया बन गई और प्रेमी भक्तजनोंका आना-जाना प्रारम्भ हुआ। अब भी रात्रिके समय यहाँ कोई नहीं रहने पाता था। यहाँ रहकर बाबाने पुनः कठोर तप आरम्भ किया। जेठकी दोपहरीमें सूखे तालमें जाकर पड़े रहना और दिन-रात अपनी साधनामें लगे रहना, यही आपकी दिनचर्या थी।

ग्रामके प्रमुख शशिधरजीके पिताजी बाबू मुक्तेश्वर सिंहने महाराजसे एक दिन विष्णुयाग करने की अनुमति ले ली। अब क्या था? यज्ञकी तैयारियाँ जोरोंसे होने लगी। ठा० मुक्तेश्वर सिंह सपत्नीक यजमान हुए। यज्ञका आरम्भ हुआ। आस-पासकी धर्म-परायण जनताने पूर्ण सहयोग दिया और दूर-दूरसे श्रद्धालु दर्शनार्थ आए। यज्ञके समय अखंड भंडारा चलता रहा। सभी आनेवालोंका यथोचित सत्कार हुआ। लोगोंमें अपार हर्ष छाया था और कलतककी उजाड़ भूमि आज नव जीवनस प्रफुल्लित थी। यज्ञकी समाप्तिपर उस भूमिकी स्वामिनीने महाराजके चरणोंमें उस भूमिको आश्रम बनाने लिये चढ़ा दिया।

इसी स्थलपर बाबाने हरिहपुरका आश्रम बनवाया। एक पक्की चहार दीवारीके भीतर पक्का कुआँ बना और उसीके पास एक मन्दिर बनवाया गया। ग्रामके नामके अनुरूप इसी मन्दिरमें शिव लिङ्गकी विधिवत् स्थापना हुई और वहीं श्री गोपाल-कालीजीका मङ्गल विग्रह भी रक्खा गया। पूजनका कार्य एक कुलीन परिवारके ब्राह्मणको सौंपा गया था। कुछ ही दिनोंमें भण्डार, दालान, बाबाका आसन आदि प्रतिष्ठित हो गये। यहाँ जो साधु-सन्त आते हैं उनके आतिथ्यकी भी यथोचित व्यवस्था है। महाराजके दालानकी छत परसे पुण्य सलिला भागीरथीके दर्शन होते हैं और ग्रामसे दूर उस प्रकृतिके गोदमें बने आश्रममें कुछ अजीब सा आकर्षण है। बाबाने इसी आश्रममें उत्तरकी ओर एक छोटा किन्तु सुन्दर मन्दिर बनवाया है जहाँ पंच कपालपर माँ काली की मूर्ति

स्थापित है। माँका दर्शन करके चित्त प्रसन्न हो जाता है। इस मन्दिरकी सेवाके लिए एक औघड़ बाबा रहते हैं। यहीं पासमें धूनी जला करती है। इस आश्रममें जो भाव लेकर श्रद्धालु भक्त आते हैं बाबाके तपोबलसे उनका मनोरथ सफल होता है। धीरे-धीरे यहाँ भी भीड़ एकत्र होने लगी और बाबा यहाँसे चलकर काशीमें एकान्त बगीचेमें साधना करने लगे। हरिहरपुरसे प्रस्थान करनेसे पूर्व आपने सकलडीहाके भक्त श्री विश्वनाथ सावके आग्रह पर वहाँ एक रुद्रयागकी अनुमति दी।

हिन्दू समाजमें विष्णु तथा रुद्रकी विशेष पूजा होती है। त्रिदेवमें ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र हैं। इनके कार्य क्रमशः सृष्टिकी उत्पत्ति, पालन और संहार है। परन्तु दो ही सम्प्रदाय भारतमें प्रमुख रूपसे पाये जाते हैं—शैव तथा वैष्णव। इनमें परस्पर द्वेष भी रहा है इसलिए अनेक धार्मिक नेताओंने समय-समय पर विष्णु तथा रुद्रका अभेद बतलाया है। गोस्वामी तुलसीदासने रामचरितमानसमें विष्णुके अवतार श्री राम तथा श्री शिव द्वारा परस्पर पूजन का दृश्य उपस्थित कर शैव तथा वैष्णवोंके मतभेद मिटानेका प्रयास किया है। इसी प्रकार दो विष्णु यागके अनुष्ठानके उपरान्त रुद्रयाग द्वारा बाबाने समन्वय प्रस्तुत किया। अघोर-सम्प्रदायमें शिवके अघोर रूप तथा दुर्गाको उपासनाकी जाती है। इसलिए बाबाने अपने भक्त विश्वनाथ सावके रुद्रयागके प्रस्तावको सहर्ष स्वीकार कर लिया।

सकलडीहा बाजारके निकट रुद्रयागकी तैयारी बड़े धूमधामसेकी गई। इस यज्ञमें विश्वनाथ साव यजमान थे। यज्ञके दर्शनार्थ आनेवाले सज्जनोंका यथोचित सत्कार किया गया। यज्ञकी पूर्णाहुति होने पर एक बड़ा भण्डारा दिया गया जिसमें असंख्य लोगोंको भोजन कराया गया। इस यज्ञमें पर्याप्त दक्षिणा बाँटी गयी और सभीको सन्तुष्ट किया गया।

इसी अवसर पर पासके ही गाँवके एक निर्धन छात्रने यज्ञमण्डपमें उपस्थित होकर बाबासे अपनी आर्थिक कठिनाइयोंकी चर्चा की और कहा कि बिना सहायताके मेरी पढ़ाई अधूरी रह जायगी। बाबाने उसे शान्तिपूर्वक सुनकर कहा कि "यज्ञकी पूर्णाहुतिके दिन आ जाना।" वह बालक नियत समय पर आया। बाबाने उसे वस्त्र एवं पर्याप्त नकद रकम देकर सम्मानित किया और उसे यह आश्वासन भी दिया कि जब धनाभाव हो मुझे सूचना देना, मैं व्यवस्था कर दूँगा। बाबाजी उदारता एवं दीन-परायणताका यह भी एक उदाहरण है। यही नहीं, न जाने कितने अनाथ बालकोंको बाबा गुपचुप आर्थिक, सहायता सलाह एवं पथ-प्रदर्शन द्वारा उनका जीवन सुधार चुके हैं।

अभिमान तो बाबाको छू तक नहीं गया है। इसलिए आर्त्तजनोंको आपका आशीर्वाद मिलता रहा है। एक व्यापारी आर्थिक संकट उपस्थित होने पर आपके पास अपनी दुःखगाथा सुनाने आया। आपने उसे नित्य गङ्गा जीके

दर्शन करनेका उपदेश किया। इससे उसकी अशान्ति भी दूर हुई और उसकी मनोदशा भी उच्च अवस्थाकी ओर बढ़ी।

वाराणसीके बाबा रघुनाथ प्रसाद जी सिकरौल ग्राममें रहते हैं। उन्होंने बाबासे आग्रह किया कि मुझे 'माँ" का दर्शन करा दीजिए। बाबाने उन्हें देवी-यज्ञ करनेका आदेश दिया। बा० रघुनाथ प्रसाद यजमान होकर देवीयाग करने लगे। बाबा भी वहाँ जाते थे। उन्होंने रघुनाथ प्रसादसे कहा कि जो भूखा आए उसको सादर भोजन कराना। यज्ञानुष्ठानके बीच ही एक रात्रिको फटे वस्त्र पहने एक बूढ़ी स्त्री आई। आदेशानुसार यजमानने उसका यथोचित स्वागत किया और स्वयं भोजन उसके आगे ला रक्खा। कुछ ही क्षणोंमें भोजन करके वह स्त्री न जाने किधर चली गयी। एकाएक उस स्त्रीके चले जानेसे यजमानको संदेह हुआ। बाबाने दूसरे दिन उनसे पूछा कि कल रातको माँके दर्शन मिले? इस उत्तरको पाकर बा० रघुनाथप्रसाद आश्चर्यान्वित हुये क्योंकि इस बातको उन्होंने किसीसे प्रकट न किया था। जिस उद्देश्यसे यज्ञ हो रहा था उसकी सफलतासे वे परम प्रसन्न हुये और वे जब तक जीवित रहे। सादर सेवामें लगे रहकर महाराजका आशीर्बाद प्राप्त करते रहे।

संवत् २०१८ की ज्येष्ठ शुक्ल एकादशीको मड़ुवाडीह स्थित बगीचेमें महाराजके आदेशसे सभी शाखाओंके लगभग तीस वैदिकोंने एकत्र होकर वसन्त-पूजा की थी।

बाबाने जनताकी आर्थिक सहायतासे विश्व-कल्याणार्थ यज्ञ किये और जनतामें धार्मिक भावना लानेके निमित्त देवालयों की स्थापनाकी। बाबाके ये आचरण हमको निष्काम-कर्मकी शिक्षा देने के ही निमित्त हैं। इसलिए हरिहरपुरके संस्थापकका उस आश्रमसे कोई लगाव नहीं है। वे बाबा तो आज भी अनिकेत हैं।

—: ० :—

रुद्राक्ष १३

लोकसंग्रह और लोकमंगल-कार्य

साधनाकी पराकाष्ठा हो जानेपर और मानसिक पारमिता प्राप्त कर लेनेपर जो नैसर्गिक और आध्यात्मिक परमानन्दका अनुभव होता है वह स्वयं अपनेमें परम सिद्धि और चरम लक्ष्य है किन्तु जो सात्त्विक साधक होते हैं वे केवल आत्मानन्द प्राप्त करके ही सन्तुष्ट नहीं हो रहते हैं। वे अपने आत्मको विश्वात्म-तक व्याप्त कर देते हैं और समस्त प्राणिमात्रको मुक्त-हस्त और उन्मुक्त हृदयसे अपना अनुभूत आनन्द वितरित करनेके लिए व्याकुल हो उठते हैं। उस समय वे बहुजन-हिताय और बहुजनसुखायके बदले सर्वजनहिताय और सर्वजनसुखदायकी भावनाकी ओर अग्रसर हो चलते हैं।

इस प्रकारके सिद्ध फिर साधनाके द्वारा संसारके दुःखका समूल नाश, करनेके लिये और सुख ही सुख वितरित करनेके लिये यही कामना करने लगते हैं—

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग् भवेत्॥

[संसारके सभी प्राणी सुखी रहें, सब लोग नीरोग रहें, सभीका निरन्तर कल्याण-ही-कल्याण हो, संसारमें कोई भी व्यक्ति दुःखी न रहे।]

इस कामनासे प्रेरित होकर आत्मानन्द-प्राप्त सिद्ध सर्वात्मानन्द-सिद्धि करनेके लिये प्रयत्नशील हो उठता है। उसके सम्पूर्ण संयम, शील, आचार, व्यवहार, आदेश, उपदेश, सब लोक-कल्याणकी ओर प्रवृत्त हो जाते हैं।

कहा गया है कि साधु पुरुष दो प्रकारके होते हैं, एक तो वे हैं जो सिद्धिकी परमावस्था प्राप्त करके स्वयं तुष्ट हो रहते हैं, जिस सीढ़ीसे उन्होंने परमानन्द प्राप्त किया है उस सीढ़ीको ऊपर खींच लेते हैं, उसका प्रयोग किसी अन्यके लिए नहीं हो पाता। किन्तु दूसरे प्रकारके साधु पुरुष वे हैं जो जिस सीढ़ीसे ऊपर चढ़ते हैं उसे ऊपर चढ़कर कसकर पकड़े रहते हैं कि अन्य लोग भी उस सीढ़ीका प्रयोग करके ऊपर चढ़ आवें। तात्पर्य यह है कि आत्मानन्दका आनन्द, निजानन्दकी परिधिमें अपना पूर्ण प्रकाश नहीं फैला पाता। वह तो तभी समुचित प्रकारसे व्यक्त होता है जब वह निजानन्दको सर्वानन्द बना दे। इसीलिए हमारे यहाँ कहा गया है—

एके सत्पुरुषाः परार्थघटकाः स्वार्थं त्यजन्तीह ये
सामान्यास्तु परार्थमुद्यमभृतः स्वार्थाविरोधेन ये।
तेऽपि मानव राक्षसाः परहितं स्वार्थाय निघ्नन्ति वै
ये निघ्नन्ति निरर्थकं परहितं ते के न जानीमहे॥

(एक सर्वश्रेष्ठ पुरुष वे होते हैं जो अपने स्वार्थका तनिक भी ध्यान न रखकर दूसरोंका ही हित साधते रहते हैं। सामान्य पुरुष अपने स्वार्थका ध्यान रखते हुए दूसरेका हित भी करनेके लिए तत्पर रहते हैं किन्तु वे तो मानव-राक्षस हैं जो अपने स्वार्थके लिए दूसरोंको हानि पहुँचाते हैं, पर जो लोग अकारण ही दूसरोंको हानि पहुँचाते हैं वे कौन हैं हम नहीं जानते ? अर्थात् वे अधमाधम पुरुष हैं)।

आत्मानन्द-सिद्ध पुरुष तो उपर्युक्त श्रेष्ठतम पुरुषसे भी बहुत आगे बढ़ा होता है क्योंकि उसके साथ स्वार्थका कोई प्रश्न ही नहीं रहता। सामाजिक या लौकिक जीवनकी कोई समस्या उसके साथ बँधी नहीं होती इसलिए स्वभावतः परहित या लोक-कल्याण ही उसका एकमात्र उद्दिष्ट रह जाता है। इसीलिए संसारमें जितनी भी श्रेष्ठतम, उच्चतम और भव्यतम विश्ववन्द्य विभूतियाँ हुई हैं उन सबने आत्म कल्याणको गौण रखकर लोक-कल्याणकी भावनाको ही अधिक उद्दीप्त रखा है। उन्हींकी तपस्या, साधना और प्रयासका फल है कि आज विश्व-भरमें अनेक समाज और वर्ग साधुवृत्तिके साथ लोक-मंगलका प्रयास कर रहे हैं और उन्हींकी तपस्या और त्यागके फल-स्वरूप विश्वमें नैतिक जीवनकी प्रेरणा मिल रही है। वैदिक और पौराणिक कालसे लेकर आजतक तथा अन्य देशोंमें मानव सृष्टिके सांस्कृतिक विकास-क्रममें जितने महापुरुष हुए हैं उनकी महत्ताका एकमात्र कारण यही रहा है कि उन्होंने अनेक प्रकारकी यातनाएँ, कष्ट और असुविधाएँ सहकर भी निरन्तर लोक-कल्याणके कार्य करते हुए ही जीवन व्यतीत किया। उन महापुरुषोंकी तपस्या निष्फल नहीं गयी और आज भी विभिन्न देशोंमें ऐसे सर्ववन्द्य लोकसंग्रही और लोकमंगलकारी पुरुषोंको अत्यन्त आदर और श्रद्धाके साथ स्मरण किया जाता है, उनकी पूजाकी जाती है और उनके अलौकिक चरितका गुणगान करके लोग आत्मोद्धार करते और अपनेको धन्य समझते हैं।

इन्हीं महापुरुषोंकी वन्दनीय परम्परामें अवधूत भगवानरामका भी बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है जिन्होंने बाबा कालूराम, बाबा किनाराम आदि औघड़ सन्तोंके समान ही लोक-कल्याणको अपनी साधनाका मुख्य लक्ष्य बनाकर, श्री सर्वेश्वरी समूहके द्वारा लोक-जीवनको शक्ति, सुस्थिरता, स्वस्थता और बल प्रदान किया।

चिन्तन महान शक्ति है। दुनियामें जितने भी आविष्कार हुये वे सभी गहन चिन्तनके ही परिणाम है। विचार विद्युत्-गतिकी भाँति प्रवाहित होता है। जिस प्रकार पावर हाउससे विद्युत्-कण प्रवाहित होकर वायुमण्डलमें व्याप्त होते हैं और उपयुक्त पात्र (लाइन) के द्वारा बहुत दूर जाकर भी अपनी क्रिया-शक्तिको वैसे ही अक्षुण्ण बनाये रखकर प्रकाश, वाणी एवं अन्य-अन्य क्रियायें करते हैं, उसी प्रकार विचार-शक्ति भी है। विचार-शक्तिको आश्रय देनेवाली शक्ति या पावर हाउस एक ही है, जिसे हम यहाँ सर्वेश्वरीकी संज्ञासे अभिहित करेंगे। वह शक्ति एक और अनन्त है तथा कण-कणमें व्याप्त है। अपनी सुविधा, अनुभव, दर्शन एवं अनुभूति आदिके आधारपर किसीका नामकरण किया जाता

नेपाल के भूतपूर्व प्रधान मंत्री श्री विश्वेश्वर प्रसाद कोइराला श्री सर्वेश्वरी समूह के अधिवेशन में भाषण करते हुए।

श्री सर्वेश्वरी समूह के नवम् अधिवेशन में भाषण करते हुए बर्मा के भूतपूर्व प्रधान मंत्री ऊ नू
इस ग्रंथ के सम्पादक अनुवादक के रूप में।





श्री नागेन्द्र नाथ शाही के स्मृति में बना सर्वेश्वरी सभा भवन, गंगा की गोद में

श्री अवधूत भगवान राम कुष्ठ सेवा आश्रम का बहिर्कक्ष



है। उस आद्याशक्ति सर्वेश्वरीकी स्फुरणसे जो गति प्रवाहित होती है, विचार, ज्ञान आदि विभिन्न रूपोंमें वही समूह है। उस विचार या ज्ञानको व्यावहारिक रूप देनेमें प्रयत्नशील लोग समूहके सदस्य हैं, जो उसे ग्रहणकर दूसरोंको भी उससे लाभान्वित करनेमें सतत संलग्न हैं। यही श्रीसर्वेश्वरी समूहकी रूप-रेखा है।

सूक्ष्म रूपसे विवेचन किया जाय तो उपर्युक्त तथ्योंकी पुष्टि सर्वेश्वरी समूह एवं इसके संस्थापक अवधूत भगवानरामजीके नजदीकके अध्ययनसे हो जाता है। समूह-संस्थापिक सर्वेश्वरी या उस पावर हाउसका प्रतीक एक बौद्धिक शक्ति हैं। लोक-मंगल-हेतु उनके जो विचार प्रवाहित होते हैं, उन विचारोंको मानव-कल्याणार्थ विविध रूपोंमें प्रयोग करनेमें प्रयत्नशील लोग समूहके सदस्य हैं, जो अपने कल्याणके साथ-ही-साथ लोक-कल्याणके प्रति सतत जागरूक हैं।

विचार वायुमण्डल-द्वारा प्रवाहित होकर मस्तिष्कमें प्रविष्ट होते हैं। मानव-मात्रमें मस्तिष्क ही एक ऐसा यंत्र है, जो उसकी गतिविधिको संचालित करता है और आत्मप्रेरणा मस्तिष्कका संतुलन बनाये रखती है। दृढ़ विचार ही मनुष्यके जीवनको रूप देता है। दृढ़ विचारका दूसरा रूप संकल्प है। संकल्प अगर दृढ़ हो तो वह समस्त प्रबुद्ध मस्तिष्कोंमें प्रविष्ट होकर अपने अनुसार कार्य करनेको बाध्य कर देता है। दृढ़ संकल्पवाले विरले ही होते हैं। ऐसे लोग जब पृथ्वीपर आते हैं तो अपने दृढ़ संकल्प द्वारा विश्व मानव-मस्तिष्कको प्रभावित कर मानव-कल्याण करते हैं एवं पृथ्वीपर सर्वमंगलमय व्यवस्थाओंको स्थापित करते हैं। दुनियामें बहुत कम लोग प्रबुद्ध एवं परिष्कृत मस्तिष्कके होते हैं। इसलिये अधिकतर लोग प्रबुद्ध विचारकोंका अनुसरण करनेवाले ही होते हैं। मस्तिष्करूपी यंत्रके परिष्कृत एवं संतुलित न रहनेके कारण अधिकतर लोग विचारोंको तत्सम रूपमें ग्रहण करनेमें अक्षम एवं असमर्थ होते हैं। अतः दृढ़ संकल्पवाले व्यक्ति आवश्यकतानुसार ही इस पृथ्वीपर आते हैं और अपने लोक-कल्याणकारी विचारोंको जनमानसमें वायुमण्डल द्वारा प्रविष्ट कराकर उनकी उन्नति, प्रगति एवं सुख-शान्तिका मार्ग प्रशस्त करते हैं। विचार-प्रवाहके साथ वे ऐसे कार्य भी करते हैं, जो मानव-कल्याण-हेतु सबके लिये अनुकरणीय होता है। श्रीसर्वेश्वरी समूहके संस्थापक एवं अध्यक्ष अवधूत भगवानरामजी ऐसी ही एक अनन्त बौद्धिक शक्ति हैं, जो विश्वमें कुछ भी करने एवं करा देनेमें समर्थ हैं। यही सर्वेश्वरी समूहकी पृष्ठ-भूमि है।

दूरदर्शिता एवं अनुभवके आधारपर ऐसा प्रतीत होता है कि आकाशमें एक सनसनाहट पैदा हुई, जिसने वायुका रूप लिया। वायुकी गतिने अग्निका रूप लिया और फिर जलका रूप सामने आया और जलमें एक ठोस आकार पृथ्वीका बना। इन सब तत्त्वोंमें एक दूसरेका अंश निहित है। चूँकि इन सबमें अपनी गति निहित है, अपने कार्य हैं, इसलिये इसमें छोटे-छोटे प्राणी आकार रूपमें उत्पन्न हुए। उनमें मानव सर्वश्रेष्ठ रहा। सर्वप्रथम मानवकी उत्पत्ति पृथ्वीके मध्यमें उच्च भागमें

हुई। अब भी पृथ्वीके दोनों सिरोंपर मनुष्यकी आबादी नहींके बराबर है। वहींसे अनुकूल वातावरणमें लोग फैलने शुरू हुए। उस समय पृथ्वीका कोई भी भाग किसी देशके नामसे परिचित नहीं था। भू-भागका बँटवारा और नामकरण मनुष्योंकी देन है। बहुत काल बाद लोग अपना-अपना दायरा सीमित करने लगे और विभिन्न भू-खण्डोंपर अपने-अपने अधिकारोंकी घोषणा करने लगे।

उस समय धर्मका जो रूप था, उसका कोई विशिष्ट नाम नहीं था। वह और जीवोंकी तरह एक मानव-समाज अथवा समूह था। इस समूह (सर्वेश्वरी समूह) का भी वही आधार है। ऐसा मालूम होता है कि मानवके द्वारा समूहकी उत्पत्ति हुई। फिर वह छोटा समूह आगे चलकर देश, धर्म और जातिमें विभक्त हो गया। यह समूह (सर्वेश्वरी-समूह) उसीकी यादमें आपके सामने है। हम विश्वके मानव-समाजको आकाशमें स्थित सभी तत्त्वों और प्राणियोंके सामने एक छोटा समूह समझते हैं। मानवके द्वारा समूह बना, लेकिन जब मानव समूहको भूलने लगा तो अब समूहका काम हो गया कि मनुष्यको उसकी यादगारी दे। आज समूह फिलहाल मनुष्य मात्रको यह यादगारी दिलाता है कि हम सब मनुष्य हैं। बहुत बड़े-बड़े आविष्कारोंके बाद भी हमारी मानवतामें कोई भी परिवर्त्तन नहीं हुआ। होना भी नहीं चाहिये। अगर परिवर्त्तन हुआ तो केवल यह कि हम अलग-अलग हैं।

इसी पृष्ठभूमिमें समूह-संस्थापक पूज्यपाद अवधूत भगवान् रामजीने २१ सितम्बर, १९६१ ई० को पुनीत काशी नगरीमें प्रबुद्ध विचारकों, भक्तों, उपासकों एवं साधकोंके मध्य मानवताकी स्थापना-हेतु सर्वेश्वरी समूहकी स्थापना समूह-स्थापनासे ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय मानवताके कल्याणार्थ इसकी नितान्त आवश्यकता थी; क्योंकि मानवीय गुणोंको विचारों द्वारा ही मनुष्यमें प्रविष्ट कराकर उसे स्थायित्व दिया जा सकता है। कानून, शासन तथा दबाव कभी भी, किसी भी तरह गुणोंकी स्थापना करनेमें समर्थ नहीं। विचारोंका स्थायित्व ही गुणोंका प्राकट्य है। ग्रन्थ पढ़कर, प्रवचन सुनकर या देखा-देखी विचार या गुणकी एक झिलमिलाती रेखा ही सामने आयेगी। ये मनुष्यमें दृढ़ता या स्थायित्व नहीं ला सकते। इस प्रकारसे एक पृष्ठभूमि तैयार हो सकती है, परन्तु स्थायित्व तो उन विचारोंको आचरण एवं व्यवहारमें लानेपर ही होता है। इसलिये विचार-प्रवाह-प्रदानकी क्रियाके साथ समूह-संस्थापक व्यवहार-पक्षको पुष्ट करनेके लिये भी अथक प्रयत्नशील हैं। समूहके क्रिया-कलापोंको देखनेसे इसके व्यवहार-पक्षकी पुष्टि होती है। समूहने अपने संस्थापकके निर्देशनमें व्यवहार-पक्षको अपनाकर बहुत उपलब्धियाँ प्राप्त की हैं और मानव कल्याणके लिये अजस्र स्रोत प्रवाहित कर दिया है। संक्षेपमें समूहके कार्योंपर एक विहंगम दृष्टि डालना श्रेयस्कर होगा।

आज मानवताके लिये समूह (सर्वेश्वरी समूह) की पहली देन यह है कि हम पहले मानव हैं, फिर राष्ट्र हैं। राष्ट्र होनेके बावजूद भी हमारी जाति एक है, अधिकार एक है, व्यवहार एक है। आज राष्ट्रोंमें भी मानवताके अधिकारका

आधार लेकर इन बातोंकी घोषणा कर रहा है। उसपर कानून बनाये जा रहे हैं। लेकिन कानूनसे मानवताकी रक्षा कहाँतक हुई, यह विश्वके बड़े-बड़े देशोंके सामने है।

मानवताके गुण प्राकृतिक हैं और कानून मानवीय। गुणोंकी रक्षा कानूनसे नहीं हो सकती। प्राकृतिक भाव जागृत होनेसे ही होगी। सर्वेश्वरी समूहकी अवस्था अभी केवल बारह वर्षकी ही है और मानवताकी आयुकी कोई गणना नहीं है। इस अवस्थामें समूहने विश्वके विभिन्न देशोंमें अपने लेखों द्वारा तथा इसके संस्थापकने अपनी यात्राओं द्वारा यह भाव जागृत किया कि हम सब मनुष्य एक हैं। इनके प्रमाणमें बड़े-बड़े राष्ट्रके "हम सभीको मनुष्य होना चाहिये" ऐसा माननेवाले लोगोंने आमन्त्रण भेजा है। इससे मालूम पड़ता है कि कोई नयी बात कही जा रही है। इससे यह भी प्रतीत होता है कि लोग यह बात भूल गये हों और उसकी यादगारीकी जरूरत हो। इससे यह भी प्रमाणित होता है कि एक ही समयमें पृथ्वीके किसी भू-भागमें उत्पन्न मानवता-प्रेमी एक ही बात सोचते हैं, तभी तो एक दूसरेसे मिलनेकी आकांक्षा दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। मनुष्यमें उसकी पोशाक, उसके रहन-सहन, आहार-व्यवहारसे भेद प्रतीत होता है। लेकिन स्थान बदलनेपर यह मालूम पड़ता है कि जहाँके लोग जिस पोशाक एवं आहार-विहारमें हैं, वहाँ वही उपयुक्त है। इसलिये जहाँ जिसकी आवश्यकता है वहाँ उसके मुताबिक व्यवहार हो रहा है। यह बात अवस्थामें अन्तर होनेपर भी प्रभावित होती है। इतना अन्तर होनेपर भी विचार एकसे हैं। सोचनेकी क्रिया एक तरह है। पारिवारिक प्रेम एक जैसा है। आगन्तुकके स्वागतकी विधिका आधार एक हृदय है।

समूह अपने अनुभवों द्वारा इन बातोंका दावा करता है कि कहीं भी हों, मानवीय गुण सबमें एक हैं। यह बात भी सत्य है कि जो लोग अपने स्थान और परिस्थितिको छोड़कर बाहर नहीं जाते हैं, वे इन बातोंको कैसे मानें। जिस तरह लोग अपनी पौराणिक पुस्तकोंपर विचार करते हैं, आखिर वह भी तो किसीकी कही हुई बातें हैं, ठीक उसी तरहसे इस युगमें समूहका अनुभव विश्वके लिये प्रमाणित है और इसे देश-विदेशसे आनेवाले व्यक्ति भली-भाँति स्वीकार करते हैं। जिन लोगोंने ये बातें स्वीकार की हैं, वे पृथ्वीके किसी भागके मनुष्यकी आपत्तिके मौकेपर निःशुल्क सेवा और बिना वायदेके सहायता करनेको तत्पर हैं। विचारोंके द्वारा मनुष्यमें परिवर्त्तन होता है और उसी तरह देश और दुनियामें भी। सर्वेश्वरी समूहके संस्थापक अवधूत भगवान रामजी द्वारा विचारोंकी दृढ़ता की जा रही है और उसी दृढ़ताका यह परिणाम है कि ये विचार वायुमण्डलमें गूँज रहे हैं। समूहके विचार अटल हैं और सर्वत्र व्याप्त हो रहे हैं।

विचार वायुके द्वारा मनुष्यके मस्तिष्कमें प्रवेश करते हैं। संकल्प विचारके दृढ़ स्वरूप हैं। इसके द्वारा वायुमण्डल अनुकूल बनाया जा सकता है। समूहका यह विश्वास है कि सभी आत्माएँ एक हैं और एक ही दृढ़ संकल्पसे बँधी हैं। समूह इन बातोंको लौकिक साधनों द्वारा प्रचार पर कम बल दे रहा है क्योंकि संस्थापककी दृढ़तानुसार संकल्प सिद्ध हैं। जहाँ कहीं भी, जिस देशमें भी समूहके

विचार जाते हैं, भले ही कम लोगोंमें जायँ, वे विचार अपना सुदृढ़ स्थल बना लेते हैं। इस तरह हर जगह संकल्प लेनेवाले व्यक्ति बनते जा रहे हैं। इन कामोंकी पूर्तिके लिये अधिक सदस्योंकी जरूरत नहीं है। कम ही हों, दृढ़ संकल्पके हों, तो पूरी मानवता अपने गुणोंको देखने लगेगी। समूहकी यह भी एक देन है कि इच्छा नहीं, संकल्प करो। बाकी लोग उसी संकल्पमें स्वत: सहयोग देने लगेंगे। इसलिए समूह अपने लेखों द्वारा उन्हींपर प्रभाव डाल पाता है जो कि दृढ़ संकल्पके हैं। उसी संकल्पमें अनगिनत लोग बिना हमारे विचारोंको जाने हुये भी अनुकूल व्यवहार करने लगते हैं। विश्व-मानवताको समूहकी यह आध्यात्मिक देन है।

इसका मतलब यह नहीं कि संकल्प-सिद्धिको आधार मानकर सभी चुप बैठ जायँ क्योंकि सभी संकल्प कर भी नहीं सकते। तो भी जो लोग इच्छा तक सीमित रह जाते हैं, वे स्वयं समूहके अनुकूल व्यवहार करने लगें इसपर भी विश्वास करके समूह चुप नहीं रह सकता। सभीको कुछ-न-कुछ करना चाहिये, इसलिये साधारण स्तरके लोगोंको चाहिये कि जो भी विचार समूह-द्वारा दिये जाते हैं उनको व्यवहारमें लावें। इस जगतमें लौकिक प्रमाणकी आवश्यकता और मान्यता बहुत है इसलिये संस्थापक अवधूत भगवानरामका यह प्रयास रहता है कि समूहके सदस्यगण व्यावहारिक जगतमें उदाहरण बन जायँ। ये सदस्य जहाँ कहीं भी नये स्थानोंपर जायँ तो अपने व्यवहारों द्वारा नये समाजपर एक छाप बन जायँ। साधारण व्यक्ति यह समझ पाये कि इस तरहका व्यवहार दुर्लभ नहीं है, सभी कर सकते हैं और यह सहज सुलभ है। समाजमें मानवताके लिये समूहकी यह व्यावहारिक देन है, जो मानवताके सामने उदाहरणके रूपमें प्रस्तुत है।

समूहद्वारा सर्व-धर्म-समन्वय करके किसी भी भू-भागमें रहनेवाले धर्मावलम्बियोंको यह बताया जा रहा है कि भिन्न-भिन्न देशमें रहनेवाले भिन्न-भिन्न धर्मावलम्बी भी एक मंचपर एक साथ बैठकर मानवताकी बातें सोच सकते हैं और वे उनका व्यावहारिक रूप देनेमें समर्थ हैं। सुननेवालोंको आश्चर्य भले हो, किन्तु एक बार जो हमारे मंचपर पधारकर इस व्यवहारको देखता है उसे यह निश्चय हो जाता है कि एक साथ बैठनेसे कुछ हानि भी नहीं है और भिन्नता भी दूर होती रहती है। इस कारण सामाजिक संस्थाओंमें, धार्मिक प्रतिष्ठानोंमें, समूह नवग्रहकी तरह अपना स्थान बनाये जा रहा है। ये विश्व-मानवताके आकाशमें जगमगाता हुआ आज कुछ कर देनेकी क्षमता रखनेवाला एक शक्तिशाली उदाहरण है, जो सभी देशोंके लिये अनुकरणीय है।

सभी धर्मोंकी असली बुनियादी बातें एक हैं, क्योंकि मानव एक है। भौगोलिक परिस्थितियोंके कारण आचार-व्यवहार, पहनावे, खान-पान एवं पूजन-नमन-अर्चनके तरीकोंमें ऊपरी सतहपर भेद प्रतीत होता है। सभीका उद्देश्य एवं लक्ष्य एक ही है। अन्तर केवल समझमें है। बहुत हद तक अधकचरे धर्माचार्योंने अपने स्वार्थकी साधन एवं अज्ञानतावश मनुष्यमें भेदकी सृष्टि की है। समूहका यह सिद्धान्त कि "मानव मात्र एक माँकी सन्तान है" की पुष्टि इससे हो

जाती है कि अजनबी एवं दूर देशके अपरिचित मानवको भी देखनेपर प्रथम लालसा उससे मिलनेकी होती है। ऐसा प्रायः प्रत्येक मानवमें होता है। समूह-संस्थापकने अपने अनुभवोंके आधारपर, जो कि उन्हें देश-विदेशके भ्रमणमें मानव-जीवनकी गतिविधिको काफी नजदीकसे देखनेसे प्राप्त हुआ है, धार्मिक समन्वय किया है।

समूहका दरवाजा मानव मात्रके लिये खुला हुआ है चाहे वह किसी भी देश, जाति, वर्ग, धर्म या सम्प्रदायका हो। सभीको समान अवसर एवं सम्मान समूहमें प्राप्त है। अपने धार्मिक विश्वासोंके अनुरूप सभी कृत्य करते हुए भी एक मंचपर सभीको बैठाकर विचार-विमर्श करनेका मार्ग समूहने प्रशस्त किया है। इसके लिये समय-समयपर आयोजन होते रहते हैं, जिससे मानवधर्मके आधारपर अपनेको एक दूसरेसे भिन्न न समझें। समूह-संस्थापक अपने भ्रमण द्वारा बिना किसी भेद-भावके सबसे मिलकर एवं समूह अपने साहित्यों, पत्र-पत्रिकाओं, अनुष्ठानों, गोष्ठियों एवं सभाओंके आयोजनों द्वारा मानवको एक सूत्रमें पिरोनेका कार्य कर रहा है। धर्मके नामपर बाह्याडम्बर एवं थोथे कर्मकाण्ड मनुष्यके लिये बन्धन बन गये हैं, उनका बहिष्कार कर समूहने अपने संस्थापकके निर्देशनमें सफल योनिके माध्यमसे मार्ग-दर्शन किया है। देश एवं विदेशोंके विभिन्न भागोंमें धर्मके नामपर व्याप्त रूढ़िवादी कुपरम्पराओं एवं कुरीतियोंके समूल विनाशका यह समूह समर्थक है। मनुष्य मात्रका धर्म मानवता है और जो धर्म मानव-मानवमें भेद उत्पन्नकर विश्व-बन्धुत्वकी भावनापर आघात पहुँचाता है, वह धर्म नहीं अधर्म है एवं मानव मात्रके लिये त्याज्य है। ईश्वर सर्वव्यापी है और सबमें निहित है। उसे खोजनेके लिये कहीं बाहर जानेकी आवश्यकता नहीं। अपने ही अन्दर वह है और अपने अन्तरमें खोजनेपर वह अवश्य मिलेगा। समूह इस सिद्धान्तका पोषक है तथा इस हेतु अपने संस्थापक अवधूत भगवान रामके निर्देशनमें आत्म-जिज्ञासुओंके लिये आत्मानुसन्धान पीठका संचालन करता है।

धर्मके नामपर शादी-विवाह, जीवन-मरण आदि संस्कारोंमें रूढ़िवादी परम्पराओंने घर कर लिया है। समूह इन कुपरम्पराओंके मूलोच्छेदके लिये कृत-संकल्प है। विवाहके अवसरपर तिलक-दहेज एवं नाच-गानेपर अर्थके अप-व्ययका समूह विरोधी है। समूह-संस्थापकके निर्देशनमें समूहने सरल एवं सुगम विवाह-पद्धति समाजको प्रदान की है, जिसके द्वारा अनेकानेक विवाह प्रतिवर्ष इस विधिसे सम्पन्न होते हैं। अन्तिम संस्कार-हेतु भी समूहने समाजको सरल विधि प्रदान की है, जिससे अर्थका अपव्यय न हो। असमय विधवा हो जानेवाली नारियोंके पुनर्विवाहका समूह समर्थक है। समूहका विश्वास है कि समाजमें दुराचार एवं व्यभिचारका एक प्रमुख कारण असमयमें विधवा हो जानेपर उनका पुनर्विवाह न करना है। पुरुष जब अवस्था ढल जानेपर भी विधुर होनेपर विवाह कर सकता है तो युवा नारीको इससे वञ्चित रखना सामाजिक अपराध है।

मानव-समाजमें व्याप्त जातिगत, धर्मगत, वर्ण, रंग, देश, प्रदेश, राष्ट्र इत्यादिके आधारपर मानव-मानवके बीच भेदका समूह विरोधी है। मानवमात्र

एक हैं और एक ही माँ सर्वेश्वरीकी सन्तान हैं। छुआ-छूत एवं वर्ण आदिके भेद-भावको दूर करने एवं सौहार्द्रपूर्ण वातावरण बनाने-हेतु समूहने अपने संस्थापक अवधूत भगवानरामके निर्देशनमें सहभोज, लंगर-प्रथा, चक्र-पूजन एवं सामूहिक पूजनकी व्यवस्था प्रदान की है। अंतर्जातीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय विवाह-सम्बन्धोंका भी समूह समर्थक है।

भारतीय संस्कृतिमें सदासे नारियोंका उच्च स्थान रहा है। समूह नारी मात्रको माँके रूपमें मान्यता प्रदान करता है। भारतीय समाजमें एवं भारतके बाहर भी कई राष्ट्रोंमें नारियोंका वह स्थान आज नहीं रहा जो पूर्वकालमें था। समाजके बन्धनोंमें जकड़ी नारी अशिक्षा एवं पर्दा-प्रथाके कारण आज प्रताड़ित हो रही है। समाजके पिछड़ेपनका कारण नारियोंमें आदर्श शिक्षाका अभाव, सामाजिक कुप्रथाएँ, तिलक-दहेज आदि हैं। आज भारतीय समाजकी यह हालत है कि लड़की पैदा होते ही माता-पिताको मालूम पड़ता है कि महाविपत्ति आ गयी। गृहलक्ष्मीकी संज्ञासे अभिभूषित नारीका आज यह हाल है। बच्चोंके जीवनका निर्माण माता-द्वारा ही होता है। बाल्यकालमें जो छाप माताके सान्निध्यमें बाल मस्तिष्कपर पड़ता है, वह अमिट होता है। समाजके नव निर्माणके लिये आदर्श नारियोंका होना अत्यन्त आवश्यक है। अतः नारियोंमें आत्मचेतना जगाने एवं उन्हें आदर्श नारी बनाने-हेतु समूहने सर्वेश्वरी महिला-संघकी स्थापना की है।

जहाँतक भारतीय समाजकी अर्थ-व्यवस्थाका प्रश्न है, यह विशेषकर जाति-कर्मपर आधारित था और कुछ हद तक है भी। भारतीय समाज अर्थ-व्यवस्थाकी चिन्ता परिवारके बाहरकी वस्तु समझता है। उनका यह सोचना है कि आर्थिक-व्यवस्थासे ही परिवारका पोषण सम्भव है और इसीलिये अर्थ-व्यवस्थाको बाहरसे दुरुस्त करना चाहते हैं, चाहे वह खेतिहर हों, मजदूर हों, नौकरी पेशेवाला हों, व्यापारी हों या विरक्त हों। हमेशा आय बढ़े इसके लिये ये हर जायज और नाजायज कदम उठाते हैं क्योंकि उनका एकमात्र लक्ष्य आय बढ़ाना रहता है। वे अन्य आर्थिक-व्यवस्थाओंके प्रति सहानुभूति रखे बिना ही अग्रसर होना चाहते हैं और इसीसे भारतीय समाज आज अपनी आय-व्यवस्थामें और देशोंकी अपेक्षा बड़ा ही कमजोर नजर आता है। भारतकी आर्थिक कमजोरी-का यह एक बहुत बड़ा कारण है।

समूहने इसपर भी अपनी एक स्पष्ट धारणा नियत की है। समूहका कथन है कि आर्थिक-व्यवस्थाका प्रारम्भ व्यक्तिसे होता है और व्यक्तिसे परिवारका और फिर बाहरी व्यवस्था का। हमारे सिद्धान्तोंमें व्यक्तिको अपनी आयके अन्तर्गत रहन-सहन बनानेकी एक योजना है और सीमित आयके अन्तर्गत अपने व्यवहारोंको एक दायरेमें रखकर फिर बाहरी आयके प्रयासकी आवश्यकता बताई है। वैसे तो देशमें ऐसे भी लोग हैं जिन्हें आवश्यकताके मुताबिक व्यक्तिगत आय भी दुर्लभ है। उनकी व्यवस्थाके लिये भी समूहके पास ठोस कार्यक्रम है। जैसे समूहमें

आर्थिक सुदृढ़ व्यक्तियों द्वारा कम आयवाले लोगोंके लिये अपने साथ ले चलकर उन्हें भी अवसर देनेकी बात है और इस समाजके लिये सामाजिक व्यवस्था ही आर्थिक उलझनका एकमात्र हल है। सरकार द्वारा किये गये किसी भी प्रयासकी सफलता सामाजिक लोगोंके ऐसे प्रयासके बिना असम्भव है।

समूहकी यह मान्यता है कि आर्थिक-व्यवस्था परिवार और ग्रामीण, गरीब लोगोंके ऐसे प्रयासके बिना असम्भव है। प्रश्न यह उठता है कि क्या आजका भारतीय समाज समूहके इस सिद्धान्तको अपनानेमें सफल होता है। समाजकी जैसी आवश्यकता है उसकी पूर्तिके लिये समूहकी सदस्यतामें वृद्धि आवश्यक है क्योंकि यहाँ व्यवहारके साथ-साथ भावनाओंमें परिवर्तनके सरल मार्ग हैं। बिना भाव-परिवर्तनके व्यवहारमें परिवर्तन नहीं हो सकता। समूह इस तरहकी भावना वाले सभी समुदायोंकी क़द्र करता है और उन्हें अलग-अलग नहीं बल्कि एक-गुट होकर इस समस्याका हल निकालनेके लिये अपना हर सहयोग देगा। आज ऐसी भावनावाले व्यक्तियोंको एकत्र होनेकी आवश्यकता है और उसके लिये समूह एक उचित स्थल है।

सामाजिक स्तरपर भारतीय समाज बच्चोंकी शिक्षा-दीक्षा, रहन-सहन और दैनिक व्यवहारमें भिन्नता सिखलाता है। धर्म ही व्यवहारमें आनेपर अपना एक अलग दृष्टिकोण बना लेता है और यह व्यवहार ही भिन्नताका कारण बन जाता है। धर्म समझनेकी वस्तु है। सामाजिक स्तरपर व्यवहार एकाकी नहीं होना चाहिये। विचार गुप्त हैं और व्यवहार प्रकट। सामाजिक स्तरपर शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यवसाय अपनी दैनिक धार्मिक-क्रियाके अतिरिक्त हैं। शिक्षासे ही व्यावहारिक भिन्नता शुरू होती है। यहाँ तक कि स्वास्थ्य जैसे सामूहिक क्रिया-कलापोंमें भी एकता नहीं हो पाती। इसी कारण आगे चलकर व्यवसाय और पारिवारिक जीवन भी भेदपूर्ण हो जाता है। इन सबको एक करनेके लिये आज भारतीय समाज विकल है और हर तरफसे इसकी आवाज आती है। प्रयास भी जारी हैं।

उन्हीं प्रयासोंमें समूहका एक ठोस कार्यक्रम है। किसी भी धर्मके बच्चे हों उन्हें बाल्यकालमें आवश्यक शिक्षा एक तरहकी दी जाय। प्रौढ़ होनेपर एक साथ बैठने-उठने और विचारनेका अवसर दिया जाय और हर व्यवसायमें सबको प्रोत्साहन दिया जाय। ऐसी व्यवस्थाका समूह पोषक है। जहाँ भी समूहके लोग हैं, वहाँ सामाजिक व्यवस्थाकी विभिन्नताओंको मिटानेके लिये प्रतिपल सचेष्ट हैं क्योंकि समूहके परिवारका व्यवहार ही अन्य धर्मावलम्बियों या अन्य सामाजिक व्यवस्थाओंके लिये उदाहरण बन सकता है। यह समूहका व्यावहारिक सामाजिक रूप है।

भारतीय समाजमें विभिन्न प्रकारके धर्म हैं। धर्मकी व्यवस्था व्यक्तिके लिये नहीं, समाजके लिये होती है। अगर एक ही व्यक्ति हो तो जैसा चाहे बरते, उसमें कोई कठिनाई या अड़चन नहीं है। एकसे अधिक होनेपर या बहुत होनेपर सामनेके लोगोंको देखकर ये व्यवहार करने पड़ते हैं। इसलिये जो करनेमें आता है वही धर्म है।

रुद्राक्ष १४

'आश्रम'-योजना

हमारे साहित्यमें ऋषियों, मुनियों, योगियों और तपस्वियोंके आश्रमकी बहुत चर्चा आयी है। वैदिक युगमें ये आश्रम साधनास्थली और अध्ययन-अध्यापन केन्द्रके रूपमें सुआख्यात रहे हैं। पश्चाद्वर्त्ती साहित्यमें भी इन आश्रमोंका वर्णन मिलता है। रामायण तथा महाभारतमें भी ऐसे आश्रमोंका वर्णन आता है जहाँ जन साधारणसे लेकर चक्रवर्त्ती सम्राट् तक सभी आते थे और अपनी श्रद्धा और जिज्ञासाका प्रतिफल प्राप्त करते थे।

बौद्धकालीन भारतमें इन आश्रमोंको विहार संज्ञा दी गयी थी, जहाँ भिक्षु और भिक्षुणियाँ सदाचार और नियमानुसार जीवन यापन करते थे। भारतके बिहार राज्यमें इन विषयों अथवा आश्रमोंके बाहुल्यके कारण ही उसका नामकरण हुआ है। धर्म, संस्कृति, राजनीति, अर्थनीति और रणकौशलकी भी शिक्षा-दीक्षा इन आश्रमोंमें दी जाती थी। आश्रमवासी मनीषियोंने ही योग, कर्मकाण्ड, ज्योतिष, गणित, विज्ञान, व्याकरण तथा साहित्य और ललित कलाका विकास किया है।

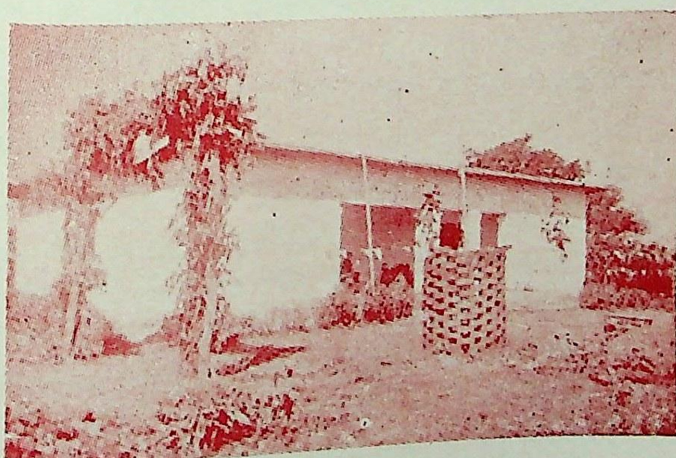
इन आश्रमोंको भारतीय जीवनका अनिवार्य अंग समझना चाहिये। आज भी भारतवर्षमें सभी भागोंमें अनेक आश्रम हैं जो आध्यात्मिक विकासमें योगदान करते हुए लोक-मंगल कार्यक्रम भी चला रहे हैं। आश्रमोंकी स्थापना किसी आचार्य, उनके शिष्य, भक्तों और अनुयायियों द्वारा होती है। इनकी स्थापना सार्वजनिक सहयोगसे होती है और इनका कार्य भी सर्वजन सुखाय और सर्वजन हिताय होता है।

इसी परम्परामें बाबाने भी निश्चय किया कि लोक जीवनको परिष्कृत और उद्बुद्ध करनेके लिये तथा जनतामें सेवा, सहिष्णुता, सद्भाव आदि उदात्त वृत्तियोंके विकासके लिए ऐसे आश्रमोंकी स्थापना नितान्त आवश्यक है, जहाँ सेवा, श्रम और पारस्परिक सहयोगके द्वारा जनजीवनको अधिक सुखी समृद्ध और सात्त्विक बनाया जा सके। तदनुसार उन्होंने सर्व प्रथम हरिहरपुर तहसील चन्दौली वाराणसीमें स्थापित किया।

बाबाकी दृष्टिमें आश्रमका तात्पर्य

वर्णाश्रमसे नहीं हैं अपितु शुद्ध आश्रमसे है, जहाँ हर वर्णके लोगोंको आश्रय मिल सके। जाति और धर्म विशेष लोगोंका आश्रय नहीं किन्तु मानव मात्रके आश्रयको

महाराजा ज़शपुर के राजमहल में उनके परिवार के साथ औघड़ भगवान राम जी।
एक तरफ महाराजा सोनपुरा भी विरामान हैं।



मध्यप्रदेश स्थित गम्हरिया आश्रम का एक दृश्य।



'आश्रम' बाबाके भावमें कहते हैं। ऐसे ही पवित्र आश्रम हमारे हरिहरपुर और ताज-पुरमें हैं। वहाँ बहुत काल तक यज्ञ, जप, ध्यान, साधनासे वहाँकी वायुमण्डल और भूमिसे तेज प्रस्फुटित होता है। हरिहरपुर आश्रम साधनाकी दृष्टिसे बड़ा ही सराह-नीय और उत्तम है जहाँकी प्रवृष्ट होते ही चञ्चल चित्त शांत हो जाता है। मन एकाग्र हो जाता है। समाधिके भाव जागृत हो जाते हैं। स्वच्छन्द और साफ चारों ओर चहारदीवारीके अन्दर एक छोटी वाटिकामें यह आश्रम विराजमान है जिस भूमिको ताजपुरके क्षत्रिय कुलकी एक मुसम्मातने बाबाको दी थी। इसमें पंच कपालपर काली मन्दिर भग-लिंग युक्त शिव-यन्त्र, पक्का कुआँ, एक पक्की नहर और एक कमरा है जिसमें बाबा कई साल तक अनेक अनुष्ठान करते रहे हैं। यह आश्रम वाराणसी जिलामें है। यह सकलडीहा थानाके अन्तर्गत है। इसी प्रकारके आश्रम रायगढ़ जिला जसपुर सब-डिवीजनमें सोगड़ा ब्रह्म निष्ठालय है जो पर्वतमालाओंसे घिरा हुआ सूनायतनमें स्थित है। इस आश्रममें अखण्ड धूनी आदि बीसों सालसे जलती चली आ रही है। जो औघड़ अवधूतकी साधना-भूमि है। इसे महारानी जसपुरने बनवाया है और बाबाको सौंप दिया और सोगड़ाकी जितनी भूमि थी बाबाको बिक्रीके रूपमें सौंप दिया है। इसका स्टाम्प बाबा जब गंगाके किनारे गुफामें रहते थे जसपुर महारानीने उनकी सेवामें कागज एवं भूमिका अधिकार हस्तगत करा दिया और अनुरोध किया कि आप यहाँ यदा-कदा विराजें। बाबा बहुत प्रकारकी साधना-अनुष्ठान अधिक दिन रहकर वर्षोंतक इसी आश्रममें करते हैं। यहींपर थोड़ी दूरपर पहाड़ीमें भैरव-यंत्र स्थापित है जिसे वैशाषकी कृष्ण १४ को विधिवत् पूजा होती है। इस धूनेपर दक्षिणाचलके बहुतसे साधक आकर साधना, योग एवं ध्यान-धारणाके द्वारा शक्तिका अर्जन करते हैं। लोक मंगलकार्योंके लिये ऐसा ही एक आश्रम गम्हरिया जसपुरसे २ मील पूर्वमें सड़कके किनारे ही यह स्थित है। जिस आश्रमका भवन यंत्रवत् त्रिकोणं त्रिकोणं त्रिकोणं त्रिकोणं चतुर्थ त्रिकोणमें महाराज जसपुरने भूमि हस्तगत कराकरके इस आश्रमको बनवा दिया और बाबाको राजमाताकी ओरसे सौंप दी गई जो बड़ा ही स्वच्छ खूब सुन्दर पहाड़ियोंके ऊपरी भागमें विस्तृत रूपमें स्थित है। दीपावलीकी रात्रिमें यहाँ आत्म-कालीकी पूजा एवं अनुष्ठान होता है।

यहाँपर गोशाला है और आदिवासी क्षेत्रीय लोगोंके सहयोगसे बहुतसे सामाजिक कार्यक्रम होते हैं। यहाँसे क्षेत्रीय जनता हर प्रकारका लाभ उठाती हैं। ऐसे ही एक आश्रमकी मैं आपसे चर्चा कर रहा हूँ जो जसपुरसे ३२ मील पश्चिम रायगढ़ जिलामें ही जहाँपर अभेद आश्रम नारायणपुर है वहाँपर कई एक यज्ञ अनु-ष्ठान और साधना हो चुकी है जिसके प्रभावसे आश्रम दैदीप्यमान प्रकाशसे प्रकाशित होता रहता है। चैत्र राम नवमीको तो सहस्त्रोंकी संख्यामें क्षेत्रीय आदिवासी ग्रामसे झंडा लेकर उस आश्रममें एक बृहद् मेलाका रूप अङ्कित कर देते हैं, जो ३ दिनतक चलता रहता है। इस स्थानसे क्षेत्रीय लोग हर प्रकारका लाभ उठाते हैं और प्रेरणा ग्रहण करते हैं। यहाँपर भी सर्वेश्वरी समूहका एवं बाबा भगवानराम ट्रस्टका एक

फार्म है जिसके माध्यमसे क्षेत्रीय आदिवासी जनता अपनी खेती-बारीमें सार्वभौम लाभ उठाती है। हम आपको यह बता चुके हैं कि महाराज जसपुरकी राजमातासे लेकर महाराजा-महारानीतक अपनी ओरसे वहाँकी इमारतोंको बनवानेमें पूर्ण-रूपेण सहयोग प्रदान किया है और वहाँकी भूमि संस्था या ट्रस्ट महाराजा एवं महारानीसे ही उचित मूल्यपर बाबा भगवान रामने पाया है।

वाराणसी

काशीमें बाबा अपना निवास कई एक जगह घूम-घूम कर बनाते रहे हैं। यही कारण है कि काशीका नागरिक इनको अपने-अपने मुहल्ले या टोलेका ही बाबा कहता रहा है। पहले तो ये किनाराम स्थल भदैनीकी ओर कई साल रहे। इसके पूर्व काशीके उत्तरी छोर ईश्वरगंगीके अखाड़ेमें आप पहुँचे। कई सालतक अवधूत छेदी बाबाके साथ अघोर-साधनामें रत थे। फिर यह छेदी बाबाके स्वर्गवासके तदनन्तर पूना स्टेटके बागमें जो काशीमें स्थित है रहे। वहाँसे भी वहाँका समय समाप्तकर रायपनारूदासके नाटीइमलीवाली शीशेकी बारादरीमें स्वच्छन्द रूपसे अनुष्ठान और साधना करते रहे। विश्वनाथ मन्दिरके महंथ लक्ष्मीशङ्कर एवं रायसाहबका साथ, सत्संग एवं साधना ४–५ साल तक चलाते रहे। महंथ लक्ष्मीशङ्करके स्वर्गवासके उपरान्त काशीके एक मुसमान भक्त हाजी इमामीसुलेमानके बाग मंडुआडीहमें विराजते रहे और वहींपर सर्वेश्वरीसमूह संस्थाकी स्थापना किया।

भक्तों एवं सुलेमान मियाँके अनुरोधपर कि ऐसी एक संस्था हो जो काशीमें मानव मनको प्रफुल्लित करे एवं मानववादी विचारधाराकी हो। इसमें धर्म, जाति और राजनीतिज्ञोंका अखाड़ा न हो। स्वच्छ और सार्वभौम मानव हितकारी भावनाओंसे एवं व्यवहारोंसे प्रेरित संस्था सर्वेश्वरी समूहको २१ सितम्बर, सन् १९६१ ई० को स्थापित की गई। कुछ कालतक मियाँजीके बागसे भक्तों एवं मानववादी सज्जनोंके बीच संस्थाका प्रचार-प्रसार चलता रहा। इसी बीच धनराशिके स्रोतोंका आगमन पाकर अपने देशके कुष्ठी-बन्धुओंको सहायतार्थ एवं सेवाके लिए अवधूत भगवान राम कुष्ठ सेवाश्रमको गंगाकी गोदमें स्थापित किया गया, जो राजघाट पुलके दक्षिणी छोरके समीपवर्ती स्थानसे जो जी० टी० रोड गुजरती है, उस ग्राण्ड ट्रङ्क रोडके ठीक दक्षिण लगभग १०० मीटर पड़ाव चौराहेके पास स्थित है। जिस आश्रमसे कुष्ठी-बंधु ही नहीं अपितु समाजका उपेक्षित मानव भी लाभ उठाता चला आ रहा है। यही कारण है कि इस आश्रममें बर्मासे नेपालतकका प्रधान मंत्री श्रीऊनू तथा श्री बी० पी० कोइराला एवं भारतके उप प्रधान मंत्री श्रीमुरारजी भाई एवं प्रति रक्षामंत्री श्रीजगजीवनराम तथा देशके अन्य गण्यमान्य लोगोंने इसे सराहा और सहयोग करते हैं। इतना ही नहीं बल्कि आपलोग समय-समयपर काशी आगमनपर बाबाकी अनुपस्थितिमें भी इस आश्रममें अपना अमूल्य समय देकर इसका निरीक्षण करते रहे हैं। इसी आश्रममें सर्वेश्वरी समूहका प्रधान कार्यालय भी है जहाँसे अपने देशकी

जनपदोंमें घूम-घूमकर सामाजिक कुरीतियोंके बारेमें आन्दोलन खड़ाकर रक्खा है और इसमें बहुत अंशतक सफलता भी प्राप्त किया है। विवाह-शादी एवं मरनी-जीनी-के अपव्ययको रोकनेके लिए सरकार एवं जनतासे सहयोग पाकर कुरीतियोंके विरोधमें झंडा खड़ाकर रक्खा है। इसी प्रधान कार्यालयसे देशमें स्थित सर्वेश्वरी समूह कार्या-लयोंका सञ्चालन एवं सुरक्षा तथा समस्याओंका समाधान करती है। सम्बन्धित आश्रमोंका अदालती कार्यवाही वगैरह काशीके ही अदालतसे निपटानेकी व्यवस्था की है। ऐसे इसके छिट-फुट आश्रम जो इससे सम्बन्धित हैं, जैसे–डाल्टेनगञ्ज नगरके बाहरी भागमें, एवं नगर-उटारी आम-वाटिकामें, रेणुकूट अलमुनियम फैक्टरीके उत्तरी छोरमें एवं डाला बाजारमें, नदीके किनारे तथा रायबरेलीमें, प्रमुख आश्रम हैं। जिसकी योजना-विस्तार बहुत हो जानेके कारण इस पुस्तकमें हम नहीं दे पा रहे हैं। यह सब भी आश्रम समाज-सेवी और मानवजनको प्रोत्सा-हन एवं दीन-दुखियोंके सहायतार्थ पूज्यपाद अवधूत भगवान रामजी द्वारा ही स्थापित किए गए हैं।



रुद्राक्ष १५

चंक्रम

भारतवर्षकी यह अत्यन्त पुरानी परम्परा रही है कि यहाँके सभी साधक, महात्मा, साधु अपने विशाल देशके सभी विभिन्न प्रदेशोंमें समवस्थित तीर्थोंमें भ्रमण करते रहे हैं और इन तीर्थों में भ्रमण करके वे विभिन्न प्रदेशोंमें स्थायी निवास करने वाले महात्माओं, विद्वानों और पहुँचे हुए साधुओंसे सम्पर्क करके उनसे नवीन अनुभव ज्ञान और साधनाके मार्गोंका परिचय प्राप्त करते रहे हैं।

हमारे यहाँ तीन प्रकारके तीर्थ माने गये हैं। मानस, स्थावर और जंगम। सत्य, दया, परोपकार, अहिंसा, क्षमा आदि मानस-तीर्थ हैं जिनमेंसे एक तीर्थमें स्नान कर लेने वाला व्यक्ति भी सिद्ध हो जाता है। महाराज हरिश्चन्द्रने सत्य की, महाराज शिविने त्याग की, साधना करके ही परम पद प्राप्तकर लिया। बुद्धने अपने पूर्वजन्मोंमें बोधिसत्त्व रूपमें इन्हीं मानस-तीर्थों की परमिति साधकर दश पारमिताएँ प्राप्त करके बुद्धत्व प्राप्त किया था।

जिन अनेक स्थानों–नदियोंके संगम, बन, उपवन, नगर, ग्राम, पर्वत, यहाँ तक कि श्मशान पर भी यदि किसी योगी, यति, तपस्वी, सिद्ध या साधकने अपनी तपस्या या साधनासे परमतत्त्व प्राप्तकर लिया हो या अपने किसी लोक-संग्रही कार्यसे लोक-श्रद्धाका भाजन बन गया हो या जहाँ किसो महापुरुषका जन्म या निर्वाण हुआ हो वह स्थान स्थावर तीर्थ माना जाता है। वहाँ पर लोग अपनी श्रद्धाके अनुसार मन्दिर, मठ, छतरी, धर्मशाला, कुआँ, बावड़ी, तालाब अथवा अन्य कोई ऐसा स्मारक बना देते हैं अथवा वहाँ किसी विशेष दिन या अवसर पर मेले की आयोजना करते हैं जहाँ सामूहिक रूपसे लोग उस स्मरणीय महापुरुषके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उसकी गौरव-गाथाका स्मरण करते हैं। इस प्रकारके स्थावर तीर्थोंपर बहुत बड़े-बड़े यज्ञ भी हुए हैं और लोक-प्रसिद्ध ऋषियों, मुनियों और सन्तोंने अपनी तपस्या या समाधिसे उस स्थानको पावन कर दिया है। इन तीर्थोंपर पहुँचकर साधु या गृहस्थ सभीको मानसिक आनन्द और उल्लास प्राप्त करनेके साथ-साथ सात्त्विक जीवनकी प्रेरणा मिलती है और वहाँ निवास करनेवाले महात्माओंसे सम्पर्क करके मनको शान्ति भी मिलती है। इस प्रकारके भ्रमण या तीर्थयात्रासे विभिन्न प्रदेशोंके आचार-विचार, रीति-नीति, रहन-सहन, खान-पान, वेश-भूषा और सभ्यता-संस्कृतिका भी परिचय मिलता चलता है जिससे ज्ञान भी बढ़ता है, मानव-मात्रके साथ आत्मीयताकी भावना उत्पन्न होती है और परात्पर ब्रह्मकी उदार सृष्टिमें पूर्ण एकात्मता की भावना उद्दीप्त होती है। सब प्रकारके भेद मिट जाते हैं और विश्वात्माके दर्शन होने लगते हैं।

तीसरे प्रकारसे तीर्थ जंगमतीर्थ, वे सभी महापुरुष हैं, जिन्होंने त्याग, तपस्या, ज्ञान, विज्ञान, योग, उपासना, भक्ति और लोक-संग्रहके क्षेत्रोंमें प्रसिद्धि प्राप्त कर ली हैं। ऐसे जंगमतीर्थोंसे सम्पर्क करनेसे बुद्धि शुद्ध होती है, आत्माका उन्नयन होता है,

मन निर्मल और निश्छल होता है। देहेन्द्रियोंमें सात्त्विक प्रेरणाओंका उदय होता है और मनुष्यकी सम्पूर्ण अकोमल और असात्त्विक वृत्तियाँ भी कोमल और सात्त्विक हो जाती हैं। इसीलिए हमारे यहाँ तीर्थ-यात्रा और परिभ्रमणका तथा सबसे दौड़कर मिलनेका बड़ा महत्त्व बताया गया है कि न जाने किस वेशमें कहाँ नारायण प्राप्त हो जाय? जिज्ञासु ब्राह्मण को जिसे अपनी तपस्याका अभिमान था उसे धर्म व्याध (जाजलि) के पास आकर ब्रह्मज्ञानका उपदेश लेना पड़ा। वह या अन्य कोई भी कल्पना नहीं कर सकता था कि वह मांस बेचने वाला धर्मव्याध भी ब्रह्मज्ञानकी शिक्षाका अधिकारी है। इसीलिए जंगम तीर्थोंका स्थावर तीर्थोंकी अपेक्षा अधिक महत्त्व माना गया है।

इन्हीं व्यापक और महत्त्वपूर्ण उद्देश्योंको दृष्टिमें रखकर अपने देशकी प्राचीन सन्त परिपाटीका अनुगमन करते हुए औघड़ भगवान रामने भी पृथ्वीके स्थावर और जंगमतीर्थोंका साक्षात्कार करनेका निर्णय किया। मानस तीर्थोंका अवगाहन तो वे कर ही चुकेथे और उनकी पारमिता भी सिद्ध कर चुके थे। स्वभावतः पहले उनका ध्यान भारतके तीर्थोंकी ओर गया। यों तो मनस्वी साधुओं और सन्तोंके लिए अपना पराया कुछ नहीं होता और इसीलिए हमारे देशके उदार मनीषी और तत्त्व ज्ञानी निरन्तर पृथ्वीके प्रत्येक प्रदेशमें परिभ्रमण करते रहे। स्वयं भगवान मनुने लिखा है :—

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरनं पृथ्विव्यां सर्वमानवाः॥

(इस भारत देशमें उत्पन्न अग्रजन्मा ब्राह्मणोंने पृथ्वी भरमें घूम-घूमकर सब मनुष्यों को अपने उदात्त चरित्रकी शिक्षा दी।)

हमारे देशकी यों भी प्राचीन भावना रही है—

'माता पृथ्वी पुत्रोऽहं पृथिव्याः।'

(पृथ्वी हमारी माता है और हम पृथ्वीके पुत्र हैं।) यही व्यापक उदारमानवताकी भावना ही हमारे देशकी सांस्कृतिक-भाव भूमि है क्योंकि देशों-विदेशोंकी भौगोलिक सीमाएँ तो निरन्तर बदलती रहती हैं। किसी समय भारत ही पारसीक प्रदेश (ईरान) से लेकर ब्रह्मा, श्याम, बाली, जावा, सुमात्रा तक व्याप्त था। ये सीमाएँ धीरे-धीरे संकुचित होती गयीं। हमारा कैलाश और मानसरोवर आज चीनके अधिकारमें है। सैकड़ों हिन्दू तीर्थ पाकिस्तानमें जा पड़े हैं। इन स्थावर तीर्थोंके अतिरिक्त संसारके सभी देशोंमें त्यागी, तपस्वी, उदार, ज्ञानशील और सत्यशील पुरुषोंकी विशाल परम्परा रही है जो समस्त भौगोलिक सीमाओंका उल्लंघन करके विराट मानवीय परिवारको अपना आत्मीय समझते रहे हैं और समझते हैं। इसलिए औघड़ भगवान रामने भी निश्चय किया कि यह सारी पृथ्वी हमारी है, इसका दर्शन करना, इसमें छिपे हुए सिद्ध-रत्नोंका दर्शन प्राप्त करना और इस पृथ्वीके विविध विचित्र रूपोंका दर्शन करना ही हमारा ध्येय होना चाहिए। यों तो अपने प्रारम्भिक जीवन-कालमें ही वे स्वाभाविक रूपसे अनेक महत्त्वपूर्ण तीर्थोंपर, सिद्ध स्थानोंपर और आश्रमों पर भ्रमण

कर आये थे किन्तु व्यवस्थित रूपसे योजनाबद्ध रीतिसे तीर्थ और देश-भ्रमणकी योजना उन्होंने सर्व प्रथम १९६१ में बनाई और फिर यह क्रम व्यवस्थित रूपसे निरन्तर चलता रहा। इनमेंसे अधिकांश यात्राओंमें लेखक भी उनके साथ रहा है इसलिये यह विवरण पूर्णतः प्रामाणिक है।

चित्रकूट-यात्रा

बाबाने भारतके कुछ प्रमुख तीर्थ-स्थलोंकी कई बार यात्राकी है, चित्रकूट भी एक ऐसा ही तीर्थ-स्थल है। बाबाकी एक ऐसी ही चित्रकूट यात्रामें जो सन् १९६१ के भाद्रपद महीनेमें हुई थी लेखक भी उनके साथ था। उक्त यात्राका प्रारम्भ वाराणसीके मडुवाडीह स्टेशनसे हुआ और छोटी लाइनकी गाड़ीमें सवार हो बाबा एवं उनके सहयोगी इलाहाबाद दोपहरमें पहुँचे। इलहाबादसे बस द्वारा कर्वी होते हुए सीतापुर बस-स्टेशन पर पहुँच गया जो कि चित्रकूटके निकटका बस-स्टेशन है।

सीतापुरसे पैदल चलकर पावन मन्दाकिनीके किनारे-किनारे सभी कामदगिरिके मुखारबिन्द नामक स्थानपर पहुँचे, जहाँसे लगभग पाँच फर्लाङ्ग को दूरी पर चिकनी परिक्रमा नामक स्थानमें बने एक मन्दिरमें सभी लोग ठहरे थे। इस स्थानके प्राकृतिक छटा का वर्णन करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। इस मन्दिरके ठीक ऊपर श्रीरामचन्द्र और माता सीताने अपने बनवासके लगभग बाहर वर्ष बिताये थे। यह स्थान कामदगिरि कहा जाता है और वर्षभर लाखों नर-नारी इसको श्रद्धा-पूर्वक परिक्रमा लगाया करते हैं। वैसे तो प्रत्येक अमावस्याको यहाँ मेला लगता है किन्तु विजयदशमी, दीपावली, नवरात्र आदिमें यहाँ लाखों नर-नारी एकत्र होते हैं। इस स्थानके ठीक सामने लगभग ६ फर्लाङ्ग को दूरी पर लक्ष्मण टेकरी हैं जहाँ सतत जागरूक रहकर श्रीरामचन्द्रजीके बनवास-कालमें लक्ष्मणजीने रखवालीका काम किया था। कामदगिरि पर न तो कोई व्यक्ति चढ़ता है और न उसके वृक्ष-लता आदिको कोई हानि पहुँचाता है किन्तु लक्ष्मण टेकरी पर बने मन्दिरमें सैकड़ों सीढ़ियाँ चढ़कर दर्शनार्थी जाते हैं और वहाँ बने मन्दिरमें दर्शनकर पासके धर्मशाला में विश्राम करते हैं।

चिकनी परिक्रमासे थोड़ी ही दूरपर वह स्थान है जहाँ राम-बनवासके अवसर पर परिजन और पुरजन सहित आये भरतजी उनसे मिले थे। वहाँके मन्दिरमें उन अनेक व्यक्तियोंके पद-चिन्ह पत्थर पर अंकित हैं जिसकी श्रद्धालु जन परिक्रमा करते हैं। ठीक ही कहा है कि उत्कट प्रेमसे पत्थर भी पिघल जाता है और वे पद-चिन्ह इसी बातके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

वहाँसे थोड़ी ही दूर पर हनुमानजीका वह सिद्ध-स्थल है जहाँ किए गए संकल्प अवश्य सिद्ध होते हैं ऐसा बाबाका मत है और लेखकका भी अनुभव है।

चित्रकूटकी जलवायु बहुत ही स्वास्थ्य प्रद है और यहाँ अनसूया, हनुमान धारा गुप्तगोदावरी, भरतकूप आदि अनेक दर्शनीय स्थल हैं। बाबा इन सभी स्थलों पर लगभग एक सप्ताह तक विचरते रहे। स्फटिक शिला यहाँका प्रसिद्ध श्मशान हैं जहाँ

श्रीरामने स्वयं भगवती सीताका पूजन किया था और उसी उपलब्धिसे वे असुरोंका संहार कर भारतमें राम राज्य स्थापित कर सके थे। यहाँ अनेक औघड़ साधकोंने भी अपनी साधनाएँ की हैं और अपनी उपलब्धियोंसे मानवताका कल्याण किया है। जानकी-धारा नामक स्थल वन-राजिके बीच एक अत्यन्त रमणीय स्थल है और यहाँ चट्टानों परसे बहती मन्दाकिनीमें स्नान करनेका एक विशेष आनन्द है।

लेखकको औघड़ोंकी महिमाका विशेष ज्ञान इस यात्रामें हुआ, जबकि बाबाके आदेशानुसार वह और राजा सोनपुरा घोड़े पर सवार होकर यात्राके लिए चले किन्तु विचित्र बात यह थी कि पैदल चलते हुए भी बाबा ही सभी ठिकानों पर सर्व प्रथम मिलते थे। अनेकों प्रकारके मनोविनोद और कथानकों द्वारा बाबा यह निश्चय न होने देते थे कि वास्तविक बात क्या है?

गुप्त गोदावरी एक सुरम्य प्राकृतिक स्थल है जहाँ गुफाओंमें से जलके सोते निकल रहे हैं। यद्यपि बाहर भी कई कुंड तथा झरने हैं जहाँ लोग आनन्द पूर्वक स्नान आदि कर अपनी थकावट दूर कर विशेष सुखका अनुभव करते हैं तथापि गुफामें भी दो-तीन फीट गहरे स्वच्छ जलमें अन्दर मशालके प्रकाशमें दूर तक जाया और नहाया जा सकता है। इसी गुफामें एक ऐसा शिला-खण्ड ऊपरसे लटक रहा है जो हिलानेपर हिलता और खट-खटकी ध्वनि करता है। इसे लोग चोर खट-खटा भी कहते हैं। जड़ी-बूटी और दिव्य वनस्पतियोंका सम्पूर्ण चित्रकूटमें विशेषकर बनोंमें बाहुल्य पाया जाता है। पारिजात, चमेली और अन्य सुगंधित पुष्पोंकी वृक्ष और लताएँ मार्गमें स्वतः उत्पन्न हैं जो यात्रियोका अपने सुगन्धसे मानो आतिथ्य करती हैं।

हनुमान धारा तीन सौ साठ सीढ़ियाँ चढ़कर पहाड़ो पर स्थित है। जहाँ अविरल शीतल और स्वच्छ जलधारा श्री हनुमानजीके विग्रह पर गिरती रहती है। विचित्र बात तो यह है कि न तो इस जल धाराके उदगम और न इसके गन्तव्यका ही पता चलता है और यह धारा पूरे वर्ष भर अविराम गतिसे चलती रहती है। चित्रकूटके बनमें बन देवीका एक भव्य विग्रह है जिसका दर्शन पाकर वहाँसे हटनेका मन ही नहीं होता। शिला खंडों पर सभी लक्षणोंयुक्त माता सीताके चरण चिह्न अंकित हैं जिनके दर्शन और स्पर्शसे अलौकिक सुखकी अनुभूति होती है।

एक दिन वसन्त नवरात्रमें चित्रकूटके आवास-कालमें कालिंजरके भैरवीके आग्रह पर बाबा घोरादेवीके यहाँ अनुष्ठानमें जा रहे थे। मुझे जब इसका पता लगा तो मैं भी जल्दी-जल्दी पाठ-पूजा समाप्तकर बाबासे साथमें चलनेकी अनुमति माँगी। भैरवी भी वहीं बैठी थी। मेरा और भैरवीका कोई पूर्व-परिचय नहीं था। बाबा तो साथमें चलनेके लिए मना कर रहे थे पर मैं माना नहीं और इनके साथ हो लिया। इसपर भैरवीने बाबासे मेरे सम्बन्धमें जिज्ञासा प्रकटकी। बाबा बोले कि इनका नाम यज्ञनारायण चतुर्वेदी है और ये काशीके अग्निहोत्री परिवारके हैं। हमलोग घोरा देवीके मन्दिरकी ओर चले जा रहे थे। अवधूतिन गौर-वदना एवं जटिल केश वाली थीं। इनके हाथमें नारियलका एक कमण्डल था और पावोंमें चप्पल पहने हुए थीं।

इनकी अवस्था करीब ३५-४० वर्षकी प्रतीत होती थी। इन्होंने कपड़ोंके जोड़से बना एक लम्बा झूल धारण कर रखा था। देखनेमें ये पुरुष साधु लगती थीं परन्तु, बहुत गौरके बाद इनमें स्त्रीत्व झलकता था। अवधूतिनने बाबासे पूछा कि ये खान-पान की शिकायत तो न करेंगे ? इसपर बाबाने कहा बनारसके पक्के महालमें तो चलता है। स्वयं नहीं लेता है लेकिन देखता तो होगा ही। अतः साथमें चलने दीजिये।

घोरा देवीके मन्दिर की ओर औघड़ बाबा, अवधूतिन, लेखक और दो-तीन आदमी भोजनका सामान लेकर चले जा रहे थे। मन्दिर तक पहुँचनेमें करीब तीन चार घण्टेका समय लग गया। घोरा देवीके मन्दिरसे सटे पश्चिमके विस्तृत चट्टानों पर साधना एवं पूजनकी व्यवस्था होने लगी। नवरात्रके शुक्ल पक्षकी अष्टमी थी और आकाशमें चाँदनी छिटक रही थी। सरभंगाके साधुके यहाँसे आवश्यक बर्तन बाल्टी वगैरह मँगवाया गया। उस साधुने बतलाया कि यहाँ पर बाघ आदि लगते हैं। इसपर चरण पादुकाके पुजारीने डपटकर कहा, अरे यहाँ औघड़ बाबा आये हैं, जिनके यहाँ कभी-कभी आप जाया करते थे। बाबाको बाघका डर नहीं है। तुम तो स्वयं बाघकी तरह बात कर रहे हो। ले आओ जल्दीसे पात्र वगैरहकी व्यवस्था करो। अच्छा बाबा घबराओ मत। यह कहकर सरभंगा के महंथने सभी आवश्यक सामान तत्काल दे दिया। बाबा कह रहे थे, ऐ महंथ ! चतुर्वेदीजीको सरभंगाके महंथके यहाँ ले जाओ। इनकी दृष्टि और न हो। मैंने कहा, मैं साधन पूजन देखकर ही जाऊँगा। यदि हमें उच्चाट नहीं किया जायेगा। तब प्रसाद बनने लगा और अवधूतिन स्नान आदिसे निवृत्त हो भगवतीका शृङ्गार करने लगीं। घोरा देवीके मन्दिरमें कोई स्थाई पुजारी नहीं है। पुजारी बराबर बदला करते हैं। क्योंकि जितना वहाँ आकर्षण है उससे कहीं अधिक उच्चाट है। भैरवीने घोरा देवीका ऐसा अद्भुत शृङ्गार किया कि देवी और भैरवीका रूप अजीब तेजसे देदीप्यमान हो रहा था जो देखते ही बनता था। इधर औघड़ बाबा बैठे हुए हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे और उनके बगलमें बैठे भरत-मिलाप के महंथ सोपारी आदि काटकर बाबाको दे रहे थे। आपका जन्म छपरा जिलाके उच्च ब्राह्मण कुलमें हुआ था और वैष्णव होते हुए औघड़ बाबाके अनन्य अनुयायियोंमें थे। ये गुप्त रूपसे औघड़ ही थे। अभी विगत वर्ष इनका स्वर्गवास हो गया। वर्तमान महंथ भी बाबाके परम अनुयायी हैं जो खोही ग्रामके ब्राह्मण कुलके हैं। मैं प्रारम्भमें ही कह चुका हूँ कि आज वसन्त नवरात्रकी महानिशा है। अब हमारी कलम अनुष्ठान की ओर घूम रही है।

इतने में देखते क्या हैं कि घोड़े पर सवार एक वयोवृद्ध तेजस्वी महात्मा यहाँ उपस्थित हुए। उस समय चन्द्रमा अस्त होने वाले थे, लेकिन चन्द्रमा का हलका प्रकाश शेष था। बाबा, भरतमिलाप के महंथ एवं भैरवी सभी ने वृद्ध महात्मा अघोरा चार्य श्री सौमेश्वर रामजी का सादर अभिवादन किया। पूज्य भगवान रामजीने अघोराचार्यसे कहा आपने बड़ी देरकर दिया महाराज। इसी समय अघोराचार्य एक अद्भुत मुस्कानके साथ बोले "मैंने स्वयं कुछ विलम्बसे अपने आश्रमसे प्रस्थान किया)" यही तेजस्वी महात्मा कलिंजर किलाके अघोराचार्यके नामसे सुविख्यात हैं।

चिकनीके पुजारी ने अघोराचार्यके घोड़े को एक स्थान पर बांध दिया और इसे पानी पिलाया। मैंने इसी बीच टार्च जलाकर अपनी घड़ी को देखा। इस समय रात्रिके ११ बजे थे। गर्मी के दिनों में शहरों में रात्रिके ११ बजे का समय कोई विलंब का समय नहीं होता। गर्मी के दिनों में हम सब प्रायः इस समय तक जागते रहते हैं। लेकिन इस बीहड़ एवं सुनसान स्थान पर यह विलंब का ही समय था।

कुछ देर बाद मैंने देखा कि अघोराचार्य एवं अवधूत भगवान् रामजी सहित सभी साधक हवन की व्यवस्था कर रहे हैं। मैंने हवन सामग्री स्वयं देखा था। एक मिट्टी की हड़ियामें कुछ छोटी-छोटी मछलियां थीं और दूसरे कलशमें दुधुवा भरा था। मछलियों को दुधुवामें भिगोकर साधक मंडल हवन कर रहा था। एक तो मध्य रात्रिका समय दूसरे घोर निर्जन जंगलमें अघोर-साधना। बीच-बीचमें मंत्रोंका उच्चारण सुनाई पड़ रहा था यहाँ का वातावरण रहस्यमय एवं रोमचांकारी हो चला था। मेरी समझमें नहीं आ रहा था कि इसका रहस्य क्या है? इतने में ही एक बड़ी ही विचित्र और रोमांचकारी घटना घटी। हो सकता है कि मेरे नेत्र धोखा खा गए हों, या अत्यधिक थकानके कारण ऐसा अनुभव हुआ हो। मैंने देखा कि घोरा देवीसे एक अद्भुत तेज पुंज निकला और सभी साधकों के हृदय को स्पर्श करता हुआ, अग्निकुण्ड में प्रविष्ट हो गया। इसी समय साधक मंडलने एक अजीब ठहाका लगाया जो निर्जन जंगलमें दूर तक व्याप्त हो गया। मछलीकी मँहकसे सारा वातावरण भर गया था। मुझे यह सब बड़ा विचित्र लगा और मैं अपना झोला लेकर सरभंगा आश्रमकी ओर चल दिया। इसी बीच साधक मंडलने फट्-फट् मंत्रका उच्चारण प्रारंभ कर दिया। दूसरे ही क्षण, सारा वातावरण 'शिवोऽहं, भैरवोऽहं, गुरुपद रतोऽहं' की गंभीर वाणीसे गूँज उठा। मैं सरभंगा आश्रमकी ओर भोजन और विश्राम करने जा रहा था और मार्गमें काफी दूर तक यह वाणी जंगलके कण-कणसे प्रतिध्वनित होकर मेरे कानोंमें गूँज रही थी।

प्रातःकाल जब मेरी मुलाकात पुजारीसे हुई तो मैंने रात्रिकी साधनाके बारेमें कुछ और जानकारी प्राप्त करना चाहा। पुजारीने मुझे बतलाया कि रात्रिमें हमारे जानेके बाद यहाँ बड़ी ही विहंगम साधना हुई थी। पुजारीने मुझे बतलाया कि हवन कुन्डसे एक अद्भुत और तेजोमय लपट उठी जो करीब ४०-५० फीट तक आकाशकी ओर गई। कुछ देर बाद यह अद्भुत ज्योति पुनः हवन कुण्डकी ओर वापस आकर भूमिगत हो गई। इस ज्योतिके नीचे आते ही उसमेंसे अलौकिक दिव्य रूप वाली भैरवियाँ उपस्थित हुई। हो सकता है कि ये जंगलमें कहीं पहलेसे ही रही हों और हवन कुंडके प्रकाशके कारण इधर आकृष्ट हो गई हों। ये भैरवियाँ और कोई नहीं है बल्कि वही हैं जो बाबासे ऋषीकेश और काली मठमें मिला करती हैं। ये कब और कैसे आई? इसके बारेमें मुझे कोई जानकारी नहीं। इनकी वेश-भूषा बड़ी विचित्र थी। इनका वस्त्र नीला था। गलेमें स्फटिकको चमकती माला थी। इसी मालाके साथ सर्पके हड्डियोंकी भी माला इन लोगोंने धारणकर रखा था। हाथमें नारियलका कमंडल था। मैंने इन्हें काफी नजदीकसे देखा था। रात्रिमें भरत मिलापके महंथ कह रहे

थे कि ये भैरवियाँ आकाश-गामिनी हैं। इनकी सेवासे मनुष्यको बड़ा ही लाभ होता है। मगर इनका मिलना बड़ा कठिन है। ये भैरवियाँ भी चक्रार्चनमें साथ-साथ पान पात्र ग्रहण कर रही थीं। पुजारी बोले पण्डितजी मैंने पहले पहल स्त्रियों को दुधुवा पान करते देखा। साधनाके उपरान्त लोगोंने घोरा देवीको प्रणाम किया और थोड़ा विश्राम करते ही कालिंजरके भैरवीके साथ ये भैरवियाँ कब और किस मार्गसे गईं मुझे मालूम नहीं क्योंकि उस समय मैं अत्यधिक थका था, आँखें भारी हो रही थीं और मुझे निद्रा आ रही थी। इसलिए मैं सो गया। अभी-अभी हम अघोराचार्यके घोड़े को तैयार कर उन्हें कालिंजर दुर्गकी ओर बिदा कर आया हूँ। पुजारी बोले चलिए, पंडितजी ! महंथजी तथा बाबा वहीं हैं। चलिए हम लोग भी प्रस्थान करें। मैं इन लोगोंकी साधनाके बारेमें चतुर्वेदी जी आपसे क्या कहूँ ? इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि ये बडे विलक्षण हैं और इनकी साधना भी बड़ी विलक्षण है। मैं इतना ही कहूँगा आगेके लिए मुझे क्षमा करेंगे। इतना अवश्य निवेदन करूँगा कि ये बातें देह-बुद्धि वालोंकी समझके बाहर हैं। आत्म बुद्धिवाले ही इसे समझ सकते हैं।

अनसूया आश्रम चित्रकूटका एक अनोखा स्थल है। यहाँ से थोड़ी ही दूरी पर मंदाकिनी नदीका उद्गम स्थल है। इसके कुछ ही मील आगे जाने पर शरभंग ऋषि का पावन आश्रम है जो स्वयं एक सिद्ध अघोराचार्य थे और वर्तमान में भी उक्त स्थलके आस-पास औघड़ साधु विचरते और अपनी साधनाएँ करते हैं। माता अनसूयाके पुत्रके रूपमें अवतरित भगवान् दत्तात्रेय महान अघोराचार्य हुए हैं और किनारामो औघड़ सन्त उन्हीं की परम्परामें हैं। अतः उनके जन्म-स्थान पर पहुँचकर जो आनन्द प्राप्त हुआ उसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। वहाँ भाद्रपद शुक्ल छठकी रात्रिमें वास हुआ था जिस दिन बाबा किनारामके सिद्धस्थल क्रींकुंड भदैनी काशीमें एक बड़ा उत्सव और मेला होता है। यहाँ आसपास की पहाड़ी इतनी ऊँची है कि उसके शिखरकी ओर ताकने पर सरसे टोपी जमीन पर गिर पड़ेगी। चारों ओर घने हरे-भरे जंगल है। यहीं एक शैव महात्माने एक दिव्य आश्रम बनवाया है और इस प्रवासमें उन्हींका आतिथ्य बाबाने स्वीकार किया था। यहाँ भी भगवान दत्तात्रेयके अन्य स्थलों की भाँति एक अखण्ड धूनी जलती है जिसकी विभूति सभी पाप-तापको मिटाती है। यहाँ माता अनसूया और अत्रि ऋषिके मन्दिरोंके साथ दुर्वासा और चन्द्रमा मुनिके भी स्थान हैं जो भगवान दत्तात्रेयके भाई हैं।

इन पावन स्थलों में एक सप्ताहके लगभग विचरने के बाद बाबा वाराणसी लौट आये। इन स्थलोंमें बाबा बहुधा जाया करते हैं और वास्तवमें चित्रकूट ऐसा ही स्थल हैं जहाँ राम का बनवास का समय बीता था और युधिष्ठिर, नल और मेघदूत में वर्णित यक्ष भी यहीं रहा था। रहीम कवि को एक समयमें अपनी उदार विचार-धाराके कारण शासक का कोप भाजन बनने पर अपना अज्ञात-वासकाल यहीं बिताया था और उन्हीं के शब्दोमें चित्रकूटका माहात्म्य यह है—

चित्रकूट में रमि रहे रहिमन अवध नरेस।
जापै विपदा पड़त है सो आवत यहि देस॥

वांछा-कल्पतरु चित्रकूट की महिमा-वर्णन असंभव है। अतः यही बाबाके इस तीर्थ में बार-बार आनेका रहस्य भी प्रतीत होता है।

नेपाल-यात्रा

भारतके पड़ोसी देशोंमें नेपाल भौगोलिक दृष्टिसे अति निकट है। नेपाल तथा भारत को सांस्कृतिक एकता सदियों पुरानी है। विश्वके एकमेव हिन्दू राष्ट्रके रूपमें नेपाल सुविदित है। यहाँ हिन्दू संस्कृतिके वर्तमान रूपके अतिरिक्त सदियों पुराने अवशेष भी हैं। बौद्धधर्मके चरमोत्कर्षकालमें यह देश बौद्धधर्म तथा बौद्ध तान्त्रिक साधनाओं का एक प्रमुख केन्द्र था। योगिराज गोरखनाथ का नाम इस देश के साथ अविचल रूपमें जुड़ा हुआ है परन्तु वर्तमान नेपालमें शैवधर्म को प्रधानता है और साथ ही गुह्येश्वरी देवीका मन्दिर भी शिवशक्तिकी समन्वित साधनाका प्रतीक है। हिन्दू तथा बौद्ध-धर्मके प्रमुख केन्द्र नेपालकी यात्राका विचार बाबाके मन में आया। तदनुसार एक सुनियोजित कार्यक्रम बना और अपने पाँच-छः भक्तोंके साथ बाबाने वाराणसीसे प्रस्थान किया, इस यात्रामें बाबाके साथ लेखक भी गया था।

सन् १९६८ के फाल्गुन महीनेमें शिवरात्रिसे दस दिन पूर्व जीप गाड़ीसे बाबा नेपाल के लिये चल पड़े। आरा होते हुए मार्गमें पटना पहुँचकर रात्रि-निवास हुआ। बिहारके भक्तोंने बाबा तथा उनके सहचरों का हार्दिक स्वागत किया। यहीं बिहार राज्यके यात्री सुविधा विभागके एक अधिकारीने बाबासे भेंट कर यात्रा-विवरणके विषय पर अपने सुझाव दिये थे। दूसरे दिन प्रातः स्टीमर द्वारा जीप सहित गंगा पारकर सोनपुर स्थित हरिहर क्षेत्रमें बाबा गये। वहाँ नारायणी नदीमें स्नान आदिसे निवृत्त हो बाबाने हरिहरनाथका पूजन किया। प्रतिवर्ष कार्तिकके महीनेमें इस क्षेत्रमें एक विश्वविख्यात मेला लगता है। जहाँ पशुओंका क्रय-विक्रय विशेष रूपमें होता है। वहाँसे चलकर हाजीपुरमें मध्याह्नका विश्राम बाबाके एक भक्त परिवारमें हुआ और उन्हींके अनुरोध पर सीधे नेपाल जानेके बदले सीतामढ़ी और जनकपुर जाने का भी निश्चय हुआ।

अपराह्नमें हाजीपुरसे प्रस्थान कर मुजफ्फरपुर होते हुए रात्रिमें सीतामढ़ीमें विश्राम हुआ। यही वह प्रसिद्ध स्थान है जहाँ विदेहतनया श्रीजानकीजी का जन्म हुआ था। यहाँके प्रसिद्ध मन्दिर तालाब-बाजार आदि को देखकर जनकपुरके लिए प्रस्थान हुआ। जनकपुर नेपाल-राज्यकी सीमामें पड़ता है। अतः सीमा चौकीसे आदेश-पत्र लेनेके साथ ही नेपालकी राष्ट्रीय बैंकको शाखासे आवश्यकतानुसार मुद्रा भी बदल ली गयी। जनकपुरमें भव्य मन्दिर नेपालके राज-परिवारका बनाया हुआ है और कई विमल जलाशय भी हैं। श्रीरामके देश-वासियोंको जनकपुर जाकर जो आनन्द मिला होगा उसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

पहले यह निश्चय था कि जनकपुरसे लौटकर नेपालकी सीधी सड़क त्रिभुवन राजपथ द्वारा काठमांडू जाया जाएगा। किन्तु जनकपुरसे एक पुराना राज-मार्ग अमलेखगंज तक जाता है और उसीके अनुसार यात्रा करनेका निश्चय हुआ। यह

यात्रा नेपाल की तराईमें होकर हुई थी जिसका प्राकृतिक सौन्दर्य वर्णनातीत है। मार्गमें नूनखार पहाड़की तलहटीमें बागमती पार कर दिनके अन्तमें वहीं नदी-तटपर विश्राम किया गया। यहाँ पहुँचकर जीपमें पेट्रोल समाप्त प्राय था और अभी लगभग एक सौ मील की यात्रा पूरी करने पर अमलेखगंज आने को था जहाँ पेट्रोल प्राप्त हो सकता है। सौभाग्यसे उस समय रूसके सहयोगसे उक्त सड़क को चौड़ा और पूरे वर्ष भर चलने योग्य बनाया जा रहा था। अस्तु, पासमें ही स्थित एक रूसी इन्जीनियर से मिलकर कठिनाई बताते ही उन्होंने न केवल आवश्यक मात्रामें पेट्रोल दिया परन्तु बार-बार अनुरोध करने पर भी उन्होंने इस सहायता कार्यका मूल्य नहीं स्वीकार किया था। उनकी परोपकारिता और सहयोगकी भावनाकी जितनी भी प्रशंसाकी जाय थोड़ी होगी।

दूसरे दिन अपराह्नमें काठमांडू पहुँचकर पहले पशुपतिनाथजी का दर्शन हुआ और नेपालके भू० पू० गृहमन्त्री श्री सूर्य प्रसाद जी उपाध्यायके सहयोगसे मन्दिरके निकट ही गोशालामें बने नये भवनमें चार दिन तक निवास हुआ।

नेपाल-प्रवासमें तीर्थोंके दर्शनमें श्री पशुपतिनाथ जी एवं श्री गुह्येश्वरी देवी के मन्दिरोंमें जानेके अतिरिक्त बूढ़ा नीलकंठ और अन्य सभी दर्शनीय स्थल देखे गये। बागमती नदीमें जल बहुत छिछला है और वह बर्फ जैसा ठंढा रहता है उसमें स्नान करनेपर कुछ समय तक इन्द्रियोंमें शून्यताका अनुभव होता था। तन्त्राचार और औघड़-साधनाके ये प्रमुख केन्द्र हैं। शिवरात्रि निकट होनेसे अनेक साधकोंसे भी सम्पर्क हुआ। नेपालके महाराजाधिराज इन शिव कल्प महात्माओंका बड़ा आदर और सत्कार करते हैं।

नेपालका संग्रहालय, पुराने नगर, मन्दिरोंकी कारीगरी, काष्ठमंडप, हनुमान ढोका राज प्रासाद, विश्वविद्यालय आदि विशेष दर्शनीय स्थल हैं। बाबा काठमांडौ कोदारी रोडपर बहुत दूर तक जीपमें घूमने गये थे। काठमांडौके उपनगर भक्तनगर में पीतल व ताँबेके बर्तनोंका विशिष्ट व्यापार है।

बाबाके भक्त ही श्रीपाण्डेय त्रिभुवन विश्वविद्यालयके उपकुलपति थे और उनके आवासपर जानेके अतिरिक्त बाबा विश्वविद्यालय देखने भी गये थे। बाबाके भक्तोंने सभी दर्शनीय स्थल उनको दिखलाये थे। श्री सूर्यप्रसाद उपाध्याय, श्री थापा और श्री रंगनाथजी जो वहाँके उच्च न्यायालयमें विचारपति हैं बाबाको विशेष आवभगतमें थे।

शिवरात्रिके अवसर पर बाबाके कई और भक्त भारतसे आ गये थे। अपनी एक सप्ताह की यात्रा पूर्ण कर बाबा शिवरात्रि को प्रातः श्री पशुपतिनाथजी का पूजन कर वापस लौटे। मार्गमें एक स्थान समुद्र-तटसे आठ हजार फीट ऊँचाई पर था जहाँ बनी एक छतरी पर खड़े होकर हिम-मण्डित हिमालयकी शोभा देखते ही बनती है। सन्ध्या-कालमें रजतके सदृश और डूबते सूर्य की सुनहली किरणोंमें स्वर्ण-सदृश हिमशिखरों को देखकर अनायास शिव-ध्यान स्मरण हो आता है :—

ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरि निभं चारु चन्द्रावतंसं,
रत्नाकल्पोज्ज्वलांगं परशु मृगवराभीति हस्तं प्रसन्नम्।

पद्मासीनं समन्तात् स्तुतममरगणैर्व्याघ्र कृत्तिं वसानं,
विश्वाद्यं विश्ववन्द्यं निखिल भयहरं पञ्चवक्त्रं त्रिनेत्रम् ॥
(जो चाँदोके पर्वतके समान शुभ्र-वर्णवाले हैं जिन्होंने सुन्दर चन्द्रमाको सिरपर धारण कर रखा है, रत्नोंके समूहके समान उज्ज्वल जिनका शरीर है, जिनके हाथोंमें परशु और अभयकरकी मुद्रा प्रकट है, जो सदा प्रसन्न रहते हैं, जो पद्मासन-लगाये बैठे रहते हैं, देवता जिनकी स्तुति करते रहते हैं, जो व्याघ्र की खाल लपेटे हुए हैं, ऐसे विश्वका प्रारम्भ करनेवाले विश्व द्वारा वन्दनीय, समस्त भय दूर करनेवाले पाँच मुख और तीन नेत्र वाले महादेवजी का नित्य ध्यान करना चाहिये) ।

अफगानिस्तानमें औघड़ संत

औघड़ भगवान राम बचपनसे ही घूमते रहे हैं। बिहार, बंगाल, उत्तरप्रदेश तथा भारतके अन्य भागोंमें घूमकर उन्होंने देखा कि मानव एक होते हुए भी अपने को बंगाली, बिहारी और पंजाबी कहता है। सम्भवः जलवायु का ही ऐसा प्रभाव हो। वे अफगानिस्तान को संस्कृति और रहन-सहन देखने वहां गये। सन् १९६९ में अफगानिस्तानके श्री रूपचन्द जानोरामजोने बाबाके यहाँ आकर बहुत आग्रह किया था कि आप अफगानिस्तान आइए। यहाँसे अफगानिस्तान जाकर भी वे बराबर पत्र भेजते रहे और बाबाको आनेके लिए लिखते रहे। वहाँके अन्य हिन्दू भी बाबा औघड़ भगवान राम को बुलाना चाहते थे। उन्होंने दोनों तरफका हवाई टिकट भी भेज दिया तथा अपना बैंक खाता भी सरकार को दिखा दिया कि जो व्यय होगा वह हमलोग वहन करेगें। अंत में वे भक्तोंके आग्रह को ठुकरा न सके उन्हें वहाँ जाना पड़ा।

दिल्लीसे २ नम्बर को १० बजे उन्होंने वायुयान द्वारा प्रस्थान किया और १२ बजे दोपहर काबुलके आर्याना हवाई अड्डे पर जा पहुँचे। हवाई अड्डे पर श्रीरूपचन्द्र जानी रामजीके साथ बहुत बड़ी संख्यामे वहाँके निवासी हिन्दू लोग स्वागत करनेके लिए आए हुए थे। हवाई अड्डेसे चलकर श्री योगेन्द्रसिंहजीके बगीचेमें बाबाजी ठहराए गए। चार दिनोंके आवास-कालमें बराबर भक्तोंका दर्शनार्थ तांता लगा रहा। काबुलके सम्बन्धमें वहाँ धारणा है कि यह नगर पौराणिक राजा कालयवनने बसाया था। अफगानिस्तानमें पन्द्रह हजार हिन्दू हैं जिसमेंसे केवल काबुलमें ही तीन हजारके लगभग होंगे।

काबुल नगरके मध्यमें किनारामी सम्प्रदायके, औघड़ पीर रतन लाल जी को समाधि है। उनको समाधिके पास ही चालीस औघड़ संतोंकी भी समाधियाँ हैं। शाहके पूर्वजोंने दो-ढाई एकड़ जमीन पीर रतन लाल को दी थी जिसमें बाग और समाधि है। इसमें शहतूतका एक चमत्कारिक वृक्ष भी हैं जो पीर रतनलालने लगाया था। इसोमेंसे ऋतु रहित फल पोर रतनलालने शाहको दिया था। यह वृक्ष बहुत ही विशाल है। यह ऐसा विचित्र वृक्ष है कि एक तरफ खोखला होता जाता है तो दूसरी तरफ उसमेंसे नयी कोपलें तथा शाखायें फूटती जाती हैं। इस चमत्कारी वृक्षकी पूजा हिन्दू मुसलमान सभी करते हैं और मनौतियां भी करते हैं। औघड़ संतों

का इस देशमें बहुत आदर हैं। अभी भी वहां एक औघड़ संत रहते हैं जो पीर रतन लाल की शिष्य-परम्परामें ही हैं। उन्हें सभी लोग मालिक कहते हैं। उनसे मिलकर बाबा को प्रसन्नता हुई।

काबुल नगरके मध्य पहाड़ी पर आशा देवी (आशामाई) का मन्दिर है। इसी मंदिरमें एक विशालकाय शालिग्राम शिला है। कहते हैं कि शाहको स्वप्नमें आदेश हुआ था कि इस शिला को मन्दिरमें रखवा दें। मन्दिर बहुत भव्य है। जहाँ अखण्ड दीप जलता है। प्रतिमाके रूपमें अखण्ड-ज्योतिकी ही पूजा होती है। आशामाई के मन्दिर को ही ज्वाला देवी भी कहते हैं। इस पहाड़ी पर बर्फ नहीं जमती। यहां पर गर्म जल का एक कुण्ड भी है। वहाँ पहाड़ी के नीचे ही हिन्दी विद्यालय हैं जो मन्दिर की आय से चलता है। एक हस्तलिखित पत्रिका भी विद्यालय से निकलती है काबुल के आवास-कालमें जब कोई सूचना दिल्ली से जाती थी तो आर्याना एयर लाइन्सके अधिकारी श्रीकृष्णलाल पोपली बाबा को शीघ्र ही सूचित कर देते थे। ईरानी दूतावासके कर्मचारी बहुत ही सभ्य हैं। वहां ईरान यात्राके पार-पत्र प्राप्त करने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं उठानी पड़ी।

बाबाने काबुलसे कंधारके लिए प्रस्थान किया। कन्धार ही पौराणिक गांधार देश है जहाँकी राजकुमारी गांधारी कौरवोंकी माता थीं। वे बड़ी ही शक्तिशालिनी एवं साध्वी पतिव्रता थीं जिन्होंने अन्धा पति पानेपर आजीवन आखोंपर पट्टी बाँधे रक्खी। कंधारमें एक देवी मन्दिर है जिसे 'चाहेदुख्तरान' (लड़कियों का कुँआ कहते हैं। इसी मन्दिरमें एकबार चालीस दुहितायें (लड़कियां) एक साथ ही लुप्त हो गईं जिनका पता नहीं चल पाया। यह मन्दिर हिन्दुओंके हाथमें है। इसके पास ही 'खल्के शरीफ' है जो पहले हिन्दुओंके हाथमें था परन्तु अब मुसलमानों के अधिकारमें है। यहांपर एक बहुत बड़ा बक्स रखा हुआ है। कहते हैं कि इसमें अनेक ग्रन्थ हैं। हमारे भारतीय लोग कहते हैं कि उसमें हमारे साधुओंके वस्त्र रक्खे हैं। वहाँ किसी प्रकार का अपराध हो जाने पर खल्के शरीफमें जाकर आठ-दस दिन रहनेसे अपराध क्षम्य हो जाता है। यहाँ तक कि सरकारी ऋण आदि भी शेष हो तो शाह उसे भी क्षमा कर देता है। बक्स को विपत्ति-कालमें शाह खोलता है। अकाल के समय या शत्रुके आक्रमणके समय बक्स शाह द्वारा खोला जाता है और उसकी पूजा होती है।

कन्धारमें एक हिन्दी विद्यालय भी चलता है। विद्यालय जहाँ है उसे नरसिंह द्वार कहते हैं और पढ़ने वाले बच्चोंको प्रह्लाद कहते हैं। उस विद्यालयमें भारतके राष्ट्रीय नेताओंके चित्र लगे हैं। कन्धारसे तीन मीलकी दूरी पर वरुण-कुंड है। अफगानी हिन्दू इसे "जिन्दा पीर" कहते हैं और मुसलमान "खोजा खेदर" कहते हैं। इसमें स्नान करनेसे सभी रोग अच्छा हो जाता है। हिन्दू-मुस्लिम दोनों ही इसे समान रूपसे पूजते हैं। यहाँ पासमें ही एक गाँव है जिसका नाम पांचों भाईहै। पांचों भाई गाँव पांचों पाण्डवके नाम पर ही बसा है। वहाँ पर किसी समय वे लोग आये होंगे। कंधार में जो काबुल बाजार है इसके मध्यमें बाबा भोले नाथ किनाराम की परम्पराके सन्तकी

मढ़ी है। जिसमें देवीका मन्दिर है, शिवाला है और योगियों की समाधियां हैं। नवरात्रिमें पुजारीके अतिरिक्त दूसरे को जानेकी अनुमति नहीं हैं। यात्रियोंके ठहरने का पूरा प्रबन्ध है। शिवरात्रिको वहाँ बलियां दी जाया करती थीं किन्तु अब बन्द हो गई हैं। कन्धारसे ३० मीलकी दूरी पर सामकसूदकी समाधि है जिसे हिन्दू शिव-स्थान कहते हैं। अफगानिस्तानमें एक मलंग फकीर भी हैं जो पहाड़ीपर रहते हैं।

हिरातके सम्बन्धमें वहाँके लोगों की धारणा है कि यह राजा हरिश्चन्द्रके नाम पर बसाया गया है। आजसे १० वर्ष पहले यहां पर हिन्दू पर्याप्त संख्यामें बसे थे। अब पुनः आ-आकर बस रहे हैं। पाकिस्तानियोंका अफगानिस्तानमें काफी प्रभाव है। विदेश विभाग तो एक प्रकारसे उन्हीं लोगोंके हाथमें था। भारतके प्रति अफगानिस्तानके लोगोंकी धारणा अच्छी नहीं है। यह पाकिस्तानी प्रचारके कारण हुआ है। हमारे दूतावासके लोग बहुत अच्छे हैं। बहुत ही प्रेमसे मिले परन्तु वहाँ पर भारत की तरफसे प्रचारकी कमी है। जिससे पाकिस्तानियोंका प्रभाव बढ़ता जा रहा है। हिन्दुओंकी सम्पत्ति को दुगुने-तिगुने दामों पर वहाँके सेठ लोग खरीद रहे हैं। हिन्दू अपनी सम्पति बेंचकर हर साल दस-बीसकी संख्यामें चले जा रहें हैं। यहाँ भारतकी तरह हिन्दू-मुस्लिमका झगड़ा नहीं है। जब कोई हिन्दू लड़की मुसलमान से विवाह करना चाहती है और उसके घरवाले जब रोकते हैं तो मुसलमान सामूहिक रूपसे हमला करके उसे लूटकर ले जाते हैं। उनका द्वेष पाकिस्तानके बहकावेसे है।

गजनीमें पृथ्वीराज चौहान और चन्द्रवरदाईकी समाधियाँ है। मुहम्मद गोरी की कब्र भी वहीं पर है और इस ढंगसे बनी है कि पृथ्वीराजकी समाधिपर पाँव, रख कर ही गोरीकी कब्र पर जियारत करने जाना पड़ता है। गजनीमें एक भैरवका मन्दिर है।

अफगानिस्तान-ईरानमें तंत्र-साधना

अफगानिस्तानमें सामाचार-पत्र कम बिकते हैं। तीन स्थानोंपर बाबा की गोष्ठियां हुई थी, मढ़ीमें, कालेजमें एवं निरंजनदास जीके बगीचेमें। जलालाबाद बड़ा गन्दा नगर है। यहांके लोग अधिक व्यसनी हैं। जहाँ हिन्दू रहते हैं वहां दस-बीस एक साथ घर बनाकर रहते हैं। हिन्दू व्यापार करते हैं परन्तु अब उनके हाथ से व्यपार छीना जा रहा है।

यहांके हिन्दू अपने धर्म-ग्रन्थोंका बड़ा सम्मान करते हैं। झूलेमें सजाकर रखते हैं। ये पूजा-पाठ भी करते हैं और शंख भी बजाते हैं। तंत्र-मंत्र अफगानिस्तानमें बहुत चलता है। यहां पर कोढ़ी कम हैं। ऐसा सम्भवतः जलवायुके प्रभावसे है। जो हैं भी उन्हें घर बनाकर एक साथ रक्खा जाता है। उनका व्यय विदेश में जो माल जाता है। उसमेंसे पैसे काटकर दिया जाता है। यहाँ पर २ वर्ष की उम्र वाले के लिए दो वर्ष की सैनिक शिक्षा अनिवार्य है। प्रशिक्षणके समय सैनिक को एक अफगानी मुद्रा तथा दोनों समय भोजन एवं वस्त्र अथवा इसके बदले दस अफगानी मुद्राएँ दी जाती हैं। अफगानिस्तानमें करीब डेढ़ सौ सिख हैं। हिरातमें एक सिक्खके घरमें ही गुरु द्वारा है। सार्वजनिक रूपमें कोई गुरु द्वारा नहीं हैं।

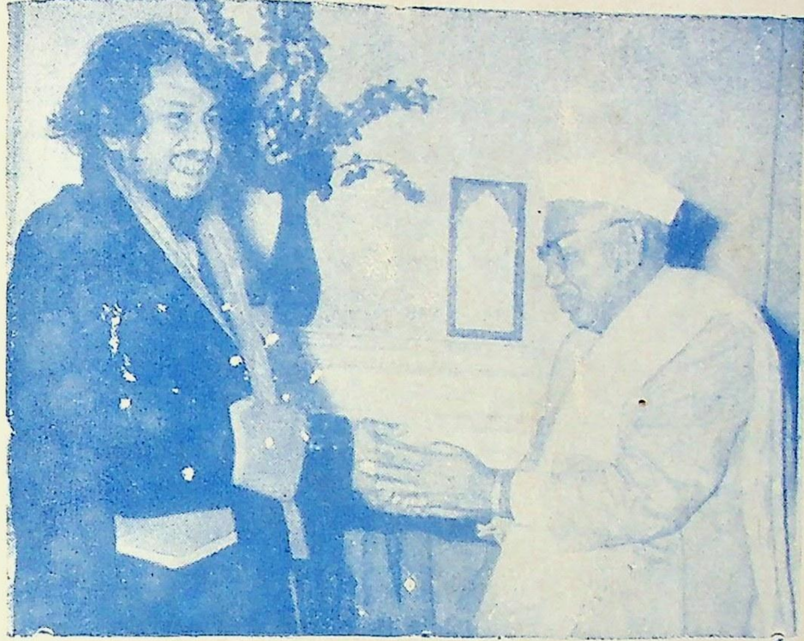
कहा जाता है कि करीब ५० वर्ष पूर्व एक औघड़ संतने वहांके शाहको शाप दे दिया था। जिसके फलस्वरुप शाहको विवश होकर देश छोड़ना पड़ा। द्वितीय महा-युद्धके कुछ समय पूर्व शाहका पुनरागमन हुआ। यही अफगानिस्तानके वर्तमान शाह जहीर शाह हैं। अफगानिस्तानमें लकड़ीकी बहुत कमी है। वहाँ पर गदहे एवं अन्य जानवरोंके लीदके कन्डे सुखाकर भोजन पकाते हैं। हर घरमें खाना नहीं बनता है। वहाँ पर दुकानोंमें खाना बनता है। अधिकतर लोग वहाँ बना भोजन खरीदकर खाते हैं। अहमद शाह अब्दाली एवं बाबरकी कब्रें भी अगगानिस्तानमें है।

अफगानी, ईरानी लोगोंमें कोई धार्मिक झगड़ा नहीं है। क्योंकि दोनों एक ही धर्मके हैं। उनमें पारिवारिक झगड़ा हो सकता है।

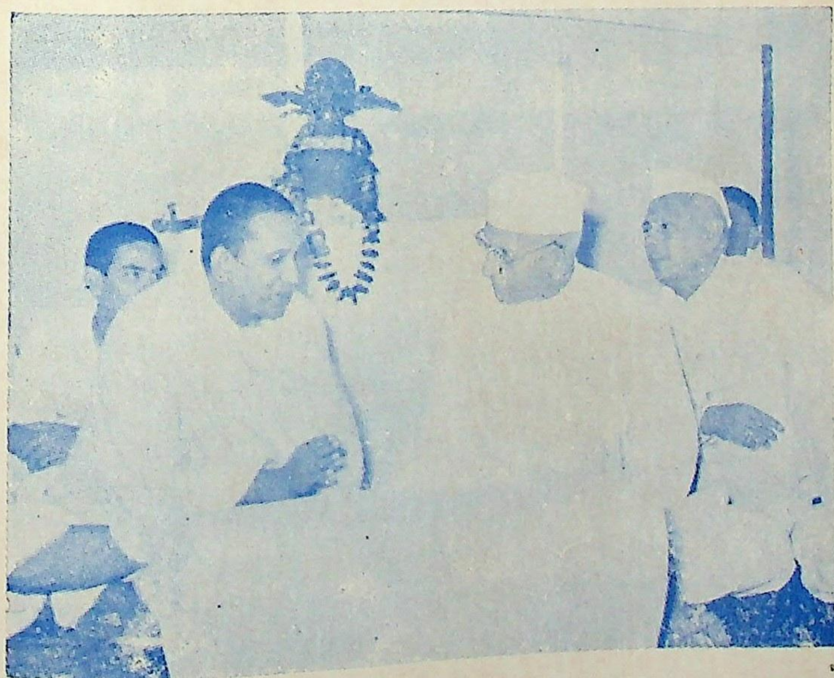
अफगानिस्तानसे वलंग होते हुए बाबा ईरान गए। मसदसे तेहरान तक रेल द्वारा यात्राकी वहाँ की गाड़ी वातानुकूलित (एयर कण्डीशन्ड) है। ईरानके लोग बहुत अच्छे एवं नम्र स्वभावके हैं। ईरानकी साधारण जनता भारत विरोधी नहीं है। भारतीयोंके प्रति वहाँ की जनतामें सद्भाव है। पाकिस्तानियों को वहाँ की जनता हेय दृष्टिसे देखती है। सरकारी कार्यालयों पर कुछ पाकिस्तानका प्रभाव है। भारतके दूतावाससे पाकिस्तानी दूतावासका प्रचार अधिक है। यदि भारतीय दूतावास भी वहाँ पर अपना साहित्य जनतामें बाँटे और प्रचार करे तो ईरानी जनता भारतके बहुत ही सन्निकट आ जाएगी। ईरानमें ही रामकटरा चौक वाराणसी के पं० विनोद कुमार व्यास जी भी उन दिनों मिले थे जो पश्चिम जर्मनीमें शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। छुट्टियाँ बितानेके लिए वे ईरान आये थे। ईरानमें उमररवैयामके बागमें पहुँचने पर पहले तो वहाँ पर घूमने वाले ईरानियों ने पाकिस्तानी समझकर बाबासे बातें नहीं कीं परन्तु जब उन्हें ज्ञात हुआ कि वे भारतीय हैं तो वे लोग बहुत प्रेम से मिले। शाह से वे नहीं मिल पाए। दूतावास वालोंने तो शाहसे मिलनेका समय निश्चित कर दिया था और बाबा भी शाह से मिलने को तैय्यार थे परन्तु बाबा के साथ जो लोग गये थे उनकी अस्वस्थताके कारण शाहसे भेंट न की जा सकी और न दूतावास वालोंको ही सूचित किया जा सका।

वहाँ भारतीय दूतावासके लोग बहुत अच्छे हैं परन्तु उनके चेहरे कुछ उदास जान पड़े। हो सकता है शीतके कारणसे ऐसा हो। वहाँ पर बर्फ बहुत गिरती है, सर्दी पर्याप्त है और जलका बड़ा अभाव है। वहां पर पाइप नहीं है। वहाँ तेलसे बर्फको गरम करके पानी बनाते हैं। वहाँ के लोगों की ऐसी धारणा है कि जब वाकवा (जल) और सूअर वहाँ पर आ जाएगा उस दिन इस्लाम का नाश हो जाएगा। वहाँ चीड़के पेड़ सर्वत्र हैं। ईरान का आदि निवासी कोई हिन्दू नहीं हैं, सब बौद्ध लोग हैं या पारसी लोग हैं। पहाड़ियोंमें इगुर लोग रहते हैं जो कभी मंगोलोंके गुरु थे। इगुर लोग गोप्यपूजन एवं तंत्र-साधनायें करते हैं। तंत्र-मंत्र यहाँ पर भी है। यहाँके सूफी फकीर सब पाकिस्तानी हैं।

भारत की तरफसे तेहरानमें एक लोहे का कारखाना खुल रहा है जिसमें काम करनेके लिए भारतीय इंजीनियर आनेवाले हैं। इस कारणसे वहाँके लोगों



विदेश यात्रा के अवसर पर औघड़ भगवान राम को बिदाई देते हुए
भारत सरकार के सुरक्षा मंत्री श्री जगजीवन राम



भारत के भतपूर्व उपप्रधान मंत्री श्री मोरार जी देसाई औघड़ भगवान राम
के साथ विचार [illegible] आश्रम में



में भारतके प्रति और भी अधिक सद्भावना बढ़ेगी। तेहरानके लोग बड़े सज्जन हैं। तेहरानके समाचार-पत्र भारतीय समाचार को ठीकसे छापते हैं और उसे पर्याप्त महत्त्व देते हैं। वहाँके तांत्रिक लोग मंत्रों की शपथमें तालमूद, कुरान, बाइबिल एवं जिन्दावेस्ता की शपथ लेते हैं। तंत्र-साधनाएँ वहाँ बहुत चलती हैं। मसदमें अलीकी मजार है। वहां पर हिन्दुओंका जाना मना है। बाबाके एक साथी तो नहीं जा पाये क्योंकि उनके पासपोर्टमें त्रिपुण्ड धारण किये हुए चित्र था परन्तु बाबा चले गये और एक सज्जन और भी उनके साथ चले गये। वहां पर शिया लोग अधिक हैं। उन दिनों रोजेके दिन चल रहे थे। यहांके लोग भारतसे अच्छा रोजा मनाते हैं। यहां के लोग प्रगतिशील नहीं हैं। शाहने जब बुर्का-प्रथा उठानेका आदेश दिया था तब इस पर क्रुद्ध होकर नौजवानोंने सिनेमाघरों तथा अन्य स्थानोंमें आग लगा दी थी। हड़तालकी थी। इसपर गोलियां चलीं और दो-चार मारे भी गये। अगर ईरान में भारतीय दूतावास वहाँ की भाषामें साहित्य प्रचार करे तो हमलोग ईरानी और भारतीय बहुत सन्निकट आ जाएँगे।

ईरानी और अफगानिस्तानकी सीमापर स्थित हिरातकी सीमा चौकीपर राहमें मिले हुए योरोपीय भक्तोंके साथ उन्हींकी जीपमें बैठे बाबा आए तो अधिकारियोंने पार-पत्र सहित पासपोर्टकी जाँच आरम्भ की। यहां बाबाको यह ज्ञात हुआ कि भाषा की कठिनाईसे एक तो पार-पत्र नहीं ला सके और दूसरे पाँच सौ मील जाने-आनेमें यात्रा जो मसद तक करनी होगी उसके लिए उनके पास धनकी भी कमी है। इस संकटकी घड़ीमें बाबाने श्री सर्वेश्वरी को स्मरण किया और क्षण मात्रमें संकट टल गया। जब और साथियोंके पासपोर्ट आदिके जांचके उपरान्त ही सीमाधिकारीने फाटक खोलने की आज्ञा दी और गाड़ी अफगानिस्तानकी सीमामें तेजीसे दौड़ती घुस पड़ी। इस घटनाके विवरणसे यह स्पष्ट है कि संकटकी घड़ीमें इष्ट या गुरुका स्मरण तत्काल मार्ग सुगम बना देता है। अफगानिस्तानके भक्तोंका स्नेह और हार्दिक स्वागत पुनः स्वीकार करके बाबा सकुशल भारत लौट आए।

मेक्सिको और अमेरिकाकी यात्रा

राष्ट्रसंघ की ओरसे मेक्सिकोमें आर्थिक सलाहकारके रूपमें भारतके श्री राणा के. डी. एन. सिंह, आई. ए. एस. नियुक्त हैं। वे बाबाके बड़े प्रिय और स्नेहशील भक्त हैं। उन्हींके अनुरोध पर २६ सितम्बर सन् १९७२ को साढ़े नौ बजे रात्रिके विमानसे बाबाने दिल्लीसे प्रस्थान किया और बम्बई, बेरुत, फ्रॉन्कफर्ट, पेरिस, लन्दन और न्यूयार्क होते हुए २७ सितम्बर को रात साढ़े नौ बजे मेक्सिको जा पहुंचे और साढ़े दस बजते-बजते राणा साहबके घर पहुँच गये।

जब मेक्सिकोमें बाबाका निवास राणा के. डी. एन. सिंह, आई. ए एस. के यहाँ था तब उनकी धर्मपत्नी सायं-प्रातः गुरु-भावसे आरती पूजा करती थीं और भोजनादि की अपने पुत्रोंसे भी बढ़कर बाबा और उनके साथी की व्यवस्था करती थीं। जब बाबा टहलने चले जाते थे तो बिस्तर आदि भी ठीक करतीं और बाबाका

कपड़ा साफ करतीं और सुखाती थीं। उनके लिये बाबाके हृदयमें मातासे भी उच्च स्थान है। श्रीमती कमलासिंह का यह उदार चरित्र और ऐसा स्नेह बाबाको गद्गद और विभोर कर देता है। उन्हें अन्यमनस्क देखकर वे मोटरमें बैठाकर शहरके प्रमुख स्थानोंमें दिखलाने लिवा जाती थीं। उस समय उनका मित्र-भाव पुरुषगुणसे आच्छादित होता था। इतना निर्भय, निर्विकार, निर्द्वन्द्व श्रीमती राणाको बाबा बहुत ही स्नेहमय देखते हैं। इसी तरह श्री राणाका भी स्वभाव किसी साधु-पुरुषसे कम नहीं। बाबामें अटूट विश्वास, श्रद्धा उन्हें कौनसी वस्तुसे प्रसन्न रखा जाय इसके लिये वे बराबर कार्यरत होते हुए भी पूछ लेते थे। कार्यालयसे लौट कर तो पचासों प्रकारके दुधुवा लाकर आग्रह पूर्वक विभिन्न समयों पर देते थे। आपने मेक्सिको एवं अमेरिकाके अपने सैकड़ों मित्रोंसे बाबाकी भेंट कराई और उन लोगोंसे आदर और श्रद्धा भी बाबाको दिलाया और उनके साथ बैठाकर विचार-विनिमय और गोष्ठीके माध्यमसे भारतीय-संस्कृति और विचारों का आदान-प्रदान कराया। मेक्सिको या अमेरिकाके सज्जनों की भावनाओंसे भारतीय साधनाके प्रति विचार दिलाया जो अति शोभनीय और सराहनीय था। राणा साहब और माताजी का और उन लोगोंका जो नित्य सत्संगमें आया करते थे, बाबा बहुत धन्यवाद और आशीर्वाद करते हैं।

मेक्सिको अत्यन्त समृद्ध और स्वच्छ नगर है। वहां की भाषा स्पेनी है। किसी समय (५ वीं सदीमें) यहां पर माया सभ्यताका बोलबाला था, जिसके सम्बन्धमें बहुत लोगोंकी धारणा है कि यह सभ्यता भारतीय संस्कृतिसे प्रभावित रही। आजकल वहां पुनः भारतीय वैष्णव-धर्मका प्रचार किया जाने लगा है। उस प्रसंगमें वहां हरे कृष्ण मन्दिरकी स्थापना हुई है जिसमें जगन्नाथजीकी मूर्ति स्थापित है जहां अनेक भक्त "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे,। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे" का कीर्तन करते हुए नाचते हैं। बाबा भी उस मन्दिरका दर्शन करने गये। उन भक्तों को देखकर ऐसा प्रतीत हुआ कि जिन लोगोंका किसी काम काजमें मन नहीं लगता वे ईसाई-धर्मके संकुचित घेरेसे छूटकर या भागकर भारतीय साधनाकी शरण लेते हैं किन्तु वहां भी सम्भवतः उनका जीवन पूर्णतः शान्तिमय नहीं है क्योंकि उन साधकोंसे भी वहां पुस्तक और धूपबत्ती आदि बेचकर जो पच्चीस-तीस डालर प्रतिदिन कमाते हैं उसमेंसे लगभग दस डालर नित्य बच जाता है। जिसमें से लगभग सात-आठ डालरका उनका शाकाहारी भोजन होता है और शेष दो-तीन डालर प्रति व्यक्तिकी बचतसे मन्दिर व भवनके रख-रखावमें लगता है। विचित्र बात यह है कि भोग-विलासकी व्याकुलतासे छूटे हुए ये साधक अपमानित भी होते हैं और कभी-कभी मार भी खाते हैं किन्तु आन्दोलनसे बिमुख नहीं होते। भारतीय संस्कृतिके इस प्रचार और प्रसारकी नीति निश्चय ही सराहनीय है। वहाँ पहुँचकर बाबाने उन्हें यही सन्देश दिया कि आप लोग समाजसे बहिष्कृत और दीन-दुखियोंकी सेवा करते रहो।

मेक्सिको-प्रवासमें राणा के० डी० एन० सिंह और उनकी पत्नीने बड़ी श्रद्धा-भक्ति और आत्मीयताके साथ बाबाकी बड़ी सेवाकी और उन्हें साथ ले जाकर अयतक्ष

लोगोंका विशाल देव मन्दिर जो कालो या नेशनल पैलेस (राष्ट्रपतिका कार्यालय) विशाल घण्टा, चौवालीस मंजिलका लैटिन अमेरिका टावर, वाले कोक लोरिकोडी मैक्सिको नामक नृत्य शाला और उसका डेढ़ करोड़ डालर मूल्यका परदा, म्यूजियो डी एन्ट्रोपोलिगिया नामक मेक्सिको का प्रधान संग्रहालय आदि स्थान दिखलाये। भूमिगत ट्रेनसे भी यात्राकी और सन् १८१० के स्पेनिश विरोधी क्रान्तिका भी स्मारक देखा। यहाँ गाँधी जीके नामपर एक सड़क है और उनके तथा टैगोरके नामपर दो तीन विद्यालय भी हैं।

२ अक्टूबर सन् १९७२ को मेक्सिकोके प्रधान संग्रहालयके पास जहां गांधीजी की मूर्ति स्थापित है वहीं उनका जन्म-दिवस मनाया गया। उस दिन भारतके राजदूत श्री सुनील कुमार राय पधारे थे और बाबा भी उस समारोहमें सम्मिलित थे। ३ अक्टूबर को संग्रहालय देखकर ४ अक्टूबर को मेक्सिकोके पश्चिमी समुद्र-तटके भ्रमण-स्थल आकापुल्को मेक्सिको नामक स्थान पर गये जो मेक्सिकोसे लगभग ३०० मील दूर है। यहां का समुद्र तीन ओरसे पहाड़ियोंसे घिरा है। ५ अक्टूबरको इग्वाला नगर देखकर ७ अक्टूबर को ३०-४० मील की दूरी पर स्थित पिरामिड देखा और ८ अक्टूबर को चापल्यपेकमें जन्तुशाला और वृषभ युद्ध देखा।

१० अक्टूबर को श्रीमती आदेला विदादी द्विपजके यहाँ भोजन और गोष्ठी हुई जहाँ बाबाने कुछ उपदेश दिया और प्रश्नोंका उत्तर भी। श्रीमती द्विपज पहले भारत आ चुकी हैं। इस वर्ष पुनः भारत आने वाली हैं। ये बड़ी सम्पन्न और साध्वी हैं और दो कन्याओं की माता हैं। ११ अक्टूबर को बाबाने ४५ किलोमीटर पर स्थित कुष्ठ अस्पताल देखा और १२ अक्टूबरको मेक्सिकोसे चलकर पाँच बजे सायं वाशिंगटन जा पहुँचे। वहां १३ अक्टूबर को राष्ट्रपति-निवास, १५ अक्टूबर को नियाग्रा प्रपात और १६ अक्टूबर को राष्ट्रसंघ देखकर रात्रि साढ़े नौ बजे वहांसे लौट आये।

मेक्सिकोके लोग बड़े व्यसनी और 'छोटी-छोटी बातों पर प्राण लेने-देने पर तैयार हो उठते हैं। यद्यपि वहांके अधिकांश लोग ईसाई-धर्मका पालन करते हैं फिर भी उसके प्रति उनके मनमें कोई विशेष आस्था नहीं है। वहां बड़ी विचित्र बात यह देखने को मिली कि सबसे प्राचीन और बड़े गिरजा-घरमें जो मेक्सिको की संसद और स्वतन्त्रता-स्मारकके निकट है, उसकी वेदियों पर हर कोनेमें नर-कपाल रखे हैं। वहां मैदानके तीन ओर भवन बने हैं और प्राचीन गिरजा-घरके साथ नया गिरजाघर भी लगा हुआ है। प्राचीन गिरजाघर की भव्यता ऊँचाई और लम्बाई-चौड़ाई देखनेसे प्रतीत होता है कि यह माया सभ्यताका कोई प्राचीनतम मन्दिर रहा होगा जो अपनी विशालताके कारण रामेश्वरम्‌के विशाल मन्दिरके समान भव्य, विस्तृत और विशाल है। इसका केवल ऊपरी भाग ही नवीन प्रतीत होता है जो स्पेन-वासियों की देन मानी जा सकती है। संभवतः यही कारण है कि वहांके लोग ईसाई होकर भी अपने को किसी धर्मका अनुयायी माननेमें संकोच करते हैं क्योंकि मेक्सिकोमें जब ईसाई-धर्मका प्रचार किया गया तो मुस्लिम अन्धाक्रामकोंसे भी अधिक क्रूरताका व्यवहार किया गया था। इसके प्रमाण स्वरूप आज भी मेक्सिकोमें

काल-कोठरीके समान वह कुँआ विद्यमान है जहां ईसाई-धर्म न माननेवालों को ले जाकर बन्द करके लोहेके तप्त सीकचोंसे दागा जाता था। वहांके ६० प्रतिशत युवक मानव-धर्म या स्वाभाविक-धर्म मानते हैं। ईसाई, इस्लाम या यहूदी-धर्ममें उनकी कोई रुचि नहीं है। इसीलिए सम्भवतः वहांके विद्यालयोंमें धर्म शिक्षाका विधान नहीं है केवल धर्म-गुरुओं और उनके परिवारवालों को धर्म-शिक्षा दी जाती है।

वहाँ प्रायः सभी स्थानों पर पुरुषों और स्त्रियोंके स्वच्छन्द विहार देखने को मिलते हैं। वहांके सामाजिक जीवनके अनुसार इस प्रकारके पारस्परिक मिलन पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

भूमिगत बाजार मेट्रोकी खुदाईमें एक वेदी निकली है जिसे पुरातत्त्व विभागकी ओरसे सुरक्षित कर दिया गया है। उसे देखकर प्रतीत होता है कि किसी समय यह शैवों की वेदी रही होगी जो भारतीय व्यापारियोंके साथ आये शैवोंने स्थापितकी होगी। इस वेदीके चारों ओर बनी हुई पत्थरकी दीवारमें सर्पके चित्र बने हुए हैं। जिससे यह प्रतीत होता है कि ये लोग मूलतः नाग पूजक रहे होंगे और अर्जुन जिस नाग कन्या को ब्याहकर लाया था वह इसी प्रदेशकी रही होगी, क्योंकि एशियाका उत्तर-पूर्वी भाग कमश्चाटिका का सम्बन्ध अमरीकाके उत्तरी प्रदेशसे इतना अधिक समीप हैं कि सामान्य नावसे पांच-छः घण्टेमें अलास्का पहुँचा जा सकता है।

स्पेन वालोंके वहाँ पहुँचनेसे पूर्व वहाँके शासक माकेजुमाका और वहां की संस्कृति का जो नाटक बाबा ने देखा उसमे राजा माकेजुमा बहुतसी महिलाओं के साथ एक पहाड़ो पर आये जहाँ झरना भी गिरता था। विचित्र बात यह थी कि उन्होंने जो प्रार्थनाकी उसमें न ईश्वर को धन्यवाद, न कृतज्ञता न दयाकी याचना थी वरन् यही कामनाकी गयी थी कि आप संसारके मनुष्यों को जो आश्रय और मार्ग-दर्शन दे रहे हैं उसमें आपकी उन्नति हो और मानव आपके कार्यमें बाधक न हों।

मेक्सिकोके नर-नारियोंमें ६० प्रतिशत लम्बे मुख वाले और बानर मुख वाले हैं जिनकी ठोढ़ी लम्बी होती है। यहाँ वालोंकी मान्यता है कि यहाँके प्राचीन लोग अन्य ग्रहोंसे पृथ्वी पर आए हैं। वास्तवमें भारतके ही आर्य लोग पहले पहल वहां गये थे, जिसका स्पष्ट संकेत मनुने किया था। यहूदी लोग मानते हैं कि अन्य ग्रहोंसे आने वाले प्राणी योरोपमें उतरे थे। वे भी ठीक ही कहते हैं क्योंकि आर्य लोग तो योरोपमें फैले ही थे। यह भी सम्भावना है कि अन्य ग्रहोंसे भी किसी समय मानव कल्प प्राणी पृथ्वी पर उतर आए हों जो यहांके प्राणियोंसे अधिक बुद्धिमान और शक्तिशाली हों।

यहां के बड़े पिरामिडके पास जो श्मशान है वहां मृतक जलाये जाते थे क्योंकि आसपास कब्रें नहीं है। यहां सूर्य नामक जा पिरामिड है वह ऊँचा भी है और वहां मध्याह्नमें बलि दी जाती थी और चन्द्र नामक पिरामिडके पास स्वर्ग द्वार है जहांसे कहा जाता है कि स्वर्गका मार्ग बना हुआ है। इन पिरामिडोंके चारों ओर काले पहाड़ हैं जो पत्थरके कोयलेके झांवेके समान किसी समय ज्वालामुखीके लावासे बने होंगे।

मेक्सिको प्रवासके पश्चात् बाबा अपने निर्दिष्ट मार्गसे लौटकर १८ अक्टूबर को १९७२ को विमान द्वारा दिल्ली आ पहुँचे और इस प्रकार यह मेक्सिको और अमेरिका की यात्रा पूर्ण हुई।

गिरनार यात्रा

वैसे तो कई बार पहले भी राजस्थान, गुजरात होते हुए बाबा गिरनार गये हैं। बाबाकी भी दीवानगी देखते ही बनती है। एक दिन उन्होंने लेखकसे कहा कि जयपुर होते हुए जूनागढ़ चला जाय। समय आ ही गया। आगरेसे होते हुए जयपुरके आमेर किलामें हमलोग जा पहुँचे। आमेर किला पौराणिक महत्त्व रखता है क्योंकि कई एक पौराणिक राजवंशका अवशेष उसी किलेकी दीवालसे लगा हुआ मिलता है जैसे राजा नल आदि का। आज भी वहाँ पर जाने पर यह भासता है कि वहाँ साधु पुरुष शासक रहा करते थे जिन्होंने शिव और शक्तिकी महान उपासना की परम्परा स्थापित की थी। इसी प्रकार एक दिन उदयपुरमें राणाका महल और उनके इष्ट देवताका मन्दिर देखा था। जब चित्तौड़गढ़के निवासके बाद हम उदयपुर जा रहे थे तो ऐसा लगता था कि चित्तौड़गढ़ महा मानवों की आवासभूमि है क्योंकि वहांके ईंट और पत्थर भी बोलतेसे लगते थे। इन स्थानोंमें घूमकर जब हमलोग अजमेर पहुँचे तो अजमेरमें एक बड़े विचित्र फकीरसे भेंट हुई जो गोर वदन थे और लम्बा काला झूल पहिने ८० वर्षकी आयुके होंगे, ख्वाजा साहबके दरगाहके प्रांगणमें मिले। लेखकने देखा कि बाबासे कुछ बातचीत कर वे मुस्कुराये और बोले कि आपके नेत्रोंमें एक विचित्रसी ज्योति है जो बड़े उच्चकोटिके महात्माओंमें पाई जाती है। ये कहकर वे हँसते हुए मजारकी ओर चले गये और हम अपने निवास-स्थानपर लौट आये तथा बसमें बैठकर गिरनार को चल पड़े। हम ११ बजे रात्रिको जूनागढ़ पहुँचे। वहां एक बड़ी विचित्र घटना घटी। सभी रहने योग्य स्थान ढूंढ़ा गया पर कहीं न मिला। हाँ, बस स्टैण्डके पास ही एक नया भवन जो अभी-अभी बनकर तैयार हुआ था उसीमें हमलोगोंको एक अधेड़ अवस्था का व्यक्ति आकर लिवा गया और विस्तर आदि देकर रात्रि-वासकी व्यवस्था कर दी।

प्रातः उठनेपर बड़ा आश्चर्य हुआ कि रात्रिमें मकान और तरहका था और सोकर उठने पर हम बाबाके सहित गिरनारके फाटक पर एक दालानमें हैं जहांसे यात्रा आरम्भ होती है। श्रीगुरुदत्तात्रेय की लीला अचिन्त्य है कि तत्क्षण हमें ऐसी सुन्दर व्यवस्था देकर ४-५ घंटे बाद जागने पर स्वप्नवत हो गये। किसी मित्रने कहा कि हमलोग यहीं थे किसीने कहा कि रात्रिमें हम एक दुमंजिले मकानमें सोये थे और कोई सीढ़ीकी बात करता था यह असमंजस बना है निर्णय नहीं हुआ है। बाबा, दत्तात्रेयजी की ओर संकेत कर कुछ विचित्र बात बताने लगे। हम प्रातः इस घटना को स्मरण करते शिखर की चढ़ाईमें प्रवृत्त हुए। जब ऊपरी शिखरमें जैन मन्दिरके पास हम पहुँचे तो एक दस-बारह वर्षकी अवस्था का सुन्दर बालक हमलोगों को एक निकटके पगडंडी मार्गसे महामायाके पास ऊपरी शिखरमें ले गया। प्रणाम

करके शिर उठानेके तत्काल बाद ही एक अन्य युवक आकर प्रसाद पानेका आग्रह करने लगा। हमने कहा कि अभी हाथ-पांव नहीं धोया है तो वह ठठाकर हँसा और बोला कि यहां इस तरहके आचरणकी आवश्यकता नहीं। हम थके थे ही बगलके कमरेमें थालोंमें अत्यन्त स्वादिष्ट भोजन मिला जो कभी भुलाया न जा सकेगा। यह महामाया का अनुग्रह था जिनके दरबारमें गुरुदत्तने अपने हाथों भोजन परोसा होगा। दत्त-पादुकासे वापस आनेपर वह छोटा बालक, भोजन करानेवाला और अन्य युवक भी पता लगानेपर भी नहीं मिले। हमारा निश्चय है कि भगवान दत्तत्रेय ही ने हमारा आतिथ्य किया होगा। जब हमलोग भगवान दत्तात्रेयकी चरणपादुका पर पहुँचे तो वहां एक बनारसका ही युवक मिला जो काशी विश्वनाथके पासका ही रहनेवाला था, ऐसा लगा कि हम थोड़ी देर को बनारस ही आ गये हैं। कमण्डलु कुंडके पुजारी भी १५-१६ वर्षकी अवस्थाके थे और वहां २-३ वयोवृद्ध महात्मा थे। अधिकारी पुजारीने बड़े सम्मानके साथ बिस्तर भोजन और रात्रि-निवास की व्यवस्था कर दी। रात्रिमें जब हमलोग शिखरमें निवास कर रहे थे एक अद्भुत प्रकाश छिटका हुआ था। प्रतीत होता था कि कोई उस ऊपरी शिखरसे खड़ाऊँ पहने उतर रहा है। जब वह व्यक्ति निकट आया तो अपनेको एक सर्वसाधारण यात्री बताया। उनसे पूछा गया कि क्यों मध्य रात्रिमें शिखर पर आये हैं तो बड़ी ऊटपटांग बातें कहने लगे, उनकी भाषा समझमें नहीं आती थी। गिरिजाशंकरसिंहने गांजा बना कर उन्हें पिलाया और स्वयं पिया। हम तो सोने जा रहे थे थोड़ी देर बाद लगा फट्-फट् करके कोई चिड़िया उड़ी जा रही है देखते-ही-देखते वह आदमी हमारे बीचसे अन्तर्धान हो गया। पुजारी को रात्रिमें जगाकर पूछने पर उसने कहा आपको भ्रम हुआ है अब प्रातः देखा जायगा आप जाइये, सोइये और कहा कि यहां बड़े विचित्र महात्मा पहाड़ीमें रहते हैं जो अनेकों प्रकारका रूप धारण कर लेते हैं, इन्हीं सब विचित्र भावनाओंके साथ हमलोग सोमनाथ के लिये चल पड़े।

सोमनाथके निवास कालमें हमलोग इक्केसे संगमके श्मशानपर औघड़ आश्रममें गए। हमने देखा कि बाबाके साथ कुछ तत्वोंका सेवन वहां के औघड़ बाबाने किया और वहीं पर गिरनारसे आई एक अवधूतिन मिलीं जिन्हें हम लोगोंने गिरनार निवास कालमें गोरख टेकरी पर देखा था। जब हम लोग अघोर टेकरीकी ओर जा रहे थे। तो वह लौट रही थीं। हम लोग समझ नहीं पाये कि वे विलक्षण अवधूतिन हैं। सोमनाथ श्मशानमें हमे उनका पुनः दर्शन और आशीर्वाद मिला सन्ध्याकी आरतीके बाद जब ये लोग दुधुवाका प्रसाद ले रहे थे तो गिरिजाशंकर सिंह जो प्रसाद लिए हुए थे खूब हँस रहे थे और कह रहे थे कि माताजी काशी आईये। हमें यह नहीं ।ता था कि आप औघड़ोंके तेजकी विभूति हैं। अवधूतिनने गिरिजा शंकर को उतावलेपनपर थोड़ा डाँटी भी थी। बाबाके मध्यस्थतासे बात बहुत कुछ संभल गई। बाबासे वे कह रही थीं कि अभी कुछ दिनमें बंगालकी ओर जाने वाले हैं, काशी अवश्य आयेंगे पता बता दीजिये। बाबाने लेखकसे पता बताने को कहा। वहांके बाबा बोले औघड़का पता नहीं छिपता। इन सब बातोंकी समाप्ति पर सरकारी जिला परिषदके

बंगलेमें लौटकर विश्राम किया और दूसरे दिन वहांसे चलकर अहमदाबाद होते हुए बड़ौदा पहुँचकर बड़ौदाके राजगुरुके यहां ठहरे। वे एक उच्च साधक और प्रकाण्ड विद्वान हैं। राजगुरुकी कन्या अपार हर्षित हुईं और उन्होंने हम लोगोंके सेवाकी उत्तम व्यवस्था किया और प्रातः राजगुरुको बाबाने देखा क्योंकि वह अस्वस्थ थे। उनसे बाबा किनारामकी और औघड़ोंकी वार्ता प्रारंभ हुई। इसी बीचमें दिनके ११ बज गए। हम लोगों को १२ बजे गाड़ी पकड़नी थी अतः बड़ौदाके राजगुरुसे विदा लेकर हम चल दिए। यहांसे हमलोग बड़ौदाके पुस्तकालय गये। यहां पर अघोर-साहित्यके बारेमें विलक्षण ग्रन्थ मिले, ऐसे अद्भुत ग्रंथ राष्ट्रीय पुस्तकालय कलकत्तामें भी देखने को नहीं मिले थे। लेखकने कई घंटों तक राष्ट्रीय ग्रन्थालयमें भी पुस्तकों का अवलोकन किया था। बड़ौदाके अघोराचार्यके मठमें भी हमलोग गये यह सदियों पुराना मठ है। वहांके महात्माओं को दण्ड-प्रणामकर हम लोग बाबाके साथ लौट आए। इस यात्रामें सर्व श्री गिरजा शंकर सिंह, वीर बहादुर सिंह एवं मौला सिंह भी हम लोगोंके साथ थे। आप सब बाबाके प्रिय शिष्योंमें हैं अतः बाबाके सेवार्थ आप लोग भी साथमें यात्रा पर गए थे। यहांसे हमने दिल्लीके लिए प्रस्थान कर दिया। अन्य गोपनीय वृत्तांतके लिए लेखकको अभी विस्तारसे लिखनेकी आज्ञा नहीं मिली है।

हिमालय-यात्रा

एक दिन एक यात्री आया। वह बाबा से खूब ठहक ठहक हँसकर कहने लगा कि आप दो तीन बार हिमालय के बदरी, केदार धाम घूम आये हैं। आइये चलिये अबकी बार मेरे साथ कालीमठ। बस क्या था, बाबा तो मन मौजी। अपनी जीप गाड़ी लिये, हरिद्वार की तरफ से तो आप कई बार गये हैं, इस बार काठ-गोदाम की तरफ से नैनोताल होते रुद्रप्रयागसे गुप्तकाशीमें अपनी जीप छोड़ कर, कालीमठके बीहड़ मार्ग को तय कर कालीमठ जा पहुँचे। वहां पर दो तीन साधकों से सम्पर्क हुआ जो बाबाके पूर्व परिचित थे। वहाँ अनेक दिनों तक साधन-पूजन, तन्त्र-मन्त्र, चमत्कारिक सिद्धियोंका होड़ सा चलता रहा। इसी बीच एक दिन ये लोग काल-शिला पर जो कालीमठ से ५,००० फीट की ऊंचाई पर है, गये। यहां पशु या मनुष्य बड़ी कठिनाईसे पहुँच सकता है। काल-शिला बड़ी विचित्र जगह है। यहां एक औघड़ रहते हैं जो अन्य कोई नहीं, वही यति हैं जो काशीमें बाबाको प्रेरित कर कालीमठ ले गये थे। ये कुछ आलू बो लेते हैं। महीने दो महीने पर नीचे उतरते हैं। बाबा को ये बड़े ही सम्मान एवं आदरकी दृष्टिसे देखते हैं। बाबा जब-जब वहाँ पहुँचते हैं तब-तब बाबाके प्रति श्रद्धानुरूप उनके भाव हो जाते हैं और वे बाबाके पास आकर चक्रार्चनमें सम्मिलित होते हैं। पूजन इत्यादिके बाद बाबा काल-शिलासे दूसरे दिन सभी साधकों के साथ, जिसमें यतिजी भी थे, कालीमठ आये। इस कालीमठमें बाबाकी हिमालयके उच्च साधकोंसे बड़ी घनिष्टता है। यहाँ बाबाने एक खड्ग स्थापित किया है जिसे दो-चार आदमी नहीं उठा सकते। इसपर श्लोक अंकित है। इस खड्ग को ले जाने में करीब तीस पहाड़ी आदमी लगे थे।

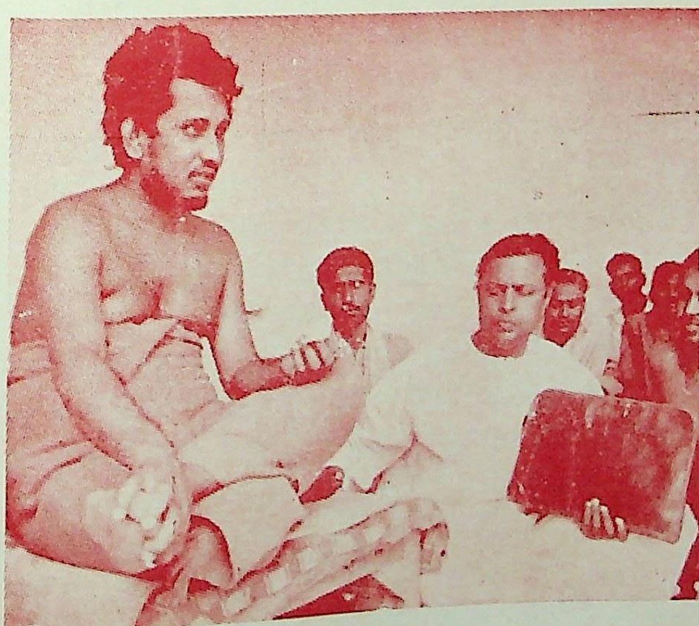
बाबा उत्तर काशीसे लेकर सिक्किम आसामकी सभी पहाड़ियोंमें अनेक बार घूम आये हैं। बाबा प्रायः इन पहाड़ियोंमें आया-जाया करते हैं। गर्मीके दिनोंमें एक दो महीना अनुष्ठान-साधना करके जब वे लौटते हैं तब हम लोगोंके बीच उनका व्यवहार बड़ा विचित्रसा होने लगता है। हम सबकी जो असफलतायें रहती हैं उसकी पूर्तिमें वे लग जाते हैं। बाबा यात्रामें अकेले कम जाते हैं। अपने साथ हमेशा दो-चार साधक रखते हैं। ऐसे साधकोंसे लेखक स्वयं मिल चुका है। हिमालयकी कन्दराओं और गुफाओं को बाबा टटोल आये हैं। ऐसे ही साधक बड़े विलक्षण होते हैं।

वाराणसी आश्रममें भी उत्तराखण्डके साधक आया-जाया करते हैं। ये भी बड़े विलक्षण होते हैं। जब बाबा काशीमें नहीं रहते तो ये लोग मध्यप्रदेश स्थित बाबाके जसपुर आश्रमतक जा पहुचते हैं। नेपालकी तराईमें तौलिहवासे लेकर जोगबनी तक कई गोप्य औघड़ स्थान हैं, जिनमें बाबा विचरते हैं। ऐसे ही बाबाके एक शिष्य-साधक देवकुमार चौबे हैं, जो जोगबनीसे प्रायः बनारस आया करते हैं। तराईके औघड़ मठोंमें विचरते हुए वहाँके लोगोंको श्रीसर्वेश्वरी समूहके कार्यक्रमोंसे अवगत कराते रहते हैं। बाबाके साथ जो साधक जाया करते हैं उनसे लेखकने यह भी सुन रखा है कि कई एक अवधूतिन जिनकी बड़ी विलक्षण वेश-भूषा है, बाबासे मिलती हैं। उनमें कुछ मुण्डित हैं और कुछ जटिल हैं। कुछ तो ऐसी हैं जो कभी स्नान नहीं करतीं। कुछ ऐसी हैं जो कि शौच जाकर पानी नहीं छूतीं।

एक अवधूतिन को साधकोंने स्वमूत्र पान करते देखा है। उनमेंसे कुछ बंगाल प्रान्त, कुछ बिहार और उत्तर प्रदेशकी हैं, क्योंकि वे बंगला और ठेठ हिन्दी बोलती हैं। वे प्रायः एक स्थान पर नहीं मिलतीं। उनमेंसे कई एक को ऋषीकेश, कालीमठ कालियासोढ़ पर, जो श्रीनगर-रुद्रप्रयागके बीच स्थित है देखा गया है। यहाँ बहुत बलि होती है। वहाँ दो-चार बलि सदैव होती रहती है। उनमेंसे एक अवधूतिनने बाबाको निमंत्रण दिया था। दुधुवा शुद्धी आदि लेकर यहाँ तीन गुफायें हैं जिनमेंसे एकमें चक्रार्चनकी व्यवस्थाकी गई थी। संयोगसे उस दिनकी पूजामें पेट्रोल लानेके लिये लेखक को श्रीनगर जाना पड़ा, क्योंकि, दूसरे दिन बनारसके लिए प्रस्थान करना था। किन्तु वह पूजा आरम्भ होनेके बाद गया, इसलिये पूजाका कुछ अंश देखकर उसके मनमें बड़ा विचित्र भाव उत्पन्न हुआ। इसी यात्रामें बाबाके साथ लेखक प्रथम बार गया था। आसाम और जोगबनीकी यात्रामें भी साथ रहा। बहुतसी विचित्र घटनायें हैं जिनके वर्णनसे बड़ा ही विस्तार होगा।

अलखनन्दाके एक किनारे एक बड़ा ही रमणीक आश्रम है जिसे बहुधा लोग अघोरी आश्रम कहते हैं। यह स्थान रुद्रप्रयागसे सात आठ मील नीचे है। एक दिन इस आश्रमके साधकने कालीमठमें स्वयं बाबासे मिलकर आश्रममें पधारनेकी प्रार्थना की थी। बाबाने उन्हें आश्वासन दिया था कि लौटते समय उनके आश्रममें आकर चक्रार्चन होगा। लौटते समय अलखनन्दाके किनारे गाड़ी खड़ी करके बाबा एवं अन्य साधक एक रस्सेके सहारे नदी पारकर उपरोक्त आश्रममें पहुँचे। साधकोंमें एक सरकारी उच्च अधिकारी भी थे जो लखनऊमें रहते हैं। वे क्षत्रिय हैं और हिमा-

दिल्ली के श्री विवेकानन्द सहाय के परिवार के साथ औघड़ भगवान राम जी, पीछे में कलकत्ता के श्री सजन कुमार कानोड़िया खड़े हैं।



मध्यप्रदेश समूह शाखा के मंत्री श्री मदन मोहन मिश्र एवं अन्य भक्तों के साथ औघड़ भगवान राम



लयकी यात्राओंमें महीनों बाबाके साथ रहे हैं। चार-छः घन्टेके बाद साधना कर बाबा इन शिष्योंके साथ उसी रस्से से लौट आये।

दक्षिण भारतकी यात्रा

पच्चीस वर्ष देशको स्वतन्त्र हुए हो गया, तब भी दक्षिणी लोगोंकी दृष्टि उत्तर भारतीयोंके प्रति बदली नहीं। ऐसे तो हम देखते हैं कि उपासना और देव-अनुष्ठान की प्रक्रिया एक-सी ही है। हाँ, यह बात है कि उत्तर भारतीयों की बनावटी भक्तिसे उनकी भक्ति उच्च एवं मूर्तरूप है। कुछ ही दिन हुआ औघड़ बाबा रामेश्वर गये थे। उनके साथ कई साधक लोग भी थे। यात्राके बारेमें पूछनेपर एक साधक शिष्यने बड़े ही विचित्र ढंगसे वर्णन आरम्भ किया कि औघड़के साथ यात्रा आसान नहीं। गाड़ीमें हमलोग एक डब्बेमें थे तो बाबा दूसरे में। ढूँढ़ते-ढूँढ़ते गाड़ीमें बड़ी परेशानी पड़ती थी। यद्यपि बाबाका टिकट था तो प्रथम श्रेणीका पर कभी आप इस डिब्बेमें, तो कभी उस डिब्बे में। एक दिन इसी कारण टी० टी० ई० से कुछ कच-कच हो गई और सेठ रतनलाल को साठ-सत्तर रुपये अर्थदण्ड देना पड़ा था।

किसी तरह हमलोग मद्रास पहुँचे और बनारसके श्री शशिकुमार गुप्तकी गद्दी में ठहरे। दिनभर उनकी गाड़ीमें मद्रासके चारों ओर घूमते रहे। एक बात यह है कि जब समुद्र-तटसे शामको बाबा उठते थे तो चार फर्लांग दूर एक औघड़-स्थान कपालेश्वर मन्दिर जाते थे। एक दिन हमलोगोंने देखा कि पुजारीने बड़े सम्मानके साथ बाबाको अन्दर ले जाकर कपालेश्वर की मूर्तिसे माला उतारकर सस्नेह उनके गलेमें डाल दिया। बाबाका रूप-रंग कुछ मुसलमानी था पर उस साधक पुजारीने बाबाको पहिचाननेमें कोई गलती नहीं की। कपड़े-लत्ते पहिनने पर भी हमलोगोंको वह आदर नहीं मिला जो साधारण वस्त्रमें रहने पर बाबाको मिला। उसी दिन हमें यह ज्ञात हुआ कि कपालेश्वरके पुजारी एक उच्च साधक हैं।

मद्रास-आवास कालमें शिव-कांची, विष्णु-कांची, आचार्य रामानुजकी जन्म-भूमि आदि स्थानोंको बाबाने गाड़ीमें बैठाकर दिखा दिया था। एक दिन तिरुपति बालाजीके बिषयमें बाबाजी कह रहे थे कि वहाँ निष्कील श्रीयंत्र पर स्थापित भैरव की मूर्ति है। निष्कील होनेसे यहां देशका अच्छा-से-अच्छा रत्न एवं धन आकर्षित होता रहता है। जिसके पास इस प्रकार का द्रव्य होता है उन्हें प्रेरणा होती है और समय पाकर वे निष्कील यंत्रके सामने उसे अर्पित कर देते हैं। एक दिन बाबा हम लोगोंको नगनेरी ले गये जहां वैष्णवोंके प्रधान आचार्य तोताद्रीके महन्थ रहते हैं। इनके सचिव बाबाके पूर्व परिचित थे। इनका नाम राय रोशन स्वामी है। ये हिन्दी, अंग्रेजी तथा द्रविड़ भाषा जानते हैं। बाबाने वहां दो दिन विश्राम किया और वैष्णवके आचार्य देवनाथ भगवानके महन्थसे मिले। वह महात्मा बड़े ही विचित्र ढंग से रहते हैं। तीन आँगन और कई कोठरियाँ लाँघनेके बाद उनसे भेंट हुई। वे बड़े आदरसे मिले और प्रसाद दिया। चूँकि वे केवल द्रविड़ भाषा ही जानते हैं, अतः रोशन-स्वामीने दुभाषिये का काम किया। भोजनके समय हमलोग मठमें लौट आयें।

दूसरे दिन शामको हमलोग रामेश्वर पहुँचे। रामेश्वरका मन्दिर सिंघल-द्वीप के क्षत्रिय राजा द्वारा बनवाया गया है। मन्दिर बड़ा ही भव्य है। उसके भीतरी भागके तालाबोंके एक छोर पर ब्रह्मनिष्ठ लोगों का एक आश्रम है। दक्षिणमें औघड़ों को ही ब्रह्मनिष्ठ कहते हैं। वहां हमलोगोंने देखा कि बाबा को काशीके किनाराम के स्थानका बताने पर सभीने सम्मान और स्वागत किया। वे सभी बड़े ही विचित्र शैव-साधक हैं। उनकी क्रिया एवं उनका अनुष्ठान बड़ा ही विलक्षण है। वे महाराष्ट्री हैं। इस मन्दिरके पुजारी-पद पर जो औघड़ महात्मा हैं वे ही इन लोगोंके कुलके प्रधान हैं। वे बार-बार बाबाको अपनी साधना और अनुष्ठान की विचित्रताके बारेमें बताते और समझाते थे। यात्रियोंके सम्पर्कसे उन्हें कुछ हिन्दी बोलनेका अभ्यास हो गया है। रामेश्वरका विग्रह-भग लिङ्ग यन्त्रवत् है। क्योंकि शिव-मन्दिरमें योनि एवं लिङ्गका समावेश मिलता है। यह वाम मार्गका प्रतीक है और यही वाम-साधना है। बाबा वहांसे चलकर मीनाक्षीमें एक शैव भैरवीके अनुरोध पर ठहर गये। वह भैरवी या तो किसी सम्पन्न कुलकी है या सर्वशक्ति सम्पन्न भगवती है, क्योंकि उसने मद्य-निषेध की परिस्थितिमें भी चक्रार्चनके लिये रात्रिमें ही सभी सामग्रीकी व्यवस्था कर दी। वहां कई दिनों तक अनुष्ठान-साधना चलती रही। उस भैरवी की पांच-सात शिष्या हैं जिन्होंने मृदुल कण्ठसे वाद्य-साधनोंके माध्यमसे एकबार उपासना-गृहमें संगीत सुनाया था। मैं उस दिव्य साधना और उन साधकों को तथा उस भैरवी देवीको प्रणाम करता हूँ। उस दिन आकाश निर्मल और मेघ रहित था और पूजागृह में एक विलक्षण ज्योतिर्मय प्रकाश हुआ था। वह क्या था भगवान जाने, मैं नहीं कह सकता।

उसी भैरवी की प्रेरणा पर बाबा कन्याकुमारी गये और दूसरे दिन देखा कि मन्दिरमें कन्याकुमारी की मूर्तिसे माला निकालकर भैरवी बाबाको पहिना रही थी। शायद उस दिन कन्याकुमारीका कोई विशेष पर्व था जिसमें वह भैरवी आयी हो। बाबा जब वहाँसे मैसूर जाने को तैयार हुए तो भैरवी एक बार फिर बाबासे उनके निवास-स्थान पर फिर मिलीं और पूछा फिर कब आइयेगा? हम कब आयें? वह भैरवी दक्षिणी हैं। टूटी-फूटी हिन्दी भी बोल लेती हैं। बाबाने हाथ जोड़कर मुस्कराते हुए कहा, माता अब तो मैं आता-ही-जाता रहूँगा। हम लोग बस द्वारा मैसूर रवाना हो गये। मैसूर महाराजके इष्टदेव दत्तात्रेय चामुण्डा एवं अघोरेश्वर शिवका दर्शन कर हम लोग बंगलोर पहुँचे। शहर देखनेके पश्चात् शामको रेलगाड़ीसे हैदराबाद पहुँचे। वहाँसे गोलकुण्डाके किलाको देखा। हैदराबाद और सिकन्दराबादके बीच रेलवे लाइनके किनारे औघड़ोंका एक स्थान है। इस स्थानको हिन्दू-मुसलमान दोनों आदरसे देखते हैं। यहाँ दो-तीन औघड़ भी रहते हैं। कुछ कालके लिये हम लोग वहां गये और फिर बनारसके लिये प्रस्थान कर दिया।

———

रुद्राक्ष १९

अवधूत-बानी

गुरु कौन है ?

वास्तविक गुरु वही है जिसे देखनेसे पवित्रताका भाव उत्पन्न हो, हृदयमें नये विचारोंका उद्गम हो एवं सहज हीमें आत्म-शुद्धि प्राप्त हो। वास्तविक सन्तको समाज, जाति, धर्मकी परवाह नहीं होती और न वह महात्मा, मुनि, सन्त, आराधक और भक्त ही कहलाने का शौक रखता है। वह तो अपने आपमें भी नहीं रहता। 'आई मौज फकीर की दिया झोपड़ा फूँक।'

मनुष्य और उसकी परिस्थिति

मनुष्य परिस्थितियोंका दास नहीं है। परिस्थितियाँ स्वयं मनुष्यकी दासी होती हैं। वे तो इन्सानकी योग्यताकी परीक्षा लेती हैं। योग्य इन्सान इनसे लड़कर आगे बढ़ता है। जो इनसे हार कर पीछे भागता है उसका कोई अस्तित्व नहीं, उसे जीनेका कोई अधिकार नहीं।

ईश्वर-सम्बन्ध

ईश्वरपर किसी एक व्यक्तिका अधिकार नहीं। ईश्वर किसी व्यक्ति विशेष पर ही नहीं प्रसन्न होता और न कोई व्यक्ति विशेष ही उसका भक्त है। उसपर तो सबका अधिकार है। वह सब पर प्रसन्न होता है। सभी उसके भक्त हैं। पर ईश्वरसे सम्बन्ध बनानेके लिए सबको अपनी आत्मा को स्वच्छ रखना परमावश्यक है। स्वच्छ आत्मा वाला ही परमात्माको पानेका अधिकारी है।

सत्य-साधना

सत्य एक कठोर साधना है। इस साधनाको प्राप्त करनेके बाद और किसी साधनाकी आवश्यकता नहीं रह जाती। सत्यकी साधनासे जीवनके हर साध्य अपने आप सध जाते हैं।

आध्यात्म प्राप्तिका मार्ग

मनुष्यको प्रत्येक विचारोंका ज्ञान करके उनपर मनन करना चाहिये। लोकमें आध्यात्म प्राप्तिके जो मार्ग हैं उन सभी मार्गों में उनकी अपनी विशेषता है और इस विशेषताको जानकर, उनका अनुसरण करनेसे लक्ष्यकी प्राप्ति होती है।

अहंकार-परित्याग और सदाचार

जहाँ जय है वहीं पराजय है। जहाँ पराजय है वहीं जय है। जय और

पराजयको पहिचानने के लिए व्यक्ति को सबसे पहले स्वतःको पहिचानना परमावश्यक है। स्वतःको पहिचानने पर अहम्का परित्याग यों ही हो जाता है। अहंके परित्यागसे आत्माका साक्षात्कार होता है। ईश्वर, गृह-त्याग, तप तथा एकान्तमें यातना युक्त साधना, व्रत, योग इत्यादि रास्ते से ही प्राप्त नहीं होता, बल्कि गृहस्थ जीवनमें रहने वालेको भी बिना किसी साधनाके प्राप्त होता है और यह एक मात्र साधना हृदयकी पवित्रता है।

जीवनकी सबसे बड़ा साधना अपने जीवनमें सदाचारका पालन करना है। इससे भौतिक सुखोंकी प्राप्तिके साथ ही ईश्वरकी भी प्राप्ति हो जाती है।

जीवनका सबसे बड़ा सद्गुण : सत्य और प्रेम

जिस प्रकार अग्निका गुण है ताप देना, जलका गुण है शीतलता प्रदान करना, अन्नका गुण है अतृप्तको तृप्त करना, ठीक उसी प्रकार मनुष्यका गुण है मैत्री के साथ रहकर दूसरोंका कल्याण करना।

हर धर्मका लक्ष्य हो मनुष्यको सद्गुणोंकी ओर प्रेरित करना, हर मनुष्य का लक्ष्य हो सद्गुणोंके सहारे प्रत्येक प्राणीके हृदयमें जगह कायम करना, फिर तो लोकमें अपने आप सद्भावना जागृत हो जायेगी।

जीवनकी समस्यायें हिंसा और युद्धके द्वारा हल नहीं होतीं अपितु सत्य एवं प्रेम ही जीवनका सबसे बड़ा सद्गुण है।

जीवनमें भोग और योग

संसारमें न कुछ पाप है न कुछ पुण्य। न आनन्द है और न कष्ट। संसार तो वैसे ही पवित्र है जैसे अग्नि और जल। पाप-पुण्य, आनन्द-कष्टकी उद्भावना स्वयं इन्द्रियाँ ही करती हैं और आदमी इन्हींके परितापोंमें जलता है।

भोग और योग-जीवनके दो नहीं बल्कि एक ही पहलू है। भोगके बिना योग अधूरा है और योगके बिना भोग अधूरा है। योग और भोग दोनोंकी नींव पर ही संसारका निर्माण हुआ है। किसी एक के भी अभावमें व्यक्तिका जीवन सूना हैं। एकका एक पूरक है। मानव जीवन एक छाया है जो क्षण भरमें समाप्त होने वाली वस्तुके समान है। अतः इस क्षण भंगुर जीवनके प्रत्येक क्षणोंको सुकर्मों के तार पर ऐसा बजने देना चाहिए जिससे एक अमृतमय स्वर निकले और इस स्वरसे सभी प्राणी विमुग्ध हो उठें।

आत्म-बल और गुरु-भक्ति

आत्म-बलके उत्थानसे जीवन सफल होता है। वास्तविक शान्ति आत्मामें संतोष प्राप्त होनेसे होती है। जीवन क्षणभंगुर है। अतः प्रत्येक क्षण अपने इष्टका ध्यान करना अनिवार्य है।

साधना

यदि इस युगमें कुछ भी न हो सके तो अपने गुरु के कमलवत् चरणमें

ध्यान धरनेसे ही भवसागर पार किया जा सकता है। पाप एवं पुण्य केवल मनके भाव हैं। आत्मामें दिव्यभाव रखना चाहिये।

वास्तविक ज्ञानका कारण आत्म-चिन्तन

ज्ञान संसारके पोथी—पुराणों और निर्देशोंसे नहीं होता। यह तो आत्मिक चिंतन से मानव हृदयमें अपने आप ही उद्वेलित होता है। पोथी, पुराण, निर्देश तो आत्म-चिन्तनके साधारण रास्ते हैं।

ज्ञानीका वास्तविक कार्य संसारको नया आलोक दिखाकर उसके कर्म-क्षेत्रको सरल एवं व्यवस्थित बनाना है। केवल मतों और सिद्धान्तोंका निर्माण तो स्वयं ज्ञानीको भी अज्ञानी बना देता है।

लोक-सेवा और लोकोपकारके सिद्धान्तकी नहीं प्रयोगकी आवश्यकता है

जीवनका महत्त्व इसीमें है कि सच्चाईसे जीवनके कर्मक्षेत्रको संचालित किया जाय। मानव जीवन ऐसा होना चाहिये कि बिना किसीकी आत्माको कष्ट दिये मानव जीता चला जाय। पथिक! केवल मानव सेवा और परोपकारके सिद्धान्तको लेकर चलना ठीक नहीं है बल्कि जिन्दगीकी हर डगर पर, लाखों कठिनाइयाँ सहकर भी, तुम्हें इस सिद्धान्तका अनुसरण करनेमें समर्थ होना चाहिये। तभी तुम सच्चे परोपकारी और सेवक बन सकोगे।

सर्वत्र आत्मवत्भाव और सदाचार

शान्ति आत्माकी बड़ी भारी संघटनात्मक शक्ति है और अशान्ति उसे विघटित करने वाली शक्तिका नाम है। यदि आत्मामें चिरस्थायी शान्ति प्राप्त हो जाय तो अशान्ति आ ही नहीं सकती। आत्मा अमर है। जेय-अजेय होनेका कोई भी महत्त्व आत्माके लिये नहीं। आत्माकी पूर्ण शान्ति, सदाचार एवं सर्वत्र आत्मवत् भावसे ही होती है।

माँ सर्वेश्वरी

माँ सर्वेश्वरी सब भूतोंमें व्याप्त है। उसके लिये न कोई अप्रिय है और न प्रिय है। किन्तु जो प्रेमी प्रेमसे उसे भजते हैं वे सर्वेश्वरीके हैं और सर्वेश्वरी उनकी हैं।

गुरु-कृपासे आत्म-शान्ति और आत्म-सुख

आत्माकी पवित्रता ही सुख एवं शान्तिका प्रमुख केन्द्र है। आत्माकी पवित्रता भी प्राप्त करना एक साधना है। पावत्र आत्माके लिये सब कुछ सुलभ है।

गुरु वही है जिसके साक्षात्कारसे आत्मामें शान्ति प्राप्त होती है। संसार सागर पार करनेके लिये गुरु मन्त्र ही पतवार है। स्वर्ग ऐसा कोई दृष्टिगत लोक नहीं वरन् सत्कर्म ही स्वर्गका स्वरूप है। मानव वही है जो ब्रह्मनिष्ठ है। मानव जीवन करोड़ों-करोड़ों तपस्याका फल है।

मानव जीवन पाकर भी सत्कर्मसे विमुख प्राणी निस्तारका अधिकारी नहीं है। सर्वेश्वरी एक नाव है जिसपर सवार होकर यह सब सर्वेश्वरी समूह गुरु के मार्ग-दर्शन से सागर पार होगा।

पुरुषार्थ और भगवान् का आश्रय

पुरूषार्थ करनेसे दरिद्रता का नाश होता है। घृणा एवं ईर्ष्या मानवकी कमजोरियों के लक्षण हैं। साहसियोंके लिये असम्भव भी सम्भव है। जो भगवान् पर आश्रित है वह संसारका आसरा नहीं करता।

संसारमें ईश्वर व्याप्त है

संसारके कण-कण में ईश्वरका अस्तित्त्व है। कण-कणको साधु पुरुष ईश्वरका ही अंश समझता है। ईश्वरसे निकटता कायम करनेके लिये हे मानव! यह आवश्यक है कि तू कण-कणकी निर्धारित मर्यादाकी रक्षा कर।

आत्म-ज्ञानसे ही सब ज्ञान

संसारका न अन्त है, न आरम्भ, न संसार किसी सीमामें बद्ध है और न असीम ही है संसार जाननेके प्रयत्नमें पागल हे मानव! तू सबसे पहले अपने अन्तर में आत्म-ज्ञानका दीप जला।

अहं ब्रह्माऽस्मि

जिस ब्रह्मकी खोजमें आकुल हो वह तो तुम्हारे अन्दर ही है। मैं और तुमके अभिज्ञानको भूलकर तुम स्वतः ब्रह्मको प्राप्त कर ब्रह्मनिष्ठ हो जाओगे। 'अहं ब्रह्माऽस्मि' की भावना मैं और तुमकी सीमासे बहुत दूर है।

जीवनकी गाड़ीके दो पहिये

सुख और दुःख जिन्दगीके दो पहिये हैं। इन्हीं दो पहियोंपर मानव जीवनकी गाड़ी दिन-रात चलती रहती है। किसी एकका भी अभाव जीवनको गति हीन कर देता है। अतः हे मानव! तू ससारके विस्तृत पथपर पौरुषके साथ दोनोंको साथ लिए बढ़ता चल। यही तुम्हारा सबसे बड़ा पराक्रम है।

ब्रह्म-विहार

ब्रह्मका न रूप है न रंग। न इसका कोई आकार है न प्रकार न यह दृश्य है न अदृश्य ही। यदि तुम्हें ब्रह्मकी खोज करना है तो रूप-रंग, आकार-प्रकार, दृश्य-अदृश्यकी चिन्तासे मुक्त होकर आत्माकी सच्ची उपासना करो। तुम्हें निश्चय ही ब्रह्मकी अनुभूति होगी और तुम स्वयं ब्रह्ममय हो जाओगे।

जीवनमें सुखकी खोज

संसारके सुखोंके लिए व्याकुल हे मानव! जीवनका सच्चा सुख वही है

जहाँ त्याग है। यदि तुम जीवनका अनुपम आनन्द चाहते हो तो पहले अपने अन्दरकी तमाम बुराइयोंका त्याग करो। संसारकी घृणितसे घृणित वस्तुको देखकर अपना मुँह मत फेरो।

जीवनमें आशा और पौरुष

आशा सभी करते हैं। आशा जिन्दगीका लंगर जरूर है। इसके सहारेसे लम्बी जिन्दगीका पल-पल बड़ी आसानीसे कटता है। लेकिन हे मानव! तू जिन्दगीकी खुशियों और सुविधाओंके लिए प्रयत्न भी कर। केवल आशा-ही-आशामें नैराश्यकी प्रतिच्छाया भी आ जाती है और निराशामें जिन्दगीकी कोई आशा नहीं।

सदा ध्यानमें रखनेकी दो बातें

तेरी जिन्दगीमें केवल चार बातें हैं और यह भी जरूरी नहीं कि तू चारोंको याद कर। यदि तुझे खुशनसीब होकर जीना है तो दो बातें—यानी भलाई, जो तूने किसीके साथकी हो और बुराई जो किसी दूसरेने तेरे साथ की हो—दोनोंको हमेशा-हमेशाके लिए भूल जा और दो बातें-पहली मालिक और दूसरी मौतको सर्वदा याद रख।

तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु

शुभ-कार्य करके ही मनुष्य सच्चे सुख एवं शान्तिकी प्राप्ति कर सकता है। परन्तु संसारमें कोई कार्य न शुभ है, न अशुभ। हमारे संकल्प ही उन्हें शुभ और अशुभ बना देते हैं। अतः यदि तू शुभ कार्य करना चाहता है तो शुभ संकल्प कर। संकल्पकी शक्ति महान् है और तो और, संकल्पसे ही इस सृष्टिकी रचना होती है।

आत्मा ही गुरु है। आत्मा ही कल्पवृक्ष है। इस कल्पवृक्षके नीचेकी हुई कामनायें अवश्य पूर्ण होती हैं। अतः तू अपनी आत्माकी रक्षा कर। आत्म-रक्षा ही सबसे बड़ा धर्म है।

जीवनमें भाग्यवान् कौन?

जिस मनुष्यकी अच्छे कर्म करनेपर निन्दा होती है वह बड़ा भाग्यवान् है। जो अपने अच्छे कर्मके बदले धन्यवाद या तारीफ आदिकी इच्छा करता है वह अभागा है। क्योंकि बहुमूल्य सत् कर्मोंको वह थोड़ी कीमत पर बेंच डालता है। पापी व्यक्ति तभी तक आनन्द भोगता है जब तक उसका पाप पक नहीं जाता। पाप पक जानेपर उसका भंडा फूट जाता है। गन्दे पानीका हौज तब तक गन्दा पानी बटोरता है जब तक कि वह भर नहीं जाता।

जीवनमें शान्ति

जीवनका महामन्त्र है शान्ति। शान्तिकी बुनियादपर ही जीवनका सुखद निर्माण सम्भव है जीवनका सुखद निर्माण चाहने वाले व्यक्तिकी आवश्यकतायें

सीमित हो जाती हैं। सीमित आवश्यकताओंका अर्थ है आनन्द एवं सौहार्द्र युक्त जीवन।

जीवनमें पश्चाताप और जीवनका लक्ष्य

भलाई करो तो भूल जाओ। बुराई करो तो तब तक याद रक्खो जब तक उसका प्रतिकार न हो। प्रतिकारके बाद ही हे मानव! तू सच्चे दिलसे अफसोस कर। जीवनके जितने दिन हैं उतने रास्ते। पर सभी रास्तोंकी मंजिल एक है। अतः हे कापालिक! तू उस एक मंजिलकी तरफ एक रास्ताका निर्माण कर और उसी रास्तेपर अपनी जिन्दगीको ले चल।

सत्कर्म

सच्चाई ही तुम्हारा जीवन पथ हो, नैतिकता ही आदर्श हो, कोमलता ही तुम्हारा स्वर हो और तन्मयता ही तुम्हारा लक्ष्य हो, तभी हे मानव! तुम सत् कर्मी बन सकते हो। अधिक वाक्पटुता, अधिक चंचलता, तुम्हारे मार्गके रोड़े हैं। यदि तू उज्ज्वल, कीर्तिमान्, स्वाभाविक, स्वच्छ जीवन चाहता है तो हे मानव! अपने दैनिक कर्मोंको सत् कर्मोंके हवाले कर दे निःसन्देह अन्तरिक्षके कापालिक तुम्हारी मदद करेगें।

संसार वृक्षके मीठे फल न चखो

मोह और स्वार्थ इस विस्तृत संसारमें अज्ञानके दो मीठे और लुभावने फल हैं जो सहज ही में अज्ञानीको अपनी ओर खींचकर दुष्ट और कायर बना देते हैं। अतः हे कापालिक! तू अपनेको ऐसा फौलाद बना दे जो टूट सकता हो किन्तु झुक नहीं सके।

मानव परखे एक घड़ी

अपराधको छिपानेका प्रयत्न निष्फल है। अपराधको अज्ञानी छिपाकर ज्ञानीके मुखपर तब तक पर्दा नहीं डाल सकता, जबतक कि स्वयंपर पर्दा न डाल ले। क्योंकि अपराध तो मनुष्यके मुखपर अंकित रहता है जिसे ज्ञानी एक ही क्षणमें देख लेता है। कहा भी है—

सोना परखे घड़ी-घड़ी, मानव परखे एक घड़ी ॥

कापालिकका लोक जीवन कैसा हो ?

हे कापालिक! आदमी कोई-न-कोई काम लेकर इस संसारमें आता है। जिस काममें तुम्हारी सच्ची दिलचस्पी हो, वही तुम्हारा असली काम है। तुम्हारे भाग्य का मार्ग तुम्हारे आचरणकी रेखाओंसे ही बना हुआ है। यदि तुम्हें अपना उचित स्थान मिल गया हो तो अपनी सारी मानसिक और शारीरिक ताकत उसको सफल बनानेमें लगा दो, तुम्हें सफलता अवश्य मिलेगी।

"जो व्यक्ति समयको नष्ट करता है समय उसे स्वयं नष्ट कर देता है।"

क्या तुम्हें अपने जीवनसे प्रेम है ? यदि हाँ, तो समयको बर्बाद मत करो। क्योंकि यह खूबसूरत जीवन समयसे बनता है। जीवनमें समयका बहुत बड़ा महत्त्व है।

अभिमानसे आत्म पराजय

हे मनुष्य ! तू अभिमान्से दूर रह। बुढ़ापा रूपको, मृत्यु प्राणको, असूया, धर्म-चर्चाको, क्रोध श्री को, काम लज्जाको और निराशा धैर्यको हराते हैं। लेकिन अभिमान ! अभिमान तो जीवनके हर क्षेत्रमें पहुँच, सम्पूर्ण जीवनको हरा देता है।

कापालिकका धर्म विषय-चिन्तनसे विरति

हे कापालिक ! तू विषयोंका चिन्तन न कर। संसारमें विषयोंका चिन्तन जीवनको गिरा देता है क्योंकि विषयोंका चिन्तन करनेसे विषयोंमें प्रेम होता है। प्रेमसे काम उत्पन्न होता है कामसे क्रोध, क्रोधसे मोह और मोहसे स्मृति भ्रष्ट हो जाती है। स्मृति भ्रष्ट होनेपर बुद्धिका नाश हो जाता है और जब बुद्धिका नाश हो गया तो समझ लो जीवन अपने आप गिर गया।

निर्धन कौन ?

हे कापालिक ! जो बहुत सिद्धान्तकी बात करता है, जो बहुतसे धर्म-शास्त्र पढ़ता है, जो बहुत कुछ जानता है, पर उन सबपर अमल नहीं करता वह, उस निर्धनके समान है जो दूसरोंका धन गिन कर स्वयं धनी होनेका अहंकार करता है।

सबके प्रति सम्मान भाव

जीवनमें सम्मानका बहुत बड़ा महत्त्व है हे मानव ! तू सबका सम्मान कर। यदि तुम्हारे सामने तुम्हारा शत्रु हो तो तू उसका भी सम्मान कर यदि वह भूखा है तो उसे खाना खिला, यदि वह प्यासा है तो उसे पानी पिला। तुम्हारे इस सम्मानसे वह स्वतः जल उठेगा। उसका शत्रु-भाव नष्ट हो जायगा और निःसन्देह तुम्हारी ही जीत होगी।

आत्माके मंदिरमें ईश्वरका निवास

हे गुमराह प्राणी ! ईश्वरके ढूँढ़नेमें तुम गुमराह मत हो। यदि तुम्हारा हृदय पवित्र है तो ईश्वर तेरे पास है। क्या तुम नहीं जानते कि तुम्हीं ईश्वरके मन्दिर हो और ईश्वर तुममें ही रहता है।

गुरु-मन्त्रका जीवनमें प्रयोग

हे कापालिक ! शस्त्रागारके शस्त्रका इस्तेमाल न होनेपर जैसे जंग खा जानेसे वह विनष्ट हो जाता है वैसे ही गुरु मन्त्र बिना उचित इस्तेमालके विनष्ट हो जाता है। तुम्हारे गुरुने तुम्हें आत्म-निर्माणके जो मन्त्र बताये हैं तू उनका

जप कर और जीवन-व्यवहारमें उन्हें उतारनेका प्रयास कर। यदि तू उनका प्रयोग नहीं करता तो याद रख! गुरु-मन्त्रोंमें जंग लग जायेगा जो कभी छुड़ाये नहीं छूट सकेगा।

आत्माकी विशालता

हे मानव! संसार बहुत विशाल है। तुझे इस संसारमें माँने जीनेके लिए भेजा है और यह भी कहा है कि तू विशाल बन। यदि इस संसारमें तू विशाल नहीं बनता, अपनी आत्मा, अपने ज्ञान, अपने पुरूषार्थको संसारकी तरह विशाल नहीं बनाता तो कूप-मण्डूक जैसा ही रह जायेगा। तब जानता है माँको इससे दुःख होगा और माँको दुःखी कर कोई भी अमरत्त्व नहीं प्राप्त कर सकता।

सर्वेश्वरी समूह क्या है?

हे संसारसे घबराये हुये मनुष्य! ईश्वरकी शरणमें आये हुये साधु-पुरूष! आत्माकी आवाज पर चलने वाले! मनकी आवाजको न सुनने वाले! सत्य एवं असत्यके दल-दलमें फँसे हुये लोगों! जो इससे भी परे है, जो हम सबमें निहित है, उसे प्राप्त करनेका मार्ग प्रशस्त करो। ऐसा ही करने वाले व्यक्तियों का यह समूह है। इसीलिए इसे श्री सर्वेश्वरी समूह कहते हैं।

उज्ज्वल भविष्य और भूतकी चिन्ता

हे कापालिक! भूतकी चिन्ता तेरे जीवनकी सबसे बड़ी कमजोरी है। यदि तुम्हें उज्ज्वल भविष्यका निर्माण करना है तो तू वर्तमानको बना। तेरा वर्तमान तुझे उज्ज्वल भविष्यकी ओर ले जायेगा।

आत्माकी प्रेरणा

हे मानव! मनकी आवाज ठीक नहीं! मन चंचल है। उसकी चंचलता तुम्हें अनगिनत विषय-वासनाओंके कगार पर ले जाती है। यदि तुम्हें वास्तवमें सुमधुर जीवन बिताना है तो तू आत्माकी आवाजको पहिचान और याद रख तेरी आत्मा सर्वदा तुझे सही प्रेरणा देगी। यह तो दीपकी तरह प्रकाशमय है।

श्रीमान् कौन!

श्रीमान् वही प्राणी है जिसमें श्री संचित है। जो ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन व्यतीत करता है उसमें दिव्य-शक्ति एवं अलौकिक प्रतिभा श्रीका परिचायक है। अतः हे मानव! तू ब्रह्मचर्यंका अभ्यास कर।

आदिशक्तिका साक्षात्कार

आदिशक्ति श्रीसर्वेश्वरी समस्त शक्तियोंकी जन्मदात्री हैं और उसी शक्तिका दर्शन आत्माका दर्शन है। हे प्राणी! तुझे पता नहीं तू उसी शक्तिका

एक विन्दु है। अस्तु, तू निरन्तर उस महाशक्तिका ध्यान कर। क्योंकि उसकी साधनासे ही ऋद्धि एवं सिद्धि सुलभ है।

उत्तम संकल्प

उत्तम संकल्प ही आत्मज्ञानका मूल मंत्र है। आवश्यक यह है कि आत्म-चिन्तनका अभ्यास किया जाय। तभी आत्माको परमात्माका सच्चा स्वरूप हृदयंगम होगा और वह आत्म-विभोरकी अवस्था प्राप्त करेगा जिसके बाद कुछ पाना शेष नहीं रहेगा।

दुःखमें भी हँसते रहो

हे मानव! दुःखसे तुम क्यों घबराते हो? दुःख तो केवल छाया मात्र है। जिसमें चेतना है उसमें दुःख है। सच पूछो तो दुःख तेरे जीवनकी एक ऐसी कड़ी है जिसके अभावमें तेरा ही जीवन तुझे स्पष्ट नहीं है। तू मुस्कराता रह और मुस्करा कर दुःखोंसे लड़ता जा। यही तुम्हारा जीवन है।

कापालिकका मानवता-धर्म

हे कापालिक! कुछ विद्वान् अपने बुद्धि-बलसे कहते हैं कि यह संसार एक दिन काल कवलित होकर ब्रह्ममय हो जायेगा तो फिर तेरी साधना और आराधना कैसी? यदि तुम्हें अपने जीवनको अत्यधिक पवित्र बनानेकी कामना है तो तू अपने शरीरको न सुखा, जीवनको न गला। बस, तू सर्वदा यही सोच कि संसार काल-कवलित होनेके लिये एक क्षण भंगुर कगारपर स्थित है। बस, तू सबको छोड़, एक मात्र मानवताके धर्मको स्थापित करनेमें अपनी बल-बुद्धि लगा दे। तेरा हृदय पवित्र होगा, तुझे संतोष प्राप्त होगा। यही तेरे लिए महात्याग और सबसे बड़ी तपस्या है।

कर्मनिष्ठ बनो

हे मानव! भूतकी चिन्ता न कर, भविष्यकी शुभ कामना कर। जीता वही है जो कर्मनिष्ठ हो। कर्म सत्कर्मका नाम है। कर्मशीलके लिये असम्भव कुछ भी नहीं।

आत्मारामका चिन्तन

माँ-गुरुकी आराधनासे प्राणी अमरत्व प्राप्त करता है। आत्मारामके चिन्तनसे सभी विघ्न समूल नष्ट हो जाते हैं। आत्माकी आवाज पहिचानने वाला अदृश्यको भी दृष्टिगत करता है।

माँकी आराधनासे जीवनमें मंगल

हे प्राणी! जीवन क्षणभंगुर है। अतः सब प्रकारका मंगल प्रदान करने वाली माँकी आराधना कर जिससे अपना मंगल करोगे और अन्यको भी सब कर्मोंमें लगा सकोगे।

पुरूषार्थ–आत्मविश्वास–सत्कर्म

पुरूषार्थ न करने वाला प्राणी ही दरिद्रताको प्राप्त होता है। माँ गुरुके शरणमें कोई बाधा नहीं। आत्म-विश्वास ही सफल जीवनकी आधारशिला है। सांसारिक भेद-भावोंके त्यागसे ही अमर ज्योतिका दर्शन होता है। जीव अविनाशी है और कर्म फलको भोगना अनिवार्य है अस्तु, तू सत्कर्म-रत रह।

ज्ञानी कौन है ?

भूतकी चिन्ता छोड़ भविष्य चिन्तन कर। प्रिय वचन बोल, कुछ खर्च नहीं। निर्धनको कुछ न दे सकने पर भी अपनी सहानुभूति दे, माँ स्वर्गसे भी अधिक प्यारी है। ज्ञानी शोक नहीं करता।

मित्रताकी डोर

हे मानव ! यह संसार बहुत विस्तृत है। इसे दिलकी गहराईमें उतारना ही वास्तविक सफलता है जो मित्रताकी डोरसे ही सम्भव है। लेकिन तू भली भाँति याद रख, इस संसारमें न कोई तुम्हारा मित्र है, न कोई तुम्हारा शत्रु। यहाँ तो तुम्हारा अपना ही व्यवहार शत्रु और मित्रका सृजन करता है। अतः तू अपने व्यवहारको सम्भाल और अपने व्यवहारमें ऐसी मधुरता ला कि सारा संसार तुम्हारा मित्र बन जाय और तू मुस्कराते हुये विस्तृत संसारको अपने दिलकी गहराईमें उतार ले।

जीवनमें व्यवहार–कुशलता

जिसमें न दान है न धर्म है, न ज्ञान है न तप, न विद्या है न विनय, उसके लिए सुव्यवहार-दुर्व्यहारका कोई अर्थ नहीं। वह तो जीता है सिर्फ जीनेके लिये। अतः जब तुम्हें व्यवहार करना है तो दान, धर्म, तप, ज्ञान, विद्या एवं विनय सबको जीवनके हर क्षणमें प्राप्त कर। तुम व्यवहार कुशल होगे। तुम्हारा व्यवहार संसारको तुम्हारा मित्र बनाकर सबको तुम्हारे नजदीक कर देगा।

आत्म-गौरव

यदि तुम विनाशसे बचना चाहते हो और यह भी चाहते हो कि तुम्हारी संस्कृति और तुम्हारी सभ्यता पर विनाशकी छायाकी रेखा तक न पहुँचे तो याद रक्खो तुम्हें अपने इतिहासकी रक्षा करनी होगी। पूरे यत्नसे अपने प्राचीन गौरव और इतिहासकी निधियोंको अपनी स्मृतिके कोषागारमें संजोना होगा इतिहास और प्राचीन गौरवका विस्मृत कर देनेसे विनाश निश्चित है।

उपकारसे जीवनमें पवित्रता

हे मानव ! उपकार करो। उपकार तुम्हारे हृदयको ऊँचा उठाता है। सहस्र पाप एक उपकारसे विनष्ट हो जाता है। जिसने पहले तुम्हारा उपकार किया हो यदि वह बड़ा अपराध भी करे तो तू उसके उपकारको याद

कर उसका अपराध भूल जा। यह एक और उपकार होगा। ऐसा उपकार जो तुम्हें पवित्र कर सर्वदा तुम्हें नये उपकारकी ओर प्रेरित करेगा।

आत्मबलकी प्राप्ति

हे कापालिक ! तू आई हुई परिस्थितियोंका धैर्य पूर्वक मुकाबला कर। जो जीवनमें आई परिस्थितियोंका मुकाबला करता है वह सर्वश्रेष्ठ है। जैसे व्यायाम करनेसे शरीर और गूढ़ प्रश्नोंके हल करनेसे बुद्धि बढ़ती है वैसे ही कठिन परिस्थितियोंका मुकाबला करनेसे आत्मिक बल प्राप्त होता है।

सच्चा साधक कौन ?

हे मानव ! यदि तू साधक बनना चाहता है या अपनेको साधक कहता है तो संसार का माया-मोह त्याग दे। नौका जल में रह सकती है किन्तु जल नौका में नहीं रहना चाहिये। उसी प्रकार साधक संसारमें रहे पर संसारका माया-मोह साधकके मनमें न रहे। माया-मोह युक्त मनुष्य साधक हो ही नहीं सकता।

मानव-शरीर और मनुष्यका कर्त्तव्य

हे कापालिक ! मानव शरीर का बहुत बड़ा अर्थ है और यह तू अच्छी तरह याद कर ले कि तुम्हें घर बार-बार मिल सकता है, पृथ्वी बार-बार मिल सकती है, मित्र बार-बार मिल सकते हैं और स्त्री भी बार-बार मिल सकती है परन्तु मानव शरीर बार-बार नहीं मिल सकता। अतः तू यह मानव शरीर प्राप्त कर कुछ ऐसा कार्य कर जो तेरे जीवन को स्वच्छ बना सकें।

ईश्वरकी आज्ञाका पालन

यदि तू ईश्वरके नजदीक जाना चाहता है तो ईश्वरके बताये हुये मार्गों पर चल। संसार की भलाई कर। हे मानव ! तू अच्छी तरह याद रखले कि तुझे न तो तुम्हारी दौलत ईश्वर के नजदीक ला सकती है और न तुम्हारी औलाद ही। यदि तू सोचता है कि तुम्हारी औरत, तुम्हारे माता-पिता, सगे-सम्बन्धी तुम्हें ईश्वर तक ले जायेगें तो यह तुम्हारा भ्रम है। ईश्वर के नजदीक तो वही जा सकता है जो ईश्वर की बात मानकर मानव मात्र की भलाई करे।

अपनी भूलोंसे शिक्षा लो

हे मानव ! तू पागल मत बन। पागलपनमें अपने दरवाजे गलतियोंके लिये बन्द मत कर। गलतियाँ ही तुझे सही रास्ते पर ले जाएँगी। अगर तुम गलतियोंको रोकनेके लिये अपने दरवाजे बन्द कर दोगे तो यह अच्छी तरह नोट कर लो कि गलतियोंके आवरणमें छिपा सत्य भी बाहर रह जायेगा।

प्रबल स्नेह क्या है ?

हे मानव ! तू अपने स्नेह का ढिंढोरा मत पीट और न दुनियाके सामने

अपने स्नेहका प्रदर्शन ही कर। स्नेह तो मनके अन्दर छिपी मनकी एक गोपनीय स्थिति है। यह अच्छी तरह याद रख कि स्नेह जितना गुप्त रहता है और जितना ही एकान्तका होता है उतना ही वह प्रबल हुआ करता है।

ईश्वरकी प्रसन्नता

हे मेरी आत्माओं ! मैं जो अपने आप में हूँ वही तुममें भी हूँ। वहीं संसारके सभी प्राणियों में भी हूँ। यही मेरा व्यापक रूप है। तुम मेरे इस व्यापक रूपकी एक रेखा हो। संसार के सभी प्राणी मेरे अंग हैं। अतः हे उपासको ! मेरी उपासनाका प्रथम विधान यही है कि तुम मेरे किसी अंगको कष्ट न दो, किसी अंगसे बैर न मानों, किसी अंगका अहित न सोचो। मेरे सभी अंगोंकी रक्षा करो, मेरे सभी अंगो से सत्याचार बरतो, मेरे सभी अंगोंका सम्मान करो मेरे सभी अंगोके सौंदर्य के प्रति पवित्र बनो, मेरे सभी अंगोंसे निर्विकार अनुराग करो और मेरे सभी अंगों को अपने त्याग और सेवासे प्रभावित करो। ऐसा करनेसे ही हे भक्त जन ! मैं तुम में अपना विकास देखकर प्रसन्न हूँगा।

धर्म-पथ क्या है ?

हे अमृत पुत्रो ! लोक-परलोकको जो धारण करे वह धर्म कहलाता है। समस्त सृष्टिका धर्म एक है। सत्य ही धर्म है। लोक-परलोक असत्य है। धर्म अपना है। लोक–परलोक अपना नहीं है। धर्म अमृत है, लोक-परलोकके दैहिक क्रिया-कालप मरणशील हैं। सर्व शक्तिमान् अन्तरिक्ष कापालिक हमारी धर्मास्था और आत्मास्थाके द्वारा आराध्य हैं। मनुष्यके समस्त धर्म-सम्प्रदाय धर्मपथ हैं जो महाप्रभु अंतरिक्ष कापालिक की ज्योतिर्मय किरणें हैं।

ईश्वरीय क्षण

अभी-अभी बीतने वाला क्षण, जिसमें, मैने आत्म-चिंतन किया है ईश्वरीय क्षण है। हमारे इस चिंतन क्षणने हमें जो पथ दिखाया है, वही ईश्वरीय-मार्ग है।

मौनकी स्थिति

मौनकी स्थिति सत्य भाषणसे अधिक उच्चतम है, पवित्र है और ब्रह्ममय है। निःशब्द व्यंजना ही सर्वोत्तम व्यजना है और वही आत्मस्थित ब्रह्म और ब्रह्म स्थित आत्माका बोध कराती है। मौन आत्माकी सर्वाधिक महान् शक्ति है। आत्म-लीन, मौन, निर्विकार, निष्काम एवं निरपेक्ष स्थितिकी महोपलब्धि है। यही अद्वैतका एकरस ब्रह्म तत्त्व है।

सद्गुरु की महिमा

कुछ लोग सद्गुरुको पारस कहते हैं। पारस लोहेको तो सोना कर देता है किन्तु उस सोनेमें दूसरे लोहेको सोना बनानेकी क्षमता नहीं होती, लेकिन सद्गुरु

वह है जो शिष्यको अपने समान सद्गुरु बनाकर उसको अपने जैसे सद्गुरु बनने की क्षमता प्रदान करता है।

पुरुषार्थसे सफलता और सिद्धिका संगम

आत्माओ! निरन्तर पुरुषार्थसे जीवन सफलता और सिद्धिका संगम बन जाता है। देह का प्रयोजन कर्म है, किन्तु कर्मका प्रयोजन आत्मा की प्राप्ति है। कर्मरत पुरुषार्थको वही सही दिशा है जो जीवनको सार्थक लक्ष्यकी ओर ले जाती है।

प्रेम ही ईश्वर है

दैहिक प्रेम-प्रेम नहीं है। वह तो मोह-ममता है। वास्तविक प्रेम तो उस ममताको नष्ट कर देनेमें है। आत्मिक प्रेम ही वास्तविक प्रेम है। आत्मिक प्रेम का जो आचार्य है उसकी शरणमें जाओ। वह तुम्हें प्रेमका विराट् रूप दिखलायेगा। वह तुम्हारे हृदयमें ही है। अहंकार रहित होकर खोजो। उसे निश्चय पा जाओगे। और जिस दिन तुम्हें अपने हृदयमें प्रेमका आचार्य मिल जायेगा उसी दिन तुम्हें ज्ञात हो जायेगा कि प्रेम ही ईश्वर है।

भक्तके वश भगवान्

जो भक्त होता है वह भगवान्का हृदय हो जाता है। भगवान् भक्तके हृदय को क्षण भरके लिए भी नहीं छोड़ता। अपने भक्तकी व्यथा दूर करनेके लिये प्रभु तत्क्षण प्रकट होते हैं। चाहे उन्हें खम्भे फाड़ कर प्रकट होना पड़े, जहरको अमृत बनाना पड़े या मुर्दोंमें प्राण फूँकना पड़े, वे सब कुछ करनेके लिये तैयार रहते हैं।

असली प्रेम

जिसे जीवित जागृत प्राणियोंसे प्रेम नहीं होता उसे मन्दिरमें बैठे पत्थरके देवता और मस्जिदके शून्य निराकार ईश्वरसे प्रेम नहीं हो सकता।

दीन-दुखियोंमें ईश्वर-दर्शन

धनकी चिन्ता करने वालोंके हृदयमें ईश्वर भक्ति नहीं होती। प्राणियोंके कल्याणके लिये व्याकुलता ही भक्ति है। इसीलिये दीन-दुखियोंको ईश्वर समझकर तत्काल उनकी सेवामें लग पड़ो।

विजयकी नीति

दृढ़ आत्म-विश्वास ही विजय-प्रदायिनी नीति है और विजय-प्रदायिनी नीति ईश्वरकी एक शक्ति है।

ईश्वरकी एक झलक

सभी ज्ञानोंमें आत्मज्ञान श्रेष्ठ है जिसकी उपलब्धि चित्त वृत्तियोंका दमन कर देने से होती है। निश्चय ही विजय-प्रदायिनी नीति, मौन और आत्मज्ञानमें ईश्वरकी झलक मिलती है।

अवधूत-संदेश

अविवाहित किन्तु गर्भवती स्त्रीको हेय दृष्टिसे देखना घोर पाप है। किसी भी धर्मके आप अनुयायी हों, यदि हो सके तो आप उन्हें आश्वासन दें। यदि आप उसके शिशुके रक्षार्थ सहयोग करते हैं तो आप ईश्वरकी पूजाका फल प्राप्त करते हैं।

मेरी तो ऐसी धारणा है कि मानवसे प्रेम करने वाले मनुष्य इनका अपमान नहीं करेंगे। यह समाजाकी कमजोरी है। जिससे इस तरह की बात पैदा होती है। यदि इस कमजोरी को दूर करना है तो ऐसी अभागिन स्त्रीको आप अपने सहयोगसे भाग्यवती बनावें। आपको महान् पुण्य होगा।

हम देखते हैं कि हर एक धर्म और जातिमें ऐसा होता ही रहता है। यदि हम ऐसी माताओंका तिरस्कार करते हैं तो हमारे लिये कहीं ठिकाना नहीं है।

(प्रवचन : स्थान वाराणसी आश्रम तिथि ३० अक्टूबर, १९७१ ई०)

कापालिकको क्या चाहिये ?

हे कापालिक ! तू स्वर्गको छोड़ हिमालयकी राह क्यों लेता है ? स्वर्ग तो तेरी जिन्दगीके पीछे स्वयं लगा है। यदि तुझे ईश्वर चाहिए तो अपने बन्धु-मित्र, संगी-साथियोंका आदर कर। मान-प्रतिष्ठा चाहिये तो दुनियाकी याद कर। शान्ति चाहिये तो माँकी शरण ले।

सच्चा स्वास्थ्य

धर्म-द्रोहीका मन मुर्दा, पापीका मन रोगी, लोभी व स्वार्थीका मन आलसी तथा भजन-साधनमें तत्पर व्यक्तिका मन स्वस्थ होता है। हे मानव ! यदि तू अपने स्वास्थ्यको जीवन भर कायम रखना चाहता है तो अधर्म, द्रोह, पाप एवं लोभसे अपने आपको मुक्त कर ले। यही संसार तुझे प्रकाशयुक्त लगेगा और तू इस प्रकाशसे अपना ही नहीं, अपने सम्पूर्ण समाजके स्वास्थ्यकी रक्षा कर सकता है।

जीवनका कुष्ठ क्या है ?

हे कापालिक ! यदि तेरा एक हाथ बुरा करता है, एक आँख बुरा देखती है, तो तू अपना हाथ काट दे और अपनी आँख फोड़ ले। यह सब इस लिये नहीं कि यदि वे रहेंगें तो बुरा करेंगे और बिना उसके काटे बुराई दूर न होगी, बल्कि, इसलिये कि शरीरका यह अंग भले ही नष्ट हो जाय परन्तु उसके कारण तुम्हारा यह शरीर कुमार्गी न कहा जाय क्योंकि कुमार्ग जीवनका सबसे बड़ा कुष्ठ है।

कापालिकका एक कर्त्तव्य

बुराई करने वालेका विरोध मत करो। बुराई करने वालेके गाल पर थप्पड़ मत मारो। बुराई करने वालेकी निन्दा भी एक बुराई है। यदि तुम्हें

बुराई दूर करनी है तो हे कापालिक ! बुरोंकी सभामें जाओ। उनकी बुराई निकटसे देखो और अपनी अच्छाईसे उनकी बुराईका समूल समाप्त कर दो, तभी तुम्हारी अच्छाईकी मर्यादा होगी।

सरल जीवन श्रेष्ठ जीवन है

हे कापालिक ! आडम्बर जीवनको कुमार्ग पर ले जाता है। सरल जीवन ही श्रेष्ठ जीवन है। तुम यह अच्छी तरह जान लो—सरलतामें सच्चाई है और सच्चाईमें आत्मीयता है। इसमें संदेह ही नहीं कि परम लक्ष्यकी प्राप्ति ही मोक्ष-प्राप्ति है।

सरल जीवन का मूल प्रेम और सौहार्द्र

यदि तुम जीना चाहते हो तो सरलताकी ओर बढ़ो। सरल जीवनका मूल प्रेम और सौहार्द्र है। प्रेम और सौहार्द्र वह शक्ति है जो सम्पूर्ण लोकापवाद को वशमें कर तुमको एक नई प्रेरणा देगी। वह प्रेरणा देगी जो बहुत बड़े ब्रह्मज्ञानी को भी निरन्तर साधना के पश्चात् मिलती है।

जीवन में सफलता का अवलम्बन

जीवनमें नियम एवं संयम अविचलित सफलताके लिए अवलम्बन हैं।

सच्चाई के लिये कापालिक अपना बलिदान कर सकता है

सच्चाई जीवनका आवश्यक पहलू है। हे कापालिक ! सच्चाई पर यदि तुम्हें अपनी जान भी कुर्बान करनी पड़े तो उसके लिए शौंकसे तैयार रहो। किसी चीज को तभी विश्वासके साथ कहो जब तुम्हें स्वयं उसपर विश्वास हो।

निस्तरंग मनमें आत्म-दर्शन

अविद्याको क्षर अथवा नश्वर तथा विद्याको अक्षर अथवा अमर कहा गया है। जो अविद्यामें ग्रस्त होते हैं वे अहम्मन्य होकर उसी प्रकार संसारमें व्यर्थ चक्कर काटते हैं जिस प्रकार अन्धोंके नेतृत्वमें अन्धे। वे अज्ञ होते हुए भी अपने-को ज्ञानी तथा कृतार्थ समझते हैं। विद्यासे बन्धनकी खोज की जाती है। बन्धन-की खोजके बाद छुटकारेका प्रश्न उठता है। छुटकारेका प्रश्न तभी उठता है जब मन विकारोंसे बंधा हो। मनकी धारामें उठती हुई तरंगें आत्माकी नदीकी तरंगें हैं। तरंगित जलमें कोई मुँह नहीं देख सकता। तरंगित मनमें आत्म-दर्शन नहीं होता। आत्म-दर्शनके बिना छुटकारा असम्भव है। विनम्रताके बिना आत्म-दर्शन नहीं होता। विनय विद्याकी देन है।

त्याग के त्याग में सच्चा सुख

सुखकी उत्पत्ति त्यागसे है। सम्पत्ति-त्यागनेसे भी सुख नहीं मिलता।

सम्पत्ति तो कामना रहते हुये भी छूटनेवाली है। परिवार भी बिना चाहे छूट जायेगा। पृथ्वी किसीकी नहीं है। शरीर भी अपना नहीं है। मनुष्य यह सब त्यागकर सुखी बनना चाहता है। इस तरह त्यागकी भावना भी सुखसे दूर है। सुख तो त्यागको त्याग देने में है।

सुख की कामना से दुःख का जन्म

सुखकी चिन्ता न करो। दुःख तुम्हारे पास न आयेगा। सुखकी कामना ही दुःख का कारण है। कामना स्वयं दुःख भरी अनुभूति है। तभी तो कामना पैदा होते ही मनुष्य उसे पूरा करनेका प्रयत्न करने लगता है। उसे तब तक चैन नहीं मिलती जब तक उसकी कामना पूरी नहीं हो जाती। अतः हे मानव तू अपनी आवश्यकतायें सीमित रख।

वह आदत जिसका नाश नहीं होता

आदतकी दवा मौत है। अभ्याससे आदतका निर्माण होता है आदत धर्म का रूप लेती है। धर्मका नाश नहीं होता। जो आदत धर्मका रूप नहीं लेती उसका नाश शरीरके साथ ही होता है उससे पहले नहीं।

योगीका योग

प्राण शक्ति है। जीव-धारी शक्तिके साकार रूप हैं। शक्तिकी क्रिया रूपधारी ही समझते हैं। शरीर धारण कर जीव शक्तिके एक कणको बंधनमें रखनेका प्रयास करता है। जीव वस्तुतः मुक्त है। उसका बंधन कैसा? जब शरीर छूट जाता है तो जीव-कण अपने केन्द्र-स्थानमें पहुँच जाता है। योग-द्वारा प्राण-शक्ति में मिल जाता है। योगी ऐसा ही योग अथवा मिलन चाहता है।

+ + +

जो वादे करें उन्हें पूरा करें। आप सँभाल कर वादा करें। जो व्यवहारमें लाया जाये वही सत्य है। जो सिर्फ कहने-सुनने में है वह विवाद मात्र है।

+ + +

भजन तजनके मध्यमें, हम करें विश्राम।
हमरी भजन राम करें, हम करें आराम॥

बन्धनसे मुक्त होकर ही जीव ईश्वरके सामीप्यका अधिकारी हो सकता है।

+ + +

नारी-नदोमें डूबने वाले जीव। सफल योनि को इच्छा कर।

+ + +

ऐश्वर्य-कामनाका जहाँ अभाव है उसी हृदयमें ईश्वरका निवास है। ऐश्वर्य चाहने वालेके लिए ईश्वर दुर्लभ है।

+ + +

जलसे मलिनता नष्ट होती है, ज्योतिसे अंधकारका नाश होता है, संत-दर्शनसे हृदय पवित्र होता है। संतकी संगतसे अज्ञानका नाश होता है।

\+ + +

वाणी आत्माके शस्त्रागारमें सर्वोत्कृष्ट शस्त्र है। इसके सफल उपयोगमें जीवनकी सफलता है।

\+ + +

संस्थाकी निन्दा न करो। संस्थामें शक्ति है। शक्ति संस्था स्वयं है, संस्थाकी सेवा शक्तिकी सेवा है।

\+ + +

बिना सोचे-बिचारे कोई निर्णय लेना मनुष्यकी अपनी कमजोरी है।

\+ + +

जिसका मन खान-पान और गहने-कपड़ेमें ही बसा है उसकी स्थिति पशुसे भी बुरी है। ईश्वरपर निर्भर रह कर ही दुनियाकी गुलामीसे छूटा जा सकता है।

\+ + +

सच्चा वैराग्य वहीं है जहाँ राग और ईर्ष्या न हो, स्वर्ग और नरककी परिकल्पना न हो और 'हम और हमारा' न रह जाय।

\+ + +

मन आत्माका ही प्रतिबिम्ब है। इसको साध लेनेसे आत्माका अनुभव होने लगता है।

\+ + +

मौन ही सर्वोत्तम जप है।

\+ + +

गुरु शिष्यका सहयोग परस्परापेक्षी है। गुरुके उपदेश-दानसे तभी सम्यक् फलका प्रसव होगा जब शिष्य उस उपदेशको सम्यक् धारण करेगा। ज्ञानोपदेशका दायित्व गुरुपर है किन्तु उपदेश-पालनका दायित्व शिष्यपर है।

\+ + +

जीवनकी सार्थकता इसीमें है कि संसारमें प्रेम हो।

\+ + +

खोये हुये व्यक्तिकी तरह अपनेको न समझें। चिन्ता छोड़ चिन्तन करें।

\+ + +

लोढ़ा करे बड़ाई हमहूँ शिवके भाई।

\+ + +

हे मनुष्य ! तुम उसे जैसा समझ रहे हो वह वैसा नहीं है। जो तुम्हारी समझमें नहीं आ रहा है वही वह है।

\+ + +

ईश्वरकी तरफ होनेसे ऐश्वर्य और ऐश्वर्यकी तरफ होनेसे ईश्वर पीछे छूट जाते हैं।

\+ \+ \+

लोभ पापका मूल।

\+ \+ \+

मन्त्रको मुखमें घुलाइए। देखिये क्या आनन्द मिलता है ? जीव कृतार्थ हो जायेगा। आत्माका दर्शन होगा।

\+ \+ \+

समझें, सोधें और तब करें।

\+ \+ \+

जबानका सच्चा, लंगोटका पक्का।

\+ \+ \+

बाबा बाबा सब करे, माई करे न कोय।
बाबाके दरबारमें, माई करे सो होय॥

\+ \+ \+

निगुरा बाँभन ना भला, गुरुमुख भला चमार।

\+ \+ \+

वैमनस्यका कारण अविश्वास है। विश्वास बड़ी चीज है। आप विश्वासी बनें।

\+ \+ \+

हे मनुष्य, अपनेपर ध्यान दें, जीवनका कार्यक्रम भोग और मैथुन नहीं। भोग और मैथुन रूपी चिरागपर लाखों पतिंगे जल गये हैं तुम भी जल जाओगे। थोड़ा सा जीवन है। उसे अच्छी तरह जीओ—निर्भीक, निरहंकार और निष्कपट विपत्ति और मौतका आवाहन मत करो। उनके आनेका मार्ग भोग और मैथुन है। इसे बन्द करो। करो और समझो।

\+ \+ \+

समाजसे विश्वास उठनेका कारण भय और घबराहट है।

\+ \+ \+

कभी-कभी रक्तकी धारसे शान्तिके पौधे सींचे जाते हैं।

\+ \+ \+

आत्मिक लाभ जिन कर्मों द्वारा न हो उन्हें निरर्थक समझें।

मनुष्यका धन विश्वास है। विश्वासहीन मनुष्य मृतक-तुल्य है। विश्वास नव जीवन, नव चेतना है।

\+ + +

विद्या बिन्दु मात्र है। अविद्या लहराता समुद्र है।

\+ + +

किये हुये कर्मोंकी तरफ मुड़कर न देखें। वही दुःख है।

\+ + +

जीवनमें असन्तोषका कारण घृणा एवं ईर्ष्या है।

\+ + +

जो अपने अन्दर सत्य है उसे छिपाना नहीं चाहिये। सत्यका बड़ा व्यापक रूप है। उसका पात्र होना चाहिए।

\+ + +

जहाँ न्याय है वहाँ समृद्धि और शान्ति है।

जहाँ दया है वहाँ प्रपंच और पाप है।

\+ + +

धैर्य वान् मनुष्य अमर होते हैं। अमीर लोग तिनकेकी भाँति जल जाते हैं। आसक्ति ही मोह है। मोह ही बन्धन है। ईश्वरकी शरणसे ही यह दुःख कटता है।

\+ + +

जिसे पुत्र, पत्नी एवं धनमें आसक्ति है वह दैवी सम्पदासे कोसों दूर है।

\+ + +

जो धन तथा स्त्रीको सब कुछ मान बैठा है, वह मूर्ख है।

\+ + +

जो अभिमानी है, वह अपनी आत्म-प्रतिभाको झुलसा रहा है।

\+ + +

जो नम्र और विचारक है वह साधु है।

\+ + +

इच्छायें ही बन्धन हैं इच्छाओंसे छुटकारा ही मुक्ति है।

\+ + +

जो स्त्री या पुरुष अपने रूपपर मोहित है वही सबसे अधिक कुरूप है।

\+ + +

नैतिक क्षत्रिय रामकी पूजा होती है, अनैतिक ब्राह्मण रावणका पुतला जलाया जाता है। नैतिकता पूज्य और प्रशंसनीय है।

\+ + +

उपकारके बदले कृतज्ञता दे सकते हैं, उपदेश नहीं।

\+ + +

मनसे मनको तौलिये दो मन कभी न होय।

\+ + +

गया सो गया। रहेको राखिये।

\+ + +

दया, धर्म, दानसे विरक्त रहने वाले व्यक्तिको ही असुरकी संज्ञा दी गई है।

दम्भरहित साधु परमार्थी होते हैं। दम्भ ही अज्ञानका कारण है। काटेके भयसे पृथ्वीको ढकने की आवश्यकता नहीं है, आवश्यकता सिर्फ अपने पाँव का ढकने की है।

\+ + +

अपराध से डरें, निर्भय रहेंगे।

\+ + +

आत्माशुद्धि के बिना वीर्य-संग्रह व्यर्थ है। मनमें विषयकी कामना करना आत्मविमुखता है।

\+ + +

ईश्वरके दूत, आकाश एवं दिशायें जो द्रष्टा हैं, उनसे तुम्हारा सत्कर्म या दुष्कर्म छिप नहीं सकता।

\+ + +

रागरहित चित्त योगयुक्त चित्त होता है। मन-मलिन मनुष्य पापोंसे अच्छादित रहता है।

\+ + +

सोये हुये को जगा सकते हैं, काढ़े हुये को नहीं।

\+ + +

इच्छा ही बन्धन है। मोह ही मद है। सच्चे रूपमें आत्म-चिन्तन ही मोक्ष है।

\+ + +

यदि आप किसीको गाली दें और वह न ले तो वह आप ही के पास

रहेगी। ऐसी आप बहुत सी चीजे देते रहते हैं। यदि उन्हें कोई नहीं लेता है तो वे आप ही के पास रह जाती है।

\+ \+ \+

मल-मूत्र से भरे हुए शरीरके रूप पर मोहित मनुष्यका अन्त दुःख है।

अवधूत संदेश

आपके सहयोग से ही आपकी संस्था ने आशातीत प्रगति की है। भविष्य में यदि आपका सहयोग इसी तरह रहा तो आपकी संस्था इस देशकी आने वाली पीढ़ियोंकी अच्छीसे अच्छी सेवा कर सकेगी। आपके देशमें रूढ़िवादिता समाज पर छायी हुई है। इसलिये आपके सहयोगकी परम आवश्यकता है। वैसे समय-समय पर बहुत सुधार हुआ है आप जानते हैं कि अपने मकानमें रोज झाड़ू लगानेकी आवश्यकता पड़ती है। इसीको दृष्टिमें रखते हुये, आपके समाजमें जो लोग भयंकर कूड़ा करकट और दूषित वातावरण पैदा कर रहे हैं और उनके साथ ही जो अवांछनीय तत्त्व हैं इनके उन्मूलनमें आपके हर तरहके सहयोग, हर तरहकी साधना और हर तरहकी तपस्याकी आवश्यकता है।

हमारा आपसे एक अनुरोध है। समूहका जो आदर्श है उसे आप बनाये रखें। आप यदि थोड़ा सा भी अपने आचार-विचार पर ध्यान देंगे तो हम आशा करते हैं कि समाजमें आप अग्रगामी, विवेकी और समाजके सम्मानित सदस्यके रूपमें अपनेको पायेंगे। सिंहके बच्चों को शिकारकी ट्रेनिंग नहीं दी जाती। आप एक अघोरी, ब्रह्मनिष्ठ फकीरका सान्निध्य प्राप्त किये हुए हैं। आप खुद ट्रेन्ड हैं। आप अपने रूपको न भूलें उसे सदा याद रक्खें।

हे साधु तू ऐसी वेष-भूषा ग्रहण कर जिससे तुझसे कोई ठगा न सके। यदि तुझे कोई ठग लेता है तो उसे तू अपना बहुत बड़ा परमार्थ समझ ले।

(प्रवचन : स्थान—वाराणसी आश्रम तिथि गुरू पूर्णिमा पर्वारम्भ १९७२ ई०)

\+ \+ \+

कामना ही बन्धन है। कामनारहित मनुष्य प्रभुत्वके निकट है। फलका प्रसव करनें वाला कदली का वृक्ष जिस तरह नष्ट हो जाता है उसी तरह मनुष्यको फलकी इच्छा नष्ट कर देती है।

\+ \+ \+

अक्षय जीवन चाहते हो तो ब्रह्मचर्य पालन करो।

\+ \+ \+

जितने अधिक प्रिय जन होंगे उतना ही अधिक दुःख होगा।
जितने कम प्रिय जन होंगे उतना ही कम दुःख होगा।

× \+ ×

जाति से ब्राह्मण को पूजना घोर पाप है। कर्मसे जो ब्राह्मण हो चाहे वह जातिसे चाण्डाल ही क्यों न हो उसको पूजना महापुण्य तथा फलदायक है।

\+ + +

माँ गुरूके उपासको ! सिंहको शिकार करना और मछलीको तैरना कोई नहीं सिखाता। गुरु मन्त्रके उपासको ! उसे समझो और बूझो।

\+ + +

जो शिष्य है उसीको गुरु होनेका अधिकार है।

भगवान पतित पावन हैं

हमारे भगवान पवित्र-पावन नहीं हैं वह पतितपावन हैं। पवित्रताका स्वाँग रचने वालेकी मुक्ति नहीं होती है। भगवान उसको अपना भी नहीं सकते। पतितके लिए भगवान हैं इसलिए वे पतितपावन हैं। हमारी भारतीय नदियोंको ही आप ले लीजिए जिसे गंगा, यमुना आदि-आदि नामोंसे संबोधित करते हैं। इन्हें भी शास्त्रकारोंने पतितपावनी और अघोरनी बताया है और इनकी शरणमें पतितपावनी ही कहकर प्राणिमात्र शरणागत होते हैं। यदि यह सत्य है तो यही सत्य रहेगा। पवित्रपावन सत्य नहीं हो सकता। पवित्रताका दम्भ भरनेवाले मनुष्योंको चाहिए कि कोई और ही पृथ्वी ढूँढ़ें जहाँ पवित्रपावन भगवान रहते हों। यह देश और यहाँकी संस्कृति ऐसे प्राणियोंको जो अपनेको पवित्र कहते फिरते हैं अपनेमें समेट नहीं सकता। ये पवित्र कहने वाले उपेक्षित लोग इसे पूरी तरह हृदयंगम करके सोचें तथा समझें।



रुद्राक्ष १७

प्रवचन

मानवता मनुष्य-जीवनका सबसे बड़ा धर्म*

आगे बढ़ना ही मनुष्यका प्रधान कर्म है, आगे बढ़नेवाला पीछेकी ओर नहीं देखता। जीवनमें जब काम करनेकी भावना आती है तभी लक्ष्य बनता है और बना हुआ लक्ष्य तभी प्राप्त होता है जब हम अपने इच्छित कर्मपथपर आगे बढ़ते हैं। मनुष्य जब मानवताका धर्म अपनाता है तभी उससे उसका इष्टदेव प्रसन्न होता है। इसीसे जीवनमें नेकनीयती आती है। नेकनीयतसे बरकत होती है। अतः जीवनमें नेकनीयती ही मनुष्यका सबसे बड़ा धर्म है। आप सब बहुत देरसे हमारा इन्तजार कर रहे हैं। संध्या भी हो चुकी है। सर्दी भी काफी बढ़ गई है। मैं आप सबके समक्ष कुछ देरसे पहुँचा हूँ। यद्यपि हम सबने रास्तेमें आप सबके बीच ठीक समयसे पहुँचनेका बहुत प्रयत्न किया परन्तु रास्तेकी कठिनाईने हम सबको लेट ही कर दिया। मुझे विश्वास है कि आप सब कुछ और नहीं सोचेंगे। हमें इस लेट होनेका दुःख है। आप सब ठेठ भाषा समझते ही हैं। मैं भी न कोई राजाका पुत्र हूँ, न मैं राजप्रासादका निवासी ही हूँ और न मेरा कोई राजपरिवारसे व्यक्तिगत सम्बन्ध ही है। यद्यपि हमारे बीच मास्टर, डाक्टर, किसान, विद्यार्थी सभी हैं, सबका सम्बन्ध ठेठ भाषासे अत्यन्त गहरा है। अतः जो थोड़ी बहुत बात होगी वह ठेठ भाषामें ही होगी। मेरा ख्याल है आप अवश्य ध्यान देंगे। मैंने आते समय आस-पासके गाँवोंमें अगल-बगल बाहर कई मूर्तियाँ और मन्दिर देखे हैं। कुछ मूर्तियाँ सात जातियों की देवियों की और कुछ देवताओंकी थीं। भोजपुरीमें इन सात देवियोंको ही 'पौनी सात' कहते हैं। मैंने साथके लोगोंसे पूछा—ये मूर्तियाँ क्या एक ही जाति या श्रेणी की हैं? कुछ लोगोंने बताया भी। वास्तवमें ये मूर्तियाँ एक ही वर्ग, श्रेणी या जाति की हैं। इनका एक ही माप-दण्ड है। इनमें हमारे देशकी संस्कृति एवं एकताका समावेश है। ये हमारे जीवनको एक स्वच्छ रास्ता दिखाती हैं। हमें इनसे प्रेरणा लेनी चाहिये।

भारत महर्षियोंका देश है। मनुष्यकी स्थिति बहुत ऊँची है। यह मनुष्य योनि हर योनिसे श्रेष्ठ है। हमारा मानव-धर्म यही बताता है कि हम आगे बढ़ें। आगे बढ़नेके भी कई रूप हैं। हमारा जीवन बहुत सीमित है। समयका जीवनमें अभाव है। कम समयमें हमको अधिक आगे बढ़ना है। समयकी कीमत अपनी परिपक्व स्थितिमें भान होता है, पर हमें जीवनके हर क्षणमें समयका ख्याल करना चाहिये, यह स्थिति चाहे परिपक्व हो या अपरिपक्व। पाण्डव सब राज-सुख भोगनेके बाद हिमालयकी ओर चल पड़े। सब लोग आगे बढ़ते चले जाते रहे थे। युधिष्ठिर सबसे आगे थे। इसी बीच उनका छोटा भाई पीछे [illegible] उसने बड़े भाई युधिष्ठिरसे

कहा कि हे भाई ! हमको भी साथ ले लो। मैं पीछे छूट रहा हूँ। युधिष्ठिरने कहा कि मेरे पास वक्त नहीं है। इतना भी वक्त नहीं है कि मैं पीछे मुड़कर तुम्हें देख सकूं। अतः तुम स्वतः आगे आ जाओ। वास्तवमें यह एक अजीब-सी स्थिति थी।

आगे बढ़नेवालोंके पास समय नहीं रहता और न वे पीछे मुड़कर देखते हैं। आगे बढ़नेका अर्थ है समयका मूल्यांकन कर काम करना। धर्म भी हमारा यही कहता है। बड़े-बड़े कवि और बहादुर भी ऐसे ही थे। सूर-तुलसी भी ऐसे ही थे। इनके अन्दर भगवानके प्रति श्रद्धा दर्शानेकी अनुभूति हुई। इन्होंने एक लक्ष्य अपनाया और महान् काव्य-ग्रंथोंकी रचना की। आपको मेरी बातें बुरी तो नहीं लग रही हैं? मैं आपके ऊपर धर्म और भक्तिका बोझ लादने नहीं आया हूँ और न कोई कथा-वाचक या व्यास हूँ कि आप सबको अच्छी-से अच्छी कथा सुनाऊँ। मैं आपको योग या वैराग्य साधनेको भी नहीं कहूँगा। मेरी तो आप लोगोंसे यह साधारण बात है कि सबको जीवनमें लक्ष्य बनाना चाहिये। मार्गमें कुछ कठिनाइयोंको हँसते हुए पार करनेका सङ्कल्प करना चाहिये, तभी लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है।

मनुष्यके जीवनका सबसे बड़ा लक्ष्य है मानवता। मनुष्य जब मानवताका धर्म अपनाता है तभी उससे उसका इष्टदेव प्रसन्न होता है। हिन्दू, मुसलमान या सभी धर्मके लोग नेकनीयत होनेकी शिक्षा देते हैं। सबकी कामना है कि वे नेकनीयत हों। जिस व्यक्तिकी नीयत खराब होगी वह बुरा होगा। ईमानदार नहीं होगा। विक्षिप्तता उसके मानसमें उत्पन्न होगी। क्रोध और काम आदि बुरे विचार उत्पन्न होंगे। वह अपने धर्मसे विरत हो जायेगा। मानवता और मानव धर्मका पतन होगा। यही व्यक्तिका सबसे बड़ा अवगुण है। मैंने अभी जो मानव गुणके बारेमें कहा है यह केवल मनुष्यका ही गुण नहीं है, यह ईश्वरका भी गुण है। यदि हम अपने वातावरणमें चारों तरफ इस गुणको व्याप्त होने दें तो हर तरफ ईश्वर-ही-ईश्वर दिखाई देगा। हमें ईश्वरको ढूँढ़नेकी जरूरत ही नहीं है। हम अपने जीवनमें इसी गुणका वातावरण बनायें। हमारे इस वातावरणके कण-कणमें ईश्वरका आलोक स्वयं दिव्य हो उठेगा। इसी गुणसे जन-जीवनमें शान्ति मिलेगी।

[प्रवचन : स्थान—जन-सभा विश्वम्भरपुर, जिला गाजीपुर, उत्तरप्रदेश
१९ दिसम्बर, १९६५ ई०]

संसारमें सबसे बड़ा सत्य है, न्यायसे डिगना अपराध है

भारतीयोंकी सबसे बड़ी पहिचान है व्यवहार-कुशलता। हम सबको व्यवहार-कुशल होना चाहिये। व्यवहार-कुशलता सामाजिक सफलताकी सबसे बड़ी उपलब्धि है। आप लोग जानते ही हैं कि मैं धर्म-ग्रन्थका पाठ या धर्म-ग्रन्थकी कोई कहानी नहीं कहता। हमें जो कुछ कहना है सामाजिक बातोंके आधारपर छोटी-छोटी बातें कहना है। व्यक्ति थोड़े दिनके लिए ही इस पृथ्वीपर आया हुआ है। यह थोड़ा दिन भी गुमराहीमें व्यतीत किया जाय तो अच्छी बात नहीं। हम सबको

ऐसा जीवन व्यतीत करना है, जिस जीवनसे सैकड़ों-हजारोंका कल्याण हो, तभी हमारा जीवन सफल समझा जायेगा। मैं दो-तीन साल पहले यहाँ आया था। सभी लोग सत्सङ्ग एवं कथामें विशेष दिलचस्पी रखते थे—ऐसा हमने देखा था। पुराने लोग भी कथा एवं ईश्वरमें दिलचस्पी रखते थे। ऐसा करनेसे जीवनमें ह्रास नहीं आता। सबमें साहस और भक्ति आती है।

इस भौतिक जीवनमें उन्नति आवश्यक है। लेकिन उन्नतिका आधार स्पष्ट और कल्याणकारी होना चाहिये। अनैतिकताका सहारा लेकर की गई उन्नति, उन्नति नहीं अवनति है। अनैतिकताके मध्य किया गया कार्य भयकी ओर ले जाता है। यदि व्यक्ति कोई गलत कार्य करके सफलता भी प्राप्त कर ले तो यह सफलता हृदयको संतोष नहीं देगी। जब वह अपने सीनेपर हाथ रक्खेगा तो उसे घबराहट ही मालूम होगी। हृदय सर्वदा धड़कता हुआ ही मिलेगा। हर व्यक्तिको कोशिश करनी चाहिये कि वह अपनी प्रगति करे। इस प्रगतिका आधार सच्चाई और ईमानदारी हो। इसीको ईश्वरीय गुण कहा जाता है। ईश्वरीय गुण श्रेष्ठ सामाजिक गुण है।

संसारमें अनगिनत चीजें हैं। सभी व्यक्तिकी आवश्यकताओंकी पूरक हैं। सभीको, तमाम फैली हुई वस्तुओंमें, किसी एक या उससे अधिक वस्तुओंकी आवश्यकता है। जब व्यक्ति ईश्वरीय गुण प्राप्त कर लेगा तो जीवनमें निरर्थक आवश्यकताओंका ह्रास हो जायेगा। इस ह्राससे आवश्यकता सीमित होगी। सीमित आवश्यकताका प्राणी सुखी व सम्पन्न होता है। भूमण्डलमें चारों ओर वायु फैला हुआ है और वायुके ही समान दुर्गुण भी चारों तरफ व्याप्त हैं। इन्हीं दुर्गुणोंको हम आसुरी गुण भी कहते हैं। यदि हम सावधान न रहें तो ये आसुरी गुण वायु रूपमें हाव-भाव, बात-विचारके माध्यमसे हमारे अन्दर प्रवेश कर सकते हैं। उनके प्रवेश करनेपर नाना प्रकारके दोष जीवनमें आ जाते हैं। जीवनमें गीता-पुराणका बड़ा महत्त्व है। देश और कालके मुताबिक अच्छे गुणोंका विचार इसमें प्रतिपादित किया गया है। लोग कहते हैं कि संसारमें दुःख है। गीता-रामायण सुननेवाले मंगलकी प्राप्ति करते हैं, ईश्वरके नजदीक रहते हैं। यदि आप ध्यानसे देखें तो कितने रामायण-पाठी दुखी हैं ? यह बात मेरी समझमें नहीं आती। मेरे विचारमें यही आता है कि संसारमें सबसे बड़ा सत्य है। हम सबको सत्यके ही नजदीक जानेका प्रयास करना चाहिये। सत्यके नजदीक रहनेवाला व्यक्ति सुखी होगा। यदि गीता-रामायण सत्य हैं और हमको सत्य मार्गकी ओर ले जाते हैं तो दुःखका कोई प्रश्न ही नहीं उठता। सत्यभाषी क्षोभ व तापसे अलग रहेगा। मैं भी आप लोगोंकी तरह हूँ। मेरेमें और आपमें कोई अलग विशेषता नहीं है। सत्य ही एक मात्र कारण है जिससे आप लोग मुझे कुछ विशेष समझते हैं। दया एक महापाप है। न दया करनी चाहिये, न दयाकी प्राप्तिकी आशा करनी चाहिये। दयासे प्रयत्न दूर हो जाता है और प्रयत्न ही सत्यका स्वरूप है। आप मेरी बातोंको

महत्त्व दें या न दें लेकिन आप यह जान लें कि मेरी बातोंका कोई महत्त्व नहीं लेकिन इन महत्त्वहीन बातोंके मध्य मैं आपके आत्म-महत्त्वका प्रयत्न करता हूँ।

ईश्वरके यहाँ न्याय होता है और हमारे यहाँकी ही तरह वहाँ भी एक न्यायालय है। किसी पर दया नहीं की जाती। न्यायका मतलब दया नहीं है। इसी प्रकार किसी व्यक्तिके प्रति दया क्या न्याय है? न्यायसे डिगना ईश्वरके प्रति बड़ा अपराध करना है। दान-पुण्य करनेसे लोग ईश्वरके हाथ अपने अपराधोंकी क्षमा सोचते हैं। ईश्वरको सबसे बड़ा न्यायी माना जाता है। क्या न्यायाधीश घूस लेकर न्यायको बदल सकता है? नहीं! अतः ईश्वरके न्यायालयमें अपनी गलतियोंके लिये दान-पुण्य कर-कराके आप क्या ईश्वरके दरबारसे न्याय बदलवा सकते हैं? मैं साधुओंका बहुत बड़ा विरोधी हूँ। अपने घरका मोर्चा न सँभाल सकनेके कारण जीवनसे भाग जाना क्या उचित है? इन लोगोंसे किसी भी प्रकारकी कोई आशा नहीं करनी चाहिये। आत्माकी सच्चाईसे बरक्कत होती है। साफ नीयत ही जीवनको संतुष्ट करती है। मुझे विश्वास है कि आप लोग सर्वदा सत्यकी ओर अग्रसर होकर व्यवहार-कुशल होंगे।

[प्रवचन : स्थान— जनसभा बठ्ठीग्राम, तहसील चन्दौली, जिला वाराणसी।
तिथि ९ मार्च, १९६६ ई०]

सभी प्राणी शक्तिके प्रतीक हैं, शक्तिके बिना सभी शव हैं

जबसे विश्वकी रचना हुई है, शक्तिकी प्रधानता उसी समयसे चली आ रही है और सारा समाज शक्तिकी ही आराधना करता रहा है। शक्तिका अर्थ है कार्य करनेकी क्षमता। जीवनमें यदि शक्ति शब्दकी व्याख्या की जाय तो यह स्वतःसिद्ध है कि शक्तिहीन मानव ही मृत्युकी संज्ञा पाता है। यदि शक्ति नहीं है तो वह किसी भी कार्यके करनेमें समर्थ नहीं हो सकता। अस्तु, प्रत्येक प्राणीके लिये आवश्यक है कि वह अपनेमें शक्तिके संचयका अभ्यास करे। आजके समाजमें मनुष्यने इस अभ्यासको खो दिया है जिसके कारण वह आत्मबल व आत्म-विवेकसे शून्य-सा हो गया है। शक्ति ही मनुष्य-जीवनकी जननी है, इसी शक्तिके द्वारा उसका संसारमें जन्म होता है। शक्ति ही की कृपापर संसारमें जीवन-यापन एवं उसके लिये सभी साधनोंका सञ्चय भी होता है। तात्पर्य यह है कि आदि स्वरूप शिव भी शक्तिमें ही निहित हैं। शक्तिके बिना शिव भी शव समान हैं।

लोगोंने अपने उद्गारोंसे शक्तिकी ही संज्ञा मुझे दी है। लेकिन जहाँतक मैं जानता हूँ चराचरमें सभी प्राणी शक्तिके प्रतीक हैं और सभी शक्तिके बिना शव-तुल्य हैं। किसी भी देवी-देवताके पूजनमें आस्थापूर्वक विश्वास करनेसे ही फल प्राप्त होता है। बिना विश्वासके कोई भी धारणा उत्पन्न नहीं हो सकती। शक्तिका आदि रूप सर्वेश्वरी है, जिसकी कृपासे सभी कुछ सुलभ है। अतः आजके मानवके लिये आवश्यक है कि वह अपनेमें आत्मबल पैदा करे और भौतिकवादी

चमत्कारके बाह्याडम्बरसे अपनेको परे रखकर सादा जीवन और उच्च विचारका अभ्यास डाले। इसका परिणाम यह होगा कि आजका अधोगति-प्राप्त मानव पुन: नई ज्योतिको प्राप्त करेगा और अज्ञान व अन्धकारका विनाश होकर एक नये युगका निर्माण होगा। किसी देवी या देवताको प्रसन्न करनेके लिये बाह्याडम्बरकी कोई आवश्यकता नहीं। पूजन अथवा अपने इष्टको प्रसन्न करनेकी विधि गोपनीय होती है। अपना इष्ट किसी भी आडम्बरको पसन्द नहीं करता। इष्ट तो आत्म-भावका ही भूखा होता है और सुमन अर्थात् सुन्दर मनको चाहता है। जो भी प्राणी अपने सुन्दर मनको अपने इष्टके सम्मुख अर्पित करता है, उसे मनोवांछित फलकी प्राप्ति होती है। भगवान्के यहाँ चापलूसी नहीं चलती। यह प्रथा आजके समाजमें व्याप्त कुष्ठकी भाँति जघन्य हो चली है। इसका एक मात्र कारण यही है कि समाजसे सत्यभाषियोंका लोप होता जा रहा है और जो भी व्यक्ति सत्य-भाषणका व्रत चला रहे हैं, उन्हें नाना प्रकारकी कठिनाइयोंका इस समाजमें सामना करना पड़ता है। लेकिन सत्यभाषी कर्मरत रहता है। वह समाजकी कमजोरियोंसे विचलित नहीं होता और अपने अभीष्टकी पूर्तिमें समर्थ होता है।

समाजमें अधिकाधिक दोषोंके व्याप्त होनेका एक मात्र कारण मनुष्यमें सन्तुलनका अभाव है। मनुष्य शक्तिहीन होकर और बलके अभावमें अपने संयमको खो चुका है। उसे अपने ऊपर भी विश्वास नहीं है। वह अपनेको समझना भूल-सा गया है। अहम् भावमें प्रकृतिपर विजय पानेके कारण अपनेको समर्थ समझने लगा है। समर्थ होनेके कारणपर विचार करनेका उसके पास समय नहीं रह गया है। मनुष्य अपने कार्य-क्रममें अहंकारवश शक्तिकी उपेक्षा करता है। यही कारण है कि दीर्घायु होनेकी बात एक सपने-सी हो गयी है। लोग अल्पायु होते जा रहे हैं। शरीरका गठन पहलेकी अपेक्षा जर्जर होता जा रहा है। मानव आसुरी-प्रवृत्तिका पोषक हो गया है। दानवताकी लहर सर्वत्र फैल गयी है। घृणा, द्वेष, अनाचार एवं अत्याचार आजके गुण माने जाने लगे हैं। इन सभी बुराइयोंका एक मात्र कारण शक्तिका ह्रास होना है। यदि शक्तिका सन्तुलन समाजने न खोया होता तो आजकी विकट समस्याएँ कभी उत्पन्न ही न होतीं। इसलिये प्रत्येक मानवका कर्त्तव्य है कि शक्ति-पूजनके साथ अपनेमें शक्ति-संचयका भी अभ्यास डाले, यही एक मात्र कल्याणका मार्ग है।

[प्रवचन : स्थान—कालीमन्दिर उत्सव समारोह शिवपुर, वाराणसी।
तिथि मार्च, १९६६ ई०]

संसारकी कर्मशालामें शक्तिका महत्त्व

अष्टमीकी रात्रि महानिशा कहलाती है। यह तिथिदेवीकी विशेष तिथि है। इस तिथिमें रात्रि-जागरण अनिवार्य होता है और देवीकी आराधना इस रात्रिमें विशेष फलवती होती है। तुम सभी देवीके साधक हो अतएव तुम सबको साधक होनेके नाते आशीर्वाद देता हूँ। युगके अनुकूल आत्माकी आवाज

पहिचानना मनुष्यका परम कर्त्तव्य है। जो व्यक्ति इस आवाजको पहिचाननेमें असफल होता है वह अधोगतिको प्राप्त होता है। समझदार मनुष्य हमेशा आत्माकी आवाज पहिचाननेमें समर्थ होते हैं। इसी कारण वे मनोवांछित फलकी प्राप्ति करते हैं। मनुष्य-रूपमें ही शैतान भी धरतीपर निवास करते हैं और यही कारण है कि मनुष्य आकृतिमें भी ठीक-ठीक पहिचान न होनेके कारण उनसे धोखा होनेकी सम्भावना पग-पगपर रहती है। इसलिये आत्माकी आवाजको पहिचाननेवाला ही मनुष्य और शैतानका वर्गीकरण करनेमें समर्थ होता है। आत्माकी आवाजको न पहिचाननेसे जीवन नैराश्यमय होने लगता है। इसलिये यह आवश्यक है कि आत्माकी बातोंको ठीक प्रकारसे समझकर दिव्य एवं पुनीत संकल्प करना चाहिये।

जो व्यक्ति सत् संगतिके पथपर चलनेका अभ्यास नहीं करता है उसका जीवन पग-पगपर विवेकशून्य एवम् कष्टप्रद व्यतीत होता है। सत् संगति ही पवित्र जीवनकी आधार शिला है। मनुष्यका जीवन भींगे कपड़ेके समान है। जिस प्रकार भींगी धोतीको धूपमें फैलाते हैं तो उसपर ईंट आदि रख देते हैं ताकि कपड़ा उड़ न जाय ठीक इसी प्रकार मनुष्य जीवनमें भी शक्तिरूपी ईंटका रखना परम आवश्यक है नहीं तो हमारा जीवन भी भींगे कपड़ेकी तरह उड़ जायेगा। अतएव यह आवश्यक है कि जीवनमें शक्तिकी प्रधानताके गौरवको समझ। यदि आप लोगोंको ईश्वर या शक्तिसे वंचित रहना है तो मुझे कुछ कहना नहीं है। लेकिन इतना कहना अवश्य है कि माँ यानी शक्तिकी उपासना, आराधना एवं चिन्तनसे आपका जीवन मंगलमय होगा।

हम सब अनादि कालसे 'त्वमेव माता च पिता त्वमेव······ त्वमेव सर्वं मम देवदेव' की आराधना करते हैं। यहाँपर यह विशेष उल्लेखनीय है कि सर्वप्रथम माताको ही प्रधानता दी गई है और यह कहा गया है कि जो कुछ हो तुम्हीं हो। तात्पर्य यह है कि माँ ही वह शक्ति है जो सर्वशक्तिमयी है और माँ ही गुरु भी है। इसलिये माँ गुरुकी आराधना करनेवाला मनुष्य सब प्रकारसे समर्थ होता है। उसके लिये किसी भी प्रकारकी कोई भी बाधा उपस्थित नहीं हो सकती। सर्वप्रथम माँके स्वरूपपर विचार करें—वही सृजन, पालन, संहार करनेवाली हैं। प्रत्येक जीवका जन्म माँसे होता है। माँ स्वतः अपने अनेकों कष्ट उठाती है किन्तु पुत्रके प्रति प्रेम-भाव ही रखती है। वह इतनी दयालु है कि स्मरण मात्रसे ही अपना वरद हस्त पुत्र पर रखती है। हम सभी माँकी गोदमें प्रत्येक क्षण रहते हैं और हम चाहे कितना भी निन्दनीय कार्य क्यों न करें, माँ हमें क्षमा करनेके लिए कटिबद्ध रहती है। माँ कितनी दयालु हैं उसका वर्णन शब्दोंमें नहीं किया जा सकता। इसलिये प्रत्येक मनुष्यको शक्ति-संचयका अभ्यास डालना चाहिये। संसारकी कर्मशालामें शक्तिसे परे कुछ नहीं।

[प्रवचन : स्थान—जन सेवा अभेद आश्रम, नारायणपुर, जि० रायगढ़, मध्यप्रदेश। तिथि २० मार्च, १९६६ ई०]

जीवनमें सादगीका महत्त्व

जिस स्थानपर हम सभी एकत्र हैं, वह स्थान त्रिवेणी-संगमके चरईमारा ग्राममें है। जीवनके प्रत्येक क्षणमें समय एवं स्थानकी विशेष प्रधानता रहती है। दण्डकारण्य क्षेत्रमें यह स्थान विशेष महत्त्व रखता है क्योंकि यह संगमके सन्निकट स्थान है। इस संगममें स्नान करनेसे मनुष्य पाप-मुक्त होकर प्रकाश पाता है और आपको इस क्षेत्रसे दूर कहीं जानेकी भी आवश्यकता नहीं है। अस्तु, आदिवासियोंके लिये यह स्थान तीर्थ है। अन्य तीर्थ-स्थानोंकी भाँति इस स्थानपर मकर संक्रान्ति आदि अनेक धार्मिक पर्वोंपर आदिवासी इस संगममें स्नानकर अपनेको कृतकृत्य मानते हैं। इसीलिये इस संगमकी स्थापना बहुत वर्षों पहले आप लोगोंके ही लिये हुई है। जहाँतक प्रकृतिके सौन्दर्यका प्रश्न है यह स्थान अपनी प्राकृतिक छटाके लिये अतीव मनोहर, मनमोहक एवं स्मरणीय स्थान है। आप लोग आदिवासी हैं, आप-लोगोंके सादा जीवन, सदाचार एवं कर्त्तव्यनिष्ठ होनेकी मैं सराहना करता हूँ। जीवनमें सादगीका होना बड़ा महत्त्व रखता है। आप लोगोंके उत्थान हेतु सरकार-को भी ध्यान देना चाहिये और यदि सरकार अपनेको असफल समझती है तो उचित सरकारकी स्थापना भी आप लोगोंका लक्ष्य होना चाहिये।

[प्रवचन : स्थान—जनसभा ग्राम चरईमारा, जि० रायगढ़, म० प्र०
तिथि ३० मार्च, १९६६ ई०]

समाज सुधारना है तो व्यक्ति खुद सुधरे

आज समाज-सुधारकोंकी बाढ़-सी आ गई है। समाजको सुधारना प्रत्येक व्यक्ति बड़ी तेजीसे चाह रहा है। ऊंचे-ऊँचे स्वरोंमें लच्छेदार भाषणों-द्वारा लोग समाजको सुधारना चाहते हैं। हो सकता है समाजको सुधारनेके कई तरीकोंमें यह भी एक तरीका हो। लेकिन मेरी समझसे यह कोई मूल तथ्य नहीं है। आज चारों ओर शोर मचा है कि समाजमें बड़ी बुराइयाँ आ गई हैं। समाज गर्तकी ओर जा रहा है। समाजको बदलो। लेकिन यह बात मेरी समझमें नहीं आती। समाजमें बुराई तो है नहीं। हाँ कुछ समस्यायें है जो जटिल हैं। इन जटिल समस्याओंके कारण समाजको बुरा तो नहीं कहा जा सकता। यदि समाजको बुरा ही माना जायँ और यह स्वीकार ही कर लें कि समाजमें बुराई है तो प्रश्न है जिम्मेदार कौन है? व्यक्तिके समूहसे ही समाज बनता है। दो-एक व्यक्ति स्वयं समाज नहीं हो सकते। वे किसी एक समाजके अवश्य कहे जा सकते हैं। यदि वे बुरे हैं तो हम यह नहीं कह सकते कि अमुक समाज बुरा है। दो एक व्यक्तियोंके समक्ष कोई समस्या रही होगी। उनके व्यवहार सामाजिक मान-दण्डोंपर खोटे उतर गये होंगे। यदि बुराई है तो सोचना चाहिये कि बुराई कौन करता है? बुराई व्यक्तिसे होती है और समाज बुरा कहा जाता है। फिर समाज सुधारनेका ढोंग कैसा? यदि समाज सुधारना है तो व्यक्ति खुद सुधरे। हम प्रत्येक व्यक्ति हैं। हम प्रत्येक व्यक्ति अपनी बुराइयोंको स्वतः दूर कर दें। यही समाज-सुधार है।

जिन्दगीको सरलतासे सोचा जाय तो बात समझमें आयेगी। यदि गहराईसे दर्शनके पहलूपर सोचें तो उलझन होगी। हमें उलझनोंको त्यागना है। मानवताके-लिये एक धर्मको अपनाना है। वह धर्म मानव-धर्म है। मानव-मात्रको भाई समझनेसे बुराई दूर होगी। ऊँच-नीचका भेद छोड़ हम अपने दिलको साफ रक्खगे। संसारको सुचारु रूपसे चलानेवाली एक शक्ति है। वह शक्ति है माँ। हम सब माँके पुत्र हैं। हमें माँका आदर करना है। माँका आदर तभी होगा जब माँके सभी पुत्र आपसमें मिलकर माँकी आज्ञाओंका पालन करेंगे। समाज सुधारनेका यह एक अच्छा तरीका है। इससे बुराई दूर हो सकती है।

संसारके मंचपर तो अच्छी बातें सभी कहते हैं। आप भी अच्छी बातें सुनते हैं। पर सबको सुनकर उसपर दिलसे अमल करना चाहिये। अमल करनेसे हमारी आत्मा स्वतः पवित्र होगी और पवित्र आत्मा कभी बुराई सोच नहीं सकती। मधुवनके भौंरे और गोबरौरेकी कहानी आप जानते होंगे। गोबरौरेकी तरह कलुषित भावना हमें बुराईके गर्तमें ढकेल देगी। जीना है तो प्रेम और सद्भावपूर्वक जीओ। यही सर्वेश्वरी-समूहका लक्ष्य है।

[प्रवचन : स्थान—ब्रह्मनिष्ठालय, सोगड़ा आश्रम, म० प्र०
तिथि : मई, १९६६ ई०]

सफलताके लिये संघर्ष आवश्यक है

आज जीवनके सामने वैयक्तिक कठिनाइयाँ हैं ही, साथ ही कुदरत-द्वारा भी कुछ कठिनाइयाँ प्रस्तुत हैं। इन कठिनाइयोंका धैर्यपूर्वक सामना करना सबका कर्त्तव्य है। मनुष्यके पास विचार-रूपी एक अलग धरातल है। इस धरातलपर बुद्धिकी एक अलग शक्ति है जिसके सहारे हम संसारकी कठिनाइयोंका सामना कर सकते हैं। मानव आदि कालसे मानव-विरोधी प्रवृत्तियोंसे लड़ता ही रहा है। साथ-ही-साथ उसकी कुदरतसे भी कम लड़ाई नहीं हुई है। मनुष्यको अपनी रक्षाके लिये विषम परिस्थितियोंसे नहीं, बल्कि कुदरतसे भी लड़ना होगा। संसारमें आर्थिक, राजनीतिक, अनेक परिवर्तन हो रहे हैं। हमें इन परिवर्तनोंसे हताश नहीं होना है। इन परिवर्तनोंमें हमें एक दूसरेके साथ मिलकर रहना है तभी हमारी सफलता है। अतः सफलताके लिये संघर्ष आवश्यक है। यह संघर्ष हर क्षेत्रमें हो सकता है। संघर्ष सर्वदा बुद्धि और विवेकसे हो तो निःसन्देह सफलता मिलेगी।

[प्रवचन : स्थान—वाराणसी आश्रम, तिथि १३ जून, १९६६ ई०]

जीवनको ब्रह्ममय होना है तो ब्रह्मके गुणोंको अपनावें

संसार आज कई कठिन परिस्थितियोंसे गुजर रहा है। संसारके जन-नायकों-का ध्यान अधिकतर अपने-अपने देशकी आन्तरिक अवस्था दृढ़ करनेपर है पर इसमें कई प्रकारकी कमियाँ हैं। हमें जन-नायकोंकी कमियोंकी ओर ध्यान न देकर अपनी ही कमियोंकी ओर ध्यान देना चाहिये। इसमें सन्देह नहीं कि व्यक्ति जब अपनी कमी

दूर कर लेगा तो स्वतः संसारकी कमी दूर हो जायेगी। भौतिक जीवनके प्रणेताओंको थोड़ी देरके लिये छोड़ यदि हम पारलौकिक जीवनके प्रणेताओंकी ओर ही देखें तो सहजमें दीख पड़ेगा कि व्यक्ति ईश्वरीय सत्ताकी प्राप्तिके लिये बेचैन है। आज अधिकांश लोग घर-द्वारको छोड़कर साधना, योग, पूजा आदिमें अपना जीवन बिताते हैं। ब्रह्मकी प्राप्तिमें अनेक प्रकारकी साधनायें करते हैं। वस्तुतः यह ठीक नहीं है। कष्ट और योग-साधनासे ब्रह्म-प्राप्ति नहीं की जा सकती है। हम लोग ठेठ आदमी हैं। ठेठ घरके गृहस्थको ब्रह्म-प्राप्तिका ठेठ मार्ग ही अपनाना चाहिये।

मेरे विचारसे ब्रह्म और जीव जोड़ुवाँ भाई हैं। जैसे एक भाई एक भाईके कष्टोंको देखकर विचलित हो उठता है और वह उससे दूर न होकर उसे हृदयसे लगाता है, इसी प्रकार यह ब्रह्म भी है। ब्रह्म सदा अपने छोटे भाईकी तरह जीवका आदर करता है। अगर जीवको ब्रह्ममय होना है तो वह उसके गुणोंको अपनावे। यदि हम ब्रह्मके गुणोंको अपना लेगें तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि ब्रह्मको प्राप्त कर ब्रह्ममय हो जाएँगे। हमें तो दीनों, अनाथोंकी सेवा करनी है। कष्टोंको देखकर दूसरोंको उससे मुक्ति दिलानेका प्रयत्न करें। मनुष्य चाहे संसारके किसी कोनेका हो उसका कर्त्तव्य है कि वह शोषकका हाथ पकड़े, शोषकका बहिष्कार करे और शोषित-को बचावे। यह सबसे बड़ी ब्रह्मकी पूजा है। यदि ब्रह्म सर्वत्र है और वह देखता है, सुनता है जैसा कि आप सभी मानते हैं तो इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि वह अवश्य ही हमारे हर क्रिया-कलापको देखता है और हमारी हर बातको सुनता है। हमें इस परिस्थितिमें ऐसा ही कार्य करना चाहिये कि उसे अच्छा लगे। यदि हम ब्रह्मको दूर समझें तो हमारे माला फेरनेसे वह न कुछ सुनेगा और न हमारे रोने-कलपनेपर कुछ ध्यान ही देगा।

मेरी इच्छा है कि संसारमें चारों ओर जो दुःख व्याप्त है उसपर ध्यान दिया जाय। वाराणसीमें श्री सर्वेश्वरी समूह कुष्ठिओंकी सेवा कर रहा है, यह ठीक है। लेकिन अन्य देशोंमें भी इस प्रकारके कुष्ठी व अनाथ भारी संख्यामें हैं। वहाँकी सरकार उनका प्रबन्ध तो हमारे यहाँकी सरकारकी तरह ही कर रही है। पर इस आश्रमको यह भी चाहिये कि वह उनपर भी यथाशक्ति ध्यान दे। इसके लिये मुझे प्रसन्नता है कि श्री सर्वेश्वरी समूह अपने अगले वर्षकी योजनामें २०० डालरकी सहायता देनेका निश्चय कर रहा है। यह एक व्यापक दृष्टिकोण है। ऐसे ही अपने देशमें बाढ़ग्रस्त, सूखेसे पीड़ित बहुत बड़े वर्ग हैं। श्री सर्वेश्वरी समूह इनकी मददकी जो योजना बना रहा है वह भी ठीक ही है। वास्तवमें कुष्ठ तक ही मानव-जीवनका कष्ट सीमित नहीं है। यदि मानवताका उत्थान करना है तो हर क्षेत्रमें हमें उसका निरीक्षण करना होगा। जबतक हम जीवनके कमजोर पहलुओंपर दृष्टि नहीं रक्खेंगे तबतक वास्तविक उत्थान नहीं होगा। श्री सर्वेश्वरी समूह द्वारा आपकी की जा रही सेवा सराहनीय है। आपको अपनी दैनिक जिन्दगीका थोड़ा समय और अधिक नियमित रूपसे इस ओर देना चाहिये।

[प्रवचन : स्थान—समूह गोष्ठी, कुष्ठ-सेवा आश्रम, वाराणसी। तिथि २० जून, १९६६ ई०]

नैतिकता एवं विश्वास जीवनकी सबसे बड़ी पूँजी है

जब कभी मैं शक्तिकी आराधनामें बैठता हूँ तो यह प्रार्थना करता हूँ कि हमारे सभी सहयोगियों तथा अन्य समस्त प्राणियोंको माँ सद्बुद्धि दे। सभी लोग आजके दिनको गुरु पूर्णिमाका दिन कहते हैं और नाना प्रकारसे गुरुकी पूजा करते हैं। मैं आप सबसे यह कहूँगा कि जो आपके गुरु हों, आचार्य हों उनके प्रति अटूट श्रद्धा रक्खें, तभी उनके गुण आप प्राप्त कर सकेंगे और आप आत्म-शक्ति और सुखका अनुभव कर सकेंगे। श्रद्धा और विश्वाससे दूर बड़ेसे बड़ा साधक भी, चाहे वह जितना बड़ा विद्वान् क्यों न हो, आत्म-शक्ति और प्रभु-कृपा नहीं प्राप्त कर सकता। पवित्र एवं निश्छल हृदयके पूर्ण समर्पणसे ही आप पूर्ण शान्ति और प्रभु-कृपा प्राप्त कर सकते हैं। अतः सङ्कुचित विचार त्यागकर आपको अपना हृदय विशाल बनाना है। शुभ विचारोंका उपयोग न होनेसे वे अनुपयोगमें परिणत होकर कष्टकर हो जाते हैं।

बेकार बैठे रहनेसे ही मनुष्यके दिमागमें तरह-तरहके खुराफात पैदा होते हैं। जिसके जीवनमें कोई प्रोग्राम नहीं है वह उदास दीखता है। अतः आप अपने जीवनका प्रोग्राम बनावें। जबतक हम और आप पृथ्वीपर हैं तबतक हम सबको कोई न कोई प्रोग्राम बनाकर उसीमें लगा रहना चाहिये। बेकार आदमी अनैतिक व कुविचारी हो जाता है। आप अपनेको कभी खाली न रक्खें। जिस व्यक्ति, संस्था या पार्टीका कोई स्पष्ट कार्यक्रम या योजना नहीं रहती वह नष्ट हो जाती है। मजदूरसे खराब अमीरका जीवन हो सकता है। अमीर बेकार बैठा रहता है। बड़ी-बड़ी भूलें व खुराफात करता है। क्योंकि उसके सामने जीवनका कोई प्रोग्राम नहीं होता। अतः आप अपना कोई न कोई प्रोग्राम अवश्य रक्खें।

बिना श्रद्धाके ऋद्धि-सिद्धि भी नहीं प्राप्त हो सकती। नैतिकता और विश्वास जीवनकी सबसे बड़ी पूँजी है। विश्वाससे जीवनकी उपलब्धियाँ सम्भव हो जाती हैं। विश्वास नहीं रहनेसे ही मनुष्य अस्वस्थ रहता है। आप यह न भूलें कि आपपर बहुतोंका विश्वास है। जो व्यक्ति अपना विश्वास खो देता है वह जीवनसे अलग होकर अपने आपको भरमाया करता है। अतः आप सबके विश्वासपात्र बनें। अन्यथा आपका जीवन अधूरा रहेगा। नाना प्रकारकी अमानवीय प्रवृत्तियाँ आपमें बनी रहेंगी और आपका जीवन पेड़के बिखरे पत्तोंके समान बिखर जाएगा।

[प्रवचन : स्थान—वाराणसी आश्रम, तिथि गुरु-पूर्णिमा
१ जुलाई, १९६६ ई०]

मातृत्वकी उपासना प्राचीन है

श्री सर्वेश्वरी समूहकी स्थापनाका आज पुनीत दिवस है। इस अवसरपर जो मित्र और भक्त पधारे हैं उन्हें मैं धन्यवाद देता हूँ। सती पुराणमें एक कथा है। आप लोगोंने उसे पढ़ा है। एक समय सभी देवता ब्रह्मा, विष्णु एवं महेशके यहाँ अपनी

पीड़ा-निवेदन करने-हेतु पहुँचे। उनकी वेदना सुनकर ब्रह्मा, विष्णु और महेशसे तेज निकला। वह सब तेज एक रूप होकर शक्ति बन गया। सभी तेजोंसे माँ दुर्गा सज्जित हुईं। यही माँ सर्वेश्वरी महाशक्तिका इतिहास है।

मातृत्वकी उपासना प्राचीन है। इस उपासनाकी भावनासे प्रेरित होकर कुछ सज्जनोंने गोष्ठी की। मातृत्व-उपासनाकी प्रतिष्ठापर विचार-विमर्श हुआ। सबमें माँकी उपासनाका पवित्र भाव जागृत हुआ। उसी जाग्रत भावका तेज माँ सर्वेश्वरीके रूपमें विराजमान है। आप सोचते होंगे कि यह तेज कैसे निकला ? यह वही एक रूप तेज है जो ब्रह्मा, विष्णु और महेशसे शक्ति रूपमें निकला। पवित्र तथा उत्तम विचारोंकी प्रेरणासे आप सब उत्साहित हैं। आपके उत्साहके लिये मैं अपना उत्साह भी समर्पित करता हूँ। यह श्रीसर्वेश्वरी समूह हम सबके उत्साहका साकार रूप है।

मातृत्वकी उपासना, भारतमाताकी उपासना है। 'वन्देमातरम्' माँकी उपासनाका एक महामंत्र है। इसी मंत्रसे प्रेरित हो हमारे लोगोंके हृदय, वाणी तथा कर्ममें माँकी उपासनाका भाव जागृत हुआ और सबने पवित्रता तथा शक्ति प्राप्त की, स्वराज्यके लिये संघर्ष हुआ और विदेशी गये। अपना राज्य स्थापित हुआ। तरह-तरहके निर्माण हुये। लोगोंको धर्म, विचार एवं क्रियाकी स्वतन्त्रता मिली। इतिहास बना। उसमें 'वन्देमातरम्' का एक अध्याय जुड़ा। हमारा इतिहास माँकी उपासनाकी ऐसी कितनी ही प्रेरणाओंसे भरा है। लोगोंको उससे प्रेरणा मिलती है। श्रीसर्वेश्वरी समूहकी स्थापना एक आवश्यकतासे हुई। प्रायः सभी धर्मों या सम्प्रदायोंमें पहले त्याग करनेके बाद ही ब्रह्मा, विष्णु या किसी अन्य देवताके दर्शनकी व्यवस्था है। लेकिन हमारे मतमें ऐसा कुछ नहीं है। परमहंस रामकृष्णने सब कुछ त्यागनेका अभिनय नहीं किया। मैं कहूँ कि आप पत्नी, बच्चोंको छोड़ दें तो आप छोड़ेंगे नहीं। हम छुड़ाना भी नहीं चाहते क्योंकि छोड़नेसे आपको क्षोभ होगा।

मैं देखता हूँ कि समूहके जितने भी विवाहित पुरुष हैं वे सभी शक्तिकी उपासना करते हैं। इस प्रकार सारे विश्वके पुरुष शाक्त हैं। शक्तिके सम्पर्कसे ही पुरुष पूर्ण होते हैं। वे शक्तिके सम्पर्कसे बुद्धि, बल, धैर्य, क्षमता, दान तथा करुणा भावनाका तेज ग्रहण करते हैं। इस सान्निध्यमें जो दुःख है वह केवल पुरुषके मोहकी दुर्बलता है।

देवी-आराधनामें शक्तिके सभी रूपोंपर श्रद्धा करना आवश्यक है। अन्य सम्प्रदायोंमें स्त्रीको पाप कहा जाता है। उन्हें मारते-पीटते हैं। लेकिन देवी-उपासनामें उसे फूलसे भी न मारनेका नियम है। इसी दृष्टिसे मैं देवी भारतमाताकी उपासनाकी बात करता हूँ। उन्हींके भिन्न-भिन्न रूपोंकी पूजा भिन्न-भिन्न कालोंमें की जाती है। आप भूतकी पूजा न कर भविष्यकी पूजा करें ताकि वर्तमानकी दिव्य-ज्योति प्राप्त हो।

[प्रवचन : स्थान—वाराणसी आश्रम-समूह स्थापना-दिवस तिथि २१ सितम्बर, १९६९ ई०]

गलती होनेपर ग्लानि करो

जिन्होंने गलती करके ग्लानि की, उन्हें धन्यवाद है क्योंकि गलतीका उसी क्षण प्रायश्चित्त हो जाता है। ग्लानि करनेवाला गलती न करनेकी व्यवस्था करता है और उसमें बँधा रहता है तो बड़ा अच्छा है। अन्य भारतीय साधुओं तथा संन्यासियोंकी तरह मैं किसीको अपराधी नहीं बनाना चाहता फिर भी कभी-कभी लाचार होकर दण्डकी व्यवस्था करनी पड़ती है; क्योंकि कभी ये गलतियाँ भयंकर रूप पकड़ लेती है और दूसरोंको भी प्रभावित करने लगती हैं।

देवता, साधु और वेश्याका केवल दर्शन करना चाहिये, स्पर्श नहीं। पर यहाँ महिलाएँ उल्टा ही करती हैं। दो दिनोंसे मेरे दिमागमें एक अजीब किस्मका चक्र चल रहा है। मैं अपनेको एक तरहका आडम्बरी एवं दम्भी अनुभव करने लगा हूँ। मेरा तो विचार है कि मेरी ऐसी वेश-भूषा तथा ऐसा व्यवहार हो कि लोग मुझे परिवारका साधारण सदस्य ही समझें ताकि मुझसे कोई ठगा न जाय।

ग्रामीण भाइयोंको अपने फुर्सतके समयका पूरा उपयोग करना चाहिये। यदि कोई काम न हो तो पास पड़ोसमें झाड़ू ही लगाना चाहिये। इन सब कामोंके बाद यदि समय निकले तो भगवानका भजन भी करना चाहिये। जिसको दोनोंसे फ़ुर्सत है वही व्यर्थकी बात सोचेगा और उत्पात भी कर सकता है।

साधु केवल औषधि देगा। वह किसीके लिये पथ्य नहीं करेगा। पर पथ्य नहीं है तो केवल औषधिसे काम नहीं चलेगा। यदि मनुष्य पथ्य-सेवन करता है तो कुछ दिन औषधि न भी मिले तो वह स्वस्थ रह सकता है। बड़ा सम्पन्न और धनी-मानी हो जानेसे भी जीवन सुखी नहीं हो सकता। क्योंकि ऐसे लोगोंके पास अनेकों परेशानियाँ हैं, गरीब और मध्यम वर्गके लोगोंकी भी परेशानियाँ कम नहीं हैं।

सगे-सम्बन्धियोंके दुःख-सुखसे सबको दुःख-सुख होता है। यहाँतक कि पड़ोसीके सुख-दुःखसे भी लोगोंको सुख-दुःख होता है। आप लोगोंसे मेरा गहरा सम्बन्ध है। आपके सुख-दुःखका मेरे ऊपर असर पड़ता है। अतः मैं आपको सदा सुखी देखना चाहता हूँ।

[प्रवचन : स्थान—सर्वेश्वरी सभा भवन, वाराणसी, तिथि-गुरु-पूर्णिमा
२१ जुलाई, १९६७ ई०]

माँ सर्वेश्वरीका पवित्र ध्वज सहयोगियोंको सद्बुद्धि प्रदान करे

आप सभीको इस ध्वजके नीचे देखकर मुझे बहुत खुशी हो रही है। यहाँ श्रीसर्वेश्वरी समूहका यह पाँचवाँ वार्षिक उत्सव है। यह वही पुनीत दिन है जो कि हम सभीको एकत्र होकर माँ सर्वेश्वरीकी याद करनेका मौका प्रदान करता है। यदि इसी उत्साह तथा प्रेमसे हम सभी लगे रहेंगे तो किसी कार्यको करनेमें पचीस या पचास वर्षकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी यह पाँच वर्षोंमें ही होगा। आप सभी जीवनमें

बड़ेसे बड़े कामको आसानीसे कर सकते हैं। माँ सर्वेश्वरीका पवित्र ध्वज सहयोगियोंको सद्बुद्धि प्रदान करे।

[प्रवचन : स्थान—वाराणसी आश्रम तिथि—समूह स्थापना दिवस
२१ सितम्बर, १९६७ ई०]

'संघटना'-स्वरूपा माँ भगवतीकी उपासनामें दत्तचित्त रहें

माँ भगवती एक 'संघटना' अर्थात् संगठन है। सभी देवताओंकी शक्तियाँ माँ भगवतीमें सन्निहित हैं। आवश्यकतानुसार माँने अपनी शक्तियाँ संसारके सृजन, पालन एवं संहारकेलिये क्रमशः ब्रह्मा, विष्णु एवं महेशमें संक्रान्तकी है। अतः जीवका प्रथम कर्त्तव्य है कि संघटनारूपी माँ भगवतीकी उपासनामें दत्तचित्त रहें।

भाव वही शुद्ध और सात्त्विक है जिसमें माँ एवं गुरुके प्रति पवित्र विचार तरंगित होते रहते हैं तथा जिसमें बनावटीपन और मनोविकारोंका समावेश नहीं होता। जीव एवं जगत्का मंगल, शक्तिकी पवित्र पूजामें है। यह पूजा अपने पासकी शक्तिकी पूजासे शुरू होनी चाहिये। कालान्तरमें समग्र संस्कृतिकी आदिशक्ति सर्वेश्वरीमें अपनी पूजाका विलयन करना ही अपना तथा लोकका मंगल करना है।

पहले आत्मतत्त्वको पहिचानो। ज्ञान-तत्त्व तो बादकी वस्तु है। शक्ति ही परम तत्त्व है। अपने आत्मतत्त्वकी शक्तिको पहिचाननेवाला ही परमतत्त्वकी शक्तिको पहिचान सकता है। मन, वचन और कर्मसे साधु बनो। किन्तु ऐसा साधु न बनो कि दुनियावाले तुम्हारी साधुताका नाजायज फायदा उठाने लगें। तुम्हारी साधुतामें अपनी रक्षाका सामर्थ्य भी हो। इसका ध्यान रहे।

प्रत्येक व्यक्तिको चाहिये कि अपनी व्यवस्था ठीक रक्खे। क्योंकि जिसकी व्यवस्था ठीक नहीं रहती उसे कभी जीवनमें सफलता नहीं मिलती। भक्त बननेके लिये आतुर प्राणियोंको पहले अपने भीतर श्रद्धा, विश्वास, सच्चाई, सच्चरित्रता, आस्था, निष्ठा, व्यवहार-कुशलता आदि सत् प्रवृत्तियोंको घर करने देना चाहिये। जब तक ये तुम्हारे हृदयमें डेरा न डाल लेंगी तबतक तुम्हारे भीतर भक्ति कैसे पनपेगी।

[प्रवचन : स्थान—अष्टभुजी शक्ति पीठ, विन्ध्याचल, तिथि शरद्
नवरात्र अक्टूबर, १९६७ ई०]

विश्वासके बिना जीवन मृतक तुल्य

उपस्थित मेरी आत्माय !

अभी जो मेरे साथियोंने अपना परिचय दिया है, आपने बहुत स्नेह एवं शान्तिपूर्वक सुना है। अब देख रहे हैं कि देर होनेसे ठीक नहीं होगा। मैं ज्यादा समय न लूँगा। घरमें जो बातें होती हैं वैसे ही करूँगा। मेरी बातें राजनीतिक नहीं हैं। घरमें जैसे शुभ कार्यपर शुभ बातेंकी जाती हैं वैसे ही करूँगा। बक्सर कई बार आया हूँ। किनारे-किनारे घूमा भी हूँ।

इतने लोगोंके बीचमें आकर बात करनेपर मुझे बड़ी प्रसन्नता है। सच्चरित्रता तथा पवित्रता जीवनमें लानी चाहिये। समाजसे विश्वास समाप्त हो जानेपर मनुष्य मृतक-तुल्य हो जाता है। मनुष्यको विश्वास नहीं खोना चाहिये। मैं यह इच्छा व्यक्त करूँगा कि आप हर व्यक्तिका विश्वास प्राप्त करें। हम विश्वास देंगे, दूसरा खो दे तो कोई बात नहीं। अपना विश्वास दिलाइये। नैतिकता बढ़ेगी। हृदयकी मलिनता मिटानेके लिये यही औषधि है। भगवती तक पहुँचनेका यही सुगम मार्ग है। आराधना-पूजाकी आवश्यकता नहीं। विश्वाससे सब मंगलमय होगा। जहाँ जिस हालतमें आप रहें आप मंगलमय रहेंगे।

मैं आपके परिवार, स्थान, प्रान्त सबके नजदीकका हूँ। आपसे बात करने आया हूँ। आपसे बात करके बहुत प्रसन्नता हुई है।

[प्रवचन : स्थान—जन सभा, कुँअरसिंह आश्रम बक्सर, आरा, बिहार। तिथि—३० दिसम्बर, १९६७ ई०]

ध्यान करते हैं तो मन्त्रोंका प्राणमें स्पन्दन होने दें

उपस्थित मेरी आत्माएँ!

आज जो वक्तागण श्रीसर्वेश्वरी समूहके इस आयोजनमें बोले हैं उन्हें मैं श्रीसर्वेश्वरी समूहके अध्यक्षके नाते धन्यवाद देता हूँ। अभी समूहके प्रेमी एवं अन्य वक्ताओंने प्रेरणाकी बात कही। आप लोगोंको स्वयं आत्मासे प्रेरणा मिलेगी। आत्माकी बातें सुनें। मनकी बातोंपर न चलें। जब आप ध्यान करते हैं तो प्राणोंमें मन्त्रोंका स्पन्दन होने दें। प्राणोंमें जब शक्ति जागृत होगी तभी ईश्वरीय गुणका बीजारोपण होगा, यदि अपने मनकी ओर बहते रहेंगे तो छिन्न-भिन्न हो जाएँगे। क्यों आप अपनेको कमजोर एवं दुर्बल पाते हैं? इसपर विचार करें। दुर्बलता लानेवाली भावनाओंका परित्याग करें। इच्छा मात्रसे कुछ नहीं होता। पुरुषार्थ भी करें। जो अजाना है उसे जाननेके लिये आप यहाँ बैठे हैं। सभी क्षेत्रोंमें विश्वास आवश्यक है। आत्मा एवं प्राणको भी आप विश्वास दिलावें कि मैं उसे ढूँढ़ूँगा और दैवी गुण संसारके लोगोंको दूँगा। आप लोग जिसे ढूँढ़ रहे हैं उससे आपको बड़ा आनन्ददायक फल मिलेगा।

[प्रवचन : स्थान—माघ मेला-प्रयाग, कैंप श्रीसर्वेश्वरी समूह, तिथि—श्रीअघोरेश्वर अवतरण दिवस समारोह २८ जनवरी, १९६८ ई०]

ब्रह्मज्ञान तभी होगा जब अपनापन खो देंगे

उपस्थित मित्रो!

आप लोगोंने इस पवित्र भूमिमें समयका सदुपयोग किया तथा उपदेशोंको सुना। अगर उसे स्थायी रूपसे व्यवहारमें लायेंगे तो जीवनका एक बहुत बड़ा लक्ष्य प्राप्त करेंगें। इस पावन क्षेत्रमें पवित्र विचारोंका संग्रहकर आप संगठनको एक अच्छी व्यवस्था देगें। जब तक आप त्याग नहीं करेंगे समाज या संस्थामें त्याग भावनां नहीं बढ़ेगी और उदासीनताके कारण जीवनमें जो कमी है उसे जबतक दूर नहीं करेंगे, तबतक आप अपने उद्देश्योंकी पूर्ति नहीं कर पायगे। दर्शन तो

केवल दर्शन मात्र ही रह जाता है अगर उसे व्यावहारिक रूप नहीं दिया जाये। इसलिये आप समझें तथा व्यावहारिक रूप दें। तपस्या क्या है? योग क्या है? जो उपदेश साधु-महात्माओंके मुखसे निकला उसे व्यावहारिक रूप दीजिये। ब्रह्मज्ञान तभी होगा जब आप अपनापन खो देगें। जब इच्छा होती है तब उसकी पूर्ति भी होती है। सन्तुलन रक्खो। समयका सदुपयोग करो। ईश्वर आपको आपके पवित्र कर्मके अनुसार फल देगा।

[प्रवचन : स्थान—माघ मेला प्रयाग कैम्प, श्रीसर्वेश्वरी समूह तिथि-श्रीअघोरेश्वर अवतरण दिवस समारोह १० जनवरी, १९६८ ई०]

चेष्टा करके दुर्भावनाओं तथा संस्कारगत दोषोंकी जड़ खोद दें

आज प्रबन्ध समितिकी बैठक बहुत दिन बाद बुलाई गई है। वैसे तो आप आपसमें मिलते होंगे। आज इस संस्थाकी स्थापनाके छह साल हुए। आप लोगोंमें त्याग रहा, परस्पर प्रेम रहा; सहयोगकी भावना रही, जिसके कारण छह वर्षके शैशव कालमें ही आपकी संस्था प्रगतिके पथपर निरन्तर निर्बाध रूपसे अग्रसर होती जा रही है। परन्तु अभी और त्यागकी आवश्यकता है। आपके जीवन-कालमें यह फलेगी, फूलेगी। जीवनकी ढलती अवस्थामें आपको असली सुख और शान्ति इसकी छायामें उपलब्ध होगी।

समाजमें बहुत सी कुरीतियाँ घर कर गई हैं। संस्कारगत दोष, वह वातावरण जिसमें मनुष्य पल रहा है तथा समाजमें प्रचलित कुरीतियोंने मानवको संकुचित एवं कुण्ठित बना दिया है। इन सबसे समाज सुखी नहीं है। एक अजीब तरहकी घुटन सब महसूस कर रहे हैं। जिनके साथ सामाजिक बन्धन लगे हैं, जो इन कुरीतियोंसे छुटकारा नहीं पा सके हैं वे सुखी नहीं है।

इस काशी नगरीमें ही देखिये। बहुतसे मठ और आश्रम हैं। उनके संस्थापकोंने जो व्यवस्था दी उनके स्थानपर आनेवालोंने वैसी व्यवस्था नहीं दी। वे समयके साथ चलनेमें असमर्थ रहे। वे बन्धनों एवं संकुचित दायरेसे समाजमें व्याप्त कुरीतियोंसे संस्कारगत दोषोंके कारण अपनेको मुक्त नहीं कर सके। जिसका कुफल यह हुआ कि उनकी प्रगति अवरुद्ध हो गई। हम लोग भी अगर समयके साथ नहीं चलेंगे तो उन्हीं मठों और आश्रमोंकी तरह खत्म हो जाएँगे। संस्था भी नष्ट हो जायेगी। विवाह, मरण, जीवन या अन्य जीवन संस्कारोंसे निकलकर, साल-छह महीने बाद, आप सब यहाँपर सभी भेद-भावोंको मिटाकर एक साथ बैठते हैं। यहाँपर सामाजिक कुरीतियों एवं संस्कारगत कर्मोंकी मान्यता देना मूर्खता है। अगर यहाँपर भी वे सब बातें प्रवेश करें तो कष्ट ही होगा। प्रारम्भसे ही जिसका जो आधारभूत सिद्धान्त है उसकी आलोचना निरर्थक है।

जाति, कुटुम्ब, परम्परागत एवं संस्कारगत दोषोंसे जो विकृति आती है उनको दुनिया तक ही रक्खें। जबतक यहाँ रहें उनका परित्याग कर। अगर यहाँपर भी उन सब बातोंके साथ आयेंगे तो अहितकर होगा। ईसाई तथा मुसलिम संस्थायें क्यों प्रगतिपर हैं? इसपर जितने विचार करें। सोचें। वे

समयके साथ चलती हैं। कुरीतियोंको मान्यता न देकर उसे समाप्त करें तो संस्थाकी प्रगति होगी।

आप पुरुषार्थ करते हैं। उपार्जन करते हैं। अच्छी बात है। परन्तु जो चौबीसों घंटा अपना समय यहाँ देता है, जो सब कुछ त्यागकर हमारे नियमोंका पालन करते हुए सेवा-कार्यमें संलग्न है वह बाहरके लोगोंसे बहुत अच्छा है। जो सब तरहसे त्याग करता है उसकी आपातकालमें मदद करना तथा उसके बाल-बच्चोंके शादी-विवाह, शिक्षा अथवा चिकित्सा इत्यादिकी व्यवस्था करना सामूहिक उदारता है। आलोचना करना नासमझी है। अच्छी दृष्टि से देखो। किस शब्दका प्रयोग किसके लिये करते हो, उसका क्या असर होता है यह समझो और अपनेको तौलो। सोच-समझकर ही कुछ करना चाहिये।

हमारी मान्यतापर जो ज्यादा अमल करता है उसका ज्यादा हक है, चाहे वह जिस धर्म, वर्ग या जातिका हो। अगर उदार दृष्टिकोण रक्खेंगे तो वे जहाँ भी रहेंगे सहानुभूति रक्खेंगे। पुरानी परम्परागत करेंगे तो देशव्यापी विकास होनेमें समय लगेगा। मैं यही कहूँगा कि आप लोग और थोड़ा त्याग कीजिये। त्याग हमारे जीवनका आधार है। घर-परिवार त्याग करनेकी आवश्यकता नहीं।

आप यहाँपर स्वात्माके अनुसन्धानके लिये आते हैं। संकल्प करते हैं। संस्थाके विकासके लिये सभी परम्परागत संस्कारगत मान्यताओंका परित्याग करें। यह भी एक रोग ही है। रोगीकी तरह ही विचारोंके पथ्यको लें। जो इन सबसे स्वतन्त्र हैं वे नीरोग हैं। उन्हें समाजका बन्धन नहीं, किसी प्रकारका बन्धन नहीं। वे सभी बन्धनोंसे मुक्त हैं।

मैं जो कुछ कह रहा हूँ उसपर बार-बार विचार कीजिये, सोचिये। जिस भाषा या बोलीमें मैंने कहा है अगर समझमें न आया हो तो अपने मित्रोंसे परामर्श करें, समझें और सोचें। चेष्टा करके दुर्भावनाओं तथा संस्कारगत दोषोंकी जड़ खोद दें।

[प्रवचन : स्थान—श्री सर्वेश्वरी निवास, वाराणसी आश्रम, तिथि-गंगा दशहरा ६ जून, १९६८ ई०]

दुर्गुणों का परित्याग करें

मेरी आत्मायें !

भारतमाताके महान् उपासक आप लोगोंके मध्य उपस्थित हैं। आज श्री सर्वेश्वरी समूहके अधिवेशनका प्रथम दिन है। धर्मके एक बहुत बड़े उपासकने आप लोगोंको प्रेरणा दी है। आप उसे ग्रहण करें। प्रत्येक आदमी अपने धर्मको व्यवहारमें लानेमें तत्परतासे लग जाये। आप दुर्गुणोंका परित्याग करें। तभी दैवी भावनाओंका आपमें समावेश होगा। तभी आपको सच्चा सुख एवं शान्ति मिलेगी। भगवती सबको अच्छे विचार एवं प्रेरणा देवें।

[प्रवचन : स्थान—सर्वेश्वरी सभा भवन वाराणसी, तिथि-गुरु पूर्णिमा, भारत सरकारके उप-प्रधान मंत्री श्रीमोरारजी देसाई द्वारा श्री सर्वेश्वरी समूहके पंच दिवसीय कायक्रमका उद्घाटन-दिवस ६ जुलाई, १९६८ ई०]

आत्म-चिन्तन करनेसे आपमें दुर्गुणों का प्रवेश नहीं होगा

बहुत से लोग अपने काम-धंधोंमें बुरी तरहसे फँसे रहते हैं। उनमें सदा एक तरह की चंचलता बनी रहती है। जिससे उनका मन, हृदय तथा शरीर सभी अस्वस्थ रहते हैं। वे अपने ही समाज, घर-परिवारमें परित्यक्त रहते हैं। अपने ही कर्मोंसे अपने को घृणित पाते हैं। ऐसे लोग ठीक तरहसे नित्य कर्म भी नहीं कर पाते। आत्म-चिन्तनसे आपमें दुर्गुणोंका प्रवेश नहीं होगा और शरीर एवं हृदयको शुद्धता प्राप्त होगी।

गुरु एवं शिष्यमें केवल इतना ही अन्तर होता है कि गुरु थोड़ा पहले जानता है और शिष्य थोड़ी देर बाद। धन, दौलत, ऐश्वर्यके पीछे दौड़नेसे वह नहीं प्राप्त होता। जैसे परछाईंके पीछे दौड़नेसे वह नहीं मिलती। यही दुःख का कारण है। यह दुःख आत्मचिन्तनसे ही दूर होगा।

(प्रवचन: स्थान—समूह अधिवेशन, वाराणसी आश्रम, तिथि ७ जुलाई, १९६८ ई०)

संगठन नहीं होनेके कारण अच्छे कार्यमें विघ्न

मुझे जो आप लोगोंके बीचमें आने का अवसर मिला वह यहांके कुछ अच्छे लोगोंके कारण। यहाँ का कार्यक्रम मुझे एक सप्ताह पहले ज्ञात हुआ। यहाँ आने पर पता चला कि बहुत दूर तक कोई विद्यालय नहीं है। यह कार्य बहुत पहले ही हो जाना चाहिये था। वस्तुतः संगठन न होनेके कारण किसी भी अच्छे कार्यमें विघ्न होता है। कोई काम सभी व्यक्ति नहीं करते। दो-चार आदमी होते हैं जिनकी प्रेरणा और त्यागसे कोई काम होता है। मैं आशा करता हूँ कि जो पौधा आपने लगाया हैं उसकी आप सुरक्षा करेंगे। मैं आप सबको धन्यवाद देता हूँ। आप छोटे-छोटे विघ्नोंसे घबड़ाये नहीं तभी आप अपने कार्योंको पूरा करेंगे।

(प्रवचन: स्थान—उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, ग्राम कल्याणपुर जि० रोहतास, बिहार, तिथि-विद्यालय शिलान्यास दिवस ६ सितम्बर, १९६८ ई०)

अपराधसे बचें

मैं आप लोगोंके बीचमें अपनेको देखकर बहुत ही प्रसन्न हूँ। मैं अपनी इस खुशी और प्रसन्नताको आप सबकी श्रद्धा और प्रेमसे तौल रहा हूँ। आपसे यही कहना है कि जो अपराध है उससे बचें। अपराध ही मनुष्यको झुलसा देता है चाहे वह अपराध आप समाजमें करें या पर्देमें करें। वह ऐसी वस्तु है जो आपके जीवनमें भूतकी तरह लग जाती है। अपराधसे मन गिर जाता है। आप मन, वचन, कर्मसे संकल्प लें कि किसी भी तरहका अपराध न करेंगे। जो कुछ भी ईश्वरके बारेमें आप जानते हैं उसे अमल में लावें। भगवान्‌से प्रार्थना करता हूँ कि आप अपराधसे बचें।

(प्रवचन: स्थान—समूह शाखा अदलपुरा, मिर्जापुर, तिथि २ मार्च, १९६९ ई०)

बुद्धने भी अघोर साधनायें की थीं

मद्यका सेवन सबके लिये नहीं है। इसका सेवन उसीके लिये है जिसने सद्गुरुको प्राप्त किया है। आधुनिक वैज्ञानिक, चन्द्रलोक तक जानेके लिये जिस प्रकार अपने यानमें एक विशेष प्रकारकी शक्तिको उत्पन्न करते हैं, उसी प्रकार मद्यके सेवनसे संसारके आकर्षण-क्षेत्रसे साधक अपनेको अलग करता है। बुद्धदेवने भी बुद्धत्व-प्राप्तिके पूर्व अघोर साधनायें की थीं। उनकी साधनामें सुजाताका बड़ा योग रहा। वे विधि-निषेधके परे थे। आप भी समवर्ती होकर ही साधनामें आगे बढ़ सकते हैं।

(प्रवचन: स्थान–सर्वेश्वरी सभा भवन, वाराणसी आश्रम तिथि-गुरु पूर्णिमा, बर्माके भू० पू० प्रधान मंत्री श्री ऊनू के द्वारा श्री सर्वेश्वरी समूहके अष्टम अखिल भारतीय अधिवेशनके उद्घाटनके अवसर पर २८ जलाई, १९६९ ई०)

जीवन का लक्ष्य ऊँचा रहना चाहिये

आज मैं अपने आपको, इस स्थान पर, आप लोगोंके मध्य पाकर बहुत प्रसन्न हुआ। हर प्राणीको अपने जीवनमें ऊँचा लक्ष्य रखना चाहिये। इसके लिये मनुष्यको अपनी आत्मामें दृढ़ संकल्प करना चाहिये। अपने जीवनको स्वस्थ रखना चाहिये। जीवनमें सत्य विचार और सत्य व्यवहारकी कुशलता लानी चाहिये। भय नामकी वस्तुसे परे होकर सब कुछ परमात्माकी शक्तिका चमत्कार समझकर अपनेमें पवित्र भावोंको जागृत करना चाहिये। अपने विश्वासको जागृतकर, व्यवहारमें लाकर, परमात्माका साक्षात्कार करना चाहिये। साक्षात्कार पानेकी अन्तिम सीढ़ी उसके नामोंके संकीर्तन हैं। इससे मानव परमात्मासे सम्पर्क स्थापितकर सकता है।

मैं एक छोटीसी बात कहूँगा जो दुर्गा सप्तशतीमें है। आप जानते होंगे कि सुरथ और समाधिके मनकी मलिनता और अशान्तिका समाधान सुमेधा-द्वारा हुआ। सुमेधा सद्बुद्धि-सम्पन्न गुरु हैं। आप अपनेमें सद्बुद्धिका संचय करें।

हम सब लोगोंको मानव मात्रकी एक मात्र माँ सर्वेश्वरीकी संतान मानकर, जाति-पाति, ऊँच-नीच आदिको भूलकर, सत्यताकी ओर अग्रसर होना चाहिये जिससे हमारा देश फिरसे विश्वमें धर्मकी निरपेक्षताको आपसके व्यवहारमें लाकर विश्वका अग्रणी कहलानेमें समर्थ हो। हमें आपसमें अधिकसे अधिक श्रद्धा एवं प्रेम भाव लाना चाहिये। इसीमें सफलता है।

(प्रवचनः स्थान–रायगढ़, मध्य प्रदेश, तिथि १७ दिसम्बर, १९६९ ई० विदेश यात्रासे लौटे श्री अवधूतेश्वरके स्वागत समारोहके अवसर पर)

जपसे नाड़ीका शोधन होता है

जब तक आप लोग प्रयाग संगमपर निवास करते हैं, मनको एकाग्र करें। सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक सभी [illegible] झंझटोंसे मनको हटायें। शान्त,

निस्पन्द अवस्थामें दो-तीन मिनट भी रहेंगे तो नवजीवन, नयी उमंग और नया आभास पायेंगे। प्रयागसे जब हम लौटें तो नया युग, नई लहर समाजमें लावें। हमारे समाजमें नयी उमंग हो, नया उल्लास हो। यह तभी सम्भव है जब यहाँ रहते हुये ध्यान-धारणा, जप करेंगे। जपसे नाड़ीका शोधन होता है। चित्त का कलमष धुलता है। त्रिदोषका नाश होता है। स्वतः मन अच्छा रहता है। हृदय अच्छा रहता है और अच्छे कार्य होते हैं। सर्वत्र पवित्र मनोभाव रक्खें तो चतुर्दिक् उन्नति होगी और शान्ति मिलेगी।

(प्रवचनः स्थान-श्री सर्वेश्वरी समूह, माघ मेला कैम्प प्रयाग) तिथि-श्री अघोरेश्वर अवतरण दिवस समारोह, ४ फरवरी, १९७० ई०)

कृतज्ञ हूँ, साधु वेशमें सबोंकी सेवा करता हूँ

सर्वेश्वरीकी प्रतीक माताओं एवं सज्जनो !

आज जो कार्यक्रम है, जिसमें अभी मेरे ही विषयमें बहुत कुछ कहा गया, उससे मुझे प्रसन्नता हो ऐसी बात नहीं। मुझे दुःख हो ऐसी भी बात नहीं। आपके अपने-अपने भाव हैं जिन्हें आप लोगोंने व्यक्त किया है। इसे मैं रोक भी नहीं सकता। जो कुछ भी आदर-सम्मान पाता हूँ आपके सहयोगसे। आशा है भविष्य में भी आपका सहयोग मिलेगा। मिट्टीके मकानमें दुखी परिवारमें मेरा जन्म हुआ। बाहर निकला। शिक्षा भी नहीं प्राप्त की। धनी-मानी, सेठ-साहूकार-किसी से रुपया-पैसा नहीं लिया। भाग्य-प्रारब्ध भी नहीं सोचता। यह भी बदलता रहता है। साधु वेशमें जिस देशमें घूम रहा हूँ, इसलिये नहीं कि माला फेरूँ। ध्यान करनेके लिये भी ऐसा नहीं करता।

जब आपको समय मिलता है ईश्वर आराधना करनेका, तो प्राण वायु को रोक कर हृदयमें विश्राम-भावना लावें। कोई कामनायें न रक्खें। मन-चित्त प्रसन्न रक्खें। सभी कामोंको करनेमें अपनेको अनुभवी पायेंगे। उत्साहित रहेंगे। जहाँ तक विश्वास है, पायेंगे। म्लेच्छ, क्रूर जो अपने देशको तहस-नहस करना चाहते हैं उनके विरुद्ध अपने मनोभावोंको अवश्य सबल बनावें। उससे आपके सुहृद् जनोंको बड़ा बल मिलेगा। यदि ऐसा नहीं करेंगे, तो जीवन कष्टमय हो जाएगा। प्रयास, साहस, धैर्यसे जहाँ भी रहें अपने हृदयमें ग्राम, जिला, प्रान्त एवं देशकी कल्याण भावना रक्खें। जो म्लेच्छ हैं, क्रूर हैं, अन्यायी हैं उसके साथ आप अवश्य लड़ें। मेरी बातों पर विचार करें और उन्हें व्यवहार रूपमें लावें।

अभी मेरे विषयमें कुछ महानुभावोंने बहुत कुछ कहा है। साधु-फकीर दवा नहीं बाँटता। ऐसा कोई व्यक्ति नहीं जो रोगी न हो। खाना-पीना, चलना-फिरना, जितना व्यवहार है, सब एक रोग है। महात्मा, गुरुजन सिर्फ औषधि नहीं, पथ्य भी बताते हैं। आप यदि पथ्य लेते हैं तो औषधि काम करेगी। मनुष्य विषयोंमें लीन, सामाजिक, पारिवारिक उलझनोंके कारण अस्वस्थ एक अजीब शैतान सा लगता है। उसके लिये पथ्य औषधिसे बड़ा है। पथ्यका सेवन आपका

काम है। जिनकी बुद्धि कुपथकी ओर है, अपराध पर है उन्हें भूत लगा है। इस

प्रयाग क्षेत्रमें आकर अपराधसे बचें। अपराध कितना है, क्या है, विचार करते रहेंगे। नाना प्रकारके रोगोंका समूल नाश तभी होगा जब पथ्य सेवन करेंगे।

गुरु, ईश्वर नाना प्रकारके सम्बन्धोंसे आप मुझे सम्बोधित करते हैं। यह आपके हृदय का प्यार है, आपकी प्रसन्नता है। कभी गाली मिलती है, कभी फूल मिलते हैं। प्यार भी मिलता है, फटकार भी मिलती है। हेय दृष्टिसे भी देखते हैं, आदर भी करते हैं। मैं अधिक कुछ कहना नहीं चाहता। आप पथ्य सेवन करें और आपका कल्याण हो, यही चाहता हूँ।

(प्रवचनः स्थान-माघ मेला श्रीसर्वेश्वरी समूह कैम्प, प्रयाग तिथि–श्री अघोरेश्वर अवतरण-दिवस समारोह ५ फरवरी, १९७० ई० मुख्य अतिथि श्री शिवनाथ काटजू न्यायाधीश, इलाहाबाद हाईकोर्ट)

जात-पाँतके कारण दुःख

भारतीय संस्कृति के सम्बन्ध में मैं बातचीत में आप से कुछ कहना चाहता हूँ। बौद्ध-काल में शान्ति, समृद्धि थी। लोग सुखी थे। बुद्ध-धर्म हिन्दू-धर्म ही है। "संघकी शरणमें जाता हूँ" ऐसी विचारधारावाले जो लोग थे, वे हिन्दू धर्मके लोग थे। नेता, योग्य व्यक्ति, धनी, सेठ सभी बौद्ध थे। जात-पाँतके कारण ही परेशानी, उलझन और दुःख है। इस बोझसे हिन्दू समाजके बहुतसे लोग अपना शारीरिक और मानसिक विकास नहीं कर पाते।

हम नहीं कहते कि आप अपनी जात-पाँत तोड़ दें। जो पूर्वजोंकी देन है उसे रक्खे रहें। पर इस बंधनको समझें। सिक्खोंका संगठन देखें। उनका विश्वास है कि गुरु-कृपासे ऐसा संगठन होता है जिसमें जात-पाँतका भेदभाव नहीं रहता। आप भी सिक्खोंके संगठनसे कुछ सीखें।

(प्रवचन : स्थान—माघ मेला श्रीसर्वेश्वरी समूह कैम्प, प्रयाग, तिथि—श्री अघोरेश्वर अवतरण दिवस समारोह, ६ फरवरी, १९७० ई०)

दुखियोंकी सेवा ईश्वरकी सेवा है

आपके बीच आनेका अवसर मिला। प्रसन्नता हुई। इस सेवा-आश्रमका प्रबंध अच्छा है। इससे खुशी हुई। क्षेत्रीय सज्जनोंके सहयोगसे ऐसी आशा होती है कि भविष्यमें यह सेवा-आश्रम अधिकसे अधिक आश्रितों, दुखियों, तिरस्कृतों एवं कमजोर लोगोंको आश्रय देकर सेवा करेगा। सेवा-आश्रमको धनी एवं राजनीतिज्ञों-का अखाड़ा आप लोग न बनने दें।

दुखियोंकी सेवा ईश्वरकी सेवा है। सच्ची सेवा श्रेष्ठ कर्मों एवं मनकी अच्छी प्रेरणाओं द्वारा होती है। आप मन, वाणी और व्यवहारमें अच्छाई लावें। मन एवं व्यवहारमें अच्छाई न रखनेसे प्रतिभा झुलस जाती है। मन गिर जानेपर निराशायें आ जाती हैं और मन उत्साह हीन हो जाता है। मैं सभीको धन्यवाद देता हूँ। आश्रमके कार्यकर्ताओंका उत्साह इसी भाँति बना रहे।

(प्रवचन : स्थान—ग्राम पुरुषोत्तमपुर, जि० मिर्जापुर, तिथि—सेवा-आश्रम द्वारा श्री अघोरेश्वरका अभिनन्दन समारोह, २२ फरवरी, १९७० ई०)

अन्यायका विरोध करना चाहिये

आज आप लोगोंको प्राप्तकर मैं बडी प्रसन्नताको प्राप्त हुआ हूँ। इस रास्तेसे मैं कई बार गुजरा हूँ। किन्तु श्री महादेवके विग्रहके पास जानेका कभी संयोग नहीं हुआ। आशा है यहाँके अधिकारी लोग सभाके बाद मुझे विग्रह तक ले जायेंगे। आपसे केवल यही कहना है कि आप सदाचारको मन, वाणी, कर्मसे अपनावें। इसके साथ-ही-साथ आपके साथ जो अन्याय हो रहा हो, चाहे वह अन्याय समाजकी ओरसे हो या नेताओं या अधिकारियोंकी ओरसे हो, उसका विरोध करें। इसके लिये आवश्यक है कि आप अनुशासनबद्ध जीवन बनावें और सदाचारका पालन करें।

(प्रवचन : स्थान—त्रिलोचन महादेव, जि० जौनपुर, उ० प्र०, तिथि—जिला नियोजन अधिकारी-द्वारा प्रान्तीय रक्षक दलके शिविर का आयोजन ७ मार्च, १९७० ई०)

सगुणसे ही निर्गुणकी प्राप्ति होती है

भगवती श्रद्धा एवं विश्वास-रूपिणी हैं। काली, दुर्गा एवं शिव आदि अनेकों रूपोंमें वे जगत्का कल्याण करती हैं। उनकी उपासनासे प्राणियोंका चित्त प्रकाशवान् होता है तथा निराशाका नाश होता है। भिन्न-भिन्न गुणोंको अपनेमें आत्मसात् करनेवाले मनुष्यको गुणसे युक्त (सगुण) कहा जाता है। जब हम सगुण हैं तो सगुण देवताकी पूजा और वन्दना करनेमें किसीको भी आपत्ति नहीं हो सकती। सगुणसे ही निर्गुणकी भी प्राप्ति होती है। आराधनासे आत्मबल, ज्ञान, सुख, आनन्द तथा ऐश्वर्य प्राप्त होता है। यहाँपर दो वस्तुएँ न देखकर आश्चर्य हुआ। बलि और यन्त्र। बलि तथा यन्त्र शक्तिके लिये आवश्यक है।

(प्रवचन : स्थान—धनेसरा, वाराणसी, डॉ० गणेश राम मल्लिक द्वारा निर्मित तिथि—दुर्गा मन्दिरका उद्घाटनोत्सव, ७ अप्रैल, १९७० ई०)

सांसारिक प्रपञ्चसे चित्त अलग होगा तो शांति अनुभव करेंगे

जो लोग भगवतीमें और गुरुमें श्रद्धा रखनेवाले हैं और शक्तिके उपासक हैं, उन्हें इस पर्वपर बड़े ही उत्तम और पवित्र विचार रखने चाहिये। इस पवित्र पर्वपर सब विवाहित व्यक्तियोंको अपनी पत्नी या कन्यामें देवी-भाव रखना चाहिये। कलह, ईर्ष्या, द्वेष अपने और अपने परिवारसे दूर रक्खें। आप गुरु-मंत्रोंपर यथाशक्ति ध्यान करें। इससे हृदयमें शुभ विचारका स्फुरण होगा। मन शांत होगा। विघ्न कटेगा। हृदयमें पौरुष और साहस उत्पन्न होगा। आज पवित्र पर्वका प्रथम दिन है। आपने यदि मंत्र-जापका संकल्प किया है, तो उसे पूरा करें। जप और ध्यानसे जीवका परम कल्याण होता है। इच्छाएँ तृप्त हो जाती हैं। कामनाएँ जीवनमें कम हो जाती हैं। जीवन शान्त होता है। ध्यानमें शान्ति है। जैसी अन्तःप्रेरणा मिले वैसी क्रिया करें। बनावटी न बनें। दम्भ न हो। इस पवित्र पर्वपर मैंने जो कहा है उसे व्यवहारमें लावें।

(प्रवचन : स्थान—श्री सर्वेश्वरी मन्दिर, वाराणसी आश्रम, तिथि—चैत्र नवरात्र पूजन, ७ अप्रैल, १९७० ई०)

अपनी पूजा ही भगवतीकी पूजा है

इस पवित्र पर्वपर आप लोगोंके संग इस पवित्र काशी नगरीमें, गंगाके तटपर एक बड़ी नई अनुभूति हो रही है। उस अनुभूतिको मैं वाणीके माध्यमसे आप तक पहुँचा रहा हूँ। आशा करता हूँ कि जिनमें निष्ठा है, जो दीक्षित हैं, जिन्हें गुरुके सन्निकट रहनेका मौका मिला है वे विचार करेंगे और अपना पवित्र कर्त्तव्य समझकर उसे व्यवहारमें लावेंगे। जब आप आसन लगाकर जप इत्यादिमें बैठते हैं तो आपका एक हाथ भूमिपर होना चाहिये। क्योंकि शक्ति पृथ्वीसे मिलेगी। यदि दाहिने हाथसे जप करते हैं तो बायें हाथसे पृथ्वीका स्पर्श करें। सोकर उठें तो पृथ्वीको प्रणाम करें। पृथ्वी माता हैं। इसमें शक्ति है।

आसनपर बैठें तो अंगोंको मुद्रित किये रहें। मुद्रासे अपनेमें आकर्षण-शक्ति आती है। सौम्य भाव आता है। चित्तको विश्राम देकर इन्द्रियोंको अनुशासित करके ध्यान करें। यह तो ध्यान-धारणा की बातें रहीं।

भगवतीको चारों दिशाओंमें प्रणाम करें। दिशा स्वरूप भी तो वही हैं। दिशायें देखती हैं—कौन क्या करता है? आप नवरात्र कर रहे हैं। इसका मतलब है—देवीकी सेवा कर रहे हैं। उस देवीकी, उस शक्तिकी, जो क्षुधा रूपमें, अन्न रूपमें, शक्ति रूपमें, विभिन्न रूपोंमें हमें सामर्थ्य और शक्तिका दान करती है। देवीकी कृपासे अपवित्र कर्म भी पवित्र हो जायेगा। चिन्ता मत करो। सफलता मिलेगी। राम कृष्ण परमहंसने पत्तल इकट्ठा कर, जूठे पत्तलोंसे चावल चुनकर देवी का आवाहनकर वायुमण्डल द्वारा अपनी प्रार्थना देवी-तक पहुँचायी थी कि माँ देखो मुझमें ब्राह्मण होनेका, जातिका, कुलका, मर्यादाका अहंकार नहीं है। मैं इन जूठे चावलोंको खा रहा हूँ। मैं ब्राह्मण नहीं। तब उन्होंने माँका दर्शन प्राप्त किया।

(प्रवचन : स्थान—वाराणसी आश्रम, तिथि—चैत्र नवरात्र ८ अप्रैल, १९७० ई०)

पवित्र विचारों एवं साहससे जातिगत कटुता दूर करें

आज अपनी संस्थाके प्रांगणमें इस नई पद्धतिसे विवाहके शुभ अवसर पर मैं अपनी संस्थाके अधिकारियोंकी ओर अपनी शुभ कामना आपको समर्पित करता हूँ। आप लोगोंने जो यह विवाह-विधि देखी है। कितने थोड़े समयमें सम्पन्न हो गई है। यही वास्तविक है। वास्तविकताको अपनावें। आडम्बरसे बचें। विवाह के अवसर पर तिलक दहेज लेना घोर पातक है।

मैं आशा करता हूँ कि भविष्यमें आप लोग इस संस्थाके प्रति सदा सहानुभूति रक्खेंगे। यहाँ जो वर-वधू हैं वे श्री सर्वेश्वरी समूहके सिपाहीके रूपमें संस्था की सुरक्षा एवं प्रगतिमें भाग लेंगे, ऐसी आशा करता हूँ। आप लोग जहाँ कहीं भी रहेंगे, सहयोग करते रहेंगे। केवल अपने अर्थसे ही नहीं अपितु अपने पवित्र विचारोंसे। आप लोग एक जाने-माने एवं स्वस्थ नागरिक बनें, मैं आशीर्वाद देता हूँ।

(प्रवचन : स्थान–वाराणसी आश्रम, तिथि समूह पद्धतिके द्वारा विवाहोत्सव ३ मई, १९७० ई०)

छोटेसे तृण को भी बड़े पर्वतोंसे नहीं तौल सकते

हमें चाहिये कि यदि कोई बुरा भी हो तो उसमें जो-जो अच्छी चीजें हों उन्हें हम ग्रहण करें। यह व्यक्तिगत धर्म है। तुलसीदास इस धर्मके धनी थे। वे बहुत बड़े विद्वान् भी नहीं थे। शिव के लिये उनके हृदयमें कितनी अगाध श्रद्धा थी। राम तो उनकी आत्मा ही थे। शिवकी ही प्रेरणा, दया तथा इच्छासे उन्हें रामके बारेमें कुछ कहने का सामर्थ्य प्राप्त हुआ। वे बाहरसे वैष्णव थे, पर अन्दरसे शैव थे। अयोध्या में बड़े-बड़े प्रतापी लोग हुये जिनका पूरी पृथ्वी पर राज्य था। लेकिन उनमें दैवी गुण नहीं था। वे लोग सुख और बहुनारी वाले थे। एक नारी वाले का दैवी गुण तुलसीमें था। राम भी 'एक नारी सदा ब्रह्मचारी' थे।

यवनोंके कालमें रामायणका निर्माण हुआ। काशी भी उस समय इस तरह शुद्ध या साफ नहीं थी। काशीमें भी उनका आतंक था। हिन्दू घबड़ाते थे राज-भयसे या बुद्धि कुण्ठित होनेसे। रामायण राजपथ की भाँति ईश्वर तक पहुँचने का मार्ग है। सूर, नानक, कबीर, वशिष्ठ, तुलसी तक पहुँचने का मार्ग काव्यके रूपमें है। इन्हें अपने पास रक्खें। इनसे सब कमियोंकी अवश्य पूर्ति होती है। किन्तु दृष्टि दूषित नहीं होनी चाहिये। जब तक दृष्टि खुली रहेगी तभी तक बन्धु-बान्धव, साधु-संन्यासीइत्यादि दिखलाई पड़ते हैं। उसे इतना स्वच्छ रक्खें कि वास्तविकता दिखाई दे और उसे समझ सकें। तुलसीको लोग बड़े तिरस्कारकी दृष्टिसे देखते थे। किन्तु कौवे का काँव-काँव भी हितकर होता है। काँव-काँव सुनकर घरकी औरतें समझती हैं कि बाहरसे कोई आनेवाला है।

पवित्र आचरणके लिये आपको दण्ड भी दिया जाये तो आप समझें कि आप जल्दी ही लक्ष्यको पाएंगे। एक अच्छे आदमीको किस तरह रहना चाहिये यह शिक्षा रामायणसे आपको मिलेगी। रामायण उत्तर भारतकी संत-परम्परा-का ग्रंथ है। रामानन्दके आचार-विचारमें बहुत समन्वय था। गुरुमुख चमार श्रेष्ठ है। रामानन्दके विचारमें ब्राह्मण भी गुरुमुख न होने पर त्याज्य है। एक साथ खान-पान से प्रेम होता है। जब हम एक साथ रहते हैं तब समानता रहती है।

'जहाँ सुमति तहँ संपति नाना। जहाँ कुमति तहँ बिपति निधाना॥'

बड़े सेठोंका जीवन नारकीय जीवन है। किसी भी चीजकी चाहे वह अच्छी या बुरी हो, अपनी वाणीसे निन्दा करना बुरा है। यह अपनी कमजोरी है। हम कैसे किसी के जीवनको और चलनको तौल सकते हैं। एक छोटे से तृण को भी आप बड़े पर्वतसे नहीं तौल सकते। तृणका भी अपने स्थान पर महत्त्व होता है। संकुचित विचार छोड़ें। स्वस्थ चित्त होकर इन बातों पर मनन

करें। ऐसा करने पर मनमें गुदगुदी होगी। किसी भी वस्तुको एकाएक तौलने न बैठ जायँ।

प्रवचन स्थानः–वाराणसी आश्रम-तिथि श्री सर्वेश्वरी समूह द्वारा आयोजित तुलसी जयन्ती महोत्सव—९ अगस्त, १९७० ई०

पवित्र विचार एवं आचरणसे सर्वेश्वरी का सर्वत्र दर्शन

धर्म बन्धुओ !

इस माँकी पीठ पर अभी जो आपने पूजाके अवसर पर क्रोध, लोभ, मोह एवं इच्छारहित अवस्थाको प्राप्त किया है वह निश्चय ही आपके अनुष्ठान का फल है। माँ मन समेत सभी इन्द्रियोंकी अधिष्ठात्री देवता हैं। वे हमारे अत्यंत निकट हैं। हमारी परम सुहृद् एवं प्रिय हैं। अस्तु, यहाँ अनुष्ठानका मतलब अनशन या सत्याग्रह नहीं। क्योंकि इन अस्त्रों का प्रयोग तो उनके प्रति होता है जो हम पर अत्याचार करते हैं और जिनको सही राह पर लानेके लिये इन अहिंसात्मक साधनोंसे जनमत तैयार किया जाता है। यह रात्रि ही माँका स्वरूप है जिसकी अँधियारी मेंसे प्रकाशके दर्शन होते हैं। माँ रात्रि रूप है और सभी जीवोंको अपनी गोदमें लेकर सुलाती हैं और उन्हें नव चेतना प्रदान करती हैं। ऐसे अनुष्ठान-से तेज, बल, वीर्य तथा यश आदिकी वृद्धि होती है। मैं कामना करता हूँ कि आप इस देशके सुयोग्य नागरिक बनें।

मानव-जीवन की अवधि एक शताब्दी कही गई है। अधिकांश व्यक्ति तो इस अवधि तक जीवित नहीं रह पाते। परन्तु उनका नाम एवं यश कदाचित एक सदी तक बना रह सकता है। अस्तु, जिसने जीवन धारण किया, उसका एक दिन मरकर, दुनियासे चले जाना अनिवार्य है। इसीलिये सभी विषय-सुख अनित्य हैं। मानव-शरीर पाकर कुछ ऐसे श्रेयस्कर कार्य अवश्य करना चाहिये जिससे यहाँ-वहाँ दोनों जगहों कल्याण हो। यह अनुष्ठान ऐसा ही कार्यक्रम है। आपको न तो अकारण वीर्यपात करना चाहिये और न अकारण झगड़ेमें पड़ना चाहिये। इससे अनायास शक्तिका ह्रास होता है। बुरा विचार तथा बुरा कार्य एक पिशाच के सदृश है जो आपको सदा उद्विग्न एवं भयभीत रखता है। यदि आप निर्भय रहना चाहें तो अपना जीवन पवित्र बनायें। पवित्र विचार एवं आचरण आपमें एक ऐसी शक्ति संक्रान्त कर देते हैं जिससे आप सर्वेश्वरी माँके स्वरूपको अपने में, दूसरोंमें तथा अखिल विश्वमें देखने लगते हैं। इसे मैं जीवन की सफलता कहूँगा यह समूह किसी जाति, सम्प्रदाय एवं प्रान्तका हित न चाहकर मानव-मात्रके हित-साधनके संकलपसे बना है। यदि आप ऊपर बतलाये हुये आचरण को अपनायेंगे तो आप अवश्य ही समूहके कर्मठ सदस्य एवं देशके एक अच्छे नागरिक बनेंगे।

(प्रवचन : स्थान–विन्ध्याचल–शक्ति पीठ, तिथि—शरद् नवरात्र निशा-पूजन अक्टूबर, १९७० ई०)

जीवनका आदर्श रूप बनानेमें समूहको अपना साथी समझें

उपस्थित धर्म-बन्धुओ, माताओ और समूह बन्धुओ !

आज इस पवित्र पर्वके शुभ अवसरपर आपका जो एक निष्ठाके साथ, पवित्रताके साथ सहयोग मिला उसके लिये उपदेश तो नहीं दूँगा, कृतज्ञ हूँ। उपकार-के बदले उपदेश नहीं, कृतज्ञता दी जाती है। यह हमारे लिये घरेलू गोष्ठी है, घरेलू बातचीत ही आप लोगोंसे करूँगा।

मनुष्यका जीवन एक शताब्दी माना गया है। मनुष्य इससे ज्यादा नहीं जीता। कोई-कोई सौ वर्ष तक जीता है। राजा, रंक, फकीर, अमीर, गरीब इसी बीच जिसे जो होना है, होता है। इसी अवधिमें पृथ्वीमें अपनी आहुति देनी है। इसी एक शताब्दीके लिये माँ भूमि है, इसलिये अपनेको अच्छा, पवित्र, सुन्दर करनेकी व्यवस्था इसी बीच करनी है। मनुष्यका जीवन अजीब-सा है। सब कुछ होते हुये भी वह बड़ा दुःख, कष्ट और परेशानी उठाता है। धन-सम्पत्ति वह सुख-शान्ति नहीं देते जो योगी पाते हैं। सुख-शान्ति आत्माके अनुसन्धानसे मिलती है। आत्माकी आवाज सुनें। मनकी बात दुःखदायी होती है।

मनुष्य-जीवनके इस सौ वर्षके अन्दर अच्छा कार्य करके, पवित्र जीवनके लिये व्यवस्था करें। धर्ममें आस्था रखनेवाले सोचते-विचारते हैं और प्रयत्न करते हैं तो उन्हें सफलता मिलती है। वे हिमालयके सदृश दृढ़ रहते हैं, पूज्य होते हैं ऐसे व्यक्ति। जिनके मनमें ईर्ष्या, द्वेष, बैर है, वे निन्दनीय होते हैं। अपने व्यवहारसे परेशान होते हैं। दुःख उठाते हैं। तो क्यों हम दुःखद मार्गपर पैर धरें। क्यों न अच्छे संगठनमें पवित्रताके साथ रहें जिससे दैवी गुण प्राप्त हो। जब तक जीवन है क्यों न स्वच्छ, साफ, निर्द्वन्द्व हृदय व चित्तको बनावें और समाहित अवस्था प्राप्त करें। अमेरिका इत्यादिमें धनी, समृद्धशाली, सम्पन्न लोग हैं लेकिन वे व्याकुल, बेचैन, अशान्त हैं। भोग-विलास उन्हें शान्ति-सुख नहीं दे सका। योगी साधुका गुण उनमें नहीं है। धन-सम्पत्ति उन्हें काट रही है। क्या शान्ति मिलेगी जब आत्म-अनुभव नहीं। भारतीय सन्त, योगी, दार्शनिक उसका अभ्यास कर, उस दौलतको प्राप्त कर, थोड़ेमें सन्तुष्ट रहते हैं। साधुओंकी देन बड़ी है। मनुष्य-जीवनके कर्त्तव्यकी यह बात रही।

अब रही समूहके सान्निध्यमें रुचि और प्रेमकी बात। यह अपनी खुशी, अपने सामर्थ्य, अपनी योग्यताके ऊपर है। जीवनमें जो कर्म हो चुके उन्हें पीछे मुड़कर देखनेसे दुःख देगा। इसलिये यह सोचें कि आगेका जीवन कैसे सुन्दर होगा ? जीवनको अच्छे रूपमें तैयार करें। जीवनका आदर्श रूप बनानेमें समूहको अच्छा साथी समझें। गलतियोंको मुड़कर न देखें। वर्तमानमें पुनीत कार्य करें नहीं तो ह्रास होगा।

हम संगठित रूपसे मिलते हैं। हमारा यह सम्बन्ध पवित्रताका सम्बन्ध है। दिल मिलता है। विश्वास हम आपको देते हैं। विश्वास धन है। विश्वास अमोघ

धन है। न तो यह छीना जा सकता है और न इसका राष्ट्रीयकरण हो सकता है। संस्थामें आस्था रक्खें। विश्वासहीन व्यक्ति अपने घरमें भी सुखकी नींद नहीं सो सकता। उसे अपने लोगोंसे भी भय लगा रहता है। आस्था, विश्वास, निष्ठा सार्वभौम हो तो सुख-शान्ति मिलेगी।

[प्रवचन : स्थान—गम्हरिया आश्रम, श्रीसर्वेश्वरी समूह शाखा, मध्यप्रदेश। तिथि–दीपावली पर्वपर नवम अधिवेशन, २९ अक्टूबर, १९७० ई०]

देना है तो पवित्र आचरण, पवित्र कर्म, पवित्र व्यवहार दीजिये

माँ एवं माताओ और समूह-बन्धुओ!

कल अमावस्याका महान् पर्व है। इस विशेष पर्वपर हम लोगोंके पूर्वज ऋषि-महर्षि हमें इसलिये प्रेरित करते थे कि हम लोग कुछ सीखें और अपने नन्हें-मुन्नोंको सिखायें। सीखना है देनेकी प्रवृत्ति। कुछ देना सीखना है। ऐसा करनेपर इष्ट, मित्र, संगी, साथी, सब होंगे। देनेसे मतलब धन देना नहीं। पवित्र आचरण दीजिये। पवित्र कर्म दीजिये। पवित्र व्यवहार दीजिये। इन सभी बातोंको आप अपने छोटे बच्चोंमें फैलाइये।

आज लोग बहुत दुखी हैं। कोई कहता है कि हमारा लड़का ऐसा करता है। कोई कहता है कि वह इस तरहके अच्छे वातावरणमें नहीं आया, सन्त, साधु, फकीरोंके सम्पर्कमें नहीं आया। बीतेकी चिन्ता छोड़कर भविष्यमें आचार-व्यवहार किस तरहका हो उसपर ध्यान दें क्योंकि वही हमारे सामने आनेवाला है। जो बीता वह बीता। कल अमावस्या है। सात बजे जो पर्व है छह बजे सायं तक रहेगा। यह स्नानका पर्व है। इसके आगे आनेवाले दिन खुशियोंके दिन हों। यह पर्व आत्म-अनुसन्धान करने और छिपे देवताकी आवाज सुननेका पर्व है।

सज्जनोंके प्रति श्रद्धा रखनी चाहिये। जीवनको ईर्ष्यासे दूर रखना है। ईर्ष्या जीवनको दंभी बना देती है। भगवान् भी कहते हैं कि ऐसे मनुष्यके हृदयमें मैं नहीं रहता। ये सब अवगुण आपमें भविष्यमें न हों। दम्भ न हो, कपट न हो, छल-छिद्र भी न हो। दुर्गुण ही चाण्डाल है। म्लेच्छ है। उसके कारण असफलता होती है। निराशा मिलती है। मन गिर जाता है। दूषित हो जाता है। जैसी प्रफुल्लता, आशा हमें चाहिये वैसी नहीं होती। इसके लिये हम प्रयत्न करें और ये सन्त, महन्थ, भक्तगण जो विचार देते हैं उनसे लाभ उठावें। आप सभी बड़ी देरसे बैठे हैं। जो कहा, मैं आशा रखता हूँ उसे आप व्यवहारमें लायेंगे और लाभ उठावेंगे।

[प्रवचन : स्थान—प्रयाग माघ मेला कैम्प श्रीसर्वेश्वरी समूह, तिथि–अघोरेश्वर अवतरण दिवस समारोह २५ जनवरी, १९७१ ई०]

सूद और सोनेसे दूर रहें एवं संस्थाको अपने केशकी तरह सँवारें

उपस्थित देवियो !

मैं देखता हूँ कि आपका संघ बहुत आगे बढ़ा है। आपका साहस बढ़ा है। मैं आशा करता हूँ कि आप अपने विचारको समाजके सामने रखनेमें संकोच नहीं करेंगी। जिन गायत्री, कौशिकी, कल्याणी, अरुन्धती, देवी और शक्तिका महर्षियोंने गान गाया है उन महर्षियोंसे उनका सम्बन्ध था। आपके पति आपके देव हैं। आप इनके साथ जो शुभ-संकल्प करती हैं वह बहुत महान् है। आप लोगोंके शुभ-संकल्पसे ही तो तिलक-दहेजका भाव गिर गया है। इन्जीनियर, डॉक्टरका भाव भी गिरता जा रहा है। ओवरसीयरका रेट तो तीन-चार हजार रह गया है। दाल, सब्जी, आटेकी तरह इनका भाव गिरता जा रहा है। आज दर्जा दस-बारह पासकी तो बुरी दशा है। कोई काम नहीं। ऐसे लोग साइकिलसे, घरसे बाहर, बाहरसे घर घूमते रहते हैं। बुरी हालत है। हमें तो ऐसा मालूम पड़ता है कहीं वे दरिद्र न हो जायें।

एक सज्जनको मैंने कहा था शादी स्वजातीयके यहाँ करनेको लेकिन तिलक-दहेज कम मिलनेके कारण उन्होंने ऐसा नहीं किया। बादमें वह इतना गिर गया कि उसे तिलक तो मिला ही नहीं, उसकी शादी भी अपनी जातिमें नहीं, एक कलवारिनसे हुई। प्रयागमें किया आपका तिलक-दहेजके विरोधका यह संकल्प बहुत पुनीत है। अगर आप लोग घर-घरमें इस तिलक-दहेजका विरोध करने लगें तो आपके सामने तिलक-दहेजकी बात करनेकी किसीकी हिम्मत नहीं होगी और यह कहनेकी भी कि मैंने इतना तिलक लिया है।

सूद लोग खाते हैं। सूद खानेवाले लोगोंका मन, मस्तिष्क गिर जाता है। किसीके दुःख, तकलीफमें जब हम धनसे सहयोग करते हैं तो उस धनके बदले सूद लेना या उससे कुछ अपेक्षा करना पतनका कारण है। शूद्र लोग सूद खाते हैं। भारतीय संस्कृतिमें सोना लेना, सोना देना दोनों पाप हैं। सोना खो जानेपर उतना ही सोना दान करनेपर फल होता है। ऐसा शास्त्रोंमें है। सोना पाना भी बुरा है। सोना पानेपर अपना सोना मिलाकर दान करना पड़ता है, तब फल होता है। सोनेसे भी मनुष्यका मन गिर जाता है। सोना रखनेसे डर लगता है। आप डरसे बाहर नहीं जा सकतीं। कहीं बाहर घूम-फिर नहीं सकतीं। आप हमेशा डरती रहती हैं।

आप अपने केशोंकी तरह इस संस्थाको सँवारती रहें। जैसे अपने केशको सँवारती हैं वैसे ही अगर संस्थाको सँवारती रहें तो आपका संकल्प बहुत जल्दी फलने-फूलने लगेगा तथा सौदेबाज लोगोंका पतन हो जाएगा। आप अपने केशको सँवारने, बांधने, गूँथनेका काम जैसे करती हैं वैसे ही संस्थाका करें तो फल अवश्य होगा।

[प्रवचन : स्थान—प्रयाग माघ मेला कैम्प श्रीसर्वेश्वरी समूह तिथि–अघोरेश्वर-अवतरण दिवस समारोहके अवसरपर सर्वेश्वरी महिला संघका अधिवेशन

२६ जनवरी, १९७१ ई०]

परिश्रमका दान फलता है

परिश्रमका दान फलता है, लूटका नहीं। बहुतसे सेठ लोग मिलावट करते हैं। हल्दीमें पीली मिट्टी मिलाते हैं। सेठ लोग चोरी करते हैं और यहाँ आकर दान भी करते हैं। सेठ भी हैं, दानी भी हैं, चोर भी हैं। लूटका रुपया दान देनेसे भी नहीं फलता। भगवान् भी लूटका रुपया बर्दाश्त नहीं कर सकता। यह दान या पूजा नहीं है। कई एक सेठ लोगोंको खिला-पिला रहे हैं लेकिन गरीब मजदूर उनसे कुछ माँगते हैं तो वे एक पैसा नहीं देते। ऐसे लोग इस जमीनपर हैं। दानी भी वही हैं। सुखी भी वही हैं। इनका सब कुछ व्यर्थ है। दूसरे जन्ममें धनके लोभी वेश्या होते हैं और खूब कमाते हैं और बुढ़ौतीमें उन्हें गुण्डे मार डालते हैं, धन लूट लेते हैं। पापी लोग दूसरे जन्ममें ऐसे ही होते हैं। तुलसीदासजीने कहा है कि धन, दारा, सुत लोभका कारण है 'सांई इतना दीजिये जामें कुटुम समाय' मैं भी भूखा ना रहूँ साधु न भूखा जाय।' ज्यादा चाहना लोभ है।

आपने कुन्तीके विषयमें सुना होगा। भगवान्ने आशीर्वाद देकर कहा कि वर माँगो। कुन्ती ने कहा कि हे कृष्ण! हमें जो दुःख-विपत्ति है, हमेशा बनी रहे। यह नहीं रहेगी तो आपकी याद भूल जायेगी। यदि कुछ देना है तो विपत्ति और दुःख दें कि सदैव आपकी याद रहे। यदि आपकी यादमें शरीर छूटेगा तो आपमें विलीन होगा। यदि ऐश्वर्यमें छूटेगा तो विष्ठाका कीड़ा होगा। अनमोल मनुष्य जन्म मिला है। परमात्मा हमें सहन करनेकी शक्ति दें। कभी-कभी हम बहुत घबड़ा जाते हैं। आधा पेट खाकर सोना अच्छा है। सेठ खाकर सोता नहीं। उसके लिये वैद्य लग जाते हैं। वे लोग जो आधा पेट खाकर सोते हैं उनसे बड़े अच्छे हैं जिनकी दवा-दारूके लिये डॉक्टर बुलाये जाते हैं। तकलीफ आपको सँभलने को कहती है। दुःख-विपत्ति रास्ता दिखाती है। आपको अच्छे मार्गपर ले जाती है।

ज्ञान-दृष्टिसे ईश्वरको देख सकते हैं

उपस्थित धर्म-बन्धुओ!

आप लोग बहुत देरसे इस ठंढकमें यहाँ पन्डालमें बैठे हैं जहाँ विभिन्न प्रकारके ज्ञान-उपदेशका स्रोत चल रहा है। मैं चतुर्वेदीजीसे कहूँगा कि इतना अधिक कष्ट लोगोंको न दिया करें। किसी मरीजकी रुचि, अवस्था देखकर औषधि देनी चाहिये। क्षयके रोगीको कालराका इन्जेक्शन लगा दिया जाय और कालराके रोगीको थाइसिसका तो मरीज उसी बिस्तरपर पड़ा रह जायेगा। बैठे लोगोंके मनोभावोंको समझना चाहिये। अवस्थाको परखना चाहिये। बिना परखे यदि लादते चलें तो लँगड़े गधेकी तरह लोग बोझ पटककर भाग जायेंगे। इस ठंढमें जो लोग सब बात सुन रहे हैं वे अच्छे लोग हैं। अच्छे लोगोंका कहना है कि दुःख और तकलीफ इतिहासको बनाते हैं जो हमें सुयोग देता है जिससे हम प्रफुल्लित हो जाते हैं। यह एक बड़ी ही विलक्षण अवस्था है। यहाँसे जब हम घर जायें तो इस बातकी परिवार-कुटुम्बमें ध्यान-चर्चा करें।

दुःख, परेशानीका सामना आप सभी करते हैं। मुझे यही कहना है रोगीकी अवस्था देखकर औषधि दें और उसी तरह रोगीको औषधिके साथ पथ्य बतावें। कुपथ्य करता रहेगा तो कुछ नहीं होगा। औषधि काम नहीं करेगी। गुरुजन, महात्माजन, साधुजन अपने विचारके माध्यमसे औषधि दे रहे हैं, क्योंकि हम अनेक रोगसे ग्रस्त हैं। सुखका रोग, विलासिताका रोग, आलस्यका रोग इन रोगोंके साथ हमारा वक्त गुजरता जा रहा है। गिने-गिनाये दिन हैं। एक ही शताब्दीके अन्तर्गत दुःख-सुख, धनी-गरीब सभी होना है। एक शताब्दीके बाद तो सभीका नाम कट जाता है। लोगोंने जो कुएँ, मकान, तालाब बनवाये हैं वे भी काल-कवलित हो जाते हैं। अतः महर्षियोंने कहा है कि दुनिया नाशवान् है। जिन्दगीके दिन दस-बीस-तीस हजार मानें। बहुतेरे तो बीस हजार बिता चुके हैं। रोज एक दिन घट रहा है। क्या उचित है उसे करना चाहिये। ज्ञानकी औषधिके साथ सदाचारके पथ्यका भी सेवन करना है। आप औषधि न खायँ, पथ्य सेवन करें। प्राकृतिक जीवन बितावें। ज्ञानदृष्टि मिलेगी और ईश्वरका दर्शन होगा।

[प्रवचन : स्थान—प्रयाग माघ मेला कैम्प श्रीसर्वेश्वरी समूह
तिथि–श्रीअघोरेश्वर अवतरण दिवस २६ जनवरी, १९७१ ई०]

धर्मके साथ अर्थकी व्यवस्था आवश्यक है एवं पुरुषार्थ ही ईश्वर है

उपस्थित सज्जनो!

अभी जो आप लोगोंके बीच यह विचार-धारा चल रही थी वही मैं आश्रममें चलाता हूँ। भेद-भाव मिटाकर, संगठित होकर आपने मार्ग बनाया। जानकर प्रसन्नता हुई। बुद्धकालमें वर्ण-व्यवस्था अस्त-व्यस्त थी। बादमें शंकराचार्यने उसकी पुनः व्यवस्थाकी चेष्टा की। बौद्ध-कालके पूर्ववाली व्यवस्था पुनः न लौटी। पुरोहितों एवं शासकोंने असन्तोष फैलाया। आवश्यकता है धर्मके साथ अर्थकी भी व्यवस्था की जाय। ऐसा ही ईसाई लोग कर रहे हैं। वे मुर्गी-पालन, सुअर-पालन आदिके साथ ही धर्माचरण करते हैं। ऐसी व्यवस्थाके अभावमें मठ-मंदिरोंको बड़ी हानि पहुँची है। दीनदार मुसलमान बेदीनोंसे श्रेष्ठ हैं।

भगवान् बुद्धका एक वाक्य है—पुराना कहा न मानो, तर्क, बुद्धिकी बातोंको मानो। निज अनुभवको निज तरीकेसे काममें लाना लाभप्रद होगा। जो करो वही कहो और उसको सहर्ष स्वीकार करो। खान-पानसे ईश्वरका सम्बन्ध नहीं है। अपने स्वस्थ जीवनके लिये 'जो रुचे वही पचे' का सिद्धान्त उत्तम है। आप आगे बढ़ेंगे तो धर्म, अर्थ, ज्ञान, विज्ञान सभी बढ़ेगा। आप कुछ देने लायक भी बनेंगे।

कैम्पमें रहनेवाले इन कार्योंको अपनावें। इससे उनका अर्थ, स्वास्थ्य सभी सुधरेगा। बड़े न मानें तो छोटोंको लेकर ही आगे बढ़ें। धर्म सोच-विचारसे ही

बढ़ेगा । भगवान बुद्धकी प्रेरणा लेकर आप सुखी होंगे । मध्य प्रदेशमें मिशनके सम्पर्कवाले सुखी हैं क्योंकि उनका धर्माचार्य कर्त्तव्य परायण है। योग-वाशिष्ठमें कहा है कि पुरुषार्थ ही ईश्वर है। पुरुषार्थसे ही सब कुछ मिलेगा। अपनी मदद करनेसे ही ईश्वर भी मदद करेगा। अपनी बुद्धिसे पूर्वजों, गुरुजनों, शास्त्रोंकी बातका समन्वय करनेसे हम सुखी होंगे। स्वयं सुखी होकर औरोंको सुखी बनावें। बच्चोंको सभी बातें सिखावें। संकुचित विचारसे वे भविष्यमें दुखी होंगे। उदार-चरित ही हमेशासे सम्मानित होगा और हुआ है। गलत आचरण करनेपर बच्चेपर अप्रसन्न न हों क्योंकि इससे न आपका लाभ होगा न आपके बच्चेका।

[प्रवचन : स्थान—त्रिलोचन महादेव, जौनपुर, प्रान्तीय रक्षक दलका शिविर, तिथि २२ फरवरी, १९७१ ई०]

सुरथ और समाधिसे शिक्षा लें

आज नवरात्रका चौथा दिन है । आप लोगोंका जो जप-यज्ञ, ध्यान-यज्ञ, व्रत-यज्ञ और पंचशील-यज्ञ चल रहा है उसका एक बड़ा ही अमिट प्रभाव मन और शरीरपर पड़ता है जिससे मनुष्य-जीवनका जो मूल धन है वह अवश्य प्राप्त हो सकता है।

ले देह से मन-बुद्धि तक संसार जो है भासता।
सो सर्व माया मात्र है किंचित नहीं परमार्थता॥

देहसे लेकर मन-बुद्धि तक जो कुछ भी भासता है, जो कुछ भी दीखता है वह सब माया मात्र है। इसमें किंचित् भी परमार्थ नहीं है। परमार्थ है कहाँ? वह उसी मायाके सान्निध्यमें है। मायाने प्राणिमात्रको मोहित कर रक्खा है और इतना मोहित है प्राणी कि वह अपनेको भी नहीं समझ पाता है। मोहमें फँसा हुआ मनुष्य कुटुम्ब, परिवार आदि नाना प्रकारकी व्यवस्थासे ग्रस्त है। ऐसी स्थितिमें उसकी समाधि कैसे लगे? उसे वैराग्य कैसे हो? और वह दत्त-चित्त कैसे हो?

किसी शिष्यने अपने गुरुसे इसी प्रकारका प्रश्न पूछा कि मुझे भी आप कुछ बताइये। बहुत दिन आपकी सेवा करते हो गया। उन्होंने कहा—

"शब्दमें सुरत लगाये रहो रे और कहो तोहे का चाहो रे।"

जो शब्द है, जिसे हम उच्चारण करते हैं जिससे मनमें आकृति बनती है और विलीन हो जाती है, उसमें हम 'सुरत' लगायें कैसे?

शतचन्डीमें आप सुरथकी कथा सुन चुके होंगे। सुरथको राजा तथा समाधिको वैश्य बताया गया है। ये दोनों पदच्युत हो गये। पदच्युत होनेपर सुरथको उसके पुत्र, पौत्र और दुश्मनोंने राज्यसे निकाल दिया और समाधिको उसके पुत्र-पौत्रोंने घरसे निकाल दिया। दोनों अरण्यमें भटकने लगे। भटकते-

भटकते सुमेधासे उनकी मुलाकात हुई। सुमेधाका अर्थ है मेधावी। सुमेधाने समाधि और सुरथको एक पक्षीका निर्देश करके मायाके बारेमें उपदेश किया। देखो—यह चिड़िया भूख, प्याससे स्वयं तड़प रही है पर अपने बच्चोंको किस चावसे दाना दे रही है। इसी तरह आप लोगोंकी भी दशा है। जब आप लोग ध्यानमें बैठते हैं, सुरति नहीं लगती है, चित्त व्याकुल रहता है, समाधि स्थिर नहीं होती तो आप लोगोंको चाहिये आप समझें कि आप सुरथ और समाधिकी तरह अपने ऐश्वर्य और अपने कोषसे रहित हो गये हैं। अपने पूर्व पदको प्राप्त करनेके लिये आप लोगोंको पंचशीलका पालन करना चाहिये। वही पंचशील जो अच्छी मेधा उत्पन्न करता है।

[प्रवचन : स्थान—सर्वेश्वरी निवास, वाराणसी, तिथि ३० मार्च, १९७१ ई०]

कोई धर्म या जाति जन्मजात नहीं

आप यह जानते हैं कि 'चोर-साधु और लम्पट-ज्ञानी। जस अपने तस दुसरोके जानी।' जो व्यक्ति साधु होता है वह दूसरोंको भी साधु समझता है। जो चोर होता है वह दूसरोंपर भी शुबहा करता है। क्योंकि जैसा उसका अपना भाव होगा वैसी ही उसकी दूसरोंके प्रति दृष्टि होगी। वह कौन-सी दृष्टि अच्छी होगी जिसे अपनाकर हम भाईको भाई के सदृश, माताको माताके सदृश और पिताको पिताके सदृश देखते हैं। मनुष्य एक ही है, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष हो, हिन्दू हो या मुसलमान हो। सर्वव्यापी जो आत्मा है, वही सबमें व्याप्त है। हमलोग एक कुनबेकी तरह, एक घड़ेकी तरह हैं, सूरजकी किरण हम लोगोंपर बराबर ही पड़ती है। यह अभिन्नता है। इसी तरहसे जो भेद-बुद्धि है उसकी भी जीवनमें आवश्यकता है। क्योंकि जैसे नारी एक हैं किन्तु किसीमें पत्नीकी भावना रक्खी जाती है और किसीको बहिन, किसीको चाची, मामी, काकी तथा नानी आदि दृष्टिसे देखा जाता है।

यह माना गया है कि स्त्रियोंका कोई अलग धर्म नहीं होता है। और न कोई अलग जाति ही होती है। पुरुषकी जाति होती है। पुरुष यदि चमार है और कोई उसका वंशज है तो उसको चमार ही कहा जायेगा। यदि पण्डितजी हैं और चमारिन रख लिये तो उनकी जो औलाद होगी वह भी पण्डित ही कही जायेगी। स्त्रीकी कोई जाति नहीं होती है। इसलिये वह देवी-स्वरूप हैं। इसका एक ही हृदय होता है। जिसको दे दिया उसको दे दिया। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई आदि धर्म किसीकी जन्मजात वस्तु नहीं है। यह एक संस्कार है। जो हिन्दू या मुसलमान या ईसाईका कर्म कर रहा है उसे उस कर्मके नाते हिन्दू या मुसलमान या ईसाई कहकर सम्बोधित किया जाता है। यदि वह इस तरहका कर्म न करे, उसका ऐसा संस्कार न हो, तो हिन्दू भी मुसलमान हो जाता है और मुसलमान भी हिन्दू हो जाता है। यह कैसे हो जाता है ? एकको छोड़कर दूसरेको ग्रहण करनेसे। हम जिस चीजको छोड़ और पकड़ सकते हैं वह क्योंकर बन्धन बन सकती है ? क्या हमारे ऊपर

हिन्दुत्व या इस्लामका अधिकार है कि यदि हिन्दू हो गये तो हिन्दू हो गये और मुसलमान हो गये तो मुसलमान हो गये। ऐसा नहीं हो सकता। कर्मसे ही ब्राह्मण माना जाता है।

हमारी भारतीय संस्कृतिमें, हमारे धर्ममें, स्त्रियोंका बड़ा पवित्र स्थान था। अब भी उन्हें आदरसे देखते हैं। अब भी भारतीय समाजमें उन्हें उतना ही ऊँचा स्थान दिया जाता है। हम भारतीयोंका बड़ा ऊँचा संस्कार है कि जवान भाई-बहिन एक साथ एक कमरेमें रहते हैं पर कभी उनका चित्त विचलित नहीं होता। मुसलमानों और पाश्चात्य देशोंके लोगोंमें यह गुण नहीं पाया जाता। यही कारण है कि मुसलमानों और मथुराके पण्डे लोगोंकी एक ही अवस्था है। वे सिर्फ दूध बराते हैं।

[प्रवचन : स्थान—वाराणसी आश्रम, तिथि ३१ मार्च, १९७१ ई०]

चिन्तनसे तत्त्व-ज्ञान और आत्माकी शान्ति

धर्म-बन्धुओ !

आपकी परिषद्के बारेमें सुना था। किसी कार्यको अच्छे ढंगसे चलानेके लिये चार-पाँच व्यक्ति ही काफी हैं। आध्यात्मिक परिषद्के द्वारा ज्ञान-प्राप्तिसे गुमराह लोगोंको सही मार्गपर लाया जा सकता है। चिन्तन करनेसे एक तत्त्व-ज्ञान प्राप्त हो सकता है। तत्त्व-ज्ञान एक विशाल वृक्ष है जिसकी छायामें हजारों लोग शान्ति-का अनुभव करते हैं।

किसी चीजमें आस्थाकी आवश्यकता होती है। आस्थाको स्थायी रूप देना आवश्यक है। हमारे देशमें आध्यात्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त है जिससे सभी लोग अपनेमें आध्यात्मिक आनन्द प्राप्त कर सकते हैं। अपनी गोष्ठियोंमें विचारोंके संग्रहसे बहुत ही अच्छा गुण उत्पन्न होता है। आप अपने अन्दरके देवताको जागृत करें। उसीमें आपको सच्चा आनन्द प्राप्त होगा। मैं आपकी परिषद्की उन्नतिकी मंगल कामना करता हूँ।

[प्रवचन : स्थान—आध्यात्मिक परिषद्; डी० आई० जी० कालोनी वाराणसी, २ मई, १९७१ ई०]

नारीका वास्तविक रूप माँका रूप है

मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आपका जो वास्तविक स्वरूप है—देवीका प्रचण्ड स्वरूप, शक्तिका दिव्य स्वरूप, उसे आप अपने हृदयमें प्रतिष्ठित करें और निर्भीकता अपने आचरणमें ले आवें। लज्जा, भय, शंकासे मनुष्य दूषित हो जाता है। आप इन सबका परित्याग करें। जब आप निर्भीक होंगी तब आपमें पूज्य भाव एवं पूज्य गुण उत्पन्न होंगे और अपने समाजको ऊँचा उठानेमें आपका बड़ा पवित्र सह-योग होगा। आप लज्जा, संकोच भय क्यों करती हैं ?

सभी पुरुष मात्र आपके पुत्र हैं। स्त्रीके लिये सिर्फ एक पति ही ऐसा है जिसके सामने उसे लज्जा अनुभव करना है। अब आपकी यह मनोदशा होगी तो जितने मनुष्य हैं सभी आपके पुत्र होंगे और आपमें उदारता और चरित्रकी योग्यता पायी जायेगी। यदि आप लज्जा करेंगी तो इससे क्या होगा ? आपकी मनोदशा गिरी रहेगी। आप अपने सिर्फ घरके कार्योंमें बँधी रहेंगी। आपके समूहका जो विकास है वह नहीं हो पायेगा।

आप देखेंगी, पौराणिक युगमें बहुत-सी देवियाँ इस देशमें उत्पन्न हुईं। यदि आप उनकी जीवन-गाथाओंका उनके चरित्र एवं व्यवहारोंका अवलोकन करेंगी और उनके आदर्शोंका पालन करेंगी तो आप इस युगकी आदर्श महिला बनेंगी। मैं तो यही चाहता हूँ कि आपके समूहकी प्रबन्ध-समितिसे लेकर आम सदस्य तक सभी आदर्श महिला हों। आपकी सन्तानें इस देशकी विशिष्ट नागरिक हों और आपका यह आदर्श सार्वभौम तथा सर्वमान्य हो।

[प्रवचन : स्थान—सर्वेश्वरी सभा भवन, वाराणसी आश्रम, महिला संघका अधिवेशन, ८ जुलाई, १९७१ ई०]

हे भगवान्! आपसे याचना न करनी पड़े

एक बार भगवान्‌ने बाँटना शुरू किया। देवता, किन्नर, गन्धर्व, मनुष्य, यक्ष, भूत, प्रेत, वृक्ष, पशु, पक्षी सभीको माँगनेपर मिलता गया। सम्पूर्ण लोकको सब कुछ बाँटकर भगवान् शयन कर रहे थे कि एक फक्कड़ पहुँचा। भगवान्‌ने अपने अनुचरोंसे कहा कि अरे! इसे भी कुछ दे दो। अनुचरोंने कहा—प्रभो! अब कुछ भी नहीं बचा है। भगवान्‌ने कहा—इस फकीरके हिस्से में मैं स्वयं चला जाता हूँ।

फकीरसे एक साधुने पूछा कि जब भगवान् मिल गये तो आपने उनसे क्या माँगा ? फकीरने कहा—माँगनेको शेष ही क्या रह गया ? भगवान्‌से यदि कुछ माँगते हैं तो तुच्छता है। राजासे दोस्ती होनेपर पैसेकी याचना करना राजाका अपमान करना है। इसलिये भगवान्‌से यही प्रार्थना है कि आपसे कभी किसी वस्तुके लिये याचना न करनी पड़े।

[प्रवचन : स्थान—सोगड़ा आश्रम, मध्य प्रदेश, तिथि २५ सितम्बर, १९७१ ई०]

ईश्वरकी पूजा भी फुर्सतके समय ठीक लगती है

शास्त्र, वेद, पुराण सब महर्षियोंकी वाणियोंके संग्रह हैं। इनमें कोरी आस्था का समय बीत गया। प्राचीन कालमें जब नवयुवक घरसे भागते थे तो मठों आदिमें जाते थे। अब तो कल-कारखाने खुले हैं। अतः नवयुवक कलकत्ता, बम्बईके कारखानोंमें जाएँगे। समय बदल गया है। आप अपने जीवनको सुयोग्य और कर्मठ बनावें।

ईश्वर-पूजा और भक्ति भी कामसे फुर्सतके समयकी बातें हैं। यदि आप परेशान और व्याकुल हैं तो उस समय ध्यान लगाना उचित नहीं। तीर्थाटन आदि उन्हीं लोगोंको शोभा देते हैं जिन लोगोंने मनुष्यका खून चूसा है। आपके लिये यह सुगम मार्ग नहीं है। आपके लिये तो सुगम यही है कि यदि किसी गरीबका बच्चा पढ़ नहीं पा रहा है तो पढ़नेमें उसकी मदद करें। यदि किसी गरीबकी कन्याकी शादी नहीं हो पा रही है तो उसकी शादीमें सहायता करें। ईश्वर भी यदि आपको मिल जाय तो वह यह नहीं कहेगा कि आप गंगाके किनारे बैठकर माला जपें। वह भी यही कहेगा कि आप किसी दुखीकी सहायता करें क्योंकि इसीसे उसकी सृष्टिका पालन होगा। ऐसा करनेसे आप पुण्य और आनन्द प्राप्त करेंगे जो योगियोंको सतत योग-साधनासे भी, संभवतः, नहीं प्राप्त होता।

[प्रवचन : स्थान—प्रयाग माघ मेला कैम्प, श्रीसर्वेश्वरी समूह
तिथि १६ जनवरी, १९७२ ई०]

पवित्र विश्वास, गुरु-देवता तक पहुँचाता है एवं निर्द्वन्द्व हृदय भगवतीके सान्निध्यका परिचायक है

आज शुक्रवार है। पवित्र पर्वका चौथा दिन है। मुझे आपको याद दिलाना है कि "बिनु विश्वास न कवनो सिद्धि।" पवित्र विश्वास गुरु-देवता तक पहुँचाता है।

मन्त्रमें शक्ति है। शब्दमें अमित प्रभाव है। एक-एक अक्षरका जपकर बड़े-बड़े ऋषि-महर्षि बड़ी-बड़ी शक्ति प्राप्त कर चुके हैं। मामूली गालीके शब्दका इतना प्रभाव पड़ता है कि सुननेवाले उसकी प्रतिक्रियामें सब कुछ कर डालनेको तैयार हो जाते हैं। उथल-पुथल मच जाती है।

अपनी प्रसन्नता देवीकी प्रसन्नता है। निर्द्वन्द्व हृदय उसकी निकटताका परिचायक है। वह संकेत कर रहा है। उसका संकेत आप ध्यान-धारणाके माध्यमसे, पवित्र आचरणसे, समझेंगे। भला-बुरा कर्म करते समय भी एक संकेत होता है। बुरा कर्म ईश्वरके यहाँ माफ हो जाता है। ईश्वरसे सम्बन्ध जोड़ें। उसीकी दयासे अवगुण गुणमें बदल जाता है। उसीके अनुग्रहसे व्यक्ति ऊँचे विचार और ऊँचा स्थान प्राप्त करता है।

[प्रवचन : स्थान—वाराणसी आश्रम, तिथि चैत्र नवरात्र चतुर्थी
१० अप्रेल, १९७२ ई०]

हिन्दू धर्म जैसा उदार है, वैसी उदारताका आचरण भी होना चाहिये

पुरुष तो पत्नी न रहनेपर शादी कर लेते हैं, पर स्त्रियाँ जब अपने विवाहित जीवनकी शैशव अवस्थामें विधवा हो जाती हैं तो उन्हें उन्हींके घरमें बड़ा अनादर

मिलता है। उन्हें मांगलिक कार्योंमें निषिद्ध समझा जाता है। अपने मांगलिक

कार्योंमें उन्हें भी स्थान देनेके लिये आप लोगोंने जो प्रस्ताव किया है, उसके लिये मैं आपको बहुत धन्यवाद देता हूँ। ऐसी कुप्रथाओंने हमारे समाजको जर्जर कर दिया है। आप इन कुप्रथाओंका विरोध कर रहे हैं जिसके लिये मैं आपका स्वागत करता हूँ।

हिन्दू धर्म जैसा उदार है वैसी उदारताका जीवनमें प्रदर्शन भी होना चाहिये। जो मातायें वयोवृद्ध हैं उनसे मैं कहूँगा कि आप इस विरोधको गलत नहीं समझेंगी। देशके पुनरुत्थानमें आज इसकी बड़ी आवश्यकता है। जिस परिस्थितिमें विधवाएँ रहती हैं वह मनुष्यके रहनेकी परिस्थिति नहीं है।

[प्रवचन : स्थान—सर्वेश्वरी सभा भवन, वाराणसी आश्रम, महिला संघ अधिवेशन, तिथि २७ जुलाई, १९७२ ई०]

संस्थाकी उन्नतिका मूल मंत्र श्रद्धा और प्रेम

आज समूहके लिये बड़ा ही शुभ दिन है। इस शुभ दिनपर मैं आपसे एक निवेदन करूँगा कि आप लोग मेरे प्रति अन्ध विश्वास न रक्खें। अन्धविश्वाससे अलगाव पैदा होगा। आप मुझे एक तरहसे अलग रक्खेंगे। आप मेरे सिद्धान्तकी वास्तविकताकी ओर ध्यान दें। इस वास्तविकताकी ओर आप जितना अधिक ध्यान देंगे उतना ही आप अपनी संस्थाका विकास करेंगे।

आप जो कुछ भी उद्योग करते हैं समूहके निमित्त ही करते हैं—ऐसी भावना रक्खें आपमें यह भावना जितनी अधिक होगी उतना ही आप समूहके संगठनमें सहयोग करेंगे। इसीमें आपके उद्योगकी सार्थकता भी है। हम भगवतीसे प्रार्थना करें कि वह हमें मोहसे बचावें और हमारा उद्योग सार्थक करें।

श्रद्धा और प्रेममें हिमालय और सागरका-सा भेद है। हम श्रद्धा तो हजारोंसे करते हैं पर प्रेम कुछ ही से। मैं आशा करूँगा कि समूहमें श्रद्धालु कम होंगे और प्रेमी अधिक। यदि ऐसे लोग दो-चार भी होंगे तो स्थापना-दिवसकी मंगलमय भावना सुदृढ़ होगी। हम भारतीय अपने गुरुओं और इष्टोंके प्रति इतना अन्ध-विश्वास रखते हैं कि अपना विचार खो देते हैं और उनकी भी बातोंको सही रूपमें नहीं ग्रहण कर पाते।

आज उत्तरायण एवं दक्षिणायनके शुभ सन्धिकी वेला है। इस सन्धि-वेलामें ही समूहकी स्थापना हुई है और प्रतिवर्ष २१ सितम्बरको ही यह सन्धि-वेला आती है। महीना घटे या बढ़े इसपर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इस सन्धि-वेलामें हम कामना करें कि हमारी नाना प्रकारकी इच्छायें और नाना प्रकारके कर्म न हों। जो हमारे पास है वही पर्याप्त है। उसीसे हम उन्नति करें।

मैं समूहके सदस्योंसे आग्रह करूँगा कि वे अपनी वाणी, कर्म और आचरण-द्वारा किसीको दुःख न पहुँचावें।

[प्रवचन : स्थान—वाराणसी आश्रम, तिथि—समूह-स्थापना-दिवस २१ सितम्बर, १९७२ ई०]

३०८

रुद्राक्ष १८

प्रश्नोत्तर

महाकापालिक प्रभुका आत्मस्वरूप
"सर्वेश्वरि त्वं पाहिमाम् शरणागतम् ।"

श्रुति-स्मृति-धात्री माँ जय हो । सम, शान्ति, विवेक, वैराग्य, भक्ति, ज्ञान-धात्री माँ जय हो । स्वर्गकी आकांक्षा न हो, नरकका भय न हो, ऐसा विवेक दें । भगवान कापालिक कल्पवृक्ष रूपको चारों दिशाओंमें नमस्कार हो । अव्यय ज्ञानकी उपलब्धि हो मुझ ब्रह्मनिष्ठों को । सत्-चिद् एक ब्रह्मदेवको नमस्कार हो अष्ट अंगोंसे ।

ज्ञानी, ध्यानी, तपस्वी, सुर, नर, मुनि, असुर, चराचर जीव, जगत् मात्र सब ब्रह्मनिष्ठोंकी ओरसे शुभ-कामनाओंको ग्रहण करें । कापालिक भगवानकी वाणियोंको यदि सुनने, समझने और आचरण करनेमें त्रुटि हो तो उनके लिये क्षमा-प्रार्थी हूँ, क्योंकि सब अबोध प्राणियोंके बालक हैं । गुरुकी दया और कृपाका पात्र बनो, सभीके आशीर्वाद से ।

गुरुके चरणोंमें नमस्कार हो ।
माँके चरणोंमें नमस्कार हो ।
अपने आपको नमस्कार हो ।
उस पापको नमस्कार करो जो तुम्हें छोड़ कर जा रहा है ।
उस तपको नमस्कार है जो तुममें आ रहा है ।
ॐ शान्ति : शान्तिः शान्तिः

ब्रह्मनिष्ठोंने उपरोक्त संकल्पोंको कल्प वृक्षकी छायामें बैठकर अन्तस्तल-में धारण किया और गुरुदेवसे प्रश्न किया :—
हे महाकापालिक !

आप किस रूपमें, किस-किस समयमें और कहाँ-कहाँ अवतरित हुये और आपकी क्या लीलायें रहीं ?
अवधूत महाप्रभु बोले :—

मैं पहले जलचर था, बादमें नभचर रूपमें पृथ्वी पर आया । उस समय मेरा नाम इसेन्स (एक प्रकार की पक्षी) था । मैंने मध्य भारतमें स्थित कल्पतरुकी डाल में आलय बनाया । इस कल्पतरुका पत्ता वैदूर्य मणिके समान शोभायमान होता था । वह सब सम्पूर्ण वृक्ष सुबहके सूर्यके समान ज्योतिमय हो जाता था । कल्पवृक्षको केवल सिद्ध योगी ही जान सकते हैं । मैं उसी कल्पवृक्ष पर अपने कुटुम्बियों (बड़-बड़े योगियों) के साथ रहता था।

एक दिन जब मैं अपने कुटुम्बियों एवं भक्त गणोंके साथ बैठा था उसी समय शंकर तथा शक्ति नन्दी पर सवार होकर आकाशकी ओरसे मेरे आलय में पधारे। मेरे सहित कुटुम्बियों एवं भक्तोंने अर्घ्य-पाद्य आदि करके फल, पुष्प चढ़ा कर उनका यथोचित सत्कार किया। इसके उपरान्त मैंने पूछा कि आप लोगों कि क्या सेवा करूँ ? इसपर शंकरने मुझसे कहा कि मैं कुछ आपसे जानना चाहता हूँ। शंकरने मुझसे प्रश्न किया :—'हे निर्विकल्प आत्मा! आप तो ब्रह्म स्वरूप हैं तथा नित्य एवं शुद्ध हैं। आप हम लोगों में किस रूपमें विराजमान हैं ?"

मैंने उत्तर दिया कि आपमें और मुझमें कोई अन्तर नहीं है। जिस तरह वायु सर्वव्यापी है उसी तरह मैं आपमें और आप मुझमें व्याप्त हैं।

शंकर एवं शक्ति अपने प्रश्नका सानुरूप उत्तर पाकर मुग्ध-मुग्ध हो चले गये। कुछ काल बाद प्रलय हुआ, जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी और आकाश सभी डूबने लगे। उस समय मैं अपने सूक्ष्म वायुके रूपमे ब्रह्माण्ड खप्परमें जा ठहरा और पूर्ण प्रलयको तथा सबको डूबते देखा। वह कल्पवृक्ष भी डूब गया।

फिर एक सृष्टि उत्पन्न हुई, तब कल्पवृक्ष भी उसी स्थान पर स्थित हुआ। पर उस समय मेरे पहले वाले कुटुम्बी अवतरित नहीं हुये। उनका निर्वाण हो गया था तथा वे मुझमें विलीन हो गये थे। उसके बाद नये-नये जीव मेरे भक्त एवं सेवकके रूपमें आये। अबकी बार मैं कापालिकके रूपमें उसी कल्पवृक्ष पर पुनः आया। कभी तो मैं वायु रूपमें और कभी प्रकाशके रूपमें भ्रमण करता था। मैं सर्वव्यापी था तथा संसार आमलक फलकी तरह मेरे हाथों में था। सागर मेरी नाड़ियाँ, पृथ्वी मेरी मेदा, चाँद-सूर्य मेरे नेत्र, पर्वत मेरी हड्डियाँ, वृक्ष और लतायें मेरे रोयें, आकाश मेरी भौंहोंके ऊपरका सिकुड़न और वायु मेरे कान थे। अग्नि मेरी जिह्वा और दिशायें मेरे हाथ-पाँव थे। संसारका सबसे पहले स्वाद मैं लेता हूँ। फिर संसारके प्राणिमात्र उस स्वादको चखते हैं। मैं निर्लिप्त था। मैं आकार रहित था, पर भक्तोंने भाव से, जैसा कि ऊपर कह गये हैं, देखा। संसारकी समस्त भाषायें मेरी बोली थीं, जिसका कि मैंने ही उच्चारण किया था। जब अशुभ, अशुद्ध, अकर्म, अन्याय, अनीति, अरस, अरूप, सृष्टि नहीं हुई थी तब मैं ही था।

ब्रह्मा, विष्णु और शिव आदि शुक्र रूपमें मुझमें ही निहित थे। न शब्द था और न गोचर। हम थे और कल्पवृक्ष था। सम्पूर्ण भक्त समुदाय भगवान कापालिककी उपरोक्त लीलाओंको सुनकर मुग्ध हुआ और उनके रसनामृतका पुनःपान करनेके निमित्त प्रश्न किया :—हे महाप्रभु! कापालिक किसे कहते हैं तथा उनका सूक्ष्म रूप क्या है ?

यह सुनकर अवधूत रूपधारी भगवानने भक्तोंके ताप हरनेवाले कापालिकका दर्शन कराया। उन्होंने कहा—कापालिक उसे कहते हैं जिसने कालका भक्षण किया है। जिसका आकाशके कपालमें आलय हो। जो सभी ब्रह्माण्डका निर्माता हो। उन कापालिक भगवानको भक्त जन सहस्रों बार, सहस्रों हाथों एवं सहस्रों मुखोंसे प्रणाम करते हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिव जिनके चरणोंकी रेखायें निहारा करते हैं उन कापालिक भगवानको भक्तोंका कोटि-कोटि साष्टांग प्रणाम हो। त्रिभुवनकी सुन्दरता जिनकी भैरवी-शक्तिका कण मात्र है, उन भैरवी-शक्तिको सभी भक्तजनोंका प्रणाम हो। हे भक्तो ! जिन कापालिककी आत्मिका शक्तिसे लक्ष्मी, तारा, दुर्गा अनेक देवियाँ उत्पन्न हुई हैं, उनको चारों दिशाओंमें प्रणाम करो। जिससे तुम लोगोंको मेधा, बुद्धि, स्मृति और नित्यताका बोध हो। ऐसा होनेसे तुम शुद्ध एवं पावन बनकर अन्य जीवोंको कापालिक भगवानका परिचय करा सकोगे। देवोंके देव ! कपालधारी भगवान सृष्टिके जीव मात्रके उत्पत्ति एवं विनाशके कारण हैं और अपने भक्त जनोंको प्यार करनेवाले हैं। ऐसे भक्त जनोंको तुम लोग प्रणाम करो।

हे जीवो ! उस कापालिक भगवानको जो सबके हृदय में आत्मा रूप से निहित हैं, उन आत्मरूप कापालिकको प्रणाम करो।

जो शून्य है, शान्त है, सम है और जिन्होंने सब कुछ जाना है, उस ज्ञान रूप आत्म-कापालिक को नित्यप्रति प्रणाम करो।

× × × × ×

एक दिन संध्या-समय कल्पवृक्षके नीचे अवधूत महाप्रभु विराजमान थे। भक्तोंने वहाँ जाकर शान्त चित्त हो उनका ध्यान करते हुये मन-ही-मन अर्घ्य-पाद्य अर्पित किया और पूछा कि—कापालिक भगवानका किस मन्त्र और किस विधिसे आवाहन करना चाहिये ?

ऐसा सुनकर कल्पवृक्ष रूपी कापालिक भगवान भक्तोंपर प्रसन्न होकर अपने मन्त्र एवं विधियोंको बताने लगे। वायु जैसे व्यापक है, उसी प्रकार शब्द भी। भक्तोंके स्नेहरूपी शब्दने ही मुझको प्रेरित करके तुम लोगोंके सामने छाया रूपमें उपस्थित किया है। वही शब्द रूपी सर्वेश्वरी हम कापालिकोंकी शक्ति है। उसीको योग, वैराग्य भक्ति एवं ज्ञान कहते हैं। उसे प्राप्त करनेके लिये इस मन्त्रसे आवाहन करें—"हूँ तत् तत् शान्ति सत्यरूपधारी कापालिकाः नमः।"

इस मन्त्रको जप करनेवाले मनुष्य स्वस्थ एवं सत्यवादी होते हैं। इस मन्त्रको जपनेवालेको विधि और निषेधसे परे होना चाहिये। ईर्ष्या और राग नहीं रखना चाहिये। वह विलासी हो या अविलासी हो दोनोंका ही अधिकार है। इसे संसार सुखको छोड़कर भी और संसार सुखमें रहकर भी प्राप्त किया जा सकता है। जैसे जलमें पद्म रहता है, वैसे ही इसे प्राप्त करनेके लिये रहना चाहिये। अन्यथा इसका मिलना असम्भव है। बहुतसे देवोंने इसे जाना था

और जपकर श्रीमान् हुये हैं। यद्यपि उन देवोंकी प्रकृति निम्नभावमें रहती है किन्तु उनके स्नेहरूपी शब्दने मुझे प्रेरित करके उन्हें सकुशल रक्खा है। हमारी आत्मिक शक्ति सर्वेश्वरीने जिस जीवको, जिस रूपमें मान्यता दिलानी चाही वैसी ही दिलवा दी है। मुझे बाध्य होकर वैसा ही करना पड़ता है। उन सर्वेश्वरीको प्रसन्न रखनेका यह मन्त्र है :—

"रां तत् क्रींरूपाय सर्वेश्वरी नमः।"

इन मन्त्रोंको जप करनेवाले मनुष्योंके ऊपर मेरी आत्मिका-शक्ति सर्वेश्वरीका सदैव वरद् हस्त रहता है। उन्हींकी प्रसन्नता मेरी प्रसन्नता है।

इतना कहकर कल्पवृक्ष हिमालयकी तरह शान्त हो गया। उपस्थित भक्तजनोंने हृदयरूपी आकाशमें कापालिक वेशधारी भगवानको नैवेद्य अर्पणकर प्रणाम किया। सन्ध्या हो चली थी और सूर्य अस्तांचलकी ओर ढल चुके थे। आकाश पीत वसन धारे भगवान कापालिककी आज्ञाकी प्रतीक्षामें था। वृक्ष और लतायें निस्पन्द हो चलीं थीं। मयूर और कोयलके हृदयके उद्गारसे सोगड़ाकी पहाड़ियाँ मुस्करा उठीं। नीला आकाश एक असीम नीलमणिके समान था जिसमें चन्द्रमा श्वेतरत्न सा शोभायमान हो रहा था और उसकी धवल प्रकाश रश्मियाँ ब्रह्मनिष्ठालयमें बरस रहीं थीं। उसके शुभ्र चाँदनीमें अनेक शिखर ऐसे सुशोभित हो रहे थे मानो कापालिक भगवानके फेरनेके लिये रुद्राक्षके मणियोंको पिरोकर माला बनी हो। उसी समय भगवान कापालिकने भक्तोंको आशीर्वाद दिया कि तुम लोग स्वस्थ और शान्त हो तथा सृष्टिके अन्तमें घटने-बढ़नेवाले दुःख तुम्हें व्याप्त न हों।

× × × × ×

एक दिन प्रभातकी वेलामें उदयाचलके रवि ऐसे सुशोभित हो रहे थे मानो भगवान कापालिकके मुखारविन्दके प्रतिबिम्ब हों। अनेक पक्षियाँ कलरव करती हुई अपने स्वरोंमें रस बहा रही थीं। उसी समय सभी भक्त-जन अवधूत भगवानके समक्ष उपस्थित हो निर्विकल्प भावसे आत्मारूप कापालिकका ध्यान करते हुये उन्हें अर्घ्य-पाद्य दिया और अपने-अपने आसनों पर बैठ गये।

भगवान कापालिकके श्रीमुखसे "ॐ सच्चिदेकं ब्रह्म" का स्वर निनादित हुआ। भगवान कापालिकने भक्तोंको सम्बोधित करते हुये कहा कि "आज तुम लोग उस रहस्यको सुनो, जिसे जाननेके लिये योगी लोग भी तरसा करते हैं।

बहुत कालकी बात है, न तो यह सृष्टि ही उत्पन्न हुई थी और न मैं ही। आत्मिका-शक्ति सर्वेश्वरीकी स्फुरणासे मैं प्रथम बार उत्पन्न हुआ था और मेरी उत्पत्तिके बाद ही यह सृष्टि उत्पन्न हुई। उस समय मैं लिंग शरीरसे परमाणुओंके कणोंमें शक्ति रूपसे निहित था। अपनी इच्छा शक्तिसे मैं कल्पवृक्षके

रूपमें इस पृथ्वी पर आया। इसी कल्पवृक्षके नीचे बैठकर न जाने कितने महर्षि,

ऋषि, आदि साधना करके तत्त्वज्ञानकी उपलब्धि किये और न जाने कितने अभी करेंगे। जब यह स्फुरण रूपी सृष्टि मेरी दृष्टिसे ओझल हो जाती है तो प्रलय आ जाता है तो मैं आकाशका भेदनकर महाकाशमें शिलापर जिसके चारों तरफ पुष्पोंकी झाड़ियाँ हैं, जा बैठता हूँ। मैं ही कई बार ऋषि रूपमें पृथ्वीके जीवों का उद्धार करता रहा हूँ।

निर्वाण प्राप्त करने वाली उन झाड़ियोंका पुष्प होकर मैं महाशून्यमें कापालिक आत्मिका-शक्तिको निहारता रहता हूँ। इस शिलापर बैठकर निश्चल भाव रूपी भामिनीको साथ लेकर अव्यय ज्ञानकी उपलब्धि करता हूँ। इसी ज्ञानके एक कणके टुकड़ेसे राम एवं कृष्ण नाम रूपसे पृथ्वीपर विख्यात होते हैं सर्वेश्वरीने ही उनको अधिकार दिया है कि वे जीवोंके त्राहिको शान्ति करें और त्रितापका हरण करें।

नाम रूपी नौकामें ही जीव पार होते हैं। इन्हींसे पार होने वाले जीव जब क्षुब्ध हो जाते हैं तो शान्तिपूर्ण विश्रामके साथ पार करनेके लिये आदेश देनेके निमित्त आत्मिका रूपी शक्ति जब मुझमें प्रेरणा करती है तो प्रेरित होकर इस पृथ्वीपर कापालिक वेशधारी भगवानके रूपमें अवतरित होता हूँ।

जब पृथ्वीपर कापालिक रूपमें अवतरित होता हूँ तब उस मध्य पृथ्वी में जो कल्पवृक्ष है उसके नीचे आलय लगाकर अपने ब्रह्मनिष्ठ प्रेमियोंको अपनी गाथायें सुनाता हूँ। वे ब्रह्मनिष्ठ सुनकर कृत कृत्य होकर निर्वाण प्राप्त करते हैं जब वे निर्वाण प्राप्त कर लेते हैं तब मैं उन्हें उसी शून्य-शिलापर बुला लेता हूँ, जहाँ पर आकाश, पृथ्वी, चाँद, सूर्य आदि अपना कार्य समाप्त करके मुझमें विलीन होते हैं। निर्वाणका ज्ञान करानेवाली मेधा शक्ति मुझमें ही है। मेरी ही प्रेरणासे कृष्णने अर्जुनको और वशिष्ठने रामको चैतन्य किया था। संसारके सामने उनके अनेकानेक इतिहास आज भी हैं।

इतना कहनेके बाद अवधूत भगवान गम्भीर हो गये। मानो उड़ता हुआ मेघ आकाशमें एकाएक खड़ा हो गया हो। भक्त रूपी मयूर मेघ रूपी कापालिक को देखकर नाच उठे और कोयलसे मधुर स्वरमें उनकी स्तुति करने लगे। भगवान कापालिकने अभय मुद्रा दिखाया। तत्पश्चात ब्रह्मनिष्ठोंने पूछा:—

हे कापालिक भगवान! आपने जिस शिला का वर्णन किया है वह क्या है? और उसपर आपका बैठना क्या अर्थ रखता है?

भगवान कापालिक ब्रह्मनिष्ठों को प्रसन्न करते हुये बोले कि निर्वासनिक चित्त ही वह शिला है जो आत्मिका-शक्तिकी प्रतीक है एवं महानन्द है। हम आत्मारूप हैं और निस्पन्द भाव ही बैठना है। इस ज्ञानको योगी, महर्षि, मुनि आदि जन्म-जन्मान्तर ढूँढ़ते रहते हैं, किन्तु बिना मेरी शक्तिकी इच्छाके जान नहीं सकते हैं। जिस किसीने भी इसको जाना है उसे मेरी ही आत्मिका-

शक्तिने बताया है। इतना कहकर कापालिक अवधूत भगवान शान्त हो गये।

उनके आस-पास शान्त भावसे भक्तजन भी बैठे थे। उनकी आत्मिका-शक्ति सुर दुर्लभ सुन्दरी भी विराजमान थीं। भक्तोंने 'ॐ सच्चिदेकं ब्रह्म' का जाप किया और आत्मा रूप कापालिक भगवानरामको नैवेद्य तथा अर्घ्य-पाद्य देकर पूजन करके उनका ध्यान करते हुये अल्प समयके लिये समाधिस्थ हो गये। उसी समय आकाशसे एक ऋषि उतरे। मानो विष्णु गरुड़के ऊपर विराजमान होकर या सदाशिव नन्दी पर सवार होकर आकाशसे नीचे उतर रहे हों। भक्त गणने अर्घ्य-पाद्य करके ऋषिको प्रणाम किया। भगवान कापालिक भी ऋषिको देखकर खड़े हो गये और उनका आलिंगन किया। तत्पश्चात् आसन देकर ऋषिको अपने पास बैठा लिये।

ऋषि बोले, हे भगवान कापालिक ! इस निर्विकल्प आत्माको जो आपमें और हम सबमें निहित है कैसे देखा जाय ? तथा आत्मा और मन में क्या विभिन्नता है ?

भगवान कापालिक अत्यन्त मधुर स्वरसे बोले--हे ऋषि ! आत्माको धर्मग्रंथ एवं जातिसे नहीं जाना जा सकता। आत्मा आकाशके सदृश सबमें व्याप्त है। उसे चेष्टा करने पर भी न तो स्पर्श किया जा सकता है और न किसी प्रकारसे ग्रहण ही किया जा सकता है। आत्माको मेधा शक्तिसे संचालित स्मृति रूपी यंत्रसे ही ग्रहण किया जा सकता है। हम और आपमें जो यह जानना और न जानना है यह है या वह है इसकी जो चैतन्यता हुई है, उस चैतन्यताका ज्ञान करानेवाली मेधाशक्ति स्मृति ही है और वह आत्माकी ही स्वयं संकल्पित शक्ति है। आत्माके इस रूपको जानकर सिद्ध योगी महाशून्य आनन्दको प्राप्त करते हैं और उसीमें विलीन हो जाते हैं।

शब्द सत्य है। इसका भी अपनेमें ही लय हो जाता है। चाहे वह किसी घटमें हो। अपने घटके विनष्ट हो जानेके बाद घट का कोई स्वरूप शेष नहीं रहता, इसीसे जाना जाता है कि आत्मा शब्दसे परे भी है। सत् सूरत (ध्यानकी उच्चावस्था या समाधि) में आत्मा प्रतिबिम्बित होता है और उसीको जानना चाहिये। जो विधि अभी बतलाई गई है उससे कहीं उच्च कोटिके तरीकों को मैं जानता हूँ, जिसका साधन करनेसे आत्माको और प्रत्यक्ष रूपसे जाना जा सकता है, किन्तु उन विधियोंको बतानेमें असमर्थ हूँ क्योंकि वह अनुभव की वस्तु है और बतलानेसे समझमें नहीं आ सकती।

जिस प्रकारसे मन सफेद है या काला किसीने नहीं देखा है वैसे ही उस आत्माके विषयमें भी जानना चाहिये। मनकी स्थिति का ज्ञान सबको है, मगर वह प्रत्यक्ष दिखाई नहीं पड़ता। उसी प्रकार आत्माको भी समझना चाहिये। मन आत्माका ही प्रतिबिम्ब है और उसको साध लेनेसे आत्माका अनुभव होने लगता है। मन और आत्मामें उतना ही भेद है जितना कि दृष्टि और दृश्यमें। दृष्टि ही दृश्य है।

हे मुनि! तुम बहुत ही भाग्यशाली हो, क्योंकि तुमने आत्माकी परिभाषा और उसकी बौद्धिकशक्तिकी जिज्ञासाकी है। आत्माको मनसे ही जाना जा सकता है। मन आत्माका ही प्रतिबिम्ब है। जैसे सूर्यकी रोशनी और सूर्य में कोई अन्तर नहीं है उसी प्रकार मन और आत्माको समझो। अगर रोशनी न रहे तो सूर्य भी नहीं रहेगा। जैसे रोशनी देखकर सूर्यका होना ज्ञात हो जाता है उसी प्रकार आत्माका मनसे बोध करो। जिस प्रकार वैराग्यसे ज्ञान, और ज्ञान होनेपर वैराग्य दृढ़ हो जाता है उसी प्रकार मन और आत्माको जानो। सच्चा वैराग्य वही है जहाँ राग और ईर्ष्या न हो। जहाँ स्वर्ग और नर्क की परिकल्पना न हो। जहाँ कि हम और हमारा न रह जाय। ऐसा होनेपर स्फुरणा नहीं होती है और स्फुरणा न होनेसे जगत भी नहीं भासता। इसीको ही सच्चा ज्ञान कहते हैं। सच्चे ज्ञान और सच्चे वैराग्यमें जिस प्रकार अन्तर नहीं है हे ऋषि! मन और आत्माको भी उसी प्रकार जानो।

हे ऋषि! मन रूपी शिलापर पद्मासन लगाइये और चित्तको एकाग्रकर आत्मारामको प्राप्त करिये। हे ऋषि! जिस प्रकार कापालिक वेशधारी भगवान शान्त रहते हैं, उसी प्रकार सब लोग इन्द्रियोंकी लोलुपताका त्याग कर शान्त होवें। जिस प्रकार आकाशके उड़ते हुये पक्षी वृक्ष देख लेनेपर जा बैठते हैं और विश्राम पाते हैं उसी प्रकार सब लोग विश्राम पावें। जिस प्रकार जीव, मन-वाणी और शरीरसे अलग होकर मृत्युको प्राप्त हो जाता है और जगत अशांति–से शांतिको प्राप्त हो जाता है उसीकी तरह सभी लोग शान्तिको प्राप्त होवें। यह प्रपंच रूप दृश्य, मृगतृष्णाकी तरह भासता है, उसको त्याग करके अभिषित चित्तमें जाकर सब लोग शान्त होवें। अमावस्या तिथिको जैसे समुद्र शान्त रहता है उसीकी तरह हमलोग भी शान्त होवें। जिस प्रकार हिमालय शान्त है, जैसे साधु लोग अपनी इन्द्रियोंका दमनकर शान्त होते हैं, जैसे अवधूत लोग मान और अपमानसे शान्त होते हैं, जैसे ब्रह्मनिष्ठ लोग प्राणिमात्रमें अपनी आत्माको देखकर शान्त होते हैं उसी प्रकार हमलोग भी शान्त होवें। जैसे निर्विकल्प आत्माका साक्षात्कार हो जानेपर मन भूजे बीज के समान परिकल्पित होता है उसी प्रकार हमलोग भी परिकल्पित होवें। इतना कहनेके बाद आत्मारूप कापालिक अवधूत महाप्रभु "ॐ सच्चिदेकं ब्रह्म" कहकर मनः शिला पर जा बैठे और ऋषि आकाश-मार्गकी ओर चले गये।

जैसे बुद्ध महाशून्यमें शान्त हुये थे उसी प्रकार ऋषि शान्तिको प्राप्त हुये। भक्त मण्डलीने "सर्वेश्वरि त्वं पाहिमाम् शरणागतम्" का कीर्तन किया। उस समय ऐसा जान पड़ता था मानो वर्षाऋतुमें बादलको देखकर मयूर और पपीहे बोल रहे हैं। भक्तगण इस प्रकार प्रसन्न हुये जैसे बसन्त ऋतुमें वृक्षों और वनस्पतियोंपर आनन्द छा जाता है। जिस प्रकार आमके मंजरियों पर भँवरा गुंजार करता है और पके आमके फलोंपर चोंच मारकर

पक्षी सुखी हो जाते हैं उसी प्रकार भक्त मण्डली की दशा हुई। कुछ देरके बाद कापालिक भगवान और भक्तोंमें निम्नलिखित प्रश्नोत्तर हुये।

प्रश्न :—गुरु! कृपा करके बतलावें की सुर दुर्लभ सुन्दरी क्या है?

उत्तर :—सुर दुर्लभ सुन्दरी उसी समयका नाम था जो हम लोगोंके बीच अभी बीता। यह देवोंको भी दुर्लभ है। बड़े-बड़े साधु-महात्मा भी क्षणभरको इस सत्संगके लिये तरसते रहते हैं।

प्रश्न :—मुनि कौन थे?

उत्तर :—मुनि मन थे जो बैठकर सुन रहे थे।

प्रश्न :—गुरुदेव! आप कौन थे?

उत्तर :—हम स्मृति थे जो मन रूपी मुनिके प्रश्नोंका उत्तर दे रहे थे।

प्रश्न :—भगवान कापालिक कौन थे?

उत्तर :—आत्मा ही भगवान कापालिक हैं?

× × × ×

एक दिन सुबहको बड़ा ही मनोरम दृश्य था। प्रकृति इस प्रकार शान्त थी जैसे सज्जनोंका मन अथवा इष्टको प्राप्त कर साधक। भगवान कापालिक उसी समय ब्रह्मनिष्ठोंके साथ सोगड़ाकी पहाड़ियों पर विहार करनेके लिये चल पड़े। पर्वत-घाटियोंमें पहुँचने पर एक अत्यन्त सुन्दर शिला दीख पड़ी और अघोरेश्वर भगवान उसी पर विराजमान हो गये। उस समय अवधूत भगवान इस प्रकार शोभायमान हो रहे थे जैसे कमलोंके बीच हंस। दहकती हुई चिताओं के बीच अघोरी और महर्षियोंके बीच महाशक्ति। वह शिला स्फटिक मणिके समान प्रकाशित हो रही थी मानो विष्णुका पृष्ठ-भाग हो। पास ही एक झरना कलकल शब्दसे बह रहा था। उसे देखकर यह जान पड़ता था, कोई बड़ा पापी कापालिक भगवानको देखकर अपने पापके प्रायश्चित स्वरूप आँसू बहा रहा हो। जिस प्रकार ईशू ईश्वरके लिये शूलीपर झूमते हुये चढ़ गये उसी प्रकार वृक्ष और लतायें महाप्रभुके चरणों पर न्यौछावर होकर झूम रही थीं। पुष्पों की मन्द-मन्द गंध सारे वातावरणको इस प्रकार मादक बना रही थी कि उसको देखकर नन्दन बन भी लज्जित हो रहा था। जान पड़ता था कि सूर्य अपने रथके साथ खड़े होकर अवधूत भगवानको प्रणामकर रहे हों। जैसे-शिष्य अपने गुरु के सामने, ब्रह्मनिष्ठ कापालिक के सामने या औघड़ माँ कालीके सामने खड़े होते हैं उसी प्रकार भक्त मण्डली महाप्रभुके सामने खड़ी थी। जैसे भिन्न-भिन्न नदियोंके विलीन होने पर सागर सुशोभित होता है, जैसे महाशिखर सुमेरुगिरि पर्वतोंके मध्य सुशोभित होता है वैसे ब्रह्मनिष्ठोंके बीच भगवान कापालिक शिला पर सुशोभित हो रहे थे। जिस प्रकार अगस्त के सामने विन्ध्य, रामके सामने हनुमान और वशिष्ठके सामने राम उपस्थित हुये थे उसी प्रकार ब्रह्मनिष्ठ भगवान कापालिकके सामने उपस्थित थे। जैसे योगी अपनी

इन्द्रियोंको आत्मा के साथ लगा देता है उसी प्रकार भगवान कापालिकके चरणोंमें ब्रह्मनिष्ठों ने अपने मनको लगा दिया था।

"ॐ सच्चिदेकं ब्रह्म "महामंत्र उच्चारण करनेके पश्चात् भगवान कापालिकने कहा—जिन तीन सूत्रोंसे सम्पूर्ण साहित्यकी उत्पत्ति हुई वे तत्त्व शान्त हों। सत्त्व शान्त हों। शान्तव : शान्त हों। इनकी व्याख्या करते हुये भगवान कापालिकने कहाकि तत्त्व नित्य हैं और हम सबमें निहित हैं। सत्त्वः आत्मा का संचय है। जिस प्रकार से सत्य झूठ नहीं होता है परन्तु झूठ सत्य हो जाता है उसी प्रकार सत्त्व, असत्त्व नहीं होता परन्तु असत्त्व सत्त्व हो जाता है। सार का सत्त्व होना तभी सिद्ध होगा जब अवशिष्ट भी सत्त्व हो।

हे ब्रह्मनिष्ठो! जिस प्रकार बुद्धने बुद्धत्त्व प्राप्तकर शान्ति पाई उसी प्रकार तुम लोग भी अपने आत्मारूप कापालिक भगवानको अपने ही में मन, कर्म, वचनसे देखो और शान्तिको प्राप्त करो। जिस प्रकार कछुआ अपने अङ्गोंको समेट लेता है उसी प्रकार तुम भी अपनी इन्द्रियोंको समेटकर शान्त होओ। तितिक्षा मनुष्यको बहुत दुःख देती है और वही प्रवृत्तिका कारण है। तुम प्रवृत्तियोंसे निवृत्त होनेके लिये अपने मनरूपी शिलापर आत्मारूप कापालिक भगवानको निर्वासनिक चित्तसे बैठे हुये उसी प्रकार देखो जैसे इस समय तुम लोग मुझको अपने पास बैठा देख रहे हो। यही सत्त्व है। इसी ज्ञानको बुद्धने महाज्ञान कहा है और ऋषियोंने विद्या कहा है। मनकी मलिनतासे सब वस्तु मलिन दिखाई देती है। मन यदि पवित्र हो जाय तो चाण्डालका अन्न तथा जल भी पवित्र लगता है। यदि मन अपवित्र हो तो उत्तमसे उत्तम मनुष्योंके यहाँका अन्न-जल अपवित्र मालूम होता है। यही महाज्ञान है। इसी ज्ञानसे भगवान कापालिकने पूर्वकालमें अनेकानेक ऋषियोंको ज्ञान कराया था स्मृत रूपमें। हे ब्रह्मनिष्ठो! इस समय तुम लोग भी स्मृतिसे अवधूतकी वाणियोंको ग्रहण करो। जो ज्ञान तुम लोगोंको गुरुकृपासे प्राप्त हुआ है उसके लिये न जाने कितने सुर-असुर और इन्द्रादि तरसते रहते हैं।

इतना कहकर भगवान कापालिक चुप हो गये और शिलासे उतरकर ऐसे खड़े हुये जैसे सागरसे चाँद निकलता है, प्रवृत्तियोंसे हटकर जीव निवृत्त होता है या पक्षियोंके मध्य हंस खड़ा होता है। ब्रह्मनिष्ठ जन भगवान कापालिकके सामने धनुषके ऊपर प्रत्यंचा चढ़ाई हुई के समान खड़े थे। भगवान कापालिक पश्चिम दिशामें सूर्यके समान थे और भक्तजन मानो उनके प्रकाशसे उत्पन्न इन्द्रधनुष हों। ब्रह्मनिष्ठोंने भगवान कापालिकको सादर प्रणाम किया और उसके पश्चात् पर्वतकी घाटियोंसे इस प्रकार उतरने लगे जैसे सज्जन जन संसारकी वासनाओं को छोड़ने लगता है, गायें तृण चरनेके बाद अरण्य छोड़कर अपने आलयमें लौटने लगती हैं, सिंह अपने कन्दराको छोड़कर शिकारको निकलता है, जैसे शिव पृथ्वीकी परिक्रमा लगाकर कैलाश जाने लगे थे, विष्णु क्षीर सागरसे निकलकर

बैकुण्ठ पहुँचे थे। धीरे-धीरे अवधूत भगवान राम भक्तोंसे घिरे हुये सोगड़ा आश्रम पहुँच गये।

× × × × ×

गुरुदेव भगवान कापालिकने अभय मुद्रा धारण करते हुये परम प्रसन्न हो भक्तोंसे कहा कि हे ब्रह्मनिष्ठो ! मेरी आत्मिका-शक्तिकी प्रसन्नतासे ही तुम सबमें प्रसन्नता है। इसलिये इस आत्मिका-शक्तिको सदैव प्रसन्न रक्खो। ब्रह्मनिष्ठो ! मानसरोवरके हंस तथा सज्जन एवं योगियोंकी तरह तुम लोग भी अपनी दिनचर्याको स्वच्छ रक्खो और अपने सिवाय अपने आसनपर अन्य किसी व्यक्तिको न बैठने दो। किसी दूसरेके आसनपर भी नहीं बैठना चाहिये और सदा पवित्रताका वर्ताव करना चाहिये। इससे भगवान कापालिकका ध्यान करनेमें सुगमता होगी। आकाश और पृथ्वी भगवान कापालिकके ये दोनों दूत सभी जगह हैं। ये सबका सुकर्म और कुकर्म देखते रहते हैं। इसलिये सब ब्रह्मनिष्ठोंको चाहिये कि वे लोग अश्लीलतासे दूर रहें। क्योंकि ये बड़े घातक और दुखद हैं। जैसे तेज धारके हथियारसे एक ही झटकेसे केला कट जाता है उसी प्रकार नैतिकताके समाप्त हो जानेसे मनुष्य श्रीहीन हो जाता है। कुसंगति बड़ी दुखद है। जिस प्रकार जलसे अग्नि बुझ जाती है उसी प्रकार कुसंगतिसे सुख समाप्त हो जाता है। जिस प्रकार उष्णतासे हिम गल जाता है उसी प्रकार कुसंगति रूपी भूत जिसे व्याप्त हो जाता है वह जीव विक्षिप्त होकर पचि-पचिकर नष्ट हो जाता है। जिसने असंगतिको दुर्गम पर्वतकी नाई त्याग दिया है उन्हें आकाश, अग्नि और वायु अमृत रूप हो जाते हैं। संसारमें सुन्दरीके साथ रहना अनुचित नहीं है मगर उसमें लिप्त होना बहुत ही भयंकर है। चींटेके समान गुड़ खाकर भी अलग रहना चाहिये न कि मक्खीकी तरह घीमें गिर पड़े।

हे ब्रह्मनिष्ठो ! इस शरीर रूपी पिंजरेमें संसारकी वासनायें और भोग जीवको आकृष्ट करते रहते हैं। सर्वेश्वरीका स्नेहभाजन सच्चा ब्रह्मनिष्ठ वही है जो उनकी तरफ आकृष्ट नहीं होता है। हे ब्रह्मनिष्ठो ! जिस प्रकार कामका क्षय हो जानेसे रति रोती फिरती थी उसी प्रकार तुम लोग भी मन और वचनसे वासनाओंका क्षय करो तब पाप रूपी रति संसारमें रोती फिरेगी। जैसे भगवान अवधूतके दर्शनमात्रसे मोह रोने लगता है वैसे ही तुम भी कामका क्षय करो। लोलुपता और तृष्णा रूपी डायनने अनेक बार देवताओं और ऋषि-मुनियोंको अनेक कष्ट दिये हैं। इसीने साधुओंकी लँगोटी उतरवा ली है और राजा-महाराजाओंको दीन और दुखी बनाकर छोड़ दिया है। इन्द्रियोंकी लोलुपता छूट जानेसे मनुष्यको वही आनन्द मिलता है जो भटके हुये पथिकको घर पहुँचनेपर।

हे ब्रह्मनिष्ठो ! जिसके मनसे तृष्णा और लोलुपता चली गई है वही परम साधु, परमज्ञानी और परम ब्रह्मनिष्ठ है। वे ही लोग शान्ति-बोध चित्तमें विश्राम करते हैं परमहंस और अवधूत हैं। अधिक क्या कहें वे मेरे ही भगवान कल्पवृक्षके रूप हैं। तुम लोग इसे संसारके मनुष्योंके सामने सुनाओ और स्वयं भी इसका मनन करते हुये आचरण करो। इसीपर आचरण करके शिवने शिवत्वको प्राप्त किया, बुद्ध ने बुद्धत्वको प्राप्त किया और अनेक देवर्षियों, महर्षियों, मुनियोंने इसीका आचरणकर अपने जीवन रूपी परम गम और अगममें शान्तिको प्राप्त किया। इतना सुननेके बाद ब्रह्मनिष्ठ और भक्तजन अपने आत्मा रूपी दर्पणमें भगवान कापालिकका दर्शनकर अर्घ्य-पाद्य देने लगे।

× × × × ×

सन्ध्याका समय था और आकाशमें बादलोंके टुकड़े ढलते हुये सूर्यकी रश्मियोंसे नाना वर्णमें रंग गये थे। जान पड़ता था किसी सिद्धने भगवान कापालिकके स्वागतमें विभिन्न रंगकी झण्डियाँ खड़ीकर रक्खी हैं। झुण्डके झुण्ड पक्षी, रंग-बिरंगे बादलोंसे टकराते हुये उत्तरसे दक्षिण दिशामें जा रहे थे। धीरे-धीरे अन्धेरा बढ़ने लगा और पहाड़ीके ऊपर बादलोंके बीचमें विद्युत रह-रह कर चमक उठती थी। उस समय जान पड़ता था मानो गुरुदेव पर्देके पीछेसे शिष्योंके अनेक कर्म देख रहे हैं। बढ़ते हुये अन्धकारमें एकके बाद एक तारागण दिखाई देने लगे, मानो कापालिक भगवान संसारमें ब्रह्मनिष्ठोंको उत्पन्नकर रहे हों। उसी समय ब्रह्मनिष्ठ लोग भगवान कापालिकके चारों तरफ एकत्र होने लगे।

भगवान कापालिक आकाशकी तरफ देखने लगे। पुनः उन्होंने शिष्योंको सम्बोधित करते हुये कहा :—सम, शान्ति, विवेक एवं वैराग्य रूपी धनको एकत्र करो। जगतकी वासनाओंको इस प्रकार त्याग दो जैसे सज्जन दुर्जनोंको त्याग देते हैं। जैसे साधुलोग संसारके भोगोंको त्याग देते हैं। जैसे महर्षियोंने अविद्याको त्याग दिया था।

हे ब्रह्मनिष्ठो ! तुम लोग नाना प्रकारके भेदोंको त्याग दो और अभेद हो जाओ। तुम लोग अमंगलमयी अविद्याका परित्यागकर दो तथा अहंरूपी मलिनतासे आच्छादित आत्मा रूपी दर्पणको साफ करके अपने स्वरूपको देखो। जिस प्रकार प्रह्लादने नृसिंहको देखा था, जैसे ध्रुवने विष्णुको देखा था, जिस प्रकार शाक्त लोग स्त्री मात्रमें माँको देखते हैं, जैसे शैव पुरुष मात्रमें शिवको देखते हैं, जैसे महात्मा प्राणिमात्रमें अपनी आत्माको देखते हैं, जैसे अवधूत प्राणिमात्र में भूतोंको देखते हैं। उसी प्रकार आत्मा रूपी दर्पणमें तुम लोग अपनेको देखो। जिस प्रकार कामी स्त्रीको हर एक पुरुष अपना पति ही दिखाई देता है, जैसे लोभी पुरुषको हर एकका धन लेनेकी इच्छा होती है, जिस प्रकार सज्जनको प्रत्येक संतके प्रति प्रेम उत्पन्न होता है, जैसे शिष्योंको

गुरुकी समस्त विद्या लेनेकी इच्छा होती है, जैसे गुरुको शिष्योंकी अविद्या रूपी बुद्धिको हरण करनेमें संकोच नहीं होता उसी प्रकार हे ब्रह्मनिष्ठो ! तुम सब लोग भी अवधूत द्वारा प्रतिपादित ज्ञानको ग्रहण करो।

हे ब्रह्मनिष्ठ ! यह संसार एक पुराना ठूँठा वृक्ष है, जिसके पल्लव जाति-धर्म एवं पाखण्ड हैं। वृक्षके जर्जर होनेसे इसके फलोंमें बहुत ही कसावपन आ गया है। इस वृक्ष की मंजरियोंसे अत्यंत दुर्गन्धित वायु प्रवाहित हो रही है, जिससे आजके जीव बहुत ही दुखित हैं। तुम लोग इस जर्जर वृक्षके पल्लवों एवं फलोंका परित्याग करो, क्योंकि इसकी सड़ानसे बहुत दुर्गन्धि फैल रही है। जिस प्रकार योगी लोग अपनी इन्द्रियोंकी लोलुपताका परित्याग कर शान्त हो जाते हैं, उसी प्रकार तुम लोगभी शान्त हो जाओ।

[नाद-श्रोत ब्रह्मनिष्ठालय, सोगड़ा, मध्य प्रदेश तिथि चैत्र नवरात्र १९६४ ई०]

साधक-गुरु सम्वाद

साधक—गुरु देव क्या धनिक लोग स्वार्थी होते हैं ?

गुरुदेव—नहीं। क्योंकि वे मरणोपरान्त अपने साथ कुछ नहीं ले जाते।

साधक—मुझे रामका दर्शन कराइये।

गुरुदेव—एक राम काया विच डोले, एक राम सब जगत पसारा।
एक राम दशरथ घर डोलें, एक राम सबही से न्यारा॥

तो आपही बताइये आपको कौनसे रामका दर्शन चाहिये ?

साधक—वर्तमान कालमें भौतिक कष्टोंसे बचनेका क्या उपाय है ?

गुरुदेव—उत्साह पूर्वक पुरुषार्थ करना।

साधक—गुरुदेव ! हमारे आश्रममें राजा-रंक, ऊँच-नीच और जात-पाँतका लेश मात्र भी भेद नहीं है तो क्या श्री सर्वेश्वरी समूह साम्यवादका समर्थन करता है।

गुरुदेव—नहीं। हम सब साम्यवादी नहीं, साम्य योगी हैं।

[वाराणसी आश्रम—३१ जुलाई, १९६५ ई०]

साधक—गुरुदेव! जिस मूर्तिकी हम स्थापना करते हैं क्या इसकी पूजा और अर्चना करना उचित है ?

गुरुदेव—सगुण उपासना-पद्धतिमें यह उचित है।

साधक—गुरुदेव! आत्मा और मनमें क्या भेद है ?

गुरुदेव—भौतिक दुःख और सुखका अनुभव मनको होता है किन्तु आत्मा निर्लिप्त है। मन चंचल होता है किन्तु आत्मा स्थिर है। वैसे मनको पूर्णरूपेण वश में किया जा सकता है।

साधक—गुरुदेव ! सर्वेश्वरी-परिवारमें जन्मसे मृत्यु पर्यन्त कौन-कौनसे संस्कार सम्पन्न किये जाते हैं ?

गुरुदेव—जन्म, दीक्षा, विवाह तथा मृत्यु।
साधक—गुरुदेव! सर्वेश्वरी समूह का उद्देश्य क्या है ?
गुरुदेव—विश्वबन्धुत्व और समाज सेवा।

[वाराणसी आश्रम–१५ अगस्त, १९६५ ई०]

साधक—गुरुदेव! लाख चाहनेपर भी इस स्थानको (आश्रमको) छोड़नेका जी नहीं चाहता, क्यों ?
गुरुदेव—यह वही कह सकता है जिसके हृदयमें इस स्थानने स्थान पा लिया है।
साधक—कृपया यह बतावेंकि ईश्वर है या नहीं ? यदि है तो कहाँ है ?
गुरुदेव—ईश्वर है। यह हाँ और नहींके मध्य स्थित है। इसको देखनेके लिये एक पवित्र साधनाकी आवश्यकता है जो सरल भी है।
साधक– धोबीका कुत्ता न घरका न घाटका। मेरी ऐसी स्थिति क्यों है ?
गुरुदेव—यह धोबीके गदहेसे तो अच्छी ही है कि लादी लादनेसे जान बची है।
साधक—जिन्दगीका क्या लक्ष्य है ?
गुरुदेव—प्रेम करना, दयाके साथ ज़िन्दगीकी आवश्यकताओंको पूरा करते हुये ज़िन्दगी गुजारना।

[वाराणसी आश्रम–३० अगस्त, १९६५ ई०]

साधक—गुरुदेव! क्या अध्ययन द्वारा हम वास्तविक ज्ञान प्राप्तकर सकते हैं ?
गुरुदेव—ज्ञान प्राप्तिके तीन साधन हैं। ज्ञानेन्द्रिय, मस्तिष्क और आत्मा। इन्द्रियजन्य ज्ञान अवास्तविक है। मस्तिष्कसे अध्ययन द्वारा प्राप्त ज्ञान वास्तविकताके समीप है और विशुद्ध आभासित ज्ञान ही पूर्ण वास्तविक है।
साधक—गुरुदेव! क्या परमाणु शक्ति संसारकी सबसे बड़ी शक्ति है।
गुरुदेव—नहीं। परमाणु शक्ति सबसे बड़ी शक्ति नहीं, अपितु, प्रबुद्ध मानव मस्तिष्क ही सबसे बड़ी शक्ति है जिसने परमाणु-शक्तिकी खोजकी है।

[वाराणसी आश्रम–१५ सितम्बर, १९६५ ई०]

साधक—ईश्वरीय शक्तिके बाद भी क्या धार्मिक दृष्टिसे कोई शक्ति है ?
गुरुदेव—नहीं। शक्ति एकही है। उसीको ईश्वरीय-शक्ति आदि विभिन्न नाम देते हैं। वास्तवमें सर्वेश्वरी ही एक शक्ति है जिसका अस्तित्व कण-कणमें है।

साधक—जिन्दगी को सुखमय और संतुलित बनानेके लिये कौन-कौनसे अच्छे गुण हैं ?

गुरुदेव—प्रेम, शान्ति और स्वावलम्बन ये ही मनुष्यको ब्रह्मतक-लेजाते हैं।

साधक—गुरुदेव ! पाप क्या है ?

गुरुदेव—मन का विकार। दूसरे शब्दोंसे दृष्टिकोणकी विषमता।

साधक—गुरुदेव ! निराश हृदयमें आशा-संचारके लिये कौन सा उपाय काममें लाया जाता है ?

गुरुदेव—धैर्य।

[वाराणसी आश्रम–१५ अक्टूबर, १९६५ ई०]

साधक—आनन्द युक्त जीवन क्या है ?

गुरुदेव—जिसमें कोई चाह न हो।

साधक—वैमनस्य कैसे होता है ?

गुरुदेव—ईर्ष्या से।

[वाराणसी आश्रम–१ नवम्बर, १९६५ ई०]

साधक—गुरुदेव ! मानव-धर्मके लक्षण क्या हैं ?

गुरुदेव—मनुष्यवत् भाव रखकर मानवको मानव समझना।

साधक—गुरुदेव ! कृपया यह बतानेका कष्ट करें कि घृणा, क्षमा और प्रेम का क्या स्वरूप है ?

गुरुदेव—सुभावका अभाव घृणा, हृदयकी विशालता क्षमा, सबमें अपने को पाना प्रेम-तीनोंका क्रमशः यही स्वरूप है।

साधक—यह बताने की कृपा करें कि जीवन का उद्देश्य क्या हो ?

गुरुदेव—दानवतासे परे रहकर मानवता का आचरण।

[वाराणसी आश्रम–३० नवम्बर, १९६५ ई०]

साधक—मनुष्य अपने जीवनसे निराश कब होता है ?

गुरुदेव—जब आत्म-विश्वास उसका साथ छोड़ देता है।

साधक—जीवनका सबसे बड़ा आधार क्या है ?

गुरुदेव—परमानन्द।

साधक—जीवनका सबसे बड़ा और सरल सद्गुण-प्रयोग क्या है ?

गुरुदेव—सत्यका प्रयोग। इससे बढ़कर और सरल प्रयोग कोई दूसरा नहीं है।

साधक—कृपया बतायें कि व्यक्ति कब हारता है ?

गुरुदेव—जब निराशासे उसका साथ हो जाता है।

[वाराणसी आश्रम–[illegible] दिसम्बर, १९६५ ई०]

साधक—यह बतानेकी कृपा करें कि सन्त और दुष्टमें क्या अन्तर है ?

गुरुदेव—सबमें सम भावकी दृष्टि रखना सन्तका गुण है और सबमें खलका भाव रखना दुष्टका अवगुण है ।

साधक—शुभ और अशुभ क्या हैं ?

गुरुदेव—आत्माका आह्लाद शुभ है और आत्मामें मलिनता अशुभ है ।

साधक—गुरुदेव ! आत्माकी शान्तिका सबसे सरल तरीका क्या है ?

गुरुदेव—गुरुका ध्यान एवं उनके बताये मार्गोंका निष्ठापूर्वक अनुसरण ।

[वाराणसी आश्रम–३१ दिसम्बर, १९६५ ई०]

साधक—गुरुदेव ! आत्माको परमात्मासे कैसे मिलाया जाय ?

गुरुदेव—सांसारिक इच्छाओंके परित्यागसे आत्मा स्वतः परमात्मामें मिल जायेगी ।

साधक—आत्मा को पवित्रता कैसे प्राप्त होगी ?

गुरुदेव—गुरु द्वारा दर्शित जीवन-चर्या को ठीक नियमित रूपसे संचालित करने पर ।

साधक—अमरत्व प्राप्तिके क्या उपाय हैं ?

गुरुदेव—गुरुकी कृपा प्राप्त करना ।

[वाराणसी आश्रम–१ जनवरी, १९६६ ई०]

✓ साधक गण—आप कौन हैं और यहाँ क्या करने आए हैं ?

गुरुदेव—मैं ब्रह्माण्डका एक परमाणु हूँ । ब्रह्माण्डमें जो गड्ढा हो गया है उसीको समतल करने आया हूँ । गड्ढा पापकी अधिकतासे हुआ है । ऊँच-नीच स्थल को बराबर करना ही समतल करना है और इस तरह बड़े-छोटे को एक सूत्रमें बाँधना ही मेरा उद्देश्य है ।

मैं एक जेल हूँ । अमीर-गरीब, फकीर को ईश्वर कैद करता है तो मेरे यहाँ भेज देता है । मैं उसे अपने घेरे के अन्दर रखता हूँ । ईश्वर हाकिम है और यहाँ के प्राणी ही कैदी हैं । वह प्राणीको सजा देता है तो इस जेलमें भेज देता जो आपके सामने है । जितने दिनकी सजा देता है उतने दिन यहाँ रखता है और कैदीको यहाँ रहना पड़ता है ।

मैं सड़कपर पड़ा रजका एक अणु हूँ । जब कभी उड़ता हूँ तो बड़ोंके नेत्रोंमें प्रवेशकर जाता हूँ और आंखें मलते-मलते जब वह खोलता है तो देखकर वह कह उठता है अरे ! यह तो बहुत बड़ा है ।

मैं शान्त वायुमें जीनेका अभ्यासी हूँ ।

साधक गण—आप अवधूत हैं और इस मार्गसे श्रीसर्वेश्वरी समूहका क्या सम्बन्ध है ?

गुरुदेव—अवधूत हूँ लेकिन किसीके द्वारा अवधूत बनाया नहीं गया। ऐसा स्वतः हूँ। श्री सर्वेश्वरी समूह मेरी योग-लीला है। ऐसा मुझे निश्चय है कि संस्था या धर्म जो सृष्टिमें है उसे भिन्न-भिन्न देशों एवं राष्ट्रोंमें मेरी ही आत्माने विकसित किया है, जो संसारमें अनेक रूपोंमें व्याप्त है लोगोंमें आलस्य न हो इसलिए इस श्रीसर्वेश्वरी समूहकी सृष्टि है। सर्वेश्वरी मेरी आत्मा है।

साधक गण—आप किस धनको पाकर धनी हैं और किस मूल्यपर उसे बाँटते हैं?

गुरुदेव—मेरी आत्मा ही धन है। मैं अपनी आत्माको सबमें निहित जानता हूँ। मुझे अपनेको निःशेष भावपर दे देता है वही वह मूल्य है जिसपर मैं अपनेको बाँट देता हूँ।

[वाराणसी आश्रम–ज्येष्ठ कृष्ण पंचमी, १९६६ ई०]

साधक गण—ईश्वर यदि सम दृष्टि है तो वह भक्तोंको क्यों विशेष प्यार करता है?

गुरुदेव—जो प्रेम करता है उसीको भक्त कहते हैं। भक्त कोई अलगसे गढ़कर नहीं आता है। ईश्वर जिसपर प्यार करता है एक प्रकारसे उसे धोखा ही देता है। किन्तु जो व्यक्ति ईश्वरको प्यार करता है वह एक प्रकारसे ईश्वरका खास नजदीकी सा हो जाता है।

[वाराणसी आश्रम–ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठी, १९६६ ई०]

साधक गण—आप इस शरीरके पहले क्या थे और क्या करते थे?

गुरुदेव—इसके पहले आत्माके रूपमें था। परमात्माका पसीना कह लो। पुष्पके परागके कण बनकर उड़ा करता था आज भी वही करता हूँ। हर एक पुष्पमें प्रवेशकर परागका रूप धारण करता हूँ जिससे पुष्पकी मर्यादा बढ़ जाती है।

साधक गण—इस शरीरके बाद कैसे रहेंगे? क्या करेंगे?

गुरुदेव—इस शरीरके बाद स्थिर रहेंगे। अपनी स्वात्माको जगायेंगे शरीर मिट जानेके बाद आत्मा कोई आकांक्षा नहीं करती है। आलसी हो जाती है इसीलिये इसे जगायेंगे।

साधक गण—ईश्वर प्राप्तिका सबसे सरल मार्ग कौन है?

गुरुदेव—संसारका अभाव। केवल अपनी आत्मा और सर्वत्र उसीका भाव हो। सभी वस्तुओंमें अपनी ही आत्माका भाव रहे।

साधक गण—आत्मा यदि नित्य है तो क्या पाँच-भौतिक शरीरकी व्याधियाँ उसे कष्ट देती हैं ?

गुरुदेव—मनुष्य केवल ऐसा महसूस करता है। देहको केवल दुःख, शीत, गर्मीका आभास होता है। जिसे नित्यताका ज्ञान है उसके मनको यह सब महसूस नहीं होता। दुःखमें आँसू बहाना व्यर्थ है। रोना कई तरहका है। वास्तविक रूदन उसे ही कहते हैं जिसमें आँसू न निकले। आँसू तो पापका प्रायश्चित है जो पानीके रूपमें निकलता है।

साधक गण—चित्तको एकाग्र करनेका सबसे सरल मार्ग कौन है ?

गुरुदेव—पुत्र, पत्नी, कुटुम्बको भुला देना। उन्हें सपनेमें भी न देखना। गुरुको भी न सोचना। इष्ट देवको भी भुला देना। अन्धे, बहरे और गूँगेकी तरह हो जाना। किसीकी चर्चा न सुनना। यदि सुने भी तो अनुमोदन न करे। यदि चित्तकी एकाग्रता चाहिये तो गुरुकी क्या आवश्यकता ? ईश्वर की क्या आवश्यकता ? सबको भूल जाओ।

साधक गण—दुनियामें सबसे गरीब कौन है ? और ऐसे व्यक्तिसे आपका कैसा व्यवहार होता है ?

गुरुदेव—जीवित होते हुये भी जो मृतक तुल्य दीख पड़े, जिसे कहीं भी सन्तोष नहीं, वही दीन है। ऐसे व्यक्तिको मैं ईश्वर मानता हूँ। उसे मैं लाखों बार प्रणाम करता हूँ क्योंकि उसके साथ ईश्वर रहता है और इसीलिये ईश्वरको दीनदयाल कहते हैं।

साधक—गुरुदेव अपनेमें शान्ति प्राप्ति करनेका मार्ग-दर्शन करें।

गुरुदेव—आप जो मार्ग अवलम्बन करें वही शान्ति देगा।

साधक—मोह अज्ञान है अथवा पाप ?

गुरुदेव—मोह न अज्ञान है न पाप। बल्कि यह एक नशा है जो उतर सकता है।

साधक—क्या अविवाहित नर-नारीका अधूरा प्रेम पाप है।

गुरुदेव—प्रेम पवित्र है चाहे वह अधूरा हो या पूरा हो।

साधक—क्या युवक-युवतियोंको स्वयं वरण करनेकी स्वतन्त्रता देना उचित है ?

गुरुदेव—हाँ ! इसके लिये भारतीय कानूनमें मान्यता है और हमारी प्राचीन-परम्परा भी इसे मान्यता देती है। पार्वतीने शंकरसे विवाह करनेका निश्चय अपने माता-पिताकी इच्छाके विपरीत ही किया था जिसके लिये उन्हें कठोर तप करना पड़ा।

[वाराणसी आश्रम—ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमी, १९६६ ई०]

कर्मसे भागा हुआ मनुष्य कैसे मंजिल पायेगा

सोनकर जी ! संसारके हर व्यक्तिका उद्देश्य है सुखी और समृद्ध जीवन। यद्यपि इसके प्राप्त करनेके पहलू भिन्न-भिन्न हैं। तथापि अन्ततोगत्वा सबका उद्देश्य इस लक्ष्यके लिए समान है। इसके लिये प्राणी सभी कर्म-अकर्म एवं निषिद्ध-कर्म करता है। पर्वतकी कन्दरामें रहनेवाला तपस्वी भी इससे मुक्त नहीं। भले ही लौकिक सुखकी कामना तपस्वीको न हो। किन्तु पारलौकिक सुखकी कामना, आध्यात्म-ज्ञानकी कामना और ब्रह्म-प्राप्तिकी कामना उसको बनी ही रहती है। कामनापर कुठाराघात निराशासे होता है और निराशासे दर्द होता है। इस दर्दसे छुटकारा मिलना क्या सम्भव नहीं ?

कर्मसे भागा हुआ मनुष्य कैसे मंजिल पायेगा। भाई ! ....इस संसारमें प्राणकी ही भाँति आशा और निराशा भी व्यक्तिमें प्रविष्ट है। यदि आशाका वेग कम और निराशाका वेग अधिक होता है तो व्यक्ति अस्वस्थ हो जाता है। उसका मन सन्ताप, जो कामनाओंपर विजय न पा सकनेके कारण उत्पन्न होता है, उसे मार्ग-च्युतकर देता है। व्यक्ति अपने जीवनके तारोंपर उलझ जाता है। इसी स्थितिमें वह कर्मसे हटता है। यही गलत है। कर्मसे भागा व्यक्ति दुःखी होगा। मैं सोचता हूँ कि यदि दर्दसे छुटकारा पाना है तो कर्मकी ओर एक नई आशाके सहारे प्राणीको बढ़ना चाहिये। आश्चर्य है कि हिन्दू-धर्ममें इसका कोई ठोस वर्णन नहीं है। वैसे गीतामें कर्मकी विशद व्याख्याकी गई है। बुद्धके उपदेश भी इस ओर विस्तृत हैं। कुरानमें भी इसपर बल दिया गया है। बाइबिलके टेन कमान्ड मेंटस् भी इसी आधारपर हैं।

शक्ति—विश्वका प्रत्येक कार्य शक्ति द्वारा ही होता है। जंगलमें शक्तिशाली सिंहको ही जीनेका अधिकार है। मनुष्यका हर क्रिया-कलाप शक्तिपर निर्भर है। बिना शक्तिके किसीके अस्तित्वकी कल्पना नहीं की जा सकती। विज्ञानमें शक्तिके कुछ अन्य नाम हैं—विद्युत, गर्मी, न्यूकिलियस, रासायनिक विद्युत्, चुम्बक, गुरुत्त्वाकर्षण आदि-आदि। पदार्थ-शास्त्रमें अन्य नाम हैं—कोयला, लोहा, पीतल, पानी आदि और धर्मशास्त्रमें ईश्वर, देवी, दुर्गा, चामुण्डा, काली और सर्वशक्तिमयी माँ सर्वेश्वरी आदि शक्तिके ही नाम हैं।

ईश्वरके दो रूप प्रायः बताये जाते हैं। पहला साकार और दूसरा निराकार। शक्ति भी इन्हीं दो रूपोंके मध्य पाई जाती है। वैज्ञानिकोंने भी सिद्धकर दिया है कि शक्ति साकारसे निराकार और निराकारसे साकार रूप धारण करती है। ईश्वर और शक्तिमें कोई भेद नहीं। ईश्वरकी ही भाँति शक्ति भी अमर है। उसका रूप बदलता है। ऋषि-मुनियों के शक्ति-पूजनका शायद यही रूप रहा है।

[श्री [illegible] टाइम्सके भूतपूर्व सम्पादक श्री राजनाथ सोनकर एवं

अन्य लोगोंसे भेंटमें—लखनऊ, जून, १९६९ ई०]

मानव जीवन अतौल है

बड़ी गजब की बात है कि मनुष्य का जीवन समान नहीं है। इसलिए तौला जाता है। समान जीवन ही अतौल होता है। हर क्षण हर एक मनुष्य को चाहिये कि चाहे वह किसी भी वर्ग का हो या किसी भी मार्ग का अनुयायी हो, अपने आपको सम्हाल्ले। यदि नहीं सम्हालता है तो उस मनुष्य को वही पाप लगता है जो गर्भवती स्त्री से भोग करने पर लगता है।

अरे लोगों! अपराधसे बचो। क्षीण हो जाओगे। अपने जीवनकी चपलताओंको छोड़ दो। शान्त चित्त होकर विचारो। इन कुकर्मों से बचो। जानते हो इससे बचनेपर ही व्यक्तिके समाहित चितमें सभी कर्मोंका ईंधन जल जाता है।

समझो! अधिक समझने की आवश्यकता नहीं है। इतना समझ जाने से और इसे वर्तने से बहुत ही गुण, तुम्हारा स्वागत करेंगे।

[मास्टरसे साक्षात्कारमें वाराणसी आश्रम ३१ मार्च, १९७० ई०]

निर्बीज होकर जीव ईश्वर संज्ञा को प्राप्त होता है

धूत कहे, अवधूत कहे, रजपूत कहे, जोलहा कहे कोऊ।
काहू के बेटासे बेटी न ब्याहिब, काहू की जाति बिगाड़िब नाँहि, माँग के खाइब, मस्जिद में सोइब।

मास्टर—एक फकीरकी बात याद आ गई जिसने कहा था कि जात-पाँत, धन, धर्म, बड़ाई, हित, मित, सदन, समुदाई। सब तजि रामचरन लव लाई। किन्तु इसका लेश मात्र भी अभिमान होगा तो चित्त का गुरु 'राम' में लय नहीं होगा और इस स्थितिमें सब फीका होगा और अपने जीवन में इस फीकेपन का अनुभव होने लगेगा। निर्बीज होकर ही जीव ईश्वर संज्ञाको प्राप्त होता है। दग्धबीजकी तरह चित्त होनेपर आप समझ लीजिये कि आप ईश्वर की गोद में हैं।

जब तक चित्त में चांचल्य हैं, इच्छायें हैं, सोने का महल भी दुःखकर ही होगा। दुःख क्या है? मनोनुकुल इच्छा की पूर्ति न होना ही, इससे बचनेके लिये गुरुकी शरणकी आवश्यकता है। गुरु एक स्टेशनके समान है। आप वहाँसे हर स्थानका टिकट ले सकते हैं। अपकारसे नरकका और उपकारसे स्वर्गका। उपकार ही मानव जीवनकी सार्थकता है, उपकार अपना हो या पराया। मन,वचन और कर्म से उपकार में लगे व्यक्ति ही संत कहे जाते हैं। ये कोई जंगल, पहाड़, गुफाओं में नहीं रहते। पवित्र विचार ही उनका विहार है जिसमें संत विचरण करते हैं।

[वाराणसी आश्रम-मास्टर से एक साक्षात्कार में १५ मई, १९७० ई०]

अद्‌भुत न्याय

पड़लन राम कुकुरके पाले,
खींच-खींचके कइलन खाले।

एक पौराणिक कथा है। एक समय की बात है। एक कुत्ता नगरमें रास्ते पर सोया था। एक ब्राह्मण उसी रास्तेसे जा रहा था। उसे भयने दबोचा। भयकी शंकामें उसने कुत्तेको एक डण्डा लगा दिया। कुत्ता अपना कोई कसूर न देखकर महात्मा श्रीरामके दरबारमें उपस्थित हुआ और दरख्वास्त दी। उसकी अर्जीकी सुनवाईके लिये रामजीने उसे बुलवाया और उससे सभी बातें सुनी। उसने बयानमें बताया कि ब्राह्मण देवताने उस बेकसूरकी कमरमें डंडा मार दिया है। ब्राह्मणोंकी बहुत इज्जत उस समय थी। श्रीरामजी ब्राह्मणको दण्ड देनेसे घबड़ा रहे थे। श्रीरामजी सोचने लगे कि क्या किया जाय? गलती उसने की है, दण्ड मिलना चाहिये। उन्होंने कुत्तेसे ही पूछा कि बताओ उन्हें क्या दण्ड दिया जाय? कुत्तेने कहा कि आप न्यायालयके आसन परसे हट जायँ। श्रीरामजी आसनसे हट गये और कुत्तेको बैठनेके लिये कहा। बैठते ही उसने फैसला सुनाया। इन ब्राह्मण देवताको किसी शिव मन्दिरका महंथ बना दिया जाय। फैसला देकर जब वह हटा तो लक्ष्मण, भरत, श्रीराम इत्यादि सभीने उससे पूछा कि अपकारके बदले तुमने उपकार किया है। यह तो कोई सजा नहीं हुई। कुत्तेने अपनी पूर्व कथा सुनाई—

मैं पूर्वजन्ममें बड़ा पवित्र ब्राह्मण था। नित्य प्रति हवन करता था। जाड़ेके दिनोंमें मेरे नाखूनोंमें घी लग जाता था। हवन करनेसे ऐसा हो जाता था। जब मैं घर आता तो मेरी पत्नी गरम दाल या दूध दे दिया करती थी। हाथ डालनेपर सभी खाद्य-पदार्थ हवनके घीसे मिश्रित हो जाते थे। यह शिव निर्माल्य खानेका फल हुआ कि मैंने कुत्ते की योनिमें जन्म लिया।

पण्डितजी शिव मन्दिरके महंथ होंगे तो इन्हें हमेशा शिव निर्माल्य खानेका अवसर प्राप्त होगा और तब हमारी योनिमें ये जन्म लेंगे। शिव-निर्माल्य, विष्णु-अंश और कच्चा पारा जो खाये वह निर्धन या कोढ़ी बने।

शंख बाजे बलाय भागे। दुश्मनके मुँह करिखा लागे।

[सर्वेश्वरी टाइम्सके लिये १५ मई, १९७० ई०]

—

रुद्राक्ष १८

अपने भक्तोंकी दृष्टिमें

बाबाके भक्तोंने बड़ी तत्परतासे अपने लेख भेजे हैं और यह प्रयत्न भी किया गया है कि प्रेसमें जानेके पूर्व तक जो लेख प्राप्त हो गये हों उन्हें छाप दिया जाय। यदि किसी कारण-वश लेख नहीं मिल पाये हैं तो उनके छापनेकी व्यवस्था नहीं की जा सकी है। कुछ भक्तोंने लम्बे लेख भेज दिये थे जिन्हें पुस्तकके आकार का ध्यान रखकर बाबाके सम्पादकत्वमें छोटा करना पड़ा है। बाबाके निर्देशसे उन लेखोंसे अनेक ऐसे अंशों को हटा देना पड़ा है जिनमें सिद्धियों और चमत्कारोंकी चर्चा विशेष रूपसे की गई थी। क्योंकि बाबाकी दृष्टिमें ये चर्चा रुचिकर नहीं थी और हम समझते हैं कि भक्त-लेखकगण इसको अन्यथा नहीं समझेंगे। निस्सन्देह भाषा, भाव या प्रवाहकी दृष्टिसे दोष-रहित होने पर भी लेखोंकी पुनरावृत्ति, विस्तृत विवरणसे बचनेके लिये और अधिक-से-अधिक संख्यामें भक्तोंके भावोंका समावेश करनेके लिये इसे संक्षिप्त करना पड़ा है।

कोई भी लेखक यह दावा नहीं करेगा कि बाबा सरीखे महापुरुष को उसने पूरी तरह जान लिया है। अतः जो भी विवरण दिया जाएगा वह अपूर्ण ही रहेगा। बाबा किनारामके शब्दोंमें :—

"जिन बूझा तिन बूझा नाहीं। अनबूझा तिन बूझा माँहीं।।
जिन जाना तिन जाना नाहीं। अनजाना सो जाना माँहीं।।"

इस प्रकार निश्चय करने पर आप इस बातसे सहमत होंगे कि गुरुपादपद्मोंमें जो कुसुमांजलि आपने अर्पित की है उसके भावका महत्त्व अधिक है और आकार का कम है। भक्तोंसे इन शब्दोंके साथ विनीत क्षमा-प्रार्थना पूर्वक उनकी दृष्टि को दिया जा रहा है। यह भी ध्यानमें रक्खा गया है कि देशके कोने-कोनेमें फैले बाबाके भक्त सभी जाति, वर्ग, एवं सामाजिक स्तरके हैं और उन सबकी भावनाओं को इस श्रद्धा-मालामें गूँथने का प्रयास किया गया है।

भौतिकतासे ओत-प्रोत इस जगतमें आध्यात्मिक चेतनाको जाग्रत करनेके लिये जितनी भी संस्थायें काम करें, कम ही हैं। परम श्रद्धेय श्री अवधूत भगवान रामजी आध्यात्मिक जगत् की एक महान् विभूति हैं। आपके निर्देशमें चलकर श्री सर्वेश्वरी समूह अपने लक्ष्यकी प्राप्तिमें पूर्ण सफल हो इस हार्दिक शुभ कामनाके साथ,

आपका आत्मस्वरूप
शिवानन्द
(स्वामी शिवानन्द)
संस्थापक एवं अध्यक्ष
दि डिवाइन लाइफ सोसाइटी
दिनांक १४-११-१९६२

(हिज हाईनेस भूतपूर्व) जसपुर नरेश श्री विजयभूषणसिंहदेव, सम्भवतः, मुझे पूरा-पूरा याद है कि सन् १९६३ में बाबाके साथ ही वे २४ घण्टे उनके सान्निध्यमें रहते थे इसी कारण श्री स्वरूपानन्दजीको महाराजाने पत्रों-द्वारा डाँट-फटकार प्रारंभ किया। क्योंकि पूर्वसे श्री देव करपात्रीजीके शिष्य तथा रामराज्य-परिषद्के अध्यक्ष थे। इन्हीं घटनाओं को लेकर तथा अवधूतजीके सान्निध्यके विरोधमें श्री स्वरूपानन्दजी ने महाराजसे कुछ पत्राचार प्रारम्भ किया। इसके उत्तरमें महाराज जसपुर नरेशने जो पत्र भेजा है उसका भाव इस प्रकार है। इस सम्बन्धमें जो पत्राचार हुए हैं वे आश्रम की फाइलमें आज भी सुरक्षित हैं। इन पत्रोंमें श्री स्वरूपानन्दजीने हमारी पुस्तकके चरित नायक पूज्यपाद अवधूत भगवान रामजी को घसीटा है। इसीलिये श्री देव द्वारा दिया गया उत्तर जो बाबाके श्रीचरणोंमें उनके दिव्य-भाव को प्रकट करता है नीचे दिया जा रहा है :—

"हमारे पूज्य गुरुवर अघोर-सम्प्रदायके हैं तथा प्राचीन-कालसे ही भारतमें वामदेव, विश्वामित्र एवं किनाराम आदि सन्त हुए हैं जिनके उदार सहिष्णु एवं विशुद्ध मानवतावादी दृष्टिकोणके प्रति प्रत्येक विवेकशील व्यक्ति अतीव श्रद्धा रखता है। श्रद्धेय गुरुवरके विचारोंमें इच्छानुकूल अपनी अभीष्टकी प्राप्तिके लिये ही धर्म एक साधनमात्र है। इसलिये धर्म या विचार को चमत्कार, प्रलोभन एवं तर्कपूर्ण पाण्डित्य प्रदर्शनसे दूसरों पर बलात् नहीं लादा जा सकता·········अवधूत भगवान रामजीका स्वभाव मुझे बहुत पसंद है और इसीलिये मैं उन्हें अपने परिवारका अभीष्ट, निकटवर्ती अंतरंग मान बैठा हूँ। उन्हें मैं रामराज्यका पोषक, समर्थक एवं हितैषी मानता हूँ। जरूरतसे ज्यादा परहेज करनेसे पतितपावनकी उपाधि ये जिससे कभी-कभी भगवान को सम्बोधित करते हैं, सार्थक नहीं होती। सर्वोत्तम, पुरुषोत्तम अथवा श्री सर्वेश्वरीकी पूजा और अभ्यास करना ही प्राणीका सनातनी लक्ष्य हो सकता है ऐसी हमारी धारणा है।

विजयभूषणसिंह देव
भू० पू० जसपुर नरेश

'गुरुदयाल दाता सकल गुरु समान केहु नाहिं।'

पूज्यपाद बाबाने सर्वदा हमारे सौभाग्यकी रक्षाकी है। हम सपरिवार बड़ी भाग्यशालिनि हैं कि माँ गुरुका असीम प्यार हमें प्राप्त हुआ है। बाबा भयावह नहीं अपितु सभी भयोंको नष्ट करने वाले सौम्य महात्मा हैं। हम सबकी रक्षाके लिए इनकी बड़ी लम्बी भुजा है। इनकी सिद्धियोंके बारेमें मैं भय वश नहीं कह सकती हूँ क्योंकि बाबा बराबर कहते हैं कि हमारे नामसे अन्य लोगों को प्रभावित न करो।

श्रीमती उषा देवी
धर्मपत्नी श्री विवेकानन्द सहाय
आई० ४८ जंगपुरा, नई दिल्ली।

बाबाकी कृपासे अनेकानेक चामत्कारिक घटनाएँ मेरे साथ घटी हैं। मैं दावेके साथ प्रमाण सहित कह सकता हूँ कि आप एक साधु ही नहीं बल्कि अद्भुत तेजोमय तपोमूर्ति हैं।

विद्याशंकर मिश्र
अदलपुरा, मीरजापुर।

आजसे करीब ५-६ वर्ष पूर्व व्रत इत्यादिका कोई अभ्यास न रहनेपर भी अष्टभुजी विन्ध्याचलमें नवरात्रके अनुष्ठानमें ६ दिन तक बिना अन्न-जलके रह गया। बाबाके भक्तके लिए उनकी कृपासे कुछ भी असंभव नहीं है।

गौरी शंकर शर्मा
कल्याणपुर दुर्गावती
रोहतास (बिहार)

मैं बाबाके कालीमठ नेपालकी यात्राओंमें एवं वहाँ के अनुष्ठानोंमें प्रायः रहा हूँ। वैसे तो प्रयाग, वाराणसी एवं जसपुरके आश्रमोंमें उनके साथ रहा हूँ। मुझे चतुर्वेदी जीका पत्र मिला कि बाबाकी जीवनी छप रही है। मुझसे भी अनुरोध किया गया कि मैं भी कुछ गुरु चरणोंमें अर्पित करूँ। उस पुस्तकमें क्या नहीं है? क्या नहीं होगा जो हमारी आत्माकी प्रतिमूर्ति गुरुदेवके लिए है। उसमें अब हम विशेष अपनी ओरसे सपनेका प्रदर्शन क्या करूँ? जहाँ अपना कुछ है।

प्रो० त्रिपुरारि शरण
सीतामढ़ी, मुजफ्फरपुर।

'जे न मित्र दुख हो हिं दुखारी' तिनहिं बिलोकत पातक भारी॥
श्री अवधूतजी एक सच्चे मित्र हैं।

विश्वनाथ सिंह
भोजूबीर, वाराणसी।

बाबा जी यदि प्रसन्न हो जायँ तो अमित वैभवों को दे सकते हैं, परन्तु यदि भक्तको समयकी परख हो तभी।

लल्लूसिंह एडवोकेट
वाराणसी

आज जब संसारमें सर्वत्र अन्याय, अत्याचार एवं भ्रष्टाचारका बोलबाला है और मानवता पीड़ित होकर कराह रही है, तो ऐसे समयमें ईश्वरने हमारे मार्ग-दर्शक के रूपमें अवधूत भगवान रामको इस धरा धाम पर भेजा है।

कु० मीनामिश्रा
हाजीपुर

'रामस्वरूप तुम्हार बचन अगोचर बुद्धि पर।
अबिगत अकथ अपार नेति नेति नित निगम कह॥'

बच्चन पाण्डेय
फतेहपुर

जब मैं ८ वर्षका था तो प्रथम बार महड़ौरा जो हमारे ग्रामके निकट है श्मशान पर बाबाके अद्भुत दर्शनका सौभाग्य प्राप्त हुआ। माता-पिताके डरवाने पर भी मैं चुपके-चुपके आपके सान्निध्यमें आता-जाता रहा। मुझे अच्छी तरह स्मरण है कि एक बार बाबा जब श्मशानमें साधनरत थे तो मेरे पहुँचने पर उन्होंने डाँट कर कहा, "भाग जा। दूसरे बार अईबत तोहराके बड़ा पीटब।" बाबाकी कृपासे अनेक चामत्कारिक घटनाएँ मुझे देखनेको मिली है। बाबा मेरे सर्वस्व हैं। मैं अपने को उनके श्री चरणोंमें अर्पित कर चुका हूँ।

हमारे एक निकट संबंधी संतू महाराज को किसीने शव-साधनाकी सलाह दी एक दिन आपने श्मशान पर एक मुर्दा पकड़कर समीपके नालेमें छिपा दिया जो बलुआ और काँवर ग्रामके बीचमें स्थित है। रात्रिमें संतू महाराज शवको खूँटेसे बांधकर साधनके लिये ज्योंही इसके ऊपर बैठे त्योंही दो भयानक भैंसे लड़ते हुए गंगाके पानीमें छपसे कूद गये। संतू जो इतने भयभीत हो गए कि वहाँसे भाग खड़े हुए और विक्षिप्त हो गए वे अपने मकान पर चढ़कर घबड़ाने लगे और भैंसा-भैंसा चिल्लाये। इनको काबू करनेके लिए इनके पैरमें काठका भारी टुकड़ा बाँध दिया गया था। इस घटनाके करीब एक साल बाद जब बाबा यहाँ पधारे तो संतू महाराज पूज्यपाद बाबा की कृपासे स्वस्थ हुए। डीहा यज्ञमें इन्होंने भाग लेकर इसे सफल बनानेमें सहयोग किया।

हृदयनारायण पाण्डेय
ग्रा० काँवर (महड़ौरा देवी)
चन्दौली, वाराणसी।

महापुरुष भक्तोंके हृदयकी बात स्वयं जान लेते हैं तथा उनके कल्याणार्थ आवश्यक उपचार भी कर देते हैं। मैं एक बार बाबाके दर्शनार्थ कुष्ठ सेवा आश्रम, पड़ाव गया। मेरी स्त्री उस समय अचानक अस्वस्थ हो गई थीं। मेरे कुछ निवेदन किए बिना ही पूज्य बाबाने लौंग दिया जिससे मेरी स्त्री स्वस्थ हो गईं। इसी प्रकार अनेक अवसरोंपर बाबाकी कृपाका अनुभव मुझे प्राप्त हुआ है। संत हृदय एक निर्मल आरसी है जिसमें समस्त जग प्रतिबिंबित होता रहता है।

एक नवरात्रमें मैं बाबाके साथमें श्री अष्टभुजा में उपस्थित था। मैं माँ का दर्शन पाने को लालायित था। चक्र-पूजाके उपरान्त बाबाके निवास-स्थान पर मैंने माँ का प्रत्यक्ष दर्शन लाभ कर अपने जीवन को धन्य माना। बाबाकी अभय एवं वरद् मुद्राएँ सबका कल्याण करें।

गुलजारीलालजी मोदी
कलकत्ता

'बाबा गुरु या माँ कहो, शक्ति कहो या शक्तिमान।
बिना मिटाये मैं का मय, को जानि सके मतिमान ॥'

बाबा उसी प्राणी को बोधगम्य तथा सुलभ हैं जिसके अनेक जन्मोंका सुकृत जाग्रत हों। हमारे परम ... गुरुदेव महाराज ... और महाशून्यमें विचरण करने

वाली अप्रमेय सत्ता हैं हम भी विधि-निषेधसे परे सद्गुरु-कृपापोतसे अभेद व्योममें संतरण करें। अघोर-मत जो समत्व और अभेदका प्रतिपादन करता है उसका संबल प्राप्त कर हम जीवन सफल कर सकते हैं। जहाँ समदर्शिता एवं समवर्तितका भाव है वहीं चरम उपलब्धि है। बाबा शिष्यत्वको गुरुतत्त्वमें संविलीन करते हैं और हमें अपने अगाध स्नेहसे प्रेरणा देते रहते हैं। सर्वेश्वरी निवासके प्रणवमय प्रांगणमें अणु-परमाणु तक गुरुदेवके प्रेम पाशमें आबद्ध हैं। हम परम सौभाग्यशाली हैं कि ब्रह्म-शक्ति और गुरु रूपमें बाबा हमें दर्शन दे रहे हैं। गुरुपीठ ज्ञानपीठ है। वे अबोधसे प्रकाण्ड विद्वान तकको मार्ग दर्शन करा रहे हैं। श्री मुखसे निःसृत अमृतमयवाणीके अनुपानसे पथ्यका लाभ होगा और जीवन परिष्कृत होकर उर्ध्वगामी बनेगा। ओ प्यारे! प्रमाद न कर कल्पद्रुमकी शीतल छायाके तले आ जा। बाबामें एक साथ विराट और समान रूपका दर्शन मिलता है। चरणोंमें खोजाने पर कुछ कर्म शेष न रहेगा। वह अव्यक्त अविषय हैं अतः अन्तकी क्षमता किसमें हैं। बस समर्पण ही अपना है यह ध्यान रहे कहिअतात सो परम बिरागी। तृन सम सिद्धि तीन गुनत्यागी।' यदि विरागी होना है तो इसका मनन करना चाहिये।

राजेन्द्र सिंह
ग्राम शाहडीह
चोलापुर, वाराणसी।

सन् १९६४ ई० की वात है मैं उस समय प्रान्तीय-रक्षक दलमें सेवाकर रहा था। उपासना की प्रवृत्ति तो ७ वर्ष की अवस्थासे ही थी। कर्म करते रहना अपना अधिकार मानता था पर आत्म-निर्भर नहीं हो सका था। मुझे बार-बार मृत्युभय झकझोर देता। मुझे वह शक्ति नहीं प्राप्त हो रही थी जो नचिकेताने मृत्युञ्जयी ज्ञान-न्यायाधीश यमराजसे प्राप्त किया था। मेरे पास कमी थी गुरु की, सच्चे मार्ग-दर्शक की। संयोगवश मैं श्री गिरिजाशंकरजोसे मिला। उनके आदेशानुसार मैंने अवकाश लिया और उनके साथ वाराणसी कुष्ठ सेवाश्रम पर आया। वहाँ गुरुपूर्णिमा का महोत्सव मनाया जा रहा था। उन्होंने मुझे श्री सर्वेश्वरी समूहका परीक्षात्मक सदस्य बना दिया। पूज्य बाबाका दर्शन और परिचय कराया।

गुरु-पूर्णिमाके अवसर पर अक्सर मैं वहाँ चला जाता हूँ और महोत्सवमें सम्मिलित होकर पूरे कार्यक्रमका अनुशीलन करता हूँ। वहाँ देशऔर विदेश के बड़े-बड़े मन्त्री और विद्वान् इकट्ठे होते हैं जो पूज्य बाबा की कृपाका सहारा पाकर अपनेको कृतकृत्य मानते हैं। भले ही कोई विश्वास न करे पर हमारी अनुभूति है कि शक्ति आज भी विघटन और पतनोन्मुख सृष्टि को सन्मार्ग दिखानेके लिए, कर्त्तव्यरूपी धर्म का यथार्थ ज्ञान करानेके लिए, मानव को मानवसे ही नहीं अपितु समस्त जड़-चेतन जीवसे परिचय करानेके लिए, असमर्थों की सेवाकर आत्मतोष रूपी पुण्य लाभ बताने, ठुकराये हुए को गले लगाने और प्रेम-पाठ पढ़ानेके लिए अवधूत वेश धारण कर अवतीर्ण हुए हैं जिसकी आज अतीव आवश्यकता है। अब मैं दीक्षित हूँ और कर्त्तव्य रूपी धर्म का पालन करनेमें एक विशेष प्रकार का आनन्द आता है। न मैं पहले

कुछ था न आज ही हूँ फिर भी पूज्य बाबा द्वारा अपनाए जाने पर "मैं हूँ" और किसी का होकर हूँ यह सबसे बड़े गर्वकी बात है और यही सब चाहते हैं।

रामप्यारे पाण्डेय 'तरंग'
ग्राम–पूरे मेड़ई तिवारी
डाक–तितलोई
जिला–रायबरेली

प्रथम दर्शनसे ही एक अजीब शीतलता तथा आन्तरिक सन्तोषका भाव प्रकट हुआ। दो-एक दिन जानेके बाद आदेश हुआ कि अपना काम करो। भाग्यवश एक नौकरी मुझे जनवरी, १९५७ ई० में मिल गई। अपने काममें तन-मनसे जुट गया। अपने गुरुदेवको एकदम भूल गया। सन् १९६१ ई० में हमारे कार्यालयमें एक निमंत्रण पत्र मिला। राजघाट पड़ाव पर औघड़ बाबाके आश्रमके नामसे शामको करीब ४ बजे वर्तमान आश्रममें आया। बाबाका साक्षात्कार होते ही पुनः स्मृतियाँ जाग्रत हो उठीं। उसी समयसे बराबर हर गुरु-पूर्णिमा पर दर्शद करने आने लगा।

इसके उपरान्त सन् १९६७ ई० को गुरुपूर्णिमा को बाबाके निकट आनेका प्रयत्न करने लगा। इस वर्ष कुछ दिनों तक नित्य शाम को आता रहा। इसी बीच श्रीसर्वेश्वरी समूहके प्रति उसके आदर्शोंके प्रति मनमें निष्ठा जगी। समूहके आदर्शोंका अति निकटसे सूक्ष्म अध्ययन करनेसे अन्तः में कुछ एक अजीब-सी अनुभूतियों का प्रादुर्भाव हुआ। बाबाके विचारों को पहले अपनेमें उतारनेका प्रयत्न करता रहा। समय की गतिके साथ धीरे-धीरे सभी बातों का समाधान अपने आप मिलने लगा। कभी-कदार सरकारसे छोटे-छोटे प्रश्न भी करता रहा।

अब इन दिनों सरकार की कृपा तथा छत्र-छायामें मैं अपने को निःशंक निर्लोभी, स्वतन्त्र एवं सुखी अनुभव कर रहा हूँ। समाज-धर्म ईश्वरके प्रति पूर्ण आस्थाके साथ इस संसारमें विचरण कर रहा हूँ।

अब उन्हीं लोगोंसे जिन्हें मुझे घृणा-द्वेष था आज उन्हीं लोगोंके प्रति आदर-सम्मान का अनुभव कर रहा हूँ। अपने पुण्य ग्रन्थ सफलयोनिके नियमों का प्रत्यक्ष रूप अपनेमें पाकर अपने पूज्य गुरु माँ के प्रति शत्-शत् बार नमन करता हूँ कि इन्हींकी कृपासे आज अपनेमें पूर्ण रूपसे सन्तुष्ट हूँ। अपने कर्त्तव्योंके प्रति सजग और जागरूक हूँ।

अपनेमें इन परिवर्तनों को ही सरकारके सान्निध्य का चमत्कार समझूँ या क्या ? इसे पूज्य सरकार ही जानें। पुराने इतिहासोंके अध्ययन करनेसे विभिन्न युग-पुरुष, सुधारकों, अवतारों की जानकारी थी, अपन वर्तमान युग-पुरुष माँ गुरु को समाजके विभिन्न क्षेत्रोंमें देखने पर ऐसा आभास हो रहा है कि इस समय विभिन्न परिस्थितियोंसे पीड़ित मानव जाति को त्राण देनेके लिये ही महाप्रभु का इस संसारमें आविर्भाव हुआ है।

वर्तमान समयमें हमारा देश विभिन्न धर्मों, सामाजिक व्यवस्थाओं, अस्पृश्यता जैसे घृणित वातावरणमें पल रहा है। इससे निवृत्ति पानेके लिये समूहके वर्त्तमान

आदर्शों का पालन करते हुए पीड़ित मानवता, देश की समृद्धि, विश्व-बन्धुत्व को साकार रूप दिया जा सकेगा। पूज्यपाद गुरुदेव को जहाँ तक मेरी बुद्धिमें आया है, एक उच्चकोटिके समाज-सुधारक, पीड़ित मानवताके त्राण दाता, विशुद्ध विचारक एवं मनीषीके रूपमें पाया है।

मेरा जन्म एक कट्टर वैष्णव ब्राह्मण कुलमें हुआ है। उन दिनों जब मुझे सरकार का प्रथम दर्शन हुआ था, तो रोजी-रोटीके चक्करमें था, संसारके नाना प्रपंचोंसे ऊबा हुआ था। इसी प्रथम दर्शनमें मुझे सरकारने माँ जैसी सान्त्वना तथा एक टुकड़ा रोटी का दिया। मन अन्दरसे आत्मविभोर हो उठा। सरकारके दिये हुए टुकड़ेके प्रभावसे एक अच्छी-सी रोजी लग गयी। आनन्द-पूर्वक दिन व्यतीत करने लगा।

कुछ दिनों तक भयानक सियाटिका रोगसे ग्रसित हो गया, चलना-फिरना दूभर हो गया। डाॅक्टरोंके चक्करमें काफी धन भी व्यय हुआ लेकिन कुछ भी असर नहीं हो रहा था। कुछ दिनों बाद सरकारने पूछा कि पाण्डेजी "लंगड़ा के काहे चलत हउव।" अपनी दशा को बताया। ठीक माँ जैसी एक छोटी फटकार मिलते ही हमें ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे सारे शरीरके बन्धन, जो जकड़े हुए थे, खुल गये। और चन्द दिनोंमें स्वस्थ हो गया।

सर्वप्रथम जो रोजी मिली थी, उसका एकाएक समापन हो गया। एक अजीब परेशानी पुनः आ खड़ी हुई, मेरी स्थिति ऐसी थी कि काशी छोड़कर अन्यत्र नहीं जा सकता था। सरकारने कहा इसी काशीमें प्रबन्ध हो जाएगा। नौकरी की तलाश भी नहीं करनी पड़ी, एक विद्या-मन्दिरमें मुझे अपने-आप बुलाया गया और वहाँ कई वर्षों तक कार्य करता रहा। पुनः पुराना विभाग खुलने पर काशीमें ही काम कर रहा हूँ।

शिवबली पाण्डेय
ग्राम—बरैछे
पो०—चन्दवक
जि०—जौनपुर
(उ० प्र०)

अगस्त, १९६४ ई० में महाप्रभुका प्रथम दर्शन श्री आर.के. सिंहके निवास-स्थान पर हुआ था। उनके घर पर रोज सत्संग होता था और उस सत्संगमें मैं बराबर जाता था इसीके साथ ही अघोर-मत की प्रेरणा मुझे इन्हींसे प्राप्त हुई थी। इसके पूर्व मेरे आचार-विचार वैष्णव धर्मके थे। मैं उसी समय श्री सर्वेश्वरी समूह का सदस्य बन गया।

महाप्रभु का सारा समय मानव-कल्याणमें व्यतीत होता है, उन्हीं की करुणा से सदैव वे द्रवित रहते हैं। कोई भी उनके पास जाता है वे उसके हो जाते हैं। महाप्रभु के पास सभी धर्म-जाति एवं राष्ट्रके व्यक्ति सेवामें रहते हैं। यहाँ किसी जाति-पाँतिके आधार पर व्यवहार नहीं किया जाता। यहाँ पर केवल भाव है और उसी का महत्त्व है।

सिद्धान्त और व्यवहार का समन्वय प्रत्यक्ष है, इन्हीं आधारों पर मैं कह सकता हूँ कि महाप्रभु एक युग पुरुष हैं जिनके द्वारा भारतवर्ष की पीढ़ी एक नया मोड़ ले रही है और अपने गौरव को पुनः प्राप्त करेगी। हमारा जीवन इसी से प्रभावित है।

बाबा क्या हैं ? यह तो वह स्वयं ही जानें जिसको वह जितना अनुभव करा दें वह उतना ही उनके विषय में जान सकता है। महाप्रभु का प्रेम इतना है कि जो व्यक्ति उनसे सच्चे मन से नेह लगाएगा उसमें उनकी शक्तियों का स्फुरण उतना ही होता है जिसका अनुभव उनके भक्तों को होता रहता है इसीलिए कठिनसेकठिन स्थितिमें भी हमलोग आनन्दमय रहते हैं।

अयोध्या नाथ त्रिवेदी
टेढ़ीगली-फैजाबाद।

पतित पावन भगवान शङ्करकी प्रिय पुरी काशीके आस्तिक अग्निहोत्री परिवारके पण्डित यज्ञ नारायण चतुर्वेदी दीक्षित सुहृद हैं। इन्हींकी कृपासे सरकारके दर्शनका सौभाग्य मिला। बाबा या सरकार दोनों ही सम्बोधन मुझे तो अपनेमें पूर्ण लगते हैं। बाबा हमारे परिवारके पूज्य, प्रिय और सतत रक्षक एवं मार्ग-दर्शक हैं। बाबा काशीके प्रतीक और आस्तिक भक्तोंके सम्बल हैं। "सन्त जन निसदिन देबो ही करत हैं।" के आदर्श-रूप बाबा और क्या हैं ? यह तो सत् चिदानन्द-रूप वह स्वयं जानें। यही अभिलाषा है कि बाबाकी कृपासे उनके सान्निध्यमें आनेवाले सभी भक्त चिदानन्द स्वरूपका साक्षात्कार करनेमें समर्थ हों आत्म और देश कल्याणके अधिकारी बनें।

शिव कुमार शास्त्री वैद्य
धनवन्तरि निवास, सुड़िया
वाराणसी।

अवधूत भगवान रामजी सर्व प्रथम हमसे मनिहरा पोखराके पूरब भीटा पर बैठे हुए मिले। देखते ही हमको यह मालूम हुआ कि यही हमारे गुरु हैं। बाबा जब मनिहरामें आए तबसे ही तीन शब्द उनके मुखसे प्रायः निकला करता था। मानव मात्रको गुरु कह कर वे पुकारा करते थे और मधुकरीके समयमें माँ रोटी दे, सब नारी मात्रको माँ-माँ कहकर वे पुकारा करते थे :—

'संगत से गुण होत है, संगत से गुण जाय।'

प्रश्न यह है कि बाबाके संगसे हमें क्या लाभ हुआ ? हम तामसी वृत्तिके आदमी रहे, झगड़ा करना, चोरोंका साथ करना, पुलिसकी गवाही करना, दूसरे को मार-पीट कर दुःख देना, किसीका खेत कटवा देना, बैल छुड़वा देना, बदमाशोंका संग करना इत्यादि हमारा काम रहा है। गुरुके संगसे हमारा यह लाभ हुआ कि कुरीति-दुर्व्यवहार, कुदृष्टि सभी वासनाएँ जो कि मनकी आवाज सुनकर प्रकट होती थीं वे सब समाप्त हो गयीं। अब हमारे मस्तिष्कमें अच्छी वायु प्रवेश करती है। भौतिक सभी कल्याण पुत्र, वित्त, यश ये सभी प्राप्त हैं, भौतिक कल्याण होते हुए भी आध्यात्मिक शान्ति मिल रही है।

हमारा एक पुत्र सुरेन्द्र बाबाकी सेवामें पड़ वपर ही ऑफिसमें रहकर बाबाके आदेशका पालन करता है। तत्काल ऑफिस का कार्यभार उसीके हाथमें है।

श्यामधाता सिंह
ताजपुर, वाराणसी।

'सुनि गुरु के भ्रम भंजन बचना। मिट गई सब कुतरक कै रचना ।।'

इस अल्प वंयने मेरी आध्यात्मिक दृष्टि दूरगामिनि नहीं है। इस पावन क्षेत्रमें आज भी मैं स्वयं को एक अबोध शिशुके रूपमें पाता हूँ। साधु-सन्तोंके प्रति सहज-निष्ठा, ईश्वरकी सत्ता एवं महत्तामें दृढ़ विश्वास, अपने द्वार पर आगत अतिथिकी सेवा, सभी व्यक्तियोंके साथ नैसर्गिक मानवोय व्यवहार, प्राणिमात्र को कष्ट नहीं पहुँचानेका विचार आदि सद्गुणोंका समावेश मुझमें श्री चरणोंके अनुक्रोश तथा सद्गुरुदयालके पावन सान्निध्य मात्रसे ही प्राप्त हुये हैं। विगत बीस वर्षोंसे मेरे परिवारका प्रत्येक व्यक्ति श्री चरणोंका सान्निध्य प्राप्त कर रहा है। उस अशरण-शरण, करुणा-वरुणालय के अनुक्रोशसे मैं विनय पूर्वक इस बातका सबक दावा करता हूँ कि मेरे परिवार के प्रत्येक सदस्यमें पीड़ित मानवताकी सेवा करनेकी उत्कट अभिलाषा है।

मैं अपने अघोरेश्वर को, प्रातः स्मरणीय पूज्य गुरुदेव को ईश्वरके साकार रूप तथा महान समाज सेवी, महापुरुषके रूपमें देखता हूँ। अपने प्रातः स्मरणीय गुरुदेवसे बद्धांजलि प्रार्थना करता हूँ कि मुझमें आप ऐसी शक्तिका संचार करें जिससे मैं परोपकारके मार्ग पर निरन्तर बढ़ता जाऊँ।

विजेन्द्र नाथ शाही
सोनपुरा

श्री गुरुदेवके सान्निध्यमें आनेका सौभाग्य मुझे १४-५-७० को प्राप्त हुआ। उनकी सरलता, मृदुलता, अपनत्व, प्यार, विशाल हृदयताने मुझसे प्रथम भेंटमें ही आत्म-समर्पण करवा लिया। मेरा निश्चित मत है कि उनकी कृपासे मूक, वाचाल और मूर्ख भी ज्ञानी हो जाता है। उनकी महती कृपासे मुझे सोगड़ा आश्रम जसपुरमें दिव्य ज्योतिका दर्शन मिला है। एक समयमें एक जंगली क्षेत्रमें मैंने उनकी उपस्थितिमें मन-ही-मन पान खानेकी इच्छाकी। तत्काल एक भक्तने अपने पानके डिब्बामेंसे बाबाको पान देना चाहा और उन्हींके संकेत पर मुझे पान मिला, वाञ्छाकल्पतरुकी इस लीलापर पुलकित हो मैं अपनी मानसिक-याचना पर लज्जित भी हुआ। बाबा विदेश गये थे किन्तु नवरात्र पूजनमें मुझे अत्यन्त चामत्कारिक अनुभूतियाँ हुईं जो गोप्य है। यद्यपि बाबा को युग प्रवर्तक, धर्म प्रवर्तक और समाज सुधारक कहा जाता है किन्तु मेरे मतमें इतना ही कहना अपर्याप्त है वे इससे भी बहुत अधिक हैं। मैं अपने आत्म-समर्पणके साथ ही इन शब्दोंको मां गुरुके चरण कमलोंमें सादर समर्पित करता हूँ।

सूर्यप्रसाद, सिविल तथा सेशनजज, फर्रुखाबाद

मैं किनाराम स्थल जाया करता था। बाबाका प्रथम दर्शन मुझे बाल-रूपमें वहीं हुआ। कुछ समय बाद बाबा हरिहरपुर चले गये। जहाँ वृहद यज्ञ का अनुष्ठान

हुआ। मैं भी यज्ञमें शरीक हुआ। यज्ञ की पूर्णाहुतिके बाद वाराणसी आये और राय पनारू दासके बागमें रहने लगे। मैं वहाँ बाबाके दर्शनके लिये प्रतिदिन जाने लगा। एक दिन सौभाग्यसे श्रीचरण मेरे घर पड़े। मेरी प्रथम पत्नी उन दिनों उदर रोगसे पीड़ित रहती थीं। चलने-फिरनेमें असमर्थ थीं। मैंने सरकारसे अनुनय-विनय किया कि एक सज्जन चलने-फिरनेमें असमर्थ हैं और आपका दर्शन करना चाहते हैं। बाबाने पूछा वे कौन हैं? हमारे पास ही खड़े छेदी सावने बताया कि मेरी धर्मपत्नी हैं। इसपर बाबाने मुझे एक बीड़ा पान दिया और कहा कि उन्हें ले जाकर दे दो और कहना किं किसी अधम पापीने दिया है। मैंने पान ले जाकर अपनी धर्मपत्नी को खिला दिया और पुनः बाबाके पास आया तो उन्होंने पूछा कि बाल क्यों रखे हो? मैंने उत्तर दिया कि सरकार शौकिया रक्खा हूँ। आज्ञा हो तो कटा दूँ। बाबाने कहा नहीं अभी नहीं। जाओ फिर कटवा लेना तो मुझसे मिलना। इसके बाद डेढ़-दो माह तक बाबाका दर्शन नहीं हुआ। इस बीच मेरी धर्मपत्नी का स्वर्गवास हुआ और सिर मुड़ानेके बाद ही बाबाका दर्शन हुआ, तब उनकी बात समझमें आयीं।

जय हो बाबा भगवान राम

प्रथम पत्नीके स्वर्गवासके बाद हमारी दूसरी शादी तय हुई। बारात चली। बारातमें आगे-आगे बाबा भी हाथी पर आसीन होकर चले। श्रीचरणोंके दर्शनार्थं बड़ी भीड़ लगी। वधू-पक्ष घबड़ाया पर उनकी कृपासे सबका यथोचित आदर-सत्कार हुआ। इस शादोके कुछ महीने बाद ही एकबार मैदागिन धन्नूसाहु की दुकान पर सरकार बैठे थे और सभी को प्रसाद-रूपमें इलायची बांट रहे थे। मैंने भी प्रसाद मांगा पर मुझे इलायची देनेसे बाबाने इन्कार कर दिया। मैंने कारण पूछा तो उन्होंने कहा—जाओ तुम्हारी यह स्त्री भी चल बसेगी। मैंने सरकारसे निवेदन किया, आप पहले ही क्यों नहीं बताये बाबा? तो उन्होंने कहा कि तुम मुझसे पूछे कि हम बतावें। इसके कुछ ही दिनों बाद मेरी दूसरी स्त्री भी बीमार पड़ीं और चल बसीं। उनका अन्तिम संस्कार पूरा नहीं हुआ था कि हमारी एकमात्र पुत्री भी बीमार पड़ी। बड़ी चिन्ता हुई। बाबा उन दिनों हरिहरपुर रहते थे। अनुनय-विनय पर वाराणसी आये तो निवेदन किया कि सरकार! यह तो आपकी दी हुई अमानत है, इसे आप बचा लें। बाबाने कहा कि क्या करोगे बचाकर बड़ा रुपया लेगी? मैंने कहा कि बाबा इसे बचा लें, माताजीके लिये खिलौना है। बाबाने इसपर कहा कि अच्छा बकरी का दूध वगैरह पिलाओ, हम बनारसमें ही रहेंगे। कहीं जायेंगे नहीं, पर वह नहीं बची, प्रातः ही चल बसी। उधर बाबासे हमारे मित्र श्री रमाशंकरजीसे भेंट हुई तो उन्होंने कहा कि कहो, माँ-बेटी का मिलन हो गया। उन्होंने कहा हाँ।

इन घटनाओंके बाद मैंने निश्चयकर लिया कि चाहे जो कुछ भी हो, मैं भी न रहूँ फिर भी आपका साथ नहीं छोड़ूँगा। मैंने हरिहरपुर जाकर दीक्षा ली। शादी भी नहीं करने का इरादा था। पर लोगोंके बहुत कहने पर बाबाकी अनुमति से मेरी तीसरी शादी हुई और हरा-भरा घर आबाद हुआ। उन्हीं दिनों एक दिन मैं विश्वनाथ मन्दिरसे बाबाके साथ रिक्शेपर आ रहा था। मैदागिन पर एक भिक्षुक मिला।

उसको भी बाबा रिक्शेपर बैठा लिए और पूछे क्या चाहिये? उसने कहा गाँजा। तब तक हमलोग राय पनारू दासके बगीचेमें पहुँच गये। वहाँ पहुँचने पर बाबाने पूछा बोलो कितना गाँजा पीओगे। उसने कहा जितना पिलायेंगे उतना पीयेंगे। इसपर बाबाकी आँखें लाल हो गयीं और उन्होंने कहा कि तुम्हारे घरवाले रो रहे हैं और तुम साधु बनने चले हो। इतनेमें हमलोगों को आज्ञा मिली कि इसको खम्भेमें बाँध दो। जब हमलोगोंने खम्भेसे बाँध दिया तो बाबाने कहा कि इसने अपने गुरुकी लड़की का शील-भंग किया है। इसके शरीरमें कुष्ठ है। इसका कपड़ा उतारो। कपड़ा उतारा गया तो उसके शरीरमें कुष्ठके दाग देखने को मिले। इतना कहना था कि उसने शिर लटका लिया और अपनी गलती स्वीकार किया। बाबाने उसे पुनः छोड़वा दिया और घर जानेके लिये कहा।

जय हो बाबा भगवान राम
डॉ० शिवमूर्तिलाल
दारानगर, वाराणसी।

राजा श्री नागेन्द्रनाथ शाही जो हमारे पिता तुल्य अग्रज थे, उन्होंने डाल्टेन गंजमें एक दिन बातचीतके सिलसिलेमें बोले कि मुझे तो साक्षात् शिवशक्तिसे दर्शन हो गया है। संयोगसे कुछ ही दिनों बाद उस महान् शक्ति का आगमन परम भक्तमय अग्रजके यहाँ हुआ। मैं भी दर्शनार्थ गया श्रीचरणोंके दर्शन पाते ही धन्य हो गया हृदयमें अटूट श्रद्धा एवं आकर्षण का भाव मालूम हुआ। उन दिनों मैं पुत्र विहीन सदा खिन्न रहा करता था। हमारे अनुनय-विनय पर बाबा हमारी कुटियामें एक समय प्रसाद ग्रहण किये और आशीर्वाद रूपमें हमें दो पुष्प दिये। महाप्रभु की कृपासे ठीक साढ़े दसवें महीनेमें मुझे पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई एवं उस बच्चे का जन्म उसी स्थान पर हुआ जहाँ बैठकर बाबाने प्रसाद ग्रहण किया था। उसी समय मेरे हृदयमें अनुभूति पैदा हुई कि यह गुरुप्रसाद एवं श्रीचरणों की कृपा है।

आजसे तीन साल पहले मेरी कमरमें ऐसा दर्द हुआ जिसे मैं बर्दाश्त न कर सकता था। साथ ही पेशाबमें खून आनेसे मैं काफी भयभीत था। डॉक्टरोंने किडनी स्टोन बताया एवं निर्णय दिया कि बिना ऑपरेशनके यह रोग दूर नहीं हो सकता। एक रात असह्य दर्द होने लगा। अतः मैंने प्रार्थना की कि हे गुरुदेव ! यदि चरणोंमें शरण न हो तो मौत ही दे दें। इतना मनमें आते ही रोमांच हुआ शीघ्र ही मैंने अपनेसे कुछ ऊपर एक विचित्र प्रकाशित चक्र घूमते हुए देखा जिससे अजीब-अजीब चिनगारियाँ निकल रही थीं। इस स्थितिके बाद ही मुझे हल्कापन एवं शान्ति मिली। धन्य है श्रीगुरुदेव का वह शुभ-दर्शनचक्र जिसकी कृपासे मैं आजतक स्वस्थ हूँ।

मेरा अनुभव है, मानव जब दुःख या सुखमें जब कभी भी अपना हृदय स्वच्छ कर उस अवधूत भगवान राम रूपी आत्मारामको पुकारता है तो वह प्रेमी भक्त कहीं भी किसी भी अवस्थामें या किसी भी ग्रहके सामने हो या किसी देव-मन्दिरमें हो वहाँ हर जगह, हर समय वही अवधूत भगवान राम रूपी आत्मारामको देखता है एवं आशीर्वाद पाकर भवसागर पार कर जाता है। सांसारिक सुख-दुःखकी बदलना

तो उस सर्वशक्ति माँ की नित्य-क्रीड़ा है। धन्य है हमारी भारत-भूमि जो समय-समय पर ऐसे महारथियों को पैदाकर विश्व-शांति एवं मोक्ष दिलाती है। अतः हमारा कर्त्तव्य है कि हम सब एक पथ-गामी हों एवं माँ सर्वेश्वरी की ध्वज-छाया तले अपाहिजों, लाचारों की सेवा कर एवं हृदय स्वच्छ कर उसी राममें मिल जायँ।

व्यापता देखना हो रेडियो संचार की तरह तो औघड़ साधकोंसे साथ करें।

पटइत दुर्गेन्द्रनाथ शाही
सोनपुरा रियासत पलामू-बिहार

श्री गुरु चरणोंके विषयमें कुछ बातें लिखना सूर्यको दीपक दिखानेके सदृश है। उस ब्रह्म शक्तिके विषयमें एक साधरण मानव क्या लिख सकता है? माँ सर्वेश्वरीके ज्योति पुञ्ज या यों कहा जाय कि माँ ही मानव रुपमें जीवोंको नया रास्ता दिखानेके लिये अवतरित हुयी है जिसमें करोड़ों ब्रह्माण्ड समाया है।

उस करुणामयी माँके दर्शन मुझे १०-११ वर्ष पहले हुए। उस समय मेरे पेटमें एक रोग था। पाखानेके रास्ते खून और मवाद बराबर आता था। बहुत दवा भी किया परन्तु अच्छा नहीं हुआ। सरकारके पास बराबर जाया करता था परन्तु भय या संकोचवश कहता नहीं था। परन्तु अन्तर्यामीसे छिपा ही क्या था? ऐसे ही एक दिन शामका समय था। महाप्रभु आश्रमपर विराजमान थे। प्रणव हुआ एवं किसीके विषयमें चर्चा चलने लगी। उसके प्रति सरकारने कहा कि कहीं उसको कैंसर न हो जाय।

मुझे ऐसा लगा कि कहीं मुझे ही कैंसर न हो गया हो क्योंकि प्रभुकी बातें ऐसी निकलती हैं कि वह अनेक व्यक्तियों पर लागू होती हैं। दूसरे दिन सरकारके सम्मुख गया। सारी बातें खोलकर कहा। श्रीमुखसे आशीर्वाद मिला जाओ ठीक हो जाओगे। उसके बादसे आज तक मैं निरोग एवं पूर्ण स्वस्थ हूँ। पूज्य गुरु देवकी कृपासे मेरे अनेक पारिवारिक ताप दूर हुये जिनकी स्मृति मात्रसे रोमांच पूर्ण श्रद्धा पैदा हो जाती है।

सुरेन्द्र सिंह
बस्ती

बाबाके सान्निध्यमें रहकर उनके चामत्कारिक घटनाओंके आधारपर मैं यह कह सकता हूँ कि सरकार को किसी सेवकसे यदि मिलना या उसे मिलना होता है तो वे तरह-तरहके साधन द्वारा अपने तक बुला लेते हैं। मेरा यह सुदृढ़ विश्वास है कि भगवान राम अन्तर्यामी हैं।

नर्वदेश्वर प्रताप देव
पलामू

नर्वदेश्वर प्रताप देव नगर उटारी श्री सर्वेश्वरी समूह शाखाके मंत्री हैं और बड़ी सम्पत्ति लगाकर वहाँ उन्होंने एक औषधालय की स्थापना की है जो श्री सर्वेश्वरी समूह की तरफसे सञ्चालित होता है।

सन् १९५६ ई०की बात है भैरो कुंडके पास सुन्दर तपोमूर्त बालकका दर्शन हुआ। उनके आदेश पर हमने दुर्गा सप्तशतीका पाठ सुनाया। इसके एक साल बाद विन्धाचल दर्शन-हेतु गया। बाबाकी अवस्था २१ वर्ष की थी उन्होंने अष्टमी पूजनके बाद वहाँसे जानेके लिए कहा। चूँकि मेरी पत्नीका प्रसवकाल निकट था मैं उनकी आज्ञा अनसुनी करके भाग निकला, पर और थोड़ी दूर पर बिच्छूके डंक सा कुछ पैरमें चुभा इसलिए लौट आया और बाबाने जैसा कहा था पूजन करके घर लौटा और नौ महीने बाद मुझे पुत्र उत्पन्न हुआ। सन् १९६३ माघमेलाकी बात है उनके पैरोंमें चिपटकर मैं बोल रहा था आप अवतारी पुरुष हैं इसपर भगवान बोले कि जिस दिन मैं समझूँगा कि मैं अवतारी हूँ उसी दिन मैं पागल हो जाऊँगा। बाबाने कहा बेवकूफीकी बात न करो, जाओ काम करो।

विद्याधर शुक्ल
भागलपुर

लगभग चार-पाँच वर्ष पहले मुझे प्रथम बार गुरुदेव के दर्शनका सौभाग्य प्राप्त हुआ। उनके मधुर-कोमल वचनामृत तथा उनके देवी अलौकिक व्यक्तित्वसे प्रभावित हुआ। श्रीमुखकी आज्ञासे कतिपय प्रार्थनाओं एवं स्तुतियोंका संकलन मैंने किया जो श्री सर्वेश्वरी समूहकी कृपासे भजनावलीके नामसे प्रकाशित हुई। मैं समझता हूँ कि समस्त दुखी एवं संतप्त मानवताके दुखों एवं संतापो को दूर करने तथा उनको मां सर्वेश्वरीके प्रति उन्मुख करानेके लिए ही महा प्रभुने उक्त पुस्तिका लिखवायी।

रमा शंकर प्रसाद एडवोकेट
वाराणसी

अघोरेश्वर महाप्रभु अवधूत भगवान रामका सर्व प्रथम दर्शन कुल्हरिया जो सोन नदीके तटपर स्थित है में हुआ। एकबारकी घटना है बाबाने मुझे उपदेश देते हुए कहाकि जिस मनुष्यका चरित्र ठीक नहीं है वह सबसे नीचा है। प्रत्येक व्यक्तिको अपनी नैतिकता पर ध्यान रखते हुए आगे बढ़नेका प्रयास करना चाहिए। जो नैतिकतासे दूर है उसका जप, पाठ, पूजा सब व्यर्थ है। मौन रहकर जप करो इससे नई-नई अनुभूतियोंका अनुभव होगा।

'सुधा सराहिय अमरता, गरल सराहिय मीचु' वह सुधा हैं ।।

डॉ० शिवपूजन पाण्डेय
शाखा मंत्री
सकडी, आरा

प्रथम दर्शनके बाद ही बाबा मनोकामना पूर्तिमें कल्पवृक्ष, वात्सल्य प्रेममें ममतामयी माँ, कष्ट निवारणमें संकट मोचन, व्यावहारिक दृष्टिमें निकटतम स्वजनसे दीखने लगे थे। दीक्षा लेने के बादसे तो मुझे ऐसा महसूस होता है जैसे वे मेरे लिये ही सब कुछ करते हैं मेरे मनमें जो भी सम्भव-असम्भव इच्छा उत्पन्न होती है तत्काल आश्चर्यजनक ढंग से पूरी हो जाती है।

मेरी समझ से हमारे गुरुदेव आशुतोष आत्मकाय अवधूत भगवान राम एवं गीता के भगवान श्रीकृष्णमें कोई अन्तर नहीं है। जिनके स्मरण मात्रसे इच्छित फल प्राप्त हो-भला ईश्वर का स्वरूप उससे अलग क्या हो सकता है।

जय हो सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान आशुतोष आत्मकाय गुरुदेव की ?

डा० ए० कुमार सिंह
अहरौरा

सन् १९६७ में गुरुपूर्णिमाके पुनीत अवसर पर मुझे पूज्य बाबा के दर्शन का प्रथम सौभाग्य प्राप्त हुआ। प्रथम मुलाकातमें ही मैं उनकी ओर आकर्षित हो गया। मैंने चक्रार्चनमें जब बाबाके साथ भाग लिया तो अद्‌भुत एवं अवर्णनीय अनुभव प्राप्त हुआ। यह नवरात्र का शुभ अवसर था। बाबाका कुरीतियों एवं रुढ़िवाद को समाप्त करने के संदेश ने मुझे बहुत प्रभावित किया है। बाबाकी कृपाके लिए मनकी शुद्धि अत्यावश्यक है। गोस्वामी जी ने लिखा भी है :—

'मन मलीन तनु सुन्दर कैसे। विषरस भरा कनक घट जैसे ।।'

मलीन मनवाले चाहे वे कितने ही सुन्दर धनवान एवं विद्वान क्यों न हों, बाबाकी संगति नहीं प्राप्त कर सकते।

सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, नैतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टिकोणसे परम पूज्य बाबा इस आधुनिक युगके महान योगी हैं और उन पर आधुनिक युग का भविष्य निर्भर है।

रामनगीना सिंह एडवोकेट
ग्रा० चातर, आराटाउन, बिहार

१९७० की गुरु पूर्णिमा को मुझे बाबाका प्रथम दर्शन हुआ और उनकी ओर चुम्बक जैसा खिचाव हुआ। बाबा मनुष्यके रूपमें शंकर-भगवतीके अंश हैं। एक-एक शब्द बाबाका अलौकिक शब्द होता है। बाबाने अघोर-धर्मकी सिद्धि इसलिए की है ताकि विश्व इन्हें मनुष्यसे परे न समझें। समाजको नये ढाँचेमें ढालने के लिये बाबाने जो व्रत लिया है वह केवल सराहनीय ही नहीं बल्कि अद्‌भुत शक्ति का द्योतक है। इनकी अवधूत वाणीमें गीताका सामञ्जस्य है।

जगनारायण
महुआडाँड़ा

श्री गुरुदेवजोकी महिमाका वर्णन करना सूर्यको दीपक दिखाना है। मेरो वाणीमें न वह शब्द है और न लेखनीमें वह शक्ति कि श्रीचरणके सम्बन्धमें कुछ लिख सकूँ। आज निरन्तर ६ वर्षोंसे श्रीगुरुदेवजीके सान्निध्यमें रहकर उनकी निजी-सेवा तथा संस्थाके कार्य-क्रमोंको सम्पन्न करनेका जो अवसर मुझे प्राप्त हुआ है, यह श्रीचरणकी महती कृपा ही है। मुझे अनुभूति हुई है, मैं श्रीगुरुमूर्तिको दो रूपोंमें देखता हूँ :—

(१) अलौकिक स्वरूप, (२) लौकिक स्वरूप।

समस्त शास्त्रों एवं ऋषियों-महर्षियोंने सृष्टिके मूलमें आदि शक्ति-तत्वकी

स्वीकार किया है। आधुनिक विज्ञानने भी इस स्थापनाको उद्घाटित कर दिया है कि सृष्टिके मूलमें कोई अत्यन्त ही शक्तिशाली असीम, अनादि, अगम्य शक्ति निरन्तर कार्यरत है। शक्ति और शक्तिमान् एक है क्योंकि शक्तिके बिना शिव शवके समान है। सृष्टिमें जब-जब किसी भी प्रकार का असहनीय व्यवधान, अन्धकार, अत्याचार तथा अनियमिततायें फैलती हैं, तब-तब माँ सबको प्रकाश की तरफ ले जानेके लिये एवं सबको सच्ची राह दिखानेके लिये मानव कल्याणार्थ अपना एक सपूत पृथ्वी पर प्रकट करती हैं जिसे महापुरुष या युगपुरुष की संज्ञा दे सकते हैं। मुझे ऐसा विश्वास है कि आदि-शक्ति माँ अपनी पूर्ण शक्तियोंसे विभूषित कर श्रीगुरुमूर्ति को पृथ्वी पर मानव कल्याणार्थ भेजी हैं। श्रीगुरुदेवजी की "वसुधैव कुटुम्बकम्" की विचारधारा, संकल्प एवं उनके कार्यक्रम साक्षात् प्रमाण हैं। कहा गया है कि युगान्त की निर्मम हलचलोंमें ही नवयुगके अभ्युदयके चित्रों का पूर्वाभास होने लगता है। अन्धकार को चीरकर जिस प्रकार किरणें आलोक का प्रसार करती हैं, उसी तरह युगान्त नवयुग के अभिनन्दनमें विगत का विसर्जन कर नवीनताकी प्राण-प्रतिष्ठा करता है। युग-पुरुष उसका शृङ्गार करता है। सृष्टि को वाणी प्रदान करता है।

मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि पूज्यपाद अघोरेश्वर महाप्रभु इस समय अपनी सारी असाधारण शक्ति को प्रकट कर बैठे हुए हैं। दर्शन तो नाम मात्रका नहीं है। मुझे ऐसा विश्वास है कि श्रीगुरुमूर्ति उचित समयमें मानव-कल्याणार्थ अपनी शक्ति का उपयोग अवश्य करेंगे। किन्तु यह भी बात सत्य है कि 'सोइ जाने जेहिं देउ जनाई।' पूज्य अघोरेश्वर महाप्रभु जो जिसको बुझावें वही बुझ सकता है।

औघड़ दानी, दयाके सागर मानव-कल्याणके लिये बराबर अपनी असाधारण शक्ति को लुटाते रहते हैं, किन्तु उसका श्रेय तनिक भी नहीं लेते। श्री गुरुदेवजीकी निरन्तर निजी सेवा करते रहनेके कारण उनके अन्तर्यामी तथा परोक्ष की बातों को जान लेने एवं देख लेनेके प्रमाणों का आभास मुझे बराबर मिलता रहता है। दूसरी बात अनुभूतिमें मेरे यह आयी कि श्रीगुरुदेवजी जिस चीज की इच्छा किये या ज्योंही संकल्प किये उसे सफलतापूर्वक पूर्ण होते देखा।

पूज्यपाद अघोरेश्वर महाप्रभु सामाजिक आदर्शों, मान्यताओंके सजीव उदाहरण हैं। समाजमें व्याप्त रूढ़ियों तथा अन्ध-विश्वासोंके उन्मूलनके लिये आपको बहुत सचेष्ट पाता हूँ। एक महान् बहुमुखी प्रतिभाशाली एवं बड़ा ही विलक्षण बुद्धिवाले महापुरुषके रूपमें देखता हूँ। आपका सामाजिक स्वरूप तो बड़ा ही आकर्षक है। व्यवहारमें आप बड़े ही मृदुभाषी, विनम्र तथा न्यायप्रिय हैं।

संस्थाके कार्यक्रमों एवं आश्रमके कार्यों को कार्यान्वित करनेमें एक महान् कर्मयोगी तथा कुशल प्रशासकके रूपमें देखता हूँ। नीतियोंके एक महान् पण्डितके रूपमें आपका दर्शन होता है। जिस प्रकार सभी नक्षत्र एवं ग्रह-पिण्ड सूर्यके आकर्षण में उसके चारों तरफ चक्कर लगा रहे हैं। उसी प्रकार लाखों-लाखोंकी संख्यामें सभी भक्तगण आपके प्रेम एवं स्नेह-रूपी आकर्षणमें आकर आपके दर्शनके लिये लालायित रहते हैं। सबसे बड़ी विशेषता यह है कि सभी लोग, जो आपके एकबार

सम्पर्क में आ जाते हैं, यह समझते हैं कि श्री गुरुदेवजीका मेरे ही ऊपर सबसे अधिक स्नेह है। यह पूज्य अघोरेश्वर महाप्रभुका प्रभावशाली एवं असाधारण व्यक्तित्व ही है। आपके दर्शन-मात्रसे सुख और शान्तिका अनुभव होता है तथा उच्च-से-उच्च विचार आपके दर्शन-मात्रसे प्रस्फुटित होता है।

"श्री गुरुमूर्ति को मेरा बारम्बार प्रणाम है।"

जय गुरुदेव
उदयभानु वकील
ग्राम–अवनी
पो०-पकड़ी कला (तरवा)
जिला–आजमगढ़ (उ० प्र०)

बाबाके प्रिय अनुयायी श्रीसर्वेश्वरी समूह शाखा कलकत्ताके मंत्री श्रीसजन कुमार-कानोडिया जो तारापीठ में बाबा के साथ चक्रार्चन में सम्मिलित हो चुके हैं बाबा के संबंध में इन शब्दों में श्रद्धा अर्पित करते हैं। आप बाबा के गोप्य उपासकों में हैं। आप ३५-३६ वर्ष के उदीयमान नवयुवक हैं।

बाबाको अपने प्राणसे भी अधिक प्यार करता हूँ। आपकी गुप्त व्यवस्थाओंमें कार्य करने का सौभाग्य रहा है। गुरु या देवता सर्वस्व बाबा ही हैं। यही विश्वास मेरा है। आपका विश्वास मुझे प्राप्त है। मैंने लाखों रुपये अपव्यय करनेके बाद बाबा के सान्निध्यको जबसे प्राप्त किया है तबसे दुनियाँके ऐश्वर्योके लिए हृदयमें स्थान नहीं है क्योंकि जहाँ अब स्वयं बाबा विराजते हैं वहाँ इनकी आवश्यकता ही क्या है?

सजन कुमार कानोडिया
१२।१ बालीगंज पार्क रोड
कलकत्ता

माँ सर्वेश्वरी- गुरुका सान्निध्य मुझे सन् १९६१ ई० में मडुआडीह वाराणसीमें प्राप्त हुआ। यद्यपि मैं यह नहीं जानता कि ईश्वर क्या हैं? परन्तु अब तक गुरुदेवजीसे जो व्यहार मिलता आया है, उससे यह विश्वास परिपक्व हो चला है कि यह वही ईश्वरत्व है जो श्रुतियों, स्मृतियों एवं अनुभूतियोंमें वर्णन किया गया है। प्रभु तो नर रूपमें हैं परन्तु मैं उन्हें माँ रूपमें इस लिये मानता हूँ कि, जिस समय भिन्न-भिन्न जातियोंमें पैदा हुए हम पुत्रोंको वे एक साथ बिठाकर अपनी थालीमें खिलाती हैं, हम बच्चों का जूठा स्वयं खाती हैं, उस समयका आनन्द अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता, वह अन्तरमें अनुभूतिकी वस्तु।

माँ सर्वेश्वरीने ऐसे समवर्ती लाड़ प्यारसे हम पुत्रों को पालापोषा है आज उसी का यह सत् बल है कि, हम लोग अपने वंशगत, जातिगत एवं समाजगत संस्कारों को सदैवके लिए भूलकर एक हो गए हैं।

माँ गुरुने श्री सर्वेश्वरी समूह नामक जो पुष्प तैयार किया है, इस समूहके अन्न-जलमें वह शक्ति है, जिसे पान कर मनुष्य देवत्व को प्राप्त करता है। समूह-प्रांगणके

प्रकृतिमें करुणा-मई सर्वेश्वरी गुरुका मातृत्व-स्नेह सदैव संचरित होता रहता है। जिसके मध्य, विचरण करने वाला हर प्राणी अक्षयतृप्ति को प्राप्त करता है।

रामभजन सिंह
व्यवस्थापक जन सेवा अभेद्र आश्रम
नारायणपुर–मध्यप्रदेश

मैं 'बाबा' के पावन-सान्निध्य में बारह वर्षोंसे हूँ। 'बाबा' को मैं ईश्वर एवं शक्तिका साक्षात् अवतार मानता हूँ। शक्ति, कार्य करनेकी क्षमताको ही कहते है। 'बाबा' संसारके समस्त कार्यों को करनेमें समर्थ हैं। उनके लौकिक एवं अलौकिक कार्य ही उनकी ईश्वरीय शक्तिके प्रतीक हैं। आजके वैज्ञानिक-युगमें मानव-मस्तिष्कसे परे भी ऐसे कार्य हैं जिसे ये मानव-रूपधारी भगवान सम्पन्न करने में सक्षम हैं।

मेरी धारणामें जो प्राण-दायिनी शक्ति है वही प्राण ले सकती है। यह एक शाश्वत नियम भी है। 'बाबा' ने एक बार एक औषधि-इन्जेक्शनकी प्राण घातक-प्रतिक्रिया होने पर मुझे मोतके मुँहसे निकाल लिया था। जब कि विशिष्ट-चिकित्सा-विज्ञ के अनुसार मुझे नयी यात्रा चिर-निद्रा की शाश्वत गोदमें प्रारम्भ करनी चाहिये थी। आज भी मैं उन्हींकी कृपासे आकाशमें स्वतन्त्र उड़ने वाले पक्षीकी तरह संसारमें स्वतन्त्र विचरण करता हूँ।

अमरनाथ सिंह
ग्रा० कूबा
पो० आ० कूबा
जि० आजमगढ़

सूर्यके अभावमें चन्द्र और उसके भी अभावमें अग्नि तथा उसके भी अभाव में दीप ज्योति परन्तु इनमेंसे किसीके भी न रहनेपर आत्म-ज्योति अखण्ड प्रज्वलित रहा करती है। पूज्यपाद प्रातः स्मरणीय बाबा श्री भगवान राम "अवधूत जी" मेरी आत्म-ज्योति हैं जो अखण्ड एवं परम प्रचण्ड हैं। यही मेरा प्राण और सोम है।

तापेशंकर पाण्डेय
(एडवोकेट)
के० १३।१६ मध्यमेश्वर, वाराणसी।

प्रतिक्षण स्मरणीय पूज्यपाद अघोरेश्वर महाप्रभु बाबा भगवान रामजीके सान्निध्यमें मैं दिनांक ३१ मई, १९६३ ई० को प्रथम बार अपनी पुत्री इन्दुमती-देवी की बीमारी के सिलसिले में आया। इन्दू को सात डॉक्टरों तथा एक सिविल-सर्जनने कहा था कि यह चौबीस घण्टेके भीतर ही मर जाएगी, उसीसे त्रस्त होकर मैं बाबाकी शरणमें आया और अपनी करुण गाथा सुनायी, तुरन्त बाबाने कहा नहीं-नहीं वह अभी नहीं मरेगी, वह बहुत दिनों तक जीवित रहेगी और वह आज भी जीवित है। उसके विषयमें और भी बहुत घटनायें हैं जिनका वर्णन करनेमें बहुत बड़ी

गाथा हो जाएगी।

मैं एक विद्यालयका प्रबन्धक हूँ, उस विद्यालयके प्रधानाचार्य्यकी हत्या हो गई, उसके पश्चात मुझे भी अनेक लोगोंने धमकाया कि त्याग-पत्र दे दो नहीं तो गोली मारी जाएगी। पूज्यपादके इन शब्दोंसे कि तुम त्याग-पत्र मत दो और न डरो न घबड़ाओ तुम्हारा कोई क्या करेगा, मैं डटा रहा कोई कुछ न बिगाड़ सका, बल्कि आज शत्रु भी नत हो गये हैं और विद्यालय इतनी उन्नतिपर चल रहा है जिसकी कल्पना भी नहीं की जाती थी।

राम लगन सिंह
ग्राम—महुआपार, पो०—मेंहनाजपुर
आजमगढ़ (यू० पी०)

महाप्रभु मेरे तथा मेरे परिवार के लिये सर्वस्व हैं। गुरुदेव के सम्पर्क में मेरे पिता जी सन् १९६३ में स्वर्गीय राजा साहब सोनपुराके माध्यमसे आये थे। प्रथम दर्शन में ही पिताजीने भैया (श्री हरि जी) को श्री चरणोंमें समर्पित कर दिया। पिताजी को अपने पुत्रको गुरुदेवके चरणोंमें देखकर प्रसन्नता होती थी। भैयाका विवाह सर्वेश्वरी समूह विवाह-पद्धतिसे प्रथम बार आश्रममें सम्पन्न हुआ। हम लोग छोटे ही थे कि माता जी की भी इहलौकिक लीला श्री गुरुचरणोंमें समाप्त हुई। गुरुदेवने ही धैर्य, साहस एवं सन्तोष प्रदान किया। अभी माँ की मृत्युसे उत्पन्न सांसारिक कष्टसे निवृत्ति भी नहीं हुई थी कि श्री गुरुचरणोंमें हम लोगों को सौंप कर पिताजी भी इस धराधम को छोड़ चले। मुझे खूब याद है, पिताजी अस्पतालमें थे। अन्तिम क्षणके पहले गुरुदेव ने हम लोगों को बुला कर कहा कि माँ भगवती से प्रर्थना करो कि १२ बजे रात्रिके पहले तुम लोगोंके पिता जी को वे इस संसारसे मुक्त कर दें। हम लोगोंके हृदयका भाव गुरुदेवसे छिपा नहीं रहा। तत्काल उन्होंने कहा तुम लोग शोक मत करो। 'तुम्हारे बापके बदले बाप तो मैं बैठा ही हूँ'। यह वाक्य कभी नहीं भूलता। आज यदि गुरुदेवका सहारा नहीं रहता तो माता-पिताकी मृत्युके पश्चात् हमारा परिवार कहीं का नहीं रहता। समूह पद्धतिसे ही माता पिताका अंतिम संस्कार आश्रम में हुआ। सचमुच हमें वह पिता मिल गये हैं जो दुनियाके पिता हैं।

श्रीमती चन्दासिंह
मंत्री—सर्वेश्वरी समूह महिला संघ
सवारगढ़, रोहतास
बिहार

सन् १९६३ ई० की बात है। उन दिनों मैं पढ़ता था। अचानक मईके महीनेमें मेरे पिता जीसे पूज्य बाबासे सम्बन्धित पुस्तकें पढ़ने को मिलीं। पुस्तक मिलनेके बाद मैंने अपना सुध-बुध खो दिया। बार-बार पढ़नेकी उत्कष्ट इच्छा होती थी। मेरे मस्तिष्क में यह बात आयी। क्यों न बाबाका दर्शन किया जाय। बस क्या था ? रात्रिमें सभी-लोग जब सोये थे तो मैं जाग रहा था। उसी समय दर्शनकी अभिलाषा लेकर घरसे चोरीसे चल दिया। उन्हींकी कृपासे बिना पैसेके मैं काशी स्टेशन उतरा और पूछते हुए लक्ष्यकी ओर बढ़ा। अभिलाषा साकार होनेमें विलम्ब नहीं हुआ। कुष्ठ सेवा आश्रमके मुख्य द्वार तक पहुँच गया। अन्दर जानेपर पूज्य गुरुदेवकी अद्भुतछटा

प्रकाश-पुञ्जके सागरका साक्षात्कार हुआ। आन्तरिक प्रसन्नता हुई। पूज्य बाबाके मुख्यसे परिचय पूछा गया। मैंने निःसंकोच उत्तर दिया। पूज्य गुरुदेवने कहा कि तुमको बचपन में मैं गोदमें लेकर खेलाया करता था। इन बातों को सुनकर मुझे आज ऐसा प्रतीत होता है कि वह आवाज "अघोरेश्वर" की ही थी और जिसका एहसास आज भी मैं करता हूँ कि पूज्य बाबा अपनी प्रकृतिगोदमें लालन-पालन कर रहे हैं। प्रथम साक्षात्कार में ही मैंने यह निर्णय लिया था कि यही मेरे गुरु हैं। पारिवारिक दबाबके बाद भी आत्मा की पुकार पर मैंने श्री चरणोंसे ही दीक्षा लिया।

विन्देश्वरी प्रसाद सिंह
बगवा, भोजपुर।

सन् १९६३ ई० को गुरुपूर्णिमाके पुनीत अवसरपर अपने माता-पिताके साथ वाराणसी पहुँचा। सभी लोग गुरुपूजनमें व्यस्त थे। वातावरण उल्लासपूर्ण था। पिताजी गुरु का पूजन तो कर लिये किन्तु मैं न कर सका। एक तरफ गुरुदेव को देखने की उत्कण्ठा सता रही थी किन्तु दर्शन नहीं हो सका। सायंकाल गुरुदेव भक्तोंके बीच आये। हर-हर महादेवके नारेसे गगन गूँज उठा। मैंने गुरुदेवके पास जाकर पुष्प की माला अर्पितकी। कुछ देर बाद मूसलाधार वर्षा प्रारम्भ हो गई पर भक्त समुदाय अपने आपमें मस्त था। रात्रिमें लगभग ११ बजे मुझे एक सज्जन बुलाने आये कि बाबा बुला रहे हैं। मैंने विनम्रता पूर्वक जाकर चरण स्पर्श किया और यह सोच रहा था कि बाबासे मेरा कोई खास परिचय तो हुआ नहीं था। सामने जाते ही अपने आपको खो दिया। सारे शरीरमें रोमांच हो उठा। अपने जीवन को सफल बनाया गुरुदेव की व्यावहारिकता को देखकर जो कि एक अघोर सन्तके लिये अजीब चीज थी जिसे पाकर मैं भाव विभोर हो उठा। गुरुदेव खुले आकाश में बैठकर तम्बाकू पी रहे थे। मुझसे दो-चार शब्द भोजपुरीमें पूछे। मैंने उत्तर दिया इसके बाद विश्राम करने की मुझे आज्ञा दिये।

आज ९ वर्षोंसे गुरुपीठमें रह रहा हूँ पर गुरुदेवजीके सम्बन्धमें क्या लिखूँ, समझमें नहीं आता। यह एक अजीब चीज है। जिसे पाया हूँ उसे व्यक्त नहीं कर सकता। यह किसी और पन्नेमें लिख दिये गये हैं। गुरुदेवकी कृपासे मेरे जीवनके साथ अनेक घटनायें घटीं जिसका यहाँ पर वर्णन नहीं कर सकता। उस भाव प्रेम को स्याहीसे नहीं लिख सकूँगा और न आँसू बहाकर ही कह सकूँगा। न मिलनके बाद ही कुछ बता सकूँगा। जिसे पाया वह उसीमें विभोर हो गया। वह अलगसे बेनकी बंसी बजा नहीं सकता।

पूजा मैं किसकी करता हूँ? श्री सर्वेश्वरी समूहकी। उसके कार्यों को सुचारु रूपसे करना ही तेरी पूजा हो सकती है, अपने चरित्र को ठीक रखना ही मुझे प्रसन्न रखना हो सकता है। तेरा वही है, जो श्री सर्वेश्वरी समूहका है।

हरी सिनहा

श्रीगुरुदेव मेरी दृष्टिमें सब कुछ हैं। इनके सम्पर्कमें ही आनेपर यह अनुभव हुआ कि मानवेत्तर शक्तियाँ भी हैं। हर रूपमें इन्हींको देखता हूँ। अजीब परिस्थितियोंमें इनसे मिला था। मानव जीवनका निर्माण गुरुदेव करते हैं। मानवीय गुण अगर कुछ

हैं तो वह इनकी कृपाके फलसे ही प्राप्त हुआ है। इनके संकल्पोंमें हमलोग चलते हैं, यह सौभाग्य है और यह जन्म-जन्मान्तर बना रहे। मानव-सेवा एवं आत्म-साक्षात्कारका पथ-प्रदर्शन इन्होंने किया है। भगवान या शक्तिका अस्तित्त्व है तो उसके ये साकार एवं निराकार दोनों रूप हैं। इनसे इतर किसी शक्ति, भगवान या देवी-देवता की कल्पना भी नहीं करता और इस भावके दृढ़ीकरणमें सतत् संलग्न हूँ।

रमाशंकर पाण्डेय
प्रधान कार्यालय
श्री सर्वेश्वरी समूह
वाराणसी

गुरुदेवका प्रथम दर्शन सन् १९६५ ई०में हरिजीके समूह पद्धतिसे विवाहके अवसर पर हुआ था। प्रथम दर्शनमें ही जो छाप हृदय एवं मस्तिष्क पर पड़ी वह अक्षुण्ण है। गुरुदेव को मैं क्या समझता हूँ, यह वाणी द्वारा कैसे व्यक्त किया जा सकता है? यहाँ मुझे सच्ची शान्ति एवं संतोष प्राप्त होता है जो कि माता-पिताके एकलौता पुत्र होनेके कारण वैभवोंमें भी मुझे प्राप्त नहीं होता था। मनुष्यको कैसे रहना चाहिए और मानवीय गुण क्या हैं? इसकी उपलब्धि यहाँ पर व्यावहारिक रूपमें होती है। अतः शेष जीवन गुरु चरणोंमें व्यतीत कर देनेके लिये संकल्प बद्ध हूँ।

संयुक्त मंत्री
सिद्धेश्वर नाथ सिंह
श्री सर्वेश्वरी समूह
प्रधान कार्यालय
वाराणसी

बाल्यकालसे ही साधु-संग किया। सत्संग जीवनका अंग था। वैष्णवाचारमें रहा। शान्तिकी खोजमें था परन्तु अनेक स्थानोंपर अनेक संतोंके सत्संगमें भी शान्तिकी उपलब्धि नहीं हुई। आत्म-साक्षात्कारका मार्ग नहीं प्रशस्त हुआ। इसी मध्य गुरुदेव का साक्षात्कार विन्ध्यपीठमें हुआ। प्रथम दर्शनमें ही ऐसा अनुभव हुआ कि मैं इन्हीं को खोज रहा था। गुरु चरणोंमें शरणागत होकर कृतकृत्य हुआ। ये ही तो हमारे सर्वस्व हैं। भगवान अगर हैं तो यही हैं। सब जगह इन्हीं को तो देखता हूँ। क्षण-क्षण प्रतिपल साथ रहते हैं तो इन्हें मैं क्या कहूँ या समझूँ।

अघोरी अक्षोभ भैरव
सर्वेश्वरी निवास
पड़ाव
वाराणसी

उस समय पाँच-छः वर्षका ही था। गुरुदेव आदि आश्रम हरिहरपुरमें निवास करते थे। उसी समय उनके सम्पर्कमें आया। एक दिन मुझसे बोले कि बाल्यकालमें मुझे लोग जटुली कहते थे। आजसे तुम्हें मैं जटुली कहूँगा। समय व्यतीत होता

गया। घरवाले विवाहका प्रस्ताव रक्खे। गुरुदेवने विवाहके लिये मना किया। मोहवश माता-पिताने विवाह रचाया तो उन्होंने जटुली कहना छोड़ दिया। एक दिन गुरुदेवका आदेश आश्रम पर रहनेका हुआ। अस्वस्थताकी स्थितिमें भी आना पड़ा, परन्तु पत्नीकी याद आश्रममें भी बनी रहती थी। दो राहे पर था जिन्दगी के। एक दिन इसी उधेड़ बुनमें उदास था। मन-ही-मन गुरुदेवसे प्रार्थना किया कि आश्रम जीवन बिताना है तो पत्नीका देहान्त श्रेयस्कर है। तीसरे ही दिन पत्नीकी इहलौकिक लीला समाप्त हो गई। गुरुदेवको क्या समझता हूँ, कैसे कहूँ ? इतना अवश्य समझ पाया हूँ कि मानव जीवनकी प्रत्येक गुत्थियोंका हल इनके पास है।

अघोरी सुरेन्द्र नाथ
प्रधान कार्यालय
श्री सर्वेश्वरी समूह
वाराणसी

भावरूपी भामिनी द्वारा ही योगीजन शायद ईश्वरका साक्षात्कार करते होंगे। सबके ईश्वर अलग-अलग हैं एक होते हुए भी। अभेद एवं समभाव ही ईश्वरीय गुण हैं। सबका हित साधन ही ईश्वर को अभीष्ट है। ये गुण जिसमें हैं उसे ही मैं ईश्वर मानता हूँ। मानव-शरीर धारण करते हुए भी सर्वजनहिताय, सर्वजनसुखाय विश्व-बन्धुत्व एवं प्राणिमात्रके कल्याण-हेतु गुरुदेव सतत् संलग्न हैं। अतः मेरे ईश्वर तो ये ही हैं, अन्य कोई नहीं।

अघोरी कृष्णदेव
प्रधान कार्यालय
श्री सर्वेश्वरी समूह
वाराणसी

कुछ वर्ष पूर्व मैंने बाबाका दर्शन मध्य-प्रदेश आश्रममें किया था। मैं उस समय नौकरीकी तलाशमें था। दर्शनके पश्चात् हमारी सभी कामनायें समाप्त हो गईं और हम उस आश्रममें परीक्षाके तौर पर वर्षों रहते थे। बीच-बीचमें मैं बाबासे दीक्षाकी प्रार्थना करता था पर बाबा इन्कार कर देते। परीक्षामें जब हमें सफल पाये होंगे तभी हमको चरणमें शरण देनेकी कृपा किये होंगे। मुझे ऐसा विश्वास है। अब मैं अघोर दीक्षा ले चुका हूँ। आश्रम, गुरुभाइयों एवं समूहके कार्यों में विश्वासके साथ लगा रहता हूँ, क्योंकि बाबा बराबर कहा करते हैं कि हमारा शिशु सर्वेश्वरी समूह है और इसकी सेवा करनेवाला ही हमारा श्रद्धालु एवं शिष्य है।

(पूर्व नाम पटेल)
अघोरी वृत्ति दमन राम
पड़ाव, वाराणसी

सन् १९६५ में श्री गुरुदेवका प्रथम दर्शन चैत्र नवरात्रकी अष्टमी तिथि को जनसेवा अभेद आश्रम, नारायणपुर, मध्यप्रदेशमें हुआ। श्रीचरणोंका दर्शन होते ही नेत्रोंसे अश्रुधारा प्रवाहित हो चली। भूतकालके कर्म एवं मोह नेत्रोंसे जलधाराके

रूपमें निकलकर कायाको पवित्र कर रहे थे। सुनता था कि जीव ब्रह्मके समक्ष होने पर ऐसा ही हो जाता है परन्तु यह अनुभव तो श्री गुरुचरणोंमें शरणागत होने पर ही हुआ। ये ही तो मेरे सर्वस्व हैं।

शिवव्रत नारायण सिंह उर्फ ददन जी
मु० पो० मलवार, जिला रोहतास (बिहार)

मई, १९६७ ई० में प्रथम बार पूज्य गुरुदेवका दर्शन वाराणसीमें किया। प्रथम साक्षात्कारमें ही श्रीचरणोंसे सम्बोधन हुआ–डॉक्टर कहाँ गये थे ? मैंने उत्तर दिया। मुझे इस बात पर आश्चर्य तो नहीं था किन्तु 'डॉक्टर' सम्बोधनसे मैं गददग हो गया। भौतिकवादी होनेके कारण अन्य लोगोंसे मैंने पूछ-ताछ किया कि गुरुदेवसे किसीने बताया कि मैं डॉक्टर हूँ। सभी मुझसे अपरिचित थे।

समय व्यतीत होता गया। संस्थाके विषयमें पूर्ण जानकारी प्राप्त हुई। सौभाग्य वश मुझे सेवा करनेका अवसर दिया गया।

अब तक असंभव शब्द केवल नैपोलियनके शब्दकोषमें नहीं था, किन्तु यहाँ रहनेके बाद यह पता चला कि श्री सर्वेश्वरी समूहके कोषमें भी असम्भव शब्द नहीं है। उसका उदाहरण मैं स्वयंको दूँगा। मैंने सुना था कि बाबा किनारामके युगमें गर्दभने वेद पाठ किया था, किन्तु श्रीचरणोंके समक्ष नित्य-प्रति ऐसा होते मैं देखता हूँ। इन चरणोंके दर्शन-मात्रसे ही मानवकी मनोवृत्ति बदल जाती है। त्यागकी भावना उत्पन्न होती है। जीवन-पर्यन्त उस त्यागमें लीन होनेकी इच्छा होती है।

यहाँ आनेके पूर्व मैं आयुर्वेदका कट्टर विरोधी था। वैद्यके नाम-मात्रसे ही मुझे उदासीनता एवं चिढ़ होती थी। इसका प्रयोग एक चिकित्सक होनेके कारण केवल धोखा समझता तथा इसे उपेक्षाकी दृष्टिसे देखता था। प्रथम बार जब मुझे श्रीचरणका उपदेश प्राप्त हुआ कि आपको आयुर्वेद को ही लेकर चलना है तथा यही जीवन का लक्ष्य बनाना है तो मुझे बड़ा असमंजस हुआ। फिर भी श्रीगुरुचरण-रज अंजन लगाया। बलात् आयुर्वेद-ग्रन्थोंका मनन एवं अनुशीलन किया। समय बीतता गया, रुचि बढ़ती गयी। इनकी प्रेरणाके फलस्वरूप आयुर्वेद शास्त्रकी ओर अग्रसर होता गया। उच्चतम परीक्षा उत्तीर्ण करनेकी इच्छा प्रबल होती गयी। अब मुझे वनौषधियों का कूटनेमें गर्व मालूम होता है। मेरा संकल्प है कि आयुर्वेद चिकित्सासे ही कुष्ट रूपी अभिशाप का निर्मूल करूँगा। इसके मूल तक पहुँचने का प्रयास जीवन-पर्यन्त करता रहूँगा। मुझे अपने इष्टसे भी ऐसा विश्वास है कि मुझे मंजिल तक पहुँचानेमें सहायक होंगे। जीवनका लक्ष्य एकमात्र आयुर्वेद चिकित्सा हो यही मेरी कामना है ओर कामनाकी पूर्ति उनके संकल्पके अन्दर है।

डॉ० आर० पी० सिंह
कुष्ठ सेवाश्रम
वाराणसी

ताजपुरमें जब मैं एक स्थान पर राज मिस्त्रीका कार्य कर रहा था तो बाबा मधुकरी माँगनेके लिये नित्य गाँवमें जाया करते थे। मैं रोज देखा करता था। एक दिन बाबा मेरी तरफ देखकर मुस्करा दिये और दूसरे ही दिन मैं बाबाके पास बुला लिया गया, क्योंकि बाबा को एक मिस्त्रीकी आवश्यकता थी। मुझे बाबाने मन्दिरके गोपालजीका सिंहासन बनानेके लिए आज्ञा दी। मैंने सिंहासन बनाया और वहींसे बाबा के चरणोंमें मेरी श्रद्धा हुई और हृदयमें एक तथ्यका आभास हुआ और सत्य गुरुदत्त शिवदत्त दाताका प्रकाश मिला। मेरी अन्तर आत्मामें यह बात बैठ गई कि उनका अवतार पृथ्वीका भार उतारनेके लिये हुआ है। तभीसे मैं बाबाके साथ ही हूँ, कमाता-खाता हूँ। बाबाका हर क्षण हर पल कृपाका पात्र हूँ। उन्हींकी कृपासे मेरी सारी आवश्यकतायें पूरी होती रहती हैं, उन्हींका हर क्षण हृदयमें ध्यान किया करता हूँ।

बुल्लारजी मिस्त्री

बाबाके चरण कमलमें, कुछ समयसे सेवा करनेका सौभाग्य अपने को प्राप्त हो रहा है।

बाबा क्या हैं? अपना अनुभव तथा जानकारी व्यक्त करनेकी क्षमता मुझमें नहीं है। बाबा अव्यक्त हैं, व्यक्त करना मन, बुद्धि तथा वाणीको धृष्टता ही है, किन्तु आदेश शिरोधार्य है।

बाबा व्यापक तत्त्व हैं, पुरुषरूपमें पृथ्वी पर अवतरित हैं। अपने लोगों के समक्ष कुष्ठ सेवा आश्रम पड़ाव-राजघाट वाराणसीमें विद्यमान हैं।

बाबा सर्वेश्वर, भुवनेश्वर, अघोरेश्वर, अखिलेश्वर तथा ज्ञानेश्वर बाबा ही हैं।

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते बाबा ही हैं।
बाबा नित निरंजन, निराकार हो अलख नाम है तेरा।
बाबा गुरुसे पहले जगतपतीहो, प्रभु जो तू मालिक हो मेरा॥

चरण कमल में साष्टांग दंडवत
विश्वनाथ

शिव हैं, कोढ़ीके आश्रयदाता हैं। कृष्ण भी यही हैं। कनिष्ठिकापर गोवर्धन पर्वत कृष्णने उठाया था। ये भी लोक मंगलके कार्य को उठाये हैं। सब गुरुओंके महागुरु यही हैं, परन्तु ऐसा प्रदर्शन नहीं करते। रामने साधु-सन्तोंकी रक्षा दानवोंसे की परन्तु ये दानवों को भी मानव एवं साधु-सन्त बना रहे हैं। अब मैं इन्हें क्या सम्बोधन करूं? ये कौन हैं नजदीक से देखो।

औघड़ पलटू राम
कुटिया बाबा भगवानराम
सभईपुर, वाराणसी

मैं रामचन्द्र प्रसाद गुप्त, ग्राम गिरहुलडीह, जिला सरगुजाका मूल निवासी हूँ। मेरी धर्म पत्नी श्रीमती रुक्मिणी देवी को करीब १ सालसे भयंकर रोग था। वह हमेशा बेहोश होती थीं। मैंने काफी ओझाई एवं अस्पतालकी दवाई करवायी, लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। इसके बाद मैंने श्री गुरुदेवकी शरणमें दिनांक ६।१०।७२ को सोगड़ा आश्रम गया और वहांपर गुरुदेवका विशाल दर्शन हुआ। हम दोनों प्राणी नमस्कार कर गुरुदेव के आश्रम में रहकर अपने दुख को प्रकट किये। श्री गुरुदेव

की हमारे ऊपर इतनी विशाल कृपा हुई, कि हमारी धर्म पत्नीका रोग भी शनैः शनैः कम हो गया है। इसके उपरान्त दिनांक १६।६।७२ को एक नवजात शिशुने जन्म लिया। यह सब माँ गुरुदेवकी ही असीम अनुकम्पा है चाहे आप लोग इसे चमत्कार कहें या अनुकम्पा हम लोग हमेशा माँ गुरुदेवके ध्यानमें ही लीन रहते हैं और मैं भविष्यमें भी माँ गुरुदेवके चरणोंकी कृपाकी अभिलाषा एवं ध्यान करता रहूँगा।

सोगड़ा आश्रममें हम लोग परिवार सहित दिनांक १३।११।७२ को गये थे। वहाँ पर गुरुदेवने अपने ही मुखारविन्दसे बच्चेका नामाकरन किया। उस बच्चेका नाम एक बाल कुमार रखे। सोगड़ा (रायगढ़) के आश्रममें ही गुरुदेवके कर-कमलों द्वारा बच्चेका प्रथम अन्नप्राशन हुआ।

अब हम लोगोंका जीवन शांतिपूर्ण है और मेरी धर्मपत्नी श्रीमती कल्याणी देवीको सारी बाधायें धीरे-धीरे निवारण होचुकी हैं। मैं अपनी कलमसे श्री माँ गुरुदेव के अद्भुत सामर्थ्यका वर्णन कहाँ तक करूँ, यह मेरी आत्मा जानती है।

राम चन्द्र प्रसाद शाह
ग्राम सिरकुलडीह
पो० बरई पानी (रायगढ़)
जिला सरगुजा (म० प्र०)

मेरे पिताजी तो श्री गुरुदेवके दर्शनार्थ अक्सर आते थे और घरमें हम लोगोंको गुरुदेवकी मानव कल्याणकारी योजनाओं एवं कार्योंके सम्बन्धमें बराबर अवगत कराते थे। उस समय विद्यार्थी-जीवन व्यतीत कर रहा था। कौतूहल होता था, श्री चरणों के दर्शनके लिये लालायित रहता था। इसी मध्य सन् १९६७ में कुष्ठ सेवी प्रशिक्षण केन्द्रमें एक प्रशिक्षणार्थीकी हैसियतसे आया। गुरुदेवका सान्निध्य प्राप्त हुआ। आया तो इन्हीं का बनकर रह गया। सदैव इन्हीं का बना रहूँ, ऐसा जीवन गुरुदेवके पथ-प्रदर्शन में मानव सेवामें व्यतीत हो यही कामना है क्योंकि यही शिक्षा श्री गुरु चरणोंसे मुझे प्राप्त हुई।

मोहन तिवारी
कुष्ट सेवा आश्रम
बाराणसी

बाबा से मुलाकात बहुत पुरानी है। नेपाल तराई कांग्रेस का जब मैं मंत्री था तभीसे बाबाकी कृपाका अनुभव हुआ है। मेरे पिताकी हत्याके विपत्तिकालके बादसे ही औघड़ श्री सूर्यप्रकाश रामकी सेवामें रहता आया हूँ। उन्हींकी देन है कि अघोर साधक एवं उपासनामें मेरा जीवन आज भी व्यतीत होता है। मैं जब अपने नेपालके शिष्ट-मण्डलके साथ काशी आया था, बाबासे भी मिला था। उसी समयसे मैं और आकृष्ट होकर बाबाकी सेवामें सालमें कई महीने आश्रममें आकर रह जाया करता हूँ। बाबा हमारी रहस्यमयी साधनाओंके आचार्य भी हैं और हमारे विचारोंके अभिभावक भी हैं।

देवकुमार चौबे
जोगबनी (नेपाल)

दादा मेरे अंतरंग मित्र हैं। हम दादाका मनोरंजन करते रहते हैं। हमारा नाम केदारसिंह है, परन्तु स्नेहवश मुझे दादा फोकावीर कहते हैं।

केदारसिंह
ईश्वरगंगी, वाराणसी

परम आदरणीयपूज्य अवधूत बाबा भगवान राम

प्रथम मैं वैष्णव संप्रदायके आचार्यसे शिष्य हुआ, अपना सभी कार्य करते हुये, वैष्णव-धर्म का पालन करने लगा, परन्तु जीवनकालमें पूरो शान्ति धर्मके पचड़ेमें पड़कर नहीं प्राप्त हुई। जिज्ञासा इस बातकी हुई कि सतगुरु-संतसे यदि मुलाकात होती, तभी शान्ति और सुखका अनुभव हो सकता है। आजसे करीब-करीब दस-बारह वर्षका समय होता है, कुछ साथियोंके साथ कुम्भके समय इलाहाबाद त्रिवेणी संगमके पास झूसीमें बाबाका कैम्प लगा था, पहुँच गया, वहाँ पहुँचते ही ज्योंही बाबाका दर्शन किया, मन, वचन, कर्मसे एक विचित्र आकर्षण बाबाकी ओर हुआ और वहीं उनका शिष्य हो गया। बाबाने मेरे आग्रह पर माँ का मंत्र दिया और नाना तरहके उपदेश अपने सुधारके बारेमें दिए। मेरी ज्ञान-चक्षु खुली, बाबाके बीच जो-जो घटना हुई, वाणी नहीं जो व्यक्त करूँ, वह प्रशंसनीय है। बाबाके सम्पर्क में कभी, रहकर जीवन को सार्थक करने लगा। जिस देवताका नाम अपने हृदयमें आता है वही सभी नजर आने लगे। बाबाके बारेमें मेरा निश्चित अनुभव यही है कि बाबा साक्षात् माँ स्वरूप हैं, जिनको माँ गुरुके नामसे सम्बोधित करता हूँ। जै गुरुदेवं नारायण ॥

रामलखनसिंह
ग्राम--कवईपहाड़पुर
परगना-महाईच
पो० हेतमपुर जि० वाराणसी।

मेरी दृष्टिमें अघोरेश्वर महाप्रभु

यद्यपि मेरे लिए यह बताना कि महाप्रभु मेरी दृष्टिमें क्या हैं? असम्भवसा प्रतीत होता है। किन्तु यह बात अवश्य सत्य है कि जो कुछ भी दृष्टिगत होता हूँ वह श्री चरणोंकी कृपासे।

कतवारूराम,
अवधूत ताम्बूल-भण्डार
मैदागिन, वाराणसी।

बाबा आडम्बर एवं नकली वातावरण को एकदम नहीं पसन्द करते। शुद्ध आत्माओं को ज्यादा पसन्द करते हैं जो निष्कपट भावसे बाबाके पास आते हैं भले उनके पास दिखावटी चीजें न हों लेकिन वे उनको ज्यादा सत्कार देते हैं और उनके दुःखों को सुनते हैं तथा उचित मार्ग-दर्शन कराते हैं।

पारसनाथ गुप्त
के ६३/४१, नकास वाराणसी—१

परिशिष्ट

बाबा अघोरभद्र (अघोरी किलाके औघड़ बाबा)

रुद्राक्ष द्वितीय 'अघोर साधनाके सन्तोंकी परम्परा'में पृष्ठ १७ पर अघोरी किलाके जिन औघड़ बाबाके सम्बन्धमें आप पढ़ चुके हैं उन अघोर महात्माका नाम अघोरभद्र था। उस समय जो आजका मिर्जापुर जिला है वह मीरजाफरके नामपर बसाया गया था। आजसे चार-पाँच वर्ष पहले लेखक जब मिर्जापुर गया था तो उस समय मिर्जापुर कचहरीके सामने मुसलमानी सल्तनतके समयके पुराने दस्तावेज फेंके जा रहे थे और उनमें आग लगाई जा रही थी। उन्हीं दस्तावेजोंमें लिपटा एक कागज था जिसे लेखकने कौतूहलवश उठाया तो उसमें अघोरी किलाके औघड़ बाबा अघोर भद्रका उल्लेख प्राप्त हुआ।

सक्खू बाई अघोरिन

कन्या कुमारीमें आप इस समय आवास करती हैं। आप एक सिद्ध, अपूर्व अवधूतिन हैं। आपके यशकी सुरभि दिग-दिगन्तमें व्याप्त है। 'आत्मचरितं न प्रकाशयेत्' साधु स्वभाव है। इसका परिपूर्ण रूपसे आप पालन करती हैं। साधनाकी उच्च अवस्था प्राप्त करनेपर भी आपका व्यवहार पागलों जैसा होता है। पागल वही है जो पा गया है और जिसने पा लिया है उसे फिर क्या चाहिये ? वह तो अपनी मस्तीमें मस्त रहता है। दुनियासे क्या लेना-देना।

अघोरी कृष्ण स्वामी

आन्ध्र प्रदेशमें विजयवाड़ा श्मशान है। यहीं अघोरी कृष्ण स्वामी रहते हैं। न कहीं भिक्षाके लिये जाते हैं, न तो किसीसे कुछ माँगते हैं। ठीक ही है जिसने पूर्णता प्राप्त कर ली है उसे क्या चाहिये ? संसारकी सभी विभूतियाँ तो अघोरियोंकी दासी हैं।

अघोरी मौनस् बाबा

जैसा नाम वैसा गुण। मौनका ही दूसरा रूप साक्षी है। सब कुछ देखते हुये भी बिना प्रतिक्रियाके जो कोई भाव न व्यक्त करे अथवा जिसमें कोई भाव न उत्पन्न हो वही अघोरी है। इसके प्रमाण मौनस् बाबा अघोरी हैं। आप साँई मन्दिरके पास अनकापल्लीमें साँई मन्दिरके पास रहते हैं।

अघोरी वेंकटेश्वर स्वामी

गुड़वाला, आन्ध्र प्रदेशके अघोरी सन्त श्रीवेंकटेश्वर स्वामीके सम्बन्धमें दक्षिण भारतके जन-मानसमें बहुत ही उच्च स्थान है। आपको देखने मात्रसे ही एक अजीब-सी हलचल लोगोंके दिल-दिमागमें पैदा हो जाती है। साधनाकी उच्चतम अवस्थाको प्राप्त ये अघोरी बन्दनीय हैं।

सहायक ग्रन्थ-सूची

1. बाबा किनाराम—पोथी विवेकसार, रामरसाल, रामगीता, गीतावली, उन्मुनिराम
2. परशुराम चतुर्वेदी—उत्तर भारतकी संत-परम्परा
3. डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी—संत-मतका सरभंग-सम्प्रदाय
4. आचार्य नरेन्द्रदेव—बौद्ध-धर्म-दर्शन
5. डॉ० यदुवंशी—शैवमत
6. डॉ० मोतीचन्द्र—काशीका इतिहास
7. आनन्दगिरि—शंकरविजय
8. भवभूति—मालती-माधव
9. कृष्णमिश्र—प्रबोध चन्द्रोदय
10. सोमदेव—कथासरित्सागर
11. शिया ट्रॉयर—दबिस्ताँ
12. प्रमथनाथ भट्टाचार्य—भारतके महान् साधक (१, २, ३, भाग)
13. साँवलिया बिहारीलाल वर्मा—विश्व-धर्म-दर्शन
14. ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद
15. छान्दोग्योपनिषद्, बृहदारण्यकोपनिषद्, कठोपनिषद्, तैत्तिरीय उपनिषद्, श्वेताश्वतरोपनिषद्
16. श्रीमद्भगवद्गीता
17. श्रीमद्भागवतपुराण, कालिकापुराण
18. महानिर्वाणतन्त्र, योगिनीतन्त्र, कुलार्णवतंत्र
19. अभिनवगुप्त—परात्रिंशिका
20. W. Crooke—Encyclopaedia of Religion and Ethics.
21. James Hastings—Encyclopaedia of Religion and Ethics Vol. I & II.
22. Jarlong—Faiths of Man.
23. P. Thomas—Hindu Religion, Customs and Manners.
24. Canncy—An Encyclopaedia of Religions.
25. Gardener—The Faiths of the World.
26. B. G. Gould—The Gewel in the Lotus.
27. Thomas Keightly—History of India.

28. Earl of Romalshey—Lands of the Thunder bolt, Sikkim, Chambi and Bhutan.
29. Havell—Benares—The Sacred City.
30. Col. Tod—Travels in West India.
31. Crooke—Tribes.
32. H. Balfore—The Life History of an Aghori Faquir.
33. H. W. Barrow—Aghoris and Aghorpantha.
34. Sir Joseph Hooker—Himalayan Journal.
35. Pumberton's Mission to Bhutan (1837-1839)
36. Krishna Kumar Bose's Report on Bhutan.
37. Ashley Eden's Mission to Bhutan (1863-1864)
38. Arthur Avlon—Serpent Power.
39. Paul Brunton—Hidden Teaching Beyond Yoga.
40. H. V. Guenther—Yuganaddha; The Tantric View of Life.
41. Arthur Avalon—Principles of Tantra.
42. Bhandarkar—Vaisnavism, Saivism and Minor Religious Systems.
43. Goethe—Faust.
44. Beal, Si-Yu-Ki—Buddhist Records of the W. World.
45. Watters—Yuan Chuang's Travels in India.
46. H. H. Wilson—Essays.
47. Frazer—Lit. History of India.
48. M. Thevenot—Travels.
49. Ward—View of the Hindoos.
50. Buchanan : E. India.
51. The Revelations of an Orderly.
52. Sir M. Monier Williams—Hinduism and Brahmanism.
53. Barth : Religions of India.
54. Punjab Notes and Queries.
55. H. Balfore—J. A. I.
56. Colebrooke—Essays.
57. Crooke—Tribes and Castes.
58. Hopkins—Religions of India.
59. Hartland—Legend of Perseues.
60. Hadden—Report of Cambridge Expeditions Vol. 321.
61. Johnston—Uganda.

62. Temple, Steel—Wideawake Stories.
63. Waddell—Among the Himalayas.
64. Lhasa and its Mysteries.
65. Mitchell—The Past in the Present.
66. Black—Folk Medicine.
67. Buchman. Hamilton—Account of the Kingdom of Nepal.
68. Victor W. Von Hagen—World of the Maya.
69. B. G. Goldberg—The Story of Sex in Religion.
70. Victor W. Von Hagen—Realm of Incas.
71. C. Pillai—Studies in Saiva Siddhanta.
72. S. Sundaram—Saiva School of Hinduism.
73. N. Ayyar—Origin and Early History of Saivism in South India.
74. S. S. Sastri—Sivadvaita of Sri Kantha.
75. J. C. Chatterjee—Kashmira Saivism.
76. K. C. Pande—Abhinavagupta—An Historical and Philosophical Study.
77. Arthur Avalon—Shakti and Shakta.
78. Woodrooffee and Mukhopadhyaya—World as Power Series.
79. नर्मदाशंकर मेहता—शाक्त-सम्प्रदाय (गुजराती)
80. सतीशचन्द्र सिद्धान्तभूषण—कौलमार्गरहस्य (बँगला)
81. Kaviraj Gopinath—Some Aspects of Vir-Saiva Philosophy.
82. — Do —Notes on Pasupata Philosophy.
83. गोपीनाथ कविराज—भारतीय संस्कृति और साधना
84. गोपीनाथ कविराज—तान्त्रिक वाङ्मयमें शाक्त-दृष्टि
85. डॉ० कान्तिचन्द्र पाण्डेय—शैव-दर्शन बिन्दु
86. डॉ० भगवतीप्रसाद सिंह—मनीषीकी लोकयात्रा
87. आचार्य बलदेव उपाध्याय—भारतीय दर्शन

